सआदत हसन मंटो

आनंद फल्द

संपादक
नरेन्द्र मोहन

SHOUT
SHARE
IT

सआदत हसन मंटो के नाटक

सआदत हसन मंटो के नाटकों से हिंदी पाठकों का उतना परिचय नहीं है जितना उनकी कहानियों से, जब कि उन्होंने उच्चकोटि के नाटक लिखे हैं। उनके नाटकों में विडंबनापूर्ण स्थितियों के दृश्यात्मक संयोजन के आधार पर चरमबिंदु की रचना की गई है और फिर उसी में से उभरता है एंटी क्लाइमेक्स। कार्य-व्यापार को आलोकित करने की यह पद्धति, चरमबिंदु के साथ इस ढंग का सलूक मंटो के नाट्य-कर्म का अहम हिस्सा है।

मंटो के नाटकों में व्यंग्य-दृष्टि और फार्स के साथ-साथ हास्य और क्रीड़ा का भी विधान हुआ है। इनमें मंटो की संवेदना और सोच का दायरा काफी विस्तृत है—वैयक्तिक कुंठाओं, आकांक्षाओं और सरोकारों से लेकर सामाजिक-राजनीतिक चिंताओं और विद्रूपताओं तक। ये नाटक श्रव्य माध्यम द्वारा प्रस्तुत किए गए थे, अतः उर्दू, हिंदी भाषाओं की साँझी विरासत हैं।

सआदत हसन मंटो के नाटक पुस्तक में मंटो के नाटकों को, उनके नाटककार रूप को पहली बार हिंदी पाठकों के सामने लाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है हिंदी के जाने-माने नाटककार, कवि और आलोचक डॉ० नरेन्द्र मोहन ने। संपादकीय दृष्टि की वजह से यह मंटो के नाटकों का एक संकलन-भर नहीं है, यह एक ऐसा दस्तावेज़ बन गया है जो पीढ़ियों के फ़ासले को पाटता हुआ हमसे आ जुड़ता है।

मंटो ने न आधुनिकतावादी साँचा कबूल किया, न प्रगतिवादी। वह ज़िंदगी की जुराब के धागे को एक सिरे से पकड़कर उधेड़ता रहा और उसके साथ हम सब उधड़ते चले गए।

ISBN—81-7016-088-X

मूल्य : रु० 250.00

सआदत हसन मंटो के नाटक

किताबघर

किताबघर प्रकाशन

नयी दिल्ली

सआदत हसन मंटो के नाटक

संपादक

नरेन्द्र मोहन

ISBN—81-7016-088-X

© संपादक

प्रकाशक
किताबघर प्रकाशन
24, अंसारी रोड, दरियागंज
नयी दिल्ली-110002

संस्करण
2002

आवरण
इमरोज़

मूल्य
दो सौ पचास रुपये

मुद्रक
एस०एन० प्रिंटर्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

SAADAT HASAN MANTO KE NATAK (Plays)
Ed. by Dr. Narendra Mohan
Price : Rs. 250.00

डॉ० सादिक़ के नाम

अनुक्रम

सआदत हसन मंटो के नाटक

मंटो का नाट्य-कर्म 9
आधार 17

इस मँझधार में

इस मँझधार में 21
कबूतरी 50
बीमार 63
इन्तज़ार 72
इन्तज़ार का दूसरा रुख 81
नीली रगें 91
टेढ़ी लकीर 99
तैमूर की मौत 109
किलोपेट्रा की मौत 118
कमरा नंबर 9 126

करवट

करवट 141
अकेली 153
रणधीर पहलवान 167
चूड़ियाँ 183
रूह का नाटक 195
माचिस की डिबिया 206
हतक 213

रासपुतिन की मौत	227
नेपोलियन की मौत	236
बाबर की मौत	246
चंगेज़ खाँ की मौत	255
नक्श-ए-फ़रियादी	263
जेबकतरा	277
सलीमा	289
उसका रामू	300
ममता की चोरी	307
साड़ी	316
जुर्म और सज़ा	328
खुदकुशी	339
क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ	346
मुहब्बत की पैदाइश	354
ईद कार्ड	364
टीपू सुलतान की मौत	371
शाहजहाँ की मौत	380
जर्नलिस्ट	388
कमीशन	401

सआदत हसन मंटो के नाटक

(मंटो का नाट्य-कर्म)

सआदत हसन मंटो उर्दू के ही नहीं, समस्त भारतीय उपमहाद्वीप के एक विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण लेखक हैं। प्रेमचन्द के बाद उर्दू कहानी को एक नया आयाम और व्यक्तित्व देने वालों में मंटो का नाम अन्यतम है। उनकी कहानी अपनी वस्तु और शैली की वजह से ही नहीं, अपने कथा-विधान और दृष्टिकोण के कारण भी अलग से चमकती हुई दिख जाती है। मंटो की कहानियों को पढ़ने का मतलब है उनकी कहानियों की दुनिया में दाखिल होना, उनके पात्रों से घिरे रहना, उनके कथा-अनुभवों में पूरी हिस्सेदारी निभाना क्योंकि मटो महज़ कहानी नहीं कहते, कहानी के ज़रिए वे ज़िन्दगी के कुछ ज़िन्दा और धड़कते हुए संदर्भों को पाठकीय चेतना का हिस्सा बनाने की कोशिश करते हैं। वे बेहद 'इन्वाल्वड' लेखक हैं और जितने 'इन्वाल्वड' हैं उतने ही तटस्थ भी। यह एक विरोधाभास लग सकता है लेकिन यह विरोधाभास नहीं, यह उनकी कहानियों की बहुत बड़ी खूबी है।

मंटो को कहानीकार के नाते जितनी लोकप्रियता और स्वीकृति मिली उतनी नाटककार और व्यंग्यकार के नाते नहीं, जबकि उन्होंने उच्चकोटि की व्यंग्य रचनाएँ और नाटक भी लिखे हैं। उनके कहानीकार की गिरफ़्त से सामान्य पाठक और आलोचक इस कदर जकड़ा रहा है कि उनके नाटकों और व्यंग्य रचनाओं की तरफ़ उनका ध्यान ही नहीं गया।

प्राय: कह दिया जाता है कि मंटो के नाटक गहरे सृजनात्मक दबावों की वजह से नहीं लिखे गए बल्कि उनके पीछे व्यावसायिक वृत्ति काम करती रही है। यह सही है कि मंटो एक लम्बे अरसे तक आकाशवाणी में कार्य करते रहे और इस माध्यम के दबावों की वजह से वे रेडियो नाटक लिखने में प्रवृत्त हुए लेकिन क्या इसी से उनके नाटकों को व्यावसायिक करार दिया जाए? दरअसल, रेडियो जैसे माध्यम से सीधे जुड़कर, उसकी अपेक्षाओं को समझते और स्वीकारते हुए उन्होंने अपने लिए रेडियो नाटक में अभिव्यक्ति का एक नया रास्ता तलाश किया। मंटो ने जब रेडियो के लिए नाटक लिखने शुरू किए, उस समय तक उर्दू या हिन्दी में रेडियो नाटक की कोई फार्म या उसका कोई सुस्पष्ट रूप उभरा नहीं था। मंटो उन पहले लेखकों में से थे जिन्होंने रेडियो नाटक के प्रारंभिक रूप को सँवारा, माँजा और निखारा। यह भी ध्यान देने की

बात है कि जिस दौर में वे अपनी कुछ महत्त्वपूर्ण कहानियाँ लिख रहे थे, उन्हीं दिनों वे नाटक भी लिख रहे थे। सृजनात्मकता का प्रभाव उनकी कहानियों और नाटकों पर यकसां है। इन नाटकों में उनके संवेदनात्मक और वैचारिक सरोकार मुख्य रूप से वही हैं जो उनकी कहानियों में दिखते हैं। जिस तरह उनकी कहानियों में वैयक्तिक, सामाजिक और राजनीतिक विसंगतियाँ और विद्रूपताएँ उभरी हैं, उसी तरह उनके नाटकों में भी। इस पर बहस हो सकती है कि रेडियो नाटक की फार्म को वे कितनी ऊँचाई दे पाए, इसकी सीमाओं और संभावनाओं का वे कैसा उपयोग कर पाए (जिसे हम आगे चलकर देखेंगे), इतना तय है कि इन नाटकों को उनकी सृजनात्मक शक्ति और जीवन-दृष्टि से अलग-थलग रखकर नहीं, उसी के प्रकटीकरण के एक महत्त्वपूर्ण पहलू के रूप में देखा जाना चाहिए।

इसमें शायद दो राय नहीं हैं कि मंटो के नाटक रेडियो नाटक हैं, रंगमंचीय नाटक नहीं हालाँकि कई नाटकों में, अपवादस्वरूप रंगमंचीय अपेक्षाएँ पूरी होती देखी जा सकती हैं। रेडियो नाटक की फार्म की सीमाओं के बावजूद, इन नाटकों से मंटो की नाट्य-प्रतिभा का आभास मिलता है। दृश्यों का कौशलपूर्वक विधान करने की क्षमता का ही नहीं, कार्य-संयोजन की उनकी समझ का भी इन नाटकों से पता चलता है। संवादों का नाटकीय विन्यास और स्थितियों का चुस्त नाटकीय विधान उनके लगभग हर नाटक में मिलेगा। इन नाटकों को पढ़ने से साफ़ ज़ाहिर है कि रेडियो के लिए लिखने की मजबूरी अगर मंटो के लिए न होती तो वे रंगमंच के लिए भी अच्छे नाटक दे सकते थे।

श्रव्य के ज़रिए श्रोताओं तक दृश्य पहुँचाना रेडियो नाटक के लिए ज़रूरी है जबकि शब्दों में निहित दृश्यों को दर्शकों तक ले जाना रंगमंचीय नाटक के लिए अपेक्षित है। रंगमंचीय नाटक में पात्रों की भूमिकाओं को कल्पित करते हुए लेखक जो रंग-संकेत दे सकता है, रेडियो नाटककार को वे सभी संकेत आवाज़ के ज़रिए देने होते हैं ताकि श्रव्य-माध्यम से पात्र मूर्त रूप ले सकें। आवाज़ के ज़रिए रेडियो नाटक में दृश्य खड़े किए जाते हैं और उसी से श्रोताओं के मन में पात्रों को मूर्त रूप देने का प्रयत्न किया जाता है। मंटो के नाटकों में आवाज़ के उतार-चढ़ाव से दृश्य विधान के प्रयत्न तो किए ही गए हैं, आवाज़ की अलग-अलग खसूसियात बताकर पात्रों की मनःस्थितियों को भी झलका दिया गया है। 'अकेली' और 'रणधीर पहलवान' नाटकों में ये विशेषताएँ देखी जा सकती हैं। 'अकेली' नाटक में पात्रों के व्यक्तित्व को उभारने की दृष्टि से उनकी आवाज़ की खासियत की तरफ़ संकेत किये गये हैं। इसी तरह 'रणधीर पहलवान' में पात्रों के परिचय के साथ उनकी आवाज़ों के बारे में भी (जैसे रणधीर पहलवान की आवाज़ 'मोटी और कड़ी' और सावित्री की आवाज़ में 'कंपन') निर्देश दिये गये हैं। वाणी की इस ढंग की नाट्यधर्मी विशेषता मंटो के प्रायः सभी नाटकों में मिलेगी। ध्वनियों से संगीत के तेज़, मद्धम होने के संकेत तो वे देते ही हैं संवाद, संगीतात्मक ध्वनियों में से कैसे उभरते हैं और संगीतात्मक ध्वनियाँ संवाद-विधान में कैसे ढल जाती हैं, इसकी दिलचस्प प्रक्रिया इन नाटकों में देखी जा सकती है। इन नाटकों की रेडियो प्रस्तुतियाँ मंटो ने खुद की थीं, इसलिए निर्देशकीय युक्तियाँ उनके रेडियो

नाटक के शिल्प का हिस्सा हैं। कई नाटकों के बीचोबीच जो निर्देशकीय नोट दिए गए हैं, वे इसे प्रमाणित करते हैं जैसे 'रणधीर पहलवान' में : 'नोट : जब घटा का ज़िक्र आए तो पृष्ठभूमि में बिजली के कड़कने की आवाज़ पैदा की जाए।' इस तरह मंटो अपने नाटकों में लेखकीय भूमिका के साथ-साथ निर्देशकीय भूमिका का निर्वाह करते भी दिखते हैं।

मंटो स्थितियों में निहित व्यंग्य और विडम्बना को उभारते हैं, साथ ही चरित्रों की विडम्बना का बोध भी कराते हैं। ऐसा करते हुए वे एक तरफ़ चरमबिन्दु की रचना करते हैं और फिर उसका निषेध। चरमबिन्दु के साथ इस तरह का नाटकीय सलूक उनकी विशेषता है। इस दृष्टि से 'जेबकतरा', 'साड़ी', 'इन्तज़ार' और 'इन्तज़ार का दूसरा रुख' नाटक देखे जा सकते हैं। 'जेबकतरा' मंटो का एक प्रसिद्ध, बहुचर्चित नाटक है। यह नाटक अपने एंटी क्लाइमेक्स की वजह से विशेष तौर पर चर्चा का विषय बना था। मंटो इस तरह के चरमबिन्दु की रचना करके मानवीय स्वभाव की विडम्बना को नाटकीय व्यापार में से जिस कलात्मकता से झलकाते हैं, वह उनके नाटकों की मुख्य विशेषता मानी जा सकती है। बिमला के बार-बार के अनुरोध पर काँशी का जेबें काटने की प्रवृत्ति से निज़ात पाने के लिए अपनी उँगलियाँ कटवा लेना और ठीक ऐसे मौके पर बिमला का परिस्थिति से विवश होकर उसे किसी की जेब काटने के लिए कहना मानवीय स्वभाव और आचरण की विडम्बना को नाटकीय रूप में उभार देता है। स्थिति और चरित्र की विडम्बना को चरमबिन्दु पर तान देना और इस तरह कार्य-व्यापार को आलोकित कर देना मंटो के नाट्य-कर्म का अविच्छिन्न अंग है। उनका एक अन्य नाटक है 'साड़ी' जिसमें मंटो निहायत मामूली स्थितियों की विडम्बना को इतनी सहजता से खोलते हैं कि देखते ही बनता है। मालती प्यार करती है कवि से लेकिन कवि उसे एक साड़ी भी भेंट नहीं कर पाता। दूसरी ओर सेठ है जो उसके लिए साड़ियों का ढेर लगा देता है। इससे अभिभूत होकर मालती सेठ से विवाह कर लेती है। जो कवि एक साड़ी भी खरीदकर मालती को नहीं दे पाता, वही अपने शे'र सेठ को बेचकर उससे साड़ियाँ खरीदता है। मालती को लगता है कवि शे'र नहीं बेच रहा, उसे बेच रहा है—उससे बदला ले रहा है। लेखक एक के बाद एक विडम्बनापूर्ण स्थितियों का दृश्यात्मक संयोजन करता गया है और विडम्बना में अन्तर्ग्रथित पात्रों के निहितार्थों और मनोवैज्ञानिक ग्रंथियों की तरफ़ भी संकेत करता गया है। इसी तरह 'इन्तज़ार' और 'इन्तज़ार का दूसरा रुख' नाटकों में इन्तज़ार में पड़े आदमियों की मानसिकता और मनोविज्ञान को रेडियो नाटक के शिल्प द्वारा उद्घाटित किया गया है। प्रेम-पात्र से मिलने की बेबसी, तड़प, उसकी मनःस्थिति से जुड़े छोटे-छोटे झूठ और चालाकियाँ और अन्त में प्रेम-पात्र के ठीक सामने पड़ने पर अनदेखा किया जाने का भाव विचलित कर देता है। इससे स्थिति की विडम्बना तो खुलती ही है, चरमबिन्दु का भी निषेध होता है। यह विडम्बनापूर्ण स्थिति परंपरित चरमबिन्दु का निषेध करने में सहायक हुई है।

मंटो के कई नाटकों में व्यंग्य दृष्टि और फार्स का सम्मिलित विधान हुआ है।

ऐसे नाटक राजनीतिक-सामाजिक स्थितियों से लेकर व्यक्तिगत स्थितियों तक जुड़े हुए हैं। व्यंग्य के साथ-साथ हास्य, विद्रूप और क्रीड़ा का विधान 'कमीशन' और 'बीमार' नाटकों में देखा जा सकता है। 'कमीशन' में आधुनिक न्याय प्रणाली पर चुभता हुआ व्यंग्य है। आधुनिक काल में शासकों द्वारा कमीशन-दर-कमीशन बैठाकर न्याय पद्धति का जो विद्रूप खड़ा किया जाता है, यह फार्स नाटक उसी का उदाहरण है। 'बीमार' नाटक की थीम में कोई नयापन नहीं है, लेकिन हास्य-व्यंग्य की स्थितियों का नाटकीय संयोजन ध्यान आकृष्ट करता है।

प्रेम और यौन संबंधों पर मंटो ने बहुत लिखा है। यह उनकी कहानियों और नाटकों की प्रिय थीम है। प्रेम उनके लिए कोई सरल, इकहरा अनुभव नहीं है, बल्कि एक संपूर्ण अनुभव है। उनकी कहानियों में इन संबंधों के सैकड़ों रूप मिलेंगे। कहानियों में जैसे उन्होंने प्रेम की मिथकीय धारणा को तोड़ा वैसे ही नाटकों में भी। नाटकों में उन्होंने प्रेम और यौन के विभिन्न पक्षों और उनकी जटिलताओं को विभिन्न संदर्भों और कोणों से प्रस्तुत किया है। उनका नाटक 'कबूतरी' हो या 'टेढ़ी लकीर', 'नीली रगें' हो या 'कमरा नम्बर 9', 'अकेली' हो या 'रणधीर पहलवान', 'चूड़ियाँ' हो या 'माचिस की डिबिया', 'खुदकुशी' हो या 'ममता की चोरी', 'उसका रामू' हो या 'मुहब्बत की पैदाइश' या 'ईद कार्ड', इनमें प्रेम और यौन संबंधों की कई सामान्य, असामान्य दशाएँ नाटकीय अन्दाज़ में प्रतिफलित हुई हैं। 'कबूतरी' नाटक में प्रेम के अपूर्व स्वरूप का निरूपण हुआ है। कम्बलपोश का दुर्गी से प्रेम है लेकिन इससे पहले कि वह अपने प्रेम का इज़हार कर सके, दुर्गी का विवाह थानेदार से हो जाता है। थानेदार को अपनी पत्नी दुर्गी के कम्बलपोश से प्रेम-संबंध का भ्रम होता है और वह दुर्गी पर गोली चला देता है। थानेदार कबूल करता है कि उसने एक कबूतरी को जिसे एक बाज़ दबोचे हुए था, फायर किया था जबकि दुर्गी ने थानेदार को अपने पर गोली चलाते हुए देख लिया था। यही नाटक का चरमबिन्दु है। कबूतरी मासूमियत और निर्दोषता का प्रतीक है जिसे नाटक का अन्त गहराता है। नाटक के अन्त में कम्बलपोश का यह कहना कि दुर्गी का हत्यारा वह है, उसके प्रेम की पराकाष्ठा को व्यंजित करता है। इस व्यंजना में लेखक ने संगीतात्मक ध्वनियों का अच्छा उपयोग किया है।

औरत-मर्द के विचित्र-से और जटिल संबंधों को लेकर मंटो ने कई नाटक लिखे हैं। 'कमरा नंबर 9' में असाधारण के प्रति औरत के सहज आकर्षण और समर्पण भावना को बड़े रोचक और कौतूहलवर्द्धक ढंग से व्यक्त किया गया है। इसी भाव को 'टेढ़ी लकीर' नाटक में अपने ही अन्दाज़ में व्यक्त किया गया है। जिस लड़की के साथ जावेद का निकाह तय है, उसे ही वह अगवा करके प्रेम के एहसास में ताज़गी और तीव्रता महसूस करना चाहता है। जावेद उसी लड़की को अगवा करता है ताकि वह थ्रिल अनुभव कर सके जिसे शादी से जुड़ी रस्में और रूढ़ियाँ खत्म कर देती हैं। इसी तरह 'नीली रगें' में औरत-मर्द के रहस्यमय संबंधों और अजनबी औरत के साथ प्रेमानुभूति की विशिष्टता को नाटकीय अभिव्यक्ति प्रदान की गई है। प्रेम-व्यापार सचमुच बड़ा विचित्र है। प्रेमी-प्रेमिका के आपसी रिश्तों, लगावों, तनावों में एक असामान्य किस्म

की विचित्रता रहती है। 'मुहब्बत की पैदाइश' में प्रेमी के असामान्य व्यवहार से प्रेमिका के मन में मुहब्बत पैदा होने की स्थिति का नाटकीय विधान किया गया है। 'खुदकुशी' भी एक दिलचस्प नाटक है। प्रेमी के साथ शादी न हो पाने की स्थिति में प्रेमिका का खुदकुशी करने का इरादा और फिर प्रेमी जोड़ों के प्रेमानुभवों को सुनकर खुदकुशी के इरादे को स्थगित कर देना इस नाटक की थीम है। औरत और चाचा के बीच के संवाद बड़े सधे ढंग से कथित हैं और उनकी अन्तर्निहित भावनाओं और रवैयों को दर्शाते हैं। खुदकुशी जैसे मारक और घातक अनुभव को मंटो ने एक क्रीड़ा के रूप में प्रस्तुत किया है, यही इस नाटक की अन्तर्निहित नाटकीयता है।

मंटो के नाटकों में प्रेम से जुड़ी लगाव, अलगाव की विषम, विसंगत और द्वंद्वपूर्ण स्थितियों को भी नाटकीय कौशल से उभारा गया है। 'अकेली', 'चूड़ियाँ' और 'सलीमा' ऐसे ही नाटक हैं। 'अकेली' और 'चूड़ियाँ' नाटकों में घटनाएँ अप्रत्याशित रूप से घटित होती हैं और संभावनाओं-असंभावनाओं के बीच झूलते प्रेम संबंधों की विभिन्न मनोदशाएँ—उम्मीद, मायूसी, अकेलापन व्यंजित हो जाते हैं। मंटो के अधिकांश पात्रों की तरह 'सलीमा' की सलीमा भी एक जटिल चरित्र है। वह अपने ढंग की ज़िन्दगी जीती है—लोगों से निरपेक्ष और एकांत में, विपरीत परिस्थितियों से जूझती हुई मर जाती है। नाटक के अन्त में उसका अनवर के प्रति लगाव ज़रूर झलकता है। लगाव-अलगाव के द्वंद्व को झेलते हुए उसका अन्त हो जाता है।

मंटो के कई नाटकों में मानवीय स्वभाव की विभिन्न परतों को उघाड़ा गया है। 'इस मंझधार में' और 'रूह का नाटक' में इसे देखा जा सकता है। ट्रेन-दुर्घटना में अमज़द का अपाहिज़ हो जाना और उसकी पत्नी सईदा का बच जाना, दोनों के संबंधों को कैसे बदल देता है, यह इस नाटक की धुरी है। सईदा और मजीद (अमज़द का छोटा भाई) के संबंध एक जटिल स्थिति में नये आयाम जोड़ देते हैं तो अमज़द और असगरी के संबंध उन्हें एक त्रासद अन्त की तरफ़ ले जाते हैं। अमज़द, सईदा और मजीद को इस स्थिति से निकलने का कोई रास्ता नहीं दिखता, अन्ततः असगरी और अमज़द आत्महत्या करके इस स्थिति से उबरते हैं। अपाहिज़ हो चुके व्यक्ति के संदर्भ में अन्य व्यक्तियों की सोच, उनका द्वंद्व, उनकी भीतरी दुनिया की सच्चाइयाँ, अपाहिज़ हुए व्यक्ति के दबाव और तनाव नाटक को अर्थवान बना देते हैं। इस नाटक का दृश्य-विधान सिनेमाई और रंगमंचीय दोनों प्रकार का है। दृश्यबंधों को सिनेमाई पटकथा की पद्धति पर रखा गया है। 'रूह का नाटक' एक अलग तरह का नाटक है जो इंसान की समूची पहचान को अपना विषय बनाता है। इन्सान के बौद्धिक और भावनात्मक पक्षों के बीच निरन्तर एक संघर्ष चलता रहता है। यह संघर्ष अकसर प्रेम संबंधों और पारिवारिक रिश्तों को लेकर होता है और अन्ततः रूह के अनश्वर अस्तित्व तक ले जाता है। मंटो ने इस नाटक में मानवीय स्वभाव के विभिन्न रूपों और रंगों को मनोवैज्ञानिक धरातलों पर निरूपित करते हुए, उसका बोध कराया है। यह सही है कि पूरे नाटक पर अवधारणाएँ हावी हैं, तो भी नाटककार ने पहचान के संकट से जुड़े संदर्भों का नाट्यात्मक विन्यास किया है।

पाबन्दियों से घिरा हुआ वजूद और उन्हें झटकने की प्रवृत्ति को लेकर मंटो ने कई कहानियाँ और नाटक लिखे हैं। इस ढंग की कहानियों की वस्तु मुख्यतः, वेश्या-जीवन से संबंधित है। वेश्याओं के जीवनगत विसंगतियों और तल्खियों को जिस तरह एक खास ढंग से उन्होंने कहानियों में उतार दिया है, कुछ वैसा ही कौशल उनके नाटकों में मिलता है। 'हतक' इस थीम पर लिखी उनकी प्रसिद्ध कहानी है। इस कहानी को आधार बनाकर उन्होंने 'हतक' शीर्षक से नाटक भी लिखा है। कहानी को दृश्यों में बाँधने का और नाटकीय संवादों के ज़रिए केंद्रीय पात्र सुगन्धी की मनःस्थितियों को खोलने और उन्हें नाटकीय कार्य की तरफ़ ले जाने की कला इस नाटक में 'हतक' कहानी से कम नहीं है। इसी तरह 'करवट' नाटक में वेश्या का सुधार करने की आड़ में मियाँ का पाखंडपूर्ण व्यवहार और आचरण नाटक के अन्त में जिस तरह खुलता है और सुन्दरी पर उसकी जो प्रतिक्रिया होती है, उससे मध्यवर्गीय मानसिकता तार-तार होकर सामने आ जाती है। इसी तरह 'क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ' नाटक में इस ज़िन्दगी के एक अछूते पहलू को मंटो ने कलात्मकता से पकड़ा है। हर जगह मल्कीयत, अहं और स्वार्थ से घिरा व्यक्ति महसूस करता है, केवल एक वेश्या का घर है जहाँ कोई पाबन्दी नहीं, जहाँ सभी का स्वागत है, जहाँ होने का एक अर्थ है और चीज़ों को देखने-परखने में अपनापन है। सभ्य कहे जाने वाले लोगों के परायेपन और समाज के उपेक्षित वर्ग की सवेदनशीलता को लेखक ने नाटकीय स्थितियों में ढालकर अभिव्यक्त किया है।

इन नाटकों में मंटो की संवेदना और सोच का दायरा काफ़ी विस्तृत है—वैयक्तिक सरोकारों, आकांक्षाओं और कुंठाओं से लेकर सामाजिक और राजनीतिक चिन्ताओं और विद्रूपताओं तक। 'जुर्म और सज़ा' में पाप-पुण्य का प्रश्न उठाया गया है तो 'जर्नलिस्ट' में अब्दुल बारी जैसे पत्रकार की परेशानियों और तकलीफ़ों को व्यक्तिगत धरातल से राजनीतिक धरातल तक फैलाया गया है।

मंटो ने इतिहास में तानाशाहों के रूप में प्रसिद्ध रहे सुलतानों और शहंशाहों को अपने कई नाटकों का विषय बनाया है। 'जनाज़े' संग्रह के सभी नाटकों में कठोर और क्रूर माने जाने वाले शासकों, तानाशाहों के जीवन की लगभग अंतिम झाँकियाँ देने के प्रयत्न किए गए हैं। इनमें मंटो ने मानव नियति और मृत्यु के संदर्भों को आमने-सामने रखकर बड़े से बड़े तानाशाह की बेबसी और अकेलेपन का बोध कराया है। इन नाटकों से पता चलता है कि मंटो ने विश्व-इतिहास का गहरा अध्ययन किया था, ऐतिहासिक प्रक्रियाओं की समझ अर्जित की थी और नाटकों में उसका उपयोग किया था। तत्कालीन राजनीति की अन्तर्धाराएँ और संचालन तत्त्व भी किसी न किसी रूप में इन नाटकों में आ जुड़े हैं। इतिहास, राजनीति और शहंशाहों की ज़िन्दगियों के अंतरंग प्रसंग इन नाटकों में घुलमिल गए हैं। 'रासपुतिन की मौत' हो या 'नेपोलियन की मौत', इन नाटकों में तानाशाहों की ज़िन्दगी के आखिरी दौरों की अन्दरूनी दास्तां को, उनके अनुभवों, आकांक्षाओं, सपनों और त्रासदियों को चित्रित किया गया है। लेखक का दृष्टिकोण संतुलित और मानवीय है और उसने उन स्थितियों को उठाया है जिनमें नाटकीयता है। 'बाबर की मौत' हो या 'टीपू सुलतान की मौत', 'शाहजहाँ

की मौत' हो या 'चंगेज खाँ की मौत', 'रासपुतिन की मौत' हो या 'नेपोलियन की मौत', 'तैमूर की मौत' हो या 'किलोपेट्रा की मौत', घटनाओं को नाटकीय विधान में प्रस्तुत करने का लेखकीय कौशल साफ़ नज़र आता है।

ये नाटक मंटो की सृजनात्मक शक्ति के एक भिन्न पहलू के परिचायक हैं। हिन्दी में चूंकि ये नाटक पहली बार पुस्तकाकार आ रहे हैं, इसलिए कहानियों के बल पर पहले से बनी मंटो की मिथ को तोड़ सकते हैं, पुरानी मिथ को पुख्ता भी कर सकते हैं और बिलकुल नयी मिथ बना भी सकते हैं। इन नाटकों के बारे में पाठकों की प्रतिक्रियाओं की मुझे उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा रहेगी।

—नरेन्द्र मोहन
239-डी, एम० आई० जी० फ़्लैट्स
राजौरी गार्डन
नई दिल्ली-110027

आधार

उर्दू में मंटो के नाटकों के कई संग्रह—करवट, कबूतरी, मंटो के ड्रामे, जनाज़े, आओ और तीन औरतें प्रकाशित हो चुके हैं। अफ़साने और ड्रामे तथा रत्ती, माशा और तोला जैसे कहानी-संग्रहों में भी उनके कई नाटक संकलित हैं, लेकिन हिन्दी में उनके नाटकों का एक भी संकलन उपलब्ध नहीं है। हिन्दी में संपादित मंटो के एक-दो कहानी-संकलनों में 'इस मँझधार में', 'जेबकतरा' और 'कबूतरी' नाटक ज़रूर मिल जाते हैं जिससे उनकी नाटक लिखने की योग्यता का आभास मिलता है। इन नाटकों को पढ़ने के बाद मैं उनके अन्य नाटकों को पढ़ने में प्रवृत्त हुआ और जैसे-जैसे उनके नाटक पढ़ता गया, उनके नाटककार की पहचान और शख्सियत मेरे सामने उभरती गयी। तभी मेरे मन में आया कि मंटो के नाटकों की एक बड़ी पुस्तक संपादित की जाए जिससे मंटो के नाटककार रूप और उनकी शख्सियत को हिन्दी पाठक जान-पहचान सकें। **सआदत हसन मंटो के नाटक** ऐसी ही पुस्तक है जिसमें मंटो के नाटकों को, उनके नाटककार रूप को पहली बार हिन्दी पाठकों के सामने लाने का प्रयत्न किया गया है। ये नाटक श्रव्य-माध्यम द्वारा प्रस्तुत किए गए थे, अतः उर्दू, हिन्दी भाषाओं की साझी विरासत हैं।

इस पुस्तक के अधिकतर नाटक **करवट, मंटो के ड्रामे** और **जनाज़े** संग्रहों से लिए गये हैं। शेष नाटक उनके अन्य संग्रहों में बिखरे मिल जायेंगे। इस पुस्तक में मंटो का संपूर्ण नाटक साहित्य संग्रहीत है, यह दावा नहीं है, लेकिन यह उनके नाटकों का संकलन-भर भी नहीं है। यह एक ऐसा दस्तावेज़ बन गया है जो पीढ़ियों के फ़ासले को पाटता हुआ हमसे आ जुड़ता है—हमें समृद्ध करता हुआ, सार्थक बनाता हुआ।

प्रस्तुत पुस्तक में मंटो के नाटकों को उनके नाटक-संग्रहों के प्रकाशन वर्ष के हिसाब से नहीं रखा गया, न ही यहाँ नाटकों को उस क्रम से दिया गया है जिस क्रम से उनके संग्रहों में मौजूद हैं। नाटकों को यहाँ तीन भागों में बाँटा गया है—'इस मँझधार में', 'करवट' और 'जेबकतरा'। प्रयत्न यह रहा है कि प्रत्येक भाग में मंटो के नाट्य-कर्म की विविधता यानी उनके नाटकों के विभिन्न धरातलों, रंग-रूपों, नाट्य-प्रवृत्तियों और शैलियों का प्रतिनिधित्व हो सके।

मंटो के इन नाटकों का अनुवाद करने में श्री शंभु यादव ने विशेष सहयोग प्रदान किया है। मैं उनके प्रति आभारी हूँ। अनुवाद-कार्य को मूल के साथ मिलाकर देखने-

परखने में श्री देवेन्द्र इस्सर ने अनुवाद को एक ऐसी लय में बाँधने का प्रयत्न किया है जो मूल के करीब है और नाटकीय भी, साथ ही मंटो की शैली और खास अन्दाज़ को भी बरकरार रखा गया है। इस प्रक्रिया में मैं खुद भी शामिल रहा हूँ। मंटो के नाटकों को उपलब्ध कराने में डॉ० सादिक़ ने जो मदद की और उनके साथ जो विचार-विनिमय इस बीच चलता रहा, उसके लिए औपचारिक तौर पर उनका धन्यवाद करना बेमाने-सा लगता है।

—नरेन्द्र मोहन

इस मँझधार में

इस मँझधार में

पात्र

बेगम	:	माँ
अमज़द	:	बड़ा बेटा } बेगम के बेटे
मजीद	:	छोटा बेटा }
सईदा	:	अमज़द की नवेली बीवी
असगरी	:	सेविका
करीम और गुलाम मुहम्मद	:	नौकर

पहला दृश्य

[निगार विला का एक कमरा। उसकी सुन्दर शीशा लगी खिड़कियाँ पहाड़ की ढलानों की ओर खुलती हैं। दृष्टि की सीमा तक पहाड़ ही पहाड़ नज़र आते हैं जो आसमान के नीले रंग में स्वयं भी घुल-मिल गए हैं। खिड़कियों के नीले रेशमी परदे सुबह की मन्द-मन्द वायु से धीमे-धीमे सरसरा रहे हैं। यह कमरा जैसा कि साइज़, साज़बाज़ से मालूम होता है, अत्यन्त ही सुखवर्द्धक बनाया जा रहा है। दायें हाथ की खिड़कियों के पास सागौन का पलंग है। उसके साथ ही एक कोने में शीशे की तिपाई पर बिल्लौर की सुराही और शीशे के गिलास के अलावा एक टाइम-पीस भी रखी है। पीछे हटकर एक आरामदेह सोफ़ा सेट है जिस पर दो नौकर गद्दे सजा रहे हैं। उससे दूर हटकर एक नौजवान सेविका, जो मामूली शक्ल-सूरत की है, आतिशदान पर सजाई हुई विशेष चीज़ों को अधिक सजाने की कोशिश कर रही है। कमरे के वातावरण में ऐसी कोमलता है जो कठोरता के एक झोंके से तुरन्त ही छिन्न-भिन्न हो सकती है।

बाहर से टायलों पर लकड़ी की नन्ही-नन्ही चोट लगने की आवाज़ आती है। तीनों नौकर कुछ चौकन्ने हो जाने के बाद फिर अपने काम में लग जाते हैं। दरवाज़े से एक अधेड़ उम्र की आकर्षक स्त्री बैसाखियों की सहायता से अन्दर आती है और कमरे का मुआइना करने के बाद उस पर संतोष प्रकट करती है।]

बेगम साहब : (बैसाखियों की सहायता से इधर-उधर फिरकर तमाम चीज़ों को सही जगह पर देखकर संतोष प्रकट करते हुए) ठीक है ।

[एक बैसाखी को अपनी बगल से अलग करके सोफ़े की भुजा के साथ रखकर बैठना चाहती है लेकिन तुरन्त ही अपना इरादा बदल देती है । ऐसा करते हुए उसका एक हाथ सहारे के लिए सोफ़े की चमकीली भुजा के साथ छुआ और उस पर निशान पड़ गया । वह अपने दुपट्टे का एक कोना पकड़कर स्वयं ही मिट जाने वाला यह निशान मिटा देती है और फिर बैसाखी अपनी बगल में जमाकर नौजवान सेविका की ओर मुड़ती है । असगरी !]

असगरी : (तुरन्त चौकन्नी होकर) जी !

बेगम साहब : (एकदम यह अनुभव करके कि वह भूल गई है कि उउने असगरी को पुकारा था) मैं क्या कहने वाली थी ?

असगरी : (मुस्कराती है) आप यह कहने वाली थीं कि आपको संतोष नहीं हुआ···मैं भी यही समझती हूँ बेगम साहब—दुलहन बहुत खूबसूरत है। इस कमरे की तमाम सजावटें उसके सामने फीकी पड़ जाएँगी।

[वह आतिशदान के ऐन बीच में रेशमी डोरियों से लटकी हुई आनेवाली दुलहन की तस्वीर की ओर देखती है।]

बेगम साहब : (मुस्कराती हुई—आतिशदान की ओर धीमे-धीमे बढ़ती है और अपनी बहू की तस्वीर को ध्यान से देखती है । खुश होती है—लेकिन एकदम घबरा-सी जाती है) असगरी !

असगरी : जी !

बेगम साहब : सुबह से मेरी तबीयत कुछ घबरा-सी रही है ।

असगरी : अमज़द मियाँ जो आ रहे हैं अपनी दुलहन के साथ ।

बेगम साहब : (अपने विचारों में खोई-खोई) बस आने ही वाला है···कमाल मोटर ले गया है स्टेशन पर ।

असगरी : अगले साल मजीद मियाँ की शादी कर दीजिए—घर में रौनक-ही-रौनक हो जाएगी ।

बेगम साहब : खुदा मालिक है—वह भी ऐसी ही इज्ज़त और सुख पाएगी··· **(ओठों ही में)** ऐ खुदा !

असगरी : (दुलहन की तस्वीर की ओर देखती है और उसके सौंदर्य से बहुत प्रभावित होती है।) अल्ला बुरी नजर से बचाएं ?

बेगम साहब : कुछ नहीं···कराची से गाड़ी कब आती है ?

असगरी : मालूम नहीं, बेगम साहब ।

बेगम साहब : (एक नौकर से) देखो करीम, तुम टेलीफ़ोन करो और पूछो—लेकिन गाड़ी तो कल ही की रावलपिंडी पहुँच चुकी है—मजीद का तार जो आया था ।

करीम : जी हाँ ।

बेगम साहब : और मैंने कमाल को किस स्टेशन पर भेजा है? (**घबराकर**) खुदा मालूम मेरे दिमाग को क्या हो गया है···अमज़द मियाँ को रात रावलपिंडी रुकना था—अपने मित्र सैयद के पास—और वह तो मेरा खयाल है अब वहाँ से चल भी चुके होंगे (**दूसरे नौकर से**) गुलाम मुहम्मद !

गुलाम मुहम्मद : जी !

बेगम साहब : तुम देखो कमाल कहाँ है—मोटर कहाँ ले गया है ?

गुलाम मुहम्मद : बहुत अच्छा। (**चला जाता है।**)

बेगम साहब : (**असगरी के कंधे का सहारा लेकर**) आज सुबह से मेरी तबीयत ठीक नहीं। चलने-फिरने से अपाहिज़ न होती···इस कमबख्त डाक्टर ने, बदमिज़ाज ने मुझे मना न किया होता तो मैं दुलहन को साथ लाती। (**दूर से टेलीफ़ोन की घंटी की आवाज़ सुनाई देती है**) मेरा खयाल है शायद अमज़द मियाँ के दोस्त का टेलीफ़ोन है कि वे चल पड़े हैं। जाओ असगरी···भाग के जाओ।

[असगरी दौड़कर बाहर जाती है।]

बेगम साहब : (**करीम से अपनी बेचैनी दूर करने के लिए**) बस, अब आते ही होंगे अमज़द मियाँ।

करीम : अल्ला खैर-खैरियत से लाए।

बेगम साहब : (**करीब-करीब चीखकर**) क्या मतलब है तुम्हारा ?

करीम : (**डरकर**) जी, यही कि···जी यही···

[असगरी की चीखें सुनाई देती हैं : बेगम साहब, बेगम साहब !]

बेगम साहब : (**घबराकर**) क्यों, क्या हुआ ?

[असगरी भारी घबराहट की हालत में आती है।]

असगरी : बेगम साहब—बेगम साहब !

बेगम साहब : (**बैसाखियों को दोनों हाथों से मज़बूती से पकड़कर**) क्या है ?

असगरी : जी···मजीद मियाँ का टेलीफ़ोन आया है कि गाड़ी टकरा गई है।

बेगम साहब : (**बैसाखियों पर हाथों की पकड़ और ज्यादा मज़बूत हो जाती है**) फिर ?

असगरी : अमज़द मियाँ और उसकी दुलहन दोनों घायल हुए हैं और हॉस्पीटल में पड़े हैं।

बेगम साहब : (**हाथों की पकड़ ढीली पड़ जाती है—बैसाखियाँ बगल में से गिर पड़ती हैं। एक क्षण के लिए वह ऐसे खड़ी रहती है मानो वह पाषाण-प्रतिमा है—फिर उसमें थोड़ी-सी गति होती है और दरवाज़े की ओर बढ़ती है।**) कमाल से कहो, मोटर निकाले—हम रावलपिंडी जा रहे हैं।

[बेगम दरवाज़े की ओर बढ़ रही है। गुलाम मुहम्मद और असगरी दोनों आश्चर्य-चकित हैं। असगरी जोर से चीखती है—बेगम पलटकर उसकी ओर देखती है।]

बेगम साहब : क्या है ?

असगरी : आप···आप चल रही हैं···चल सकती हैं ।

बेगम साहब : मैं ? (अपनी बगल में बैसाखियों के न होने का अनुभव करते हुए) मैं कैसे चल सकती हूँ !

[एकदम चकराती है और फ़र्श पर गिरकर बेहोश हो जाती है।]

असगरी : (बेगम के पास जाते हुए गुलाम मुहम्मद से) गुलाम मुहम्मद, जाओ, डाक्टर साहब को टेलीफ़ोन करो।

[गुलाम मुहम्मद चला जाता है। असगरी बेगम को होश में लाने की कोशिश करती है।]

दूसरा दृश्य

[वही कमरा जो पहले दृश्य में है—ऐसा मालूम होता है कि उसमें जो साज़-सामान पड़ा था अब अपना नया-नवेलापन खो चुका है। अब हर चीज़ देर की इस्तेमाल की हुई मालूम होती है। सुबह का वक्त है। खिड़कियों के रेशमी परदे सुबह की हल्की हवा से सरसरा रहे हैं। दाहिने हाथ की ओर से सागौन के पलग पर दुलहन सईदा कम्बल ओढ़े लेटी है। शीशे की तिपाई पर पड़ी नन्ही टाइमपीस जिसमें नौ बजे हैं, बजना शुरू कर देती है—हल्की-सी घंटी की आवाज़ पैदा होती है—सईदा करवट बदलती है और आँखें खोलती है। झुककर नन्ही टाइमपीस की ओर देखती है और मुस्कराती है। ऐसा करते हुए उसके सुन्दर चेहरे पर छाई हुई घनी पलकें भिड़भिड़ाती हैं। करवट बदलकर वह बिस्तर पर तकियों का सहारा लेकर ऊपर उठ जाती है और बाहर दृष्टि की सीमा तक फैली हुई पहाड़ियों का मनोहारी दृश्य देखकर बच्चों की-सी उत्सुकता अनुभव करती है। फिर एकदम टाँगें चलाकर कम्बल ऊपर से हटाती है और उचककर पलंग से उतर जाती है। तत्पश्चात् खिड़की का परदा हटाकर बाहर देखना शुरू कर देती है—किसी प्रमोद-पूर्ण पक्षी की आवाज़ सुनाई दे रही है। सईदा अपने विचारों में डूबी हुई है। वह जवान है। शबखवाबी का ढीलाढाला रेशमी ड्रेस भी, जो उसके शरीर से दूर-दूर अपनी फहराती दुनिया अलग बसाए है, उसके सुन्दर शरीर से अपरिचित नहीं है और स्वयं सईदा का मन भी कि उसका सौन्दर्य उच्चकोटि का है, इस बात से बेखबर नहीं। असगरी की सुरीली आवाज़ पक्षी के प्रमुदित स्वर का हू-ब-हू अनुकरण उपस्थित करती है और सईदा चौंकती है।]

सईदा : (निगाहों ही निगाहों में) क्या है ?

असगरी : मजीद मियाँ अभी-अभी अस्पताल से आए हैं। कहते थे, अब जाकर देखो जग गई हैं या नहीं ?

सईदा : क्या खबर लाए हैं ?

असगरी : मैं उन्हें पूछती हूँ।

[असगरी चली जाती है। सईदा खिड़की के पास से हटकर शृंगार-मेज़ के पास आती है और शीशे में एक क्षण के लिए अपनी निरख-परख करती है। दोनों हाथों से अपने बाल सरसरी तौर पर ठीक करके पलंग की ओर धीमे-धीमे बढ़ती है। पलंग के सिरहाने उसका जार्जेट का सफेद दुपट्टा लटक रहा है। उसे उतारकर बड़ी सावधानी से अपने कन्धों पर डाल लेती है—तभी बाहर से बूटों की चरमराहट सुनाई देती है। मामूली उत्सुकता के साथ सईदा दरवाज़े की ओर देखती है—मजीद—साँवले रंग का—मध्यम कद का नौजवान है जिसके हाथ-पाँव मज़बूत हैं और जिसके चेहरे का ढाँचा उसकी उम्र के लिहाज़ से अधिक सुन्दर और मज़बूत है, अन्दर प्रवेश करता है।]

मजीद : सलाम भाभीजान !

सईदा : सलाम।

मजीद : (सोफ़े के पास आकर रुकते हुए) तबीयत कैसी है आपकी ?

सईदा : (बेदिली से) ठीक है। (सोफ़े पर बैठ जाती है।) सुनाइए, क्या खबर लाए रावलपिंडी से ?

मजीद : (सईदा के सामने आकर) कोई विशेष नहीं। (आधी-सी आह भरकर) बस, अब उन्हें ले आएँगे यहाँ।

सईदा : क्यों ?

मजीद : वे तंग आ गए हैं। (एक मूढ़ा घसीटकर उस पर बैठते हुए) उनकी जगह मैं होता तो···बहुत सम्भव है मैंने आत्महत्या कर ली होती।

सईदा : (उठकर खिड़की की ओर जाते हुए) क्या मालूम था कि मेरी किस्मत में यह लिखा है···इतने आदमी मरे···मैं भी साथ ही मर गई होती।

मजीद : लेकिन यह अल्ला को मंज़ूर नहीं था।

सईदा : (खिड़की के बाहर पहाड़ों का दृश्य देखती है) हाँ, यह अल्ला को मंज़ूर नहीं था—अल्ला को यह मंज़ूर था कि मेरी टाँग पर मामूली खराश आए, पर मेरी सारी ज़िंदगी घावों से चूर-चूर हो जाए। (आँखों से आँसू टपकने लगते हैं। सफ़ेद दुपट्टे से धीमे-धीमे वह उन्हें पोंछती है) अल्ला को यह मंज़ूर था कि मेरे सुहाग की कमर टूट जाए और मैं सारी उम्र हवा में कटी हुई पतंग की तरह डोलती रहूँ।

[सिसकियाँ लेती है।]

मजीद : (उठता है) भाभीजान, हिम्मत से काम लेना चाहिए। क्या पता है वे ठीक हो जाएँ ?

सईदा : (**प्रार्थना के तौर पर**) मजीद, तुम तो कम-से-कम मुझे धोखा देने की कोशिश न करो। उन्हें अस्पताल की चारपाई पर लगे छः महीने हो गए हैं। डाक्टरों का जो फ़ैसला है मैं उसे अच्छी तरह जानती हूँ। वे कभी ठीक नहीं हो सकते, उनकी दोनों टाँगें बेकार हो चुकी हैं। लेकिन···लेकिन मैं एक बात मानती हूँ कि उनमें बहुत हिम्मत है। मैं जब भी उनके पास गई उन्होंने मुझे पास बिठाकर कहा—सईदा, कुछ फ़िक्र न करो। मैं बहुत जल्द तन्दुरुस्त हो जाऊँगा···और फिर मैं तुम्हें उन पहाड़ियों की सैर कराऊँगा जिनका ज़िक्र कराची में तुम मेरे मुँह से कई बार सुन चुकी हो। मुझे इन पहाड़ियों से प्यार है—इतना प्यार है कि तुम उनके बारे में और सुनोगी तो शक करोगी। और वे मुझे साहस देने लगते कि सईदा, दुनिया आशंकाओं का दूसरा नाम है। मैं तो खुदा का शुक्र करता हूँ कि मेरी जान नहीं गई···नहीं तो···फिर वे ऐसी बातें करते कि मेरे रोंगटे खड़े हो जाते।

मजीद : क्या ?

सईदा : (**नीरव आँखों से शून्य में देखते हुए**) कि तुम···मेरे बाद किसी और की हो जाओगी··· (**काँप जाती है**)···वह···ऐसी बातें क्यों सोचते हैं, मजीद ?

मजीद : मालूम नहीं।

सईदा : तुम्हें मालूम होना चाहिए। (**धीमे-धीमे पैर उठाती सोफ़े पर बैठ जाती है। दुपट्टा ढलक आता है। हल्के ड्रेस में उसका उभरा हुआ वक्ष उतार-चढ़ाव पैदा करता है।**) तुम मरद हो···तुम उनके भाई हो···यदि इस दुर्घटना के तुम शिकार होते···तो ?

मजीद : मैं कभी ऐसी बातें न सोचता जो अमज़द भाई सोचते हैं।

सईदा : क्यों ?

मजीद : हम दोनों मरद हैं। दोनों भाई हैं। लेकिन दिल और दिमाग के लिहाज़ से हम दोनों बहुत भिन्न हैं।

सईदा : (**बड़बड़ाती है**) दिल और दिमाग !

[असगरी का प्रवेश]

असगरी : मजीद मियाँ, आपको बेगम साहब बुलाती हैं।

मजीद : चलो, मैं आता हूँ।

असगरी : उन्होंने कहा है, जल्दी जाइए।

मजीद : अच्छा··· (**सईदा की ओर देखकर**) मैं अभी आता हूँ। (**चला जाता है।**)

[असगरी फ़र्श पर बिछे हुए कालीन पर सईदा के पैरों के पास बैठ जाती है और उसके पाँवों की उँगलियों को चटखाना चाहती है।]

सईदा : (**पाँव एक ओर खींचकर**) जाने दो असगरी।

असगरी : (**पाँवों से लगभग लिपटकर**) नहीं दुलहन बेगम। (**उँगलियाँ चटखाना शुरू कर देती है**) क्या खबर लाए हैं मजीद मियाँ ?

सईदा : कहते थे कि वे यहाँ आना चाहते हैं।

असगरी : यह तो बड़ी खुशी की बात है।

सईदा : **(दुःख के साथ)** हाँ।

असगरी : कुछ नहीं, इनका मिज़ाज आजकल बहुत चिड़चिड़ा-सा रहता है। इन्हें कोई बात अच्छी नहीं लगती। इन्हें अमज़द मियाँ का इतना दुःख नहीं जितना आप का है···हर समय आपके बारे में ही सोचती रहती हैं। तो···अमज़द मियाँ ठीक हो गए हैं न ?

सईदा : **(चिढ़कर, अपना पाँव हटाकर उठते हुए)** हाँ, ठीक हो गए हैं।

[बेगम कमरे में प्रवेश करती है।]

सईदा : सलाम खालाजान !

बेगम साहब : सलाम बेटी। जीती रहो। **(पास आकर सईदा के सिर पर प्यार का हाथ फेरती है)** तुम्हें मालूम हो गया मजीद से कि···

सईदा : जी हाँ।

बेगम साहब : बेचारा तंग आ गया है वहाँ अस्पताल में। **(असगरी की ओर देखकर)** असगरी, तुम जाओ।

[असगरी चली जाती है।]

बेगम साहब : उसकी···उसकी इच्छा है कि वह तुम्हारे पास रहे···उसने मुझसे कहा कि यदि मुझे मरना ही है तो मेरी सईदा मेरी नज़र के सामने होनी चाहिए।

[सईदा की आँखों में से आँसू छलक पड़ते हैं और बेगम के गले से लग जाती है।]

बेगम साहब : **(आँखों से आँसू बह रहे हैं)** वह···वह तुमसे बेहद प्रेम करता है···लेकिन ···लेकिन उसने कहा था कि तुमसे पूछ लिया जाए कि तुम्हें उसके यहाँ आकर रहने में कोई एतराज़ तो नहीं।

सईदा : एतराज़···

बेगम साहब : हाँ बेटा···हो सकता है···यों तुम्हारा दुःख बढ़ सकता है।

सईदा : वे ऐसा क्यों सोचते हैं ? खालाजान, वे ऐसा क्यों सोचते हैं ?

बेगम साहब : बेटा, वह कुछ ऐसे ही दिल-दिमाग का आदमी है···उसको दूसरों का हमेशा खयाल रहता है।

सईदा : आएँ···क्यों न आएँ। **(कहने में चीख-सी पैदा हो जाती है)** वे ऐसी बातें न किया करें।

बेगम साहब : डाक्टरों ने कहा है, यदि वह खुश रहे तो अल्ला की मेहरबानी से एक-दो महीने में बैसाखियों पर चल-फिर सकेगा··· **(एकदम फूट-फूटकर रोने लगती है)** बैसाखियाँ···जो उसकी गाड़ी की दुर्घटना की खबर सुनते ही मेरी ज़िन्दगी से अलग हो गई थीं। यदि मुझे पता होता कि ये उसकी ज़िन्दगी में आने वाली हैं तो मैं उनको मज़बूती से पकड़े रहती···लेकिन बेटा, इस मँझधार में जिसे ज़िन्दगी

कहते हैं मज़बूत से मज़बूत किश्ती ले डूबती है और एक मामूली तिनका किनारे लगा देता है। (इसके बाद) सईदा बेटी, अमज़द ने मुझसे एक और बात तुमसे पूछने को कहा था।

सईदा : क्या खालाजान ?

बेगम साहब : क्या तुम उससे प्रेम करोगी ?

सईदा : (बौखलाकर) प्रेम···

बेगम साहब : (सईदा के सिर पर हाथ फेरती है) मैं तुम्हें ज्यादा परेशान नहीं करना चाहती··· (चली जाती है।)

सईदा : (वह दुपट्टे से अपने आँसू पोंछती हुई बड़बड़ाती है) प्रेम···प्रेम ?···दिल-दिमाग में—(धीरे-धीरे पैर उठाती आतिशदान के ऐन ऊपर रेशम की डोरियों में लटकी हुई अपनी तस्वीर के सामने खड़ी हो जाती है) बता—बता, क्या तू उससे प्रेम करेगी ?

[ट्रे में रखी हुई प्यालियों की आवाज़ आती है। असगरी नाश्ता लिए हुए अन्दर प्रवेश करती है। पहियोंवाली तिपाई सोफ़े के आगे ले जाती है और उस पर नाश्ता रख देती है।]

असगरी : दुलहन बेगम अमज़द मियाँ से प्रेम न करेंगी तो और किससे करेंगी ?

सईदा : (एकदम चौंकती है) क्या, क्या ?

असगरी : जी, कुछ नहीं···ऐसे ही अपने-आपसे बातें कर रही थी···नाश्ता कर लीजिए।

सईदा : तुम जाओ।

असगरी : जी, अच्छा।

[असगरी एक नज़र सईदा को और एक नज़र उसकी तस्वीर को देखती बाहर चली जाती है। सईदा धीरे-धीरे सोच में सोफ़े की ओर बढ़ जाती है और पलंग पर लेट जाती है।]

सईदा : (छत की ओर देखते हुए बड़बड़ाती है) दुलहन बेगम अमज़द मियाँ से प्रेम नहीं करेगी तो और किससे करेगी—(ऊँची आवाज़ में) और कौन करेगी ? और कौन कर सकती है ?

तीसरा दृश्य

[निगार विला के सामने का बगीचा। आदमी के कद के बराबर तराशी हुई झाड़ियाँ और उनके बीच में एक फ़व्वारा है जिसमें से पानी की फुहार झड़-झड़कर बाहर निकल रही है। धूप खिली है। आकाश साफ़ है, प्रकृति में अजीब-सा क्वारापन है

और वह अपने सौंदर्य-प्रदर्शन से लालायित होकर जैसे बार-बार निमंत्रण दे रही है। ऐसा मालूम हो रहा है हवा चलते-चलते ठहर गई है कि बाग की बेलें फिर से अपना सौंदर्य सँभाल लें। फूल अपने गालों की सुर्खी सँभाल लें और भँवरों को जिन कलियों का मुंह चूमना है, निडर होकर चूम लें। इस वातावरण में कालीन पर कुर्सियाँ बिछी हैं, जिनमें से एक में सईदा गुलाबी ड्रेस में ठीक अपना ही अक्स बनी बैठी है। धूप की तेज़ी से, उसकी थोड़ी-सी कड़ाई से मुख की अरुणाई किरणें बनकर निकल रही है। दूसरी कुर्सी में मजीद है जो धीरे-धीरे सिगरेट के कश लगा-कर धुएँ के नीले-नीले छल्ले मुँह से निकाल रहा है। उसका चेहरा गमगीन है। सामने अमज़द है—अपाहिज़ों की कुर्सी में। उसके चेहरे पर अपाहिज़ों का-सा भाव है जो किसी और की सहायता के बिना नहीं चल सकता। उसका रंग बहुत पीला है, लेकिन उसकी आँखों में चमक है जो सईदा के सौंदर्य और जवानी की आशा है।]

अमजद : (**अपने दायें-बायें देखकर**) आज मौसम कितना सुहावना है।

सईदा : (**तुरन्त सतर्क होकर**) जी हाँ।

अमजद : मजीद, जाओ सईदा को घुमा लाओ···उन पहाड़ियों की सैर करा लाओ··· (**पीछे मुड़कर देखना चाहता है**) दुःख है कि मुझसे मुड़ा नहीं जाता···मजीद, उठो, मेरी कुर्सी घुमाकर इधर कर दो···वह दृश्य मेरी आँखों के सामने होना चाहिए।

[मजीद उठता है लेकिन सईदा उससे पहले उठकर कुर्सी का मुँह फेर देती है। अब तीनों का मुँह पहाड़ियों की ओर है जो धूप में दृष्टि की सीमा तक अपना मुँह धो रही हैं।]

अमजद : (**पहाड़ियों में दृश्य को अपनी निगाहों से पीसते हुए**) सईदा, ये ही वे पहाड़ियाँ हैं जिनसे मुझे प्यार है। इतना प्यार कि मैं कह नहीं सकता··· (**मजीद से**) जाओ मजीद, सईदा को साथ ले जाओ और उनकी सैर कराओ। (**सईदा से**) जब तुम उन पर चढ़ते-चढ़ते हाँफने लगोगी और तुम्हारी साँस रुकने लगेगी तो तुम्हें ऐसा लगेगा कि उससे बढ़कर दुनिया में कोई आनन्द नहीं। मैं मजीद को ज़बरदस्ती साथ ले जाया करता था, लेकिन यह एक चढ़ाई के बाद हिम्मत हार देता था और मुझसे कहता था—भाईजान, मुझे आपका यह शगल पसन्द नहीं···यह क्या कि आदमी बेकार में हाँफ-हाँफकर बेबस हो जाए। (हँसता है) पहाड़ियाँ और उनके जीतने का विचार उसके दिल में कभी नहीं आएगा···क्यों सईदा ?

सईदा : (**मुस्कराकर**) जी हाँ।

अमजद : (**मजीद से**) जाओ यार···सईदा को ले जाओ···कभी काम भी किया करो।

मजीद : (**सईदा से**) चलिए भाभीजान, लेकिन मैं शर्त लगाता हूँ, आज तो यह चली जाएँगी लेकिन फिर कभी उधर को रुख न करेंगी।

सईदा : नहीं, नहीं, यह आप कैसे कह सकते हैं ?

अमजद : इसलिए कि यह और दिल-दिमाग का आदमी है।

सईदा : दिल-दिमाग ?·· यह क्या बला है दिल-दिमाग ?

मजीद : आपको एक ही पहाड़ी चढ़ने से मालूम हो जाएगा।

अमजद : (हँसता है) तुम बकते हो मजीद। सईदा की ज़िंदगी के सामने तो एक पहाड़ है। यदि यह एक मामूली पहाड़ी की चढ़ाई से उकता गई तो···

सईदा : चलिए मजीद मियाँ।

मजीद : चलिए।

[दोनों चले जाते हैं···अमजद मुस्कराता है। असगरी प्रवेश करती है। उसके हाथों में प्लेट है जिसमें छिले और कटे हुए सेब हैं। वह अर्थभरी दृष्टि से मजीद और सईदा की ओर देखकर अमजद की ओर आती है और उसे कहती है—]

असगरी : थोड़े-से सेब खा लीजिए।

अमजद : (जो सईदा और मजीद दोनों को ढलानों पर उतरते देख रहा है) खा लूंगा।

असगरी : (उन्हीं की ओर देखकर) आज दुलहन बेगम कितनी सुन्दर दिखाई दे रही हैं।

अमजद : (एकदम पलटकर असगरी को देखते हुए) दिखाई दे रही हैं ?

असगरी : (हलकी-सी बौखलाहट के साथ) जी···जी हाँ।

अमजद : (फिर सईदा और मजीद को देखते हुए) सुन्दर है, सुन्दर दिखाई नहीं देती। होने और दिखाई देने में ज़मीन-आसमान का फ़र्क है असगरी।

असगरी : जी हाँ···यह तो है।

अमजद : लाओ सेब।

असगरी : (प्लेट बढ़ाते हुए) हाज़िर हैं, पर छिले हुए हैं।

अमजद : तुम्हारा मतलब ?

असगरी : छिली हुई चीज़ से कोई भी धोखा खा सकता है। (हँसकर) उसके लाल-लाल गाल तो छुरी से उतर चुके हैं।

अमजद : (हँसता है) असगरी, तुम अब बहुत शैतान हो गई हो।

असगरी : (गम्भीरता से) शैतान ? अमजद मियाँ, आपने एक बार मुझे बताया था कि शैतान ख़ुदा का सबसे बड़ा फ़रिश्ता था जिसने आदम यानी मिट्टी के पुतले के सामने झुकने से इन्कार कर दिया था।

अमजद : हाँ, हाँ···

असगरी : और फ़रिश्तों के इस हैडमास्टर को इसकी सज़ा दी गई थी।

अमजद : ठीक है···

असगरी : तो यह भी ठीक है।

अमजद : क्या ?

असगरी : कुछ भी नहीं···ठीक आखिर होता क्या है ? वही जिसे आप ठीक समझ लें या ठीक समझने की कोशिश करें या वह गलती जिसे आप एक बार इसलिए कर लें कि दुबारा न की जाएगी या वह दुरुस्ती जिसे आप गलती में बदलकर यह

समझते हैं कि आप फिर दुरुस्त कर सकते हैं···लेकिन यह सब बकवास है···मैं एक मोटी अक्ल की औरत हूँ अमज़द मियाँ ।

अमज़द : तुम आज कैसी बातें कर रही हो ?

असगरी : मैं एक मोटी अक्ल की औरत हूं । लेकिन एक औरत हूँ अमज़द मियाँ !

अमज़द : मैं फिर नहीं समझा ।

असगरी : (सेब की फाँक उठाती है और अमज़द मियाँ के मुँह तक ले जाती है) आप सेब खाइए ।

अमज़द : (सेब की फाँक दाँतों में लेते हुए) तुम पहले ऐसी बातें नहीं किया करती थीं ।

असगरी : आज मौसम ही ऐसा दिल लुभानेवाला है ।

अमज़द : क्या नहीं है ?

असगरी : (सेब की दूसरी फाँक उठाकर) क्यों नहीं···यह लीजिए, एक और फाँक···

[दूसरी फाँक अमज़द के खुले मुँह में डालती है ।]

अमज़द : (सेब खाते हुए कुछ देर के बाद) असगरी !

असगरी : (जो पहाड़ियों का दृश्य देखने में संलग्न थी, चौंककर) जी ?

अमज़द : तुम्हारा विवाह कर दें ?

असगरी : विवाह ?

अमज़द : हाँ, अब तुम्हारा विवाह हो जाना चाहिए ।

असगरी : क्यों अमज़द मियाँ ?

अमज़द : विवाह बहुत अच्छी चीज़ है···दुनिया में हर चीज़ का विवाह हो जाना चाहिए ···ज़िन्दगी में विवाह से बढ़कर और कोई खुशी नहीं। मैं अम्मीजान से कहूँगा कि असगरी का शीघ्र विवाह कर दें ।

असगरी : न अमज़द मियाँ ।

अमज़द : क्यों ?

असगरी : मुझे डर लगता है ।

अमज़द : किससे ?

असगरी : (घास पर बैठ जाती है और चिंतित मुद्रा में कहती है) विवाह से ।

अमज़द : (हँसता है) पगली !

असगरी : सच कहती हूँ अमज़द मियाँ···मुझे सचमुच डर लगता है। पहले तो एक सेविका की शादी ही क्या है, हुई, न हुई, क्या फ़र्क पड़ता है—लेकिन हो गई तो कहीं ऐसा न हो कि गाड़ी पटरी से उतर जाए और···

अमज़द : (दुःख के साथ) असगरी !

असगरी : (कहे जाती है) गाड़ी पटरी से उतर जाए और असगरी कीमा-कीमा होने से बच जाए···एक टाँग से लँगड़ी, एक बाँह से लूली, एक आँख से अन्धी हो जाए। आधी असगरी गायब हो जाए, आधी बच जाए···तो अमज़द मियाँ, मेरे विवाह का

नाम न लीजिए। विवाह तो एक सम्पूर्ण वस्तु है। आधी या चौथाई वस्तु को विवाह नहीं कहते।

अमजद : (सोचते हुए) असगरी !

असगरी : (घुटी-घुटी आवाज़ में) जी।

अमजद : तुम ठीक कहती हो (आवाज़ में चरम सीमा का दर्द पैदा हो जाता है) लेकिन देखो, मुझे दुखी न करो···मैं खुश रहना चाहता हूँ। अपनी इन दो नकली टाँगों पर भी खुश रहना चाहता हूँ···मुझे न छेड़ो···मेरे दिल में दर्द होता है।

असगरी : (अमजद मियाँ के पाँव पकड़ लेती है) मुझे माफ़ कर दीजिए अमजद मियाँ। (आँखों में आँसू आ जाते हैं) मैं क्या बक गई···आप खुश रहें···खुदा आपको खुश रखे।

अमजद : (बहादुरी के साथ) खुदा का नाम न लो—यदि उसको मुझे खुश रखना होता तो मुझे इस दुर्घटना का शिकार ही क्यों करता ? किया था तो अपने शिकार को मार-कर अपने थैले में क्यों न डाल लिया ? उसका नाम न लो—मेरी-उसकी मित्रता खतम हो चुकी है। मुझे यदि खुश रहना है तो अपने रहे-सहे साहस के सहारे ही खुश रहना है, इन्हीं टूटी टाँगों पर कुछ तिनके बीनकर मुझे अपनी खुशी के घोंसले बनाने हैं।

असगरी : सिर्फ़ अपनी खुशी के ?

अमजद : (बहुत ज्यादा दुःख के साथ) असगरी, खुदा के लिए तुम इतनी क्यों ज़ालिम हो गई हो ? यदि तुम्हारे मुँह में जीभ पैदा हुई है तो क्या इसीलिए कि तुम मेरे दुःख को बढ़ाओ ?···मैं तुमसे प्रार्थना करना चाहता हूँ कि मेरी मदद करो। एक अपाहिज़ की मदद करो। वह अपनी टूटी हुई ज़िन्दगी को जोड़-जाड़ के कुछ दिन ···केवल कुछ दिन गुज़ार ले।

असगरी : आप प्रार्थना न कीजिए अमजद मियाँ, मेरा कलेजा बैठता है। आप मालिक हैं, हुक्म दे सकते हैं। मेरी ज़िन्दगी हाज़िर है।

[उसके मोटे-मोटे आँसू अमजद के स्लीपरों पर गिरते हैं। वह उठकर खड़ी होती है और एक ओर चली जाती है।

अमजद गरदन झुकाकर अपने स्लीपरों की ओर देखता है जिन पर से असगरी के आँसू लुढ़क जाते हैं। गरदन उठाकर असगरी को देखता है जो जा रही है। कोठी की ओर से बेगम आती है। शाल ओढ़े, ज़ेवरों के डिब्बे हाथ में लिए हुए। वह अमजद के पास आती है।]

बेगम साहब : अमजद बेटा !

अमजद : (जल्दी से अपने पाँव कम्बल में छिपाकर) जी !

बेगम साहब : सईदा के लिए जो ज़ेवर तुमने पसंद किए हैं, तैयार होकर आ गए हैं। लो—

[डिब्बे अमजद की गोद में रख देती है।]

अमजद : (बच्चों की-सी उत्सुकता से हर डिब्बा खोलकर सारे गहने देखता है और भारी खुशी प्रकट करता है) बहुत अच्छे हैं···बहुत बढ़िया, बहुत सुन्दर, लेकिन इतने नहीं जितनी सईदा है···असगरी···असगरी, इधर आओ।

[असगरी जो एक सरो के पेड़ के साथ लगकर खड़ी थी, अमजद के पास आती है। अमजद उसे तमाम गहने दिखाता है।]

अमजद : कहो, कैसे हैं ?

असगरी : आप खुद कह चुके हैं···सुन्दर हैं, लेकिन इतने नहीं जितनी दुलहन बेगम हैं।

अमजद : (माँ से) अम्मीजान, कपड़े कब आएँगे ?

असगरी : कल तक आ जाएँगे।

अमजद : और वह बाइसकोप मशीन···क्यों नहीं आई अभी तक ?

बेगम साहब : बेटा, मजीद आर्डर दे आया था। एक-दो दिन में आ जाएगी।

अमजद : अच्छा। (रुककर) अम्मीजान !

बेगम : जी बेटा !

अमजद : कुछ और भी मँगवाना चाहिए सईदा के लिए। मैं उसे एक क्षण के लिए भी उदास नहीं देखना चाहता। प्रतिदिन उसके लिए कोई-न-कोई नई चीज़ होनी ही चाहिए।

बेगम साहब : सबकुछ तुम्हारे हाथ में है, जो कुछ चाहो, दो।

अमजद : हाथ में है ? (रुककर) हाँ···तो···अम्मीजान !

बेगम साहब : जी !

अमजद : कमाल को भेजिए।···स्पोर्ट्स की दुकान जाए···जितने खेल उसे मिलें ले आए। सईदा और मजीद खेला करेंगे और मैं देखा करूँगा·· और देखिए···और उससे कहिए कि कुछ ऐसे खेल भी ले आए—जो मैं···मैं भी सईदा के साथ खेल सकूँ।

बेगम साहब : (बेहद दुखी होकर अमजद का सिर अपने हाथ में लेकर) मेरे बच्चे !

[अमजद फूट-फूटकर रोना शुरू कर देता है। असगरी अपने पर काबू नहीं रख पाती और चीखती हुई एक ओर को दौड़ जाती है। बेगम की आँखों से चुपचाप आँसू टपक रहे हैं।]

चौथा दृश्य

[वही कमरा जो पहले और दूसरे दृश्य में है, रात का समय, वातावरण बिलकुल शांत है। बड़े बेढंगे तरीके से, पलंग पर सईदा तीन-चार गद्दों पर अपना कोमल बालों वाला सिर दबाए कोई किताब पढ़ने में संलग्न है। नज़रें किताब के अक्षरों पर

पड़ने के बजाय उसके अपने दिल की स्थिति पर पड़ रही मालूम होती हैं। वक्ष के स्थान पर कम्बल की सलवटें लहरें खा रही हैं और नन्हे-से तालाब में द्वीप का-सा नक्शा बना हुआ है। बाईं ओर लोहे के इस्पात की जैसी चारपाई बिछी है। उसके पास अपाहिजों की कुर्सी में अमज़द बैठा है। उसके हाथ में किताब है और वह उसे यों पकड़े हुए है जैसे वह कोई शीशे की चीज़ है। उसकी नज़रें परेशान हैं। किताब के अक्षरों से हटकर कभी वे सईदा के हाथों पर जा पड़ती हैं और कभी उसके कोमल बालों वाले सिर पर जो तकियों से दबा पड़ा है—अन्त में उससे नहीं रहा जाता—किताब बन्द करके अपनी गोद में रखता है और बहुत धीमे से सईदा से कहता है—]

अमजद : सईदा !

सईदा : (**चौंककर**) जी !

अमजद : मेरा खयाल है कि अब सो जाओ।

सईदा : (**करवट बदलकर अमजद को देखते हुए**) आप सोना चाहते हैं तो मैं गुलाम मुहम्मद और करीम को बुलाऊँ ताकि वे आपको लिटा दें।

अमजद : (**खोखली आवाज़ में**) लिटा दें···नहीं सईदा···नहीं सईदा, मैं लेट-लेटकर थक गया हूँ। आज यहीं कुर्सी पर सो जाऊँगा। अगर तुम्हें तकलीफ़ न हो तो यह बत्ती बुझा दो और हरी बत्ती जला दो।

सईदा : (**उठती है**) आप बार-बार मेरी तकलीफ़ का ज़िक्र क्यों करते हैं ?

अमजद : मैं खुद तकलीफ़ में हूं।

सईदा : (**चिढ़कर**) मुझे इसका पता है अमज़द साहब···लेकिन बताइए कि मैं आपके लिए क्या कर सकती हूँ···मुझसे जो हो सकता है, मैं करने के लिए तैयार हूं लेकिन मुसीबत यह है कि आपको हर समय मेरी तकलीफ़ की पड़ी रहती है, मुझे कोई तकलीफ़ नहीं होती।

अमजद : सईदा, तुम बहुत अच्छी हो।

[सईदा बत्ती ऑफ़ करती है। कुछ क्षणों के लिए अँधेरा छा जाता है, फिर कमरे की हर चीज़ हरी रोशनी में स्नान करती है।]

सईदा : काश, मैं अच्छी होती—अच्छी हो सकती।

[सोफ़े पर बैठ जाती है। अन्तर से उसका कष्ट स्पष्ट है।]

अमजद : इससे ज्यादा तुम और क्या अच्छी हो सकती हो सईदा ?

सईदा : (**तेज़ी से**) जी नहीं, आप नहीं जानते।

अमजद : (**बहुत धीमे स्वर में**) यदि मैंने किसी कारण नाराज़ कर दिया है तो मुझे माफ़ कर दो।

सईदा : (**अमजद की ओर देखती है। उठती है और मुस्कराती हुई अपनी लम्बी-लम्बी उँगलियों से अमजद के बालों में कंघी करती है**) सच तो यह है अमज़द साहब,

मैं आपके लायक नहीं हूँ।

अमजद : (**सईदा का हाथ पकड़कर**) यह तुम्हारे दिल की अच्छाई है कि तुम ऐसा समझती हो, नहीं तो असलियत बिलकुल इसके खिलाफ़ है।

सईदा : (**बालों में कंघी करते हुए**) सो जाइए, कई रातों से आप जाग रहे हैं। आप जब से यहाँ आए हैं, एक क्षण के लिए भी आपकी आँख नहीं लगी।

अमजद : मुझे नींद नहीं आती सईदा।

सईदा : क्यों ?

अमजद : मालूम नहीं क्यों···बस, ऐसा लगता है कि नींद कभी न आई थी और न आएगी। मैं तो वे रातें भी याद करना भूल गया हूँ जब सोया करता था।

सईदा : काश, मैं आपको नींद दे सकती !

अमजद : नहीं सईदा, मैं इतनी गरीब चीज़ तुमसे नहीं छीनना चाहता। यह तुम्हारी आँखों ही के लिए सलामत रहे, जो नींद में और भी ज्यादा खूबसूरत हो जाती हैं —जाओ, अब सो जाओ।

सईदा : मैं कमबख्त तो सो ही जाऊँगी।

अमजद : ऐसा न कहो— खुदा तुम्हें हिम्मत दे—जाओ, सो जाओ।

सईदा : (**चिढ़कर**) आप क्यों मेरे साथ इतनी नर्मी दिखाते हैं ? अमजद साहब, मुझे डर लगता है—खुदा की कसम, आपकी यह नरमी, यह टूटा दिल और यह कराह एक दिन मुझे पागल बना देंगे।

[झुँझलाकर तेज़ी से पलंग की ओर बढ़ती है और स्वयं को बिस्तर में डाल देती है।]

अमजद : मुझे ऐसा लगता है कि मेरे मुँह से जो बातें निकलती हैं वे भी टूटी-फूटी होती हैं।

[सईदा चुप रहती है। करवट बदलकर वह अपना मुँह दूसरी ओर कर लेती है। अमजद अपनी गोद में से किताब उठाता है और उसके पन्ने पलटना शुरू कर देता है। शान्ति का वातावरण है। हल्की-हल्की हरी रोशनी में यह शान्ति और भी अधिक बढ़ गई है। काफ़ी लम्बा समय मौन में गुज़रता है। बड़ी भयंकर खामोशी में। अमजद के चेहरे पर रोशनी कब्रों के हरे तकिये-सी चढ़ी है। उसकी निगाहें किताब से हटकर बराबर सईदा की ओर उठती हैं और शर्मिन्दा होकर दबे पाँव लौट आती हैं। थोड़ी देर के बाद अमजद बहुत ज्यादा बेचैन हो जाता है।]

अमजद : सईदा !

सईदा : जी !

अमजद : मैं···मैं तुमसे एक प्रार्थना करना चाहता हूँ।

सईदा : (**करवट न बदलते हुए**) क्या ?

अमजद : क्या···क्या आज हमारी पहली रात हो सकती है ?

अमजद : वह रात जो अभी तक नहीं आई।

[सईदा चुप रहती है। स्तब्धता]

अमजद : सईदा !

सईदा : जी !

अमजद : क्या तुम मेरी यह प्रार्थना स्वीकार कर सकती हो ?

सईदा : (करवट बदलकर अमजद को देखती है। उसकी आँखों में आत्मसमर्पण की घायल इच्छा तैर रही है) कैसे अमज़द साहब ?

अमजद : झूठ-मूठ···केवल मेरे बहलाने के लिए तुम यह मान लो कि मैं तुम्हारे पहलू में बैठा हूँ···मैं यहाँ मान लूंगा कि तुम मेरे पहलू में लेटी हो···मैं तुमसे वही बातें करूँगा जो मुझे तुमसे पहली रात को करनी थीं···तुम उसी तरह जवाब देना जिस तरह तुम्हें उस रात जवाब देना था। मेरे लिए···क्या तुम मेरे लिए यह झूठ-मूठ खेल खेल सकती हो ?

सईदा : (आँखों में आत्मसमर्पण की घायल इच्छा के बजाय दया के आँसू तैर रहे हैं) मैं हाज़िर हूँ अमज़द साहब।

अमजद : धन्यवाद !

[भारी निस्तब्धता]

अमजद : आज हमारी पहली रात है सईदा, जिसमें जवानियाँ सपनों के स्वर्ग की ओर पहला कदम उठाती हैं—वह रात जिसके अन्तर में दो जीव महासागर में गोता लगाते हैं और एक हो जाते हैं···शरमाओ नहीं···यह रात तो वह है जिसमें सारी छिपी बातें प्रकट होने के लिए बेचैन हो जाती हैं, हल्का-सा नशा, नरम-सी आह, एक छोटा-सा चुम्बन मधुर स्पर्श के क्षणों में घूंघट को खोल देता है और वह इतना धीमे-धीमे खुलता है कि मामूली-सी सरसराहट भी नहीं होती और आदमी दर्शन के पूर्ण दर्शन की अभिलाषा कर लेता है। यह वह रात है जब निगाहें टकरा-टकराकर विह्वल हो जाती हैं। यह वह रात है जब निगाहें टकरा-टकरा-कर झड़ती हैं और यह कहानी दोनों प्रेमियों के एक केन्द्र पर अंकित होती जाती है। यह वह रात है···पहली रात···सबसे पहली···जब आदम की पसलियाँ चीर कर हवा निकल गई थी। यह वह रात है जिसकी लम्बी उम्र के लिए कवि लोग दुआएँ माँग-माँगकर अभी तक नहीं थके। यह वह रात है जिसकी पूजा के लिए जवानी की बरबादी की नमाज़ बिछाकर ज़िन्दगी प्रायः प्रार्थना कर रही है। यह वह रात है जिसमें प्रकृति के तमाम तारे अपना भेद खोलते हैं। यह वह रात है जब प्रकृति के तमाम कारखाने केवल एक ही पुर्ज़ा ढाल रहे होते हैं। वह पुर्ज़ा जिसने पृथ्वी के इन तमाम कारखानों को गति दी है। यह वह रात है जब तमाम आवाज़ें अपने मुंहों में वापस चली जाती हैं ताकि उस आवाज़ का जुलूस पूर्णतया शान्ति से गुज़र जाए जिसमें स्तब्धता की गूंज है। यह वह रात है जिसका हर परदा उजाले से बना है। यह वह रात है, हर आने वाली रात ज़िसके सामने भीख की झोली

खोल प्रतीक्षा में खड़ी है। यह वह रात है जब शरीर का रोम-रोम मुँह खोलकर वोलता है और कान खोलकर सुनता है, बड़े-बड़े भेद, बड़े-बड़े लुभावने गीत··· (एकर्दम चीखकर) ढाँप लो, ढाँप लो, खुदा के लिए अपना शरीर ढाँप लो, यह मुझे डस रहा है, इसका एक-एक रोम तलवार की धार के समान मेरी अपंग इच्छाओं पर फिर रहा है। ढाँप लो अपना शरीर—खुदा के लिए ढाँप लो।

सईदा : (हल्की हरी रोशनी में घास के नरम-नरम पत्तों के बने हुए शरीर के समान लेटी है, उसका शरीर लरज रहा है। एक-एक अंग काँप रहा है) जी !

अमजद : (फूट-फूटकर रोने लगता है) अपना शरीर ढाँप लो।

[सईदा अपना लरज़ता शरीर कम्बल में ढाँप लेती है। अमज़द आँखों के सामने हाथ रखे रोता रहता है।]

पाँचवाँ दृश्य

[निगार विला के सामने का बगीचा। शाम का समय। फ़व्वारे का पानी अविराम गति से गिर रहा है। परछाइँ घनी हो चुकी है। पीछे आसमानी पहाड़ियाँ संध्या की धुँध में छिपती जा रही हैं। ऐसा लगता है कि आकाश ने अपने शरीर पर भभूत रमा ली है। तख्तों के सीने पर शान्त हरियाली लेटी है। कुर्सियाँ खाली हैं—सारा वातावरण शून्य है। उस फ्रेम की तरह जिसमें तस्वीर जड़ी जाने वाली है। मजीद और सईदा की हँसी की आवाज़ आती है—कुछ क्षणों के बाद दोनों हँसते, बड़ी मुश्किल से अपनी थकावट का बोझ उठाते वहाँ आते हैं। सईदा ढीली पड़कर खुद को कुर्सी में गिरा देती है। मजीद उसके पास खड़ा रहता है।]

सईदा : (जाँघों पर मुक्कियाँ मारते हुए) उफ़···फ़ !

मजीद : (हँसता है) आप थक गइँ—दबा दूँ आपको ?

सईदा : (घबराकर) नहीं, नहीं—असगरी को भेज दीजिए। मुझसे तो अब दो कदम भी चलना मुश्किल है।

मजीद : (मुस्कराता है) अच्छा।

[आगे बढ़कर सईदा के कोमल बालों की बिखरी लट उँगलियों से उठाकर एक तरफ़ कर देता है।]

सईदा : (बहुत ज्यादा घबराहट से) मैं अन्दर जाती हूँ।

[उठने लगती है।]

मजीद : (एक ओर देखकर) लो, यह असगरी खुद ही आ गई—आओ असगरी,

भाभीजान के पैर दबा दो।

[असगरी प्रवेश करती है। उसके होंठों के आसपास के कोने काँप रहे हैं जैसे कुछ कहने के लिए तड़प रही हो। पास आ जाती है।]

असगरी : (सईदा से) दुलहन बेगम, थक गईं आज ?

सईदा : (जाँघों पर मुक्कियाँ मारते हुए) हाँ।

असगरी : (घास पर बैठकर सईदा की एक पिंडली दबाना शुरू करती है और ध्यान मजीद की ओर है) यह सब मजीद मियाँ का कसूर है···इतनी बड़ी सैर और इतनी जल्दी··· (कहने में तीखापन है) हर चीज़ धीरे-धीरे होनी चाहिए। (धीमे-धीमे दबाती है) इस तरह धीमे-धीमे। (सईदा से) क्यों दुलहन बेगम, कुछ आराम मालूम होता है आपको ?

सईदा : (दूसरी टाँग जो असगरी की पकड़ से स्वतन्त्र है, दबवाने का संकेत करती है) ठीक है, ठीक है।

असगरी : (मजीद से) मजीद मियाँ, आप जाएँ, मुँह-हाथ धो आएँ। मिट्टी-धूल से आपका चेहरा बिलकुल अनधोया आलू बना हुआ है।

मजीद : (तेज़ी से) तुम बहुत ढीठ हो गई हो···यह सब···

असगरी : (मजीद की बात काटकर) दुलहन बेगम का कसूर, जिन्होंने मुझे मुँह लगा लिया है। (सईदा के चेहरे की ओर देखकर) ऐसा सुन्दर चेहरा !

[मजीद निगाहों-ही-निगाहों में क्रोध बरसाता चला जाता है।]

असगरी : (हँसती है) मजीद मियाँ की शक्ल-सूरत यों तो अल्ला की दुआ से बड़ी अच्छी है, लेकिन क्रोध में हमेशा बिगड़ जाती है—आपका क्या खयाल है ?

सईदा : तुम मुझसे ऐसी बातें न किया करो। (उठना चाहती है लेकिन असगरी की मज़बूत पकड़ के कारण नहीं उठ सकती) छोड़ दो मुझे।

असगरी : (दबाते हुए) मैं इस सेवा से खुद को छुड़ाना नहीं चाहती। (सईदा के पाँव से सैंडिल उतारती है) मजीद मियाँ कह रहे थे कि मैं ढीठ हो गई हूँ—क्या यह ठीक है दुलहन बेगम ?

सईदा : बिलकुल ठीक।

असगरी : (बड़ी शान्ति से सईदा के पाँव की उँगलियाँ चटखाते हुए) तो यह बहुत बुरी बात है—सेविका को ढीठ कभी न होना चाहिए—आप मेरे कान खींचिए।

सईदा : चुप रहो।

असगरी : यह अत्याचार है—ज़बान को रोकना बहुत बड़ा अत्याचार है दुलहन बेगम। मैंने ऐसी कौन-सी बात की जो आपको बुरी लगी ?

सईदा : (क्रोध के साथ) तुम्हारी सब बातें मुझे बुरी लगती हैं।

असगरी : असगरी बेचारी अब क्या करे··· (कुछ देर बाद) मैं तो यह समझती थी कि आप-जैसी लिखी-पढ़ी बेगम की नौकरी में इस एक बरस के अन्दर-ही-अन्दर मुझे

सबकुछ आ गया है···लेकिन अब ऐसा मालूम होता है कि मैं गलत समझती थी ···मैंने आपसे कुछ नहीं सीखा।···लेकिन यह किसका कसूर है? सीखने वाले का या सिखाने वाले का?

सईदा : (अपनी दोनों टाँगों को एक ओर समेटते हुए निर्णय देने की-सी स्थिति में) तुम कहना क्या चाहती हो?

असगरी : (बनावटी आश्चर्य से) मैं?

सईदा : हाँ, तुम—क्या कहना चाहती हो तुम?

असगरी : (सोचते हुए) कहने को मैं बहुत कहना चाहती हूँ।

सईदा : (उठकर घास पर नंगे पाँव चलते हुए) तो कह डालो आज—मुझे तुम्हारी प्रतिदिन की छोटी-छोटी चुटकियाँ पसन्द नहीं—जो तुम कहना चाहती हो, मैं सुनने के लिए तैयार हूँ।

असगरी : आप बड़ी हिम्मतवाली हैं दुलहन बेगम!

सईदा : मैं हिम्मतवाली हूँ या बुज़दिल, इसे तुम छोड़ो—जो कहना चाहती हो, आज उगल डालो।

असगरी : यह उगलना मुझे और आप, दोनों को तकलीफ़ देगा।

सईदा : तुम मेरी तकलीफ़ का कुछ विचार न करो—मैं सहन कर लूंगी।

असगरी : (सोचते हुए) मैं समझती थी मेरे दाँतों तले दबी हुई कटारी देखकर आप डर जाएँगी पर अब ऐसा लगता है कि आप चलती-चलती ऐसी जगह पहुँच गई हैं जहाँ घावों की कोई परवाह नहीं रहती—अब तो मैं डरने लगी हूँ आपसे।

सईदा : (घास पर इधर-उधर घूमते हुए) असगरी!

असगरी : (चौंककर) जी!

सईदा : तुम मुझे यह बताओ—यदि अमज़द मियाँ गाड़ी की दुर्घटना में मर जाते तो मैं क्या करती?

असगरी : आप?···मुझे मालूम नहीं आप क्या करतीं!

सईदा : मैं जवान हूँ, खूबसूरत हूँ। मेरे दिल में ऐसे हज़ारों अरमान हैं जो मैं सत्रह बरसों तक अपने खयालों का शहद पिला-पिलाकर पालती-पोसती रही हूँ···मैं उनका गला नहीं घोंट सकती। मैंने बहुत कोशिश की है असगरी—मेरा खुदा जानता है—मैंने बहुत कोशिश की है लेकिन मैं अपने हाथों को इस कत्ल के लिए तैयार नहीं कर सकी। तुम मुझे कमज़ोर कह लो, बुज़दिल कह लो, चरित्रहीन कह लो—तुम एक नौकरानी हो—मैं तुम्हारे सामने स्वीकार करती हूँ कि मैं अपनी जवानी का बाग जिसके पत्ते-पत्ते, बूटे-बूटे में मेरे कुँआरे अरमानों का गरम-गरम खून दौड़ रहा है, अपने हाथों से नहीं उजाड़ सकती···वैसे मैं किसी को भी इजाज़त दे सकती हूँ कि वह मेरी आँखें बन्द करके—नहीं—मेरे तमाम हवास में ताले लगाकर बुढ़ापे और रंडापे के दीन-हीन गहरे खड्डों में डाल दे—या एक ही बार धक्का देकर मुझे अपने अरमानों की लरज़ती हुई चट्टानों की चोटियों पर से नीचे गिरा दे जिन पर मैं इस समय तक दामन समेटे कड़ी हवाओं का मुकाबला करती

रही हूँ—मैं तुमको भी इसकी इजाज़त देती हूँ।

असगरी : (हारी हुई नतमस्तक उठती है) बस दुलहन बेगम।

सईदा : मैं एक ऐसे दोराहे पर खड़ी हूँ असगरी, जहाँ की भूमि मेरे पैरों के नीचे घूम रही है। मैं जिस रास्ते की ओर मुँह करती हूँ, वही मुझसे मुँह मोड़ता है। मैं जो इरादा करती हूँ, वह मुझसे अपना पल्ला छुड़ा के भाग जाता है। मैं उसके पीछे भागती हूँ। अन्धाधुन्ध दौड़ती हूँ और जब पकड़ लेती हूँ तो मालूम होता है कि वह रेत का बना था। मेरे पकड़ते-ही-पकड़ते ढेर हो जाता है। असगरी, तुम नहीं जानती हो कि मैं कितनी देर से अंगारों के बिस्तर पर लेट रही हूँ। बुझाने के लिए मैं पानी डालती हूँ तो भाप के ऐसे बादल उठते हैं जो मुझे अपने साथ ऊँचाइयों में ले जाते हैं और झँझोड़-झँझोड़कर एकदम नीचे पटक देते हैं। मेरी हड्डी-हड्डी, पसली-पसली चूर-चूर हो चुकी है। असगरी, क्या ही अच्छा होता यदि अमज़द साहब के बदले मैं खुद ही अपाहिज़ हो गई होती।

[निस्तब्धता। असगरी चुपचाप खड़ी रहती है—सईदा घास पर इधर-उधर टहलती रहती है।]

सईदा : बताओ, मुझे क्या करना चाहिए ?

असगरी : (निस्तब्ध वातावरण में दुखी होती है) क्या करना चाहिए—आपको ? अमज़द मियाँ की मौत का इन्तज़ार करना चाहिए।

सईदा : (कुछ देर सोचकर) तुम मुझे पत्थरदिल कहोगी—लेकिन मैं पूछती हूँ—उन्हें कब मौत आएगी ?

असगरी : जब अल्ला मियाँ को मंज़ूर होगा। (बड़बड़ाती है) लेकिन अमज़द मियाँ की तो दोस्ती उनसे खतम हो चुकी है।

सईदा : क्या कहा ?

असगरी : जी कुछ नहीं।

[उखड़े-उखड़े पैर उठाती असगरी चली जाती है। सईदा नंगे पाँव घास के ठंडे-ठंडे फ़र्श पर व्यथित-हृदय घूमती रहती है।]

छठा दृश्य

[निगार विला—ड्राइंगरूम—लम्बे-चौड़े कमरे में पूरा साज़-बाज़ लगा हुआ है जो कि पुराने ज़माने की तरह का अच्छा पायेदार है—दीवारों पर आइल पेंटिंग्स सुशोभित हैं जो कुटुम्ब के महत्त्वपूर्ण लोगों की हैं। एक पेंटिंग बेगम की है जबकि वह जवान थी। इस पेंटिंग के नीचे एक सोफ़े पर बैठकर तकाबिल पेश कर रही

है। तस्वीर में वह निश्चिन्त है किंतु सोफ़े पर चिंतित। उनके चेहरे पर चिंता की रेखाएँ स्पष्ट हैं और कोई गंभीर समस्या सामने है, ऐसा मालूम होता है और वह उसके समाधान की उधेडबुन में संलग्न है। असगरी का प्रवेश]

बेगम साहब : मजीद मियाँ मिले ?

असगरी : जी हाँ।

बेगम साहब : कहाँ थे ?

असगरी : बगीचे में।

बेगम साहब : क्या कर रहे थे ?

असगरी : जी ! (रुककर) जी अकेले बैठे थे।

बेगम साहब : (असगरी की ओर देखकर निगाहें नीची करके) आ रहे हैं ?

असगरी : जी हाँ।

बेगम साहब : तुम जाओ।

[असगरी चली जाती है। मजीद उसकी ओर देखता अन्दर प्रवेश करता है।]

मजीद : क्या बात है अम्मीजान ?

बेगम साहब : कुछ नहीं, बैठ जाओ।

मजीद : (पास ही सोफ़े की दूसरी कुर्सी पर बैठ जाता है) यहाँ सरदी है।

बेगम साहब : हाँ, यहाँ सरदी है।

[स्तब्धता]

मजीद : (बेचैनी अनुभव करते हुए) मेरा खयाल है आपने मुझे यहाँ कुछ कहने के लिए बुलाया है।

बेगम साहब : हाँ।

मजीद : कहिए !

बेगम साहब : मैं तुम्हें यहाँ से भेजना चाहती हूँ।

मजीद : (उठकर) कहाँ ?

बेगम साहब : बैठ जाओ।

मजीद : (बैठ जाता है) यह लीजिए।

बेगम साहब : मैंने अभी अमज़द से बात नहीं की।

मजीद : (फिर उठकर खड़ा हो जाता है) कौन-सी ?

बेगम साहब : यही, तुम्हें यहाँ से भेजने की।

मजीद : लेकिन आप मुझे यहाँ से क्यों भेज रही हैं··· मेरा मतलब है, मेरा मतलब है, कोई खास काम है या···

बेगम साहब : बैठ जाओ।

मजीद : (बैठ जाता है) कोई खास काम है ?

बेगम साहब : नहीं।

मजीद : तो फिर मुझे यहाँ से कहीं बाहर भेजने की ज़रूरत क्यों अनुभव की गई है ?

बेगम साहब : क्योंकि इसी में भला समझती हूँ ।

मजीद : भला ? किसका भला ?

बेगम साहब : हम सबका—इस घर का ।

मजीद : (**उठकर खड़ा हो जाता है**) आप पहेलियों में बातें कर रही हैं अम्मीजान ।

बेगम साहब : मजीद, तुम मेरे लड़के हो, मैं तुम्हारी माँ हूँ—मेरे-तुम्हारे बीच कोई ऐसी बात नहीं होनी चाहिए जो इस पवित्र सम्बन्ध पर ज़रा-सी कालिख लगाए । मैं चाहती हूँ कि तुम आज ही कराची चले जाओ और मैं जब तक कहूँ वहीं रहो ।

मजीद : लेकिन अम्मीजान···

बेगम साहब : (**बात काटकर**) तुम्हारे वहाँ बेशुमार दोस्त हैं । मुझे यकीन है तुम उनकी मदद से या खुद अपनी हिम्मत से इस मँझधार में से, जिसे ज़िन्दगी कहते हैं, अपनी नाव सही-सलामत किनारे ले जाओगे ।

मजीद : (**कुछ कहना चाहता है लेकिन कुछ कह नहीं सकता और बैठ जाता है**) बहुत अच्छा···मैं चला जाऊँगा ।

बेगम साहब : तुम्हारा फ़ैसला··· (**एकदम चुप हो जाती है**)

[कमरे में अमज़द अपाहिज़ों वाली कुर्सी में प्रवेश करता है जिसे करीम चला रहा है ।]

अमजद : (**मजीद से**) यार मजीद, तुम भी अजीब आदमी हो । मैं वहाँ कमरे में बैठा तुम्हारा इन्तज़ार कर रहा था कि तुम आओगे तो हम दोनों सईदा की सालगिरह के तोहफ़े के बारे में सोचेंगे—लेकिन यहाँ बैठे हो । अम्मीजान (**बेगम साहब से**), आपने क्या सोचा—कैसा तोहफ़ा होना चाहिए···मैं तो सोच-सोचकर पागल हो गया हूँ ।

बेगम साहब : तुम सईदा से क्यों नहीं पूछते ?

अमजद : लो और सुनो ! (**हँसता है**) हद कर दी आपने अम्मीजान—उससे सलाह ली तो तोहफ़े का मज़ा क्या खाक आएगा ? (**मजीद से**) क्यों मजीद ?

[मजीद चुप रहता है ।]

अमजद : बोलो यार !

मजीद : (उठकर) आप अम्मीजान से पूछिए···मैं तो जा रहा हूँ ।

अमजद : (**आश्चर्य से**) जा रहे हो ? कहाँ जा रहे हो ?

मजीद : कराची ।

अमजद : ज़रूर ही तुम्हारा दिमाग खराब हो गया है । क्या करने जा रहे हो कराची ?

मजीद : (**फ़ीकी-सी हँसी हँसता है**) मँझधार में से अपनी किश्ती निकालने ।

अमजद : (**बेगम से**) क्या हो गया है इसे ? (**मजीद से**) बैठो यार, परसों उसकी सालगिरह है—अभी-अभी उसका फ़ैसला हो जाना चाहिए ।

मजीद : फ़ैसला तो हो चुका है।

अमजद : क्या ?

मजीद : कि मैं कराची जा रहा हूँ और फिर कभी वापस नहीं आऊँगा।

अमजद : क्या बकते हो ? (**बेगम से**) अम्मीजान ! यह मामला क्या है ?

बेगम साहब : कुछ नहीं—माँ-बेटे में लड़ाई हो गई किसी बात पर।

अमजद : किस बात पर ?

बेगम साहब : तुम नहीं पूछ सकते।

अमजद : आज्ञा-उल्लंघन तो होता है लेकिन मजीद मेरा भाई है···आपके और इसके बीच यदि कोई दुश्मनी या गलतफ़हमी पैदा हो जाए तो उसे दूर करना मेरा कर्तव्य है। मजीद को मैं आपसे ज्यादा जानता हूँ। उससे ऐसी कोई गलती नहीं हो सकती जो बरबादी का कारण हो। (**मजीद से**) इधर आओ मजीद।

मजीद : भाईजान, मुझे अपना सामान बँधवाना है।

अमजद : हाय रे मुसीबत—यह सब क्या है ? (**बेगम से**) अम्मीजान ! खुदा के लिए इसे रोकिए···मेरे लिए नहीं तो सईदा के लिए रोकिए। इस घर में केवल यही एक है जिसने उसे उदास नहीं होने दिया है। मेरे लिए इतना कष्ट सहन करता है—अगर आपने इसे जाने दिया तो मैं नहीं जानता कि मेरा क्या हाल होगा। सईदा को सैर के लिए ले जाता है तो मैं तसव्वुर में यह समझता हूँ कि उसके बदले मैं उसके साथ हूँ। उसके साथ खेल खेलता है तो वह अरमान बहुत हद तक पूरा हो जाता है जिसका प्रकृति के बेरहम हाथों ने मेरी ज़िन्दगी में एक अभाव पैदा कर रखा है। मैं तो प्रायः सोचता हूँ कि यदि मेरा भाई मजीद न होता तो मेरी गई हुई ज़िन्दगी का धारक शरीर किसी कूड़े-करकट में मिलकर कभी का बिखर गया होता। अम्मीजान, इसे रोकिए—यह तो मेरी भुजा है···क्यों आप इसको मुझसे अलग कर रही हैं···अल्ला मियाँ की जगह न लीजिए अम्मीजान ! (**रोने लगता है**)

मजीद : मैं जा रहा हूँ अम्मीजान।

बेगम साहब : ठहरो।

[मजीद रुक जाता है।]

बेगम साहब : (**उठती है और अमजद के सिर पर हाथ फेरती है**) अमजद बेटा—माँ के प्राण, रोओ नहीं, मजीद नहीं जाएगा। जो चीज़ जहाँ है वहीं रहेगी। इसलिए कि उसे यही मंज़ूर है···(**मजीद से**) मजीद, भाई के पास बैठो और सईदा की सालगिरह के बारे में सोचो। (**चली जाती है**)

[मजीद कुछ देर सोचता है फिर अमजद की कुर्सी की ओर बढ़ता है।]

मजीद : (**धीमे से**) भाईजान, आप मुझे जाने दें।

अमजद : (**झुका हुआ सिर उठाकर**) जाने दूं ? कहाँ जाने दूं ? पागल मत बनो।

मजीद : आप नहीं समझते भाईजान !

अमजद : मैं सब समझता हूँ—अपना रूमाल निकालो और ज़रा ये मेरे आँसू पोंछ दो।

[मजीद थोड़े विचार के बाद अपना रूमाल निकालता है और अमजद के आँसू पोंछता है—जल्दी-जल्दी।]

अमजद : क्या कर रहे हो यार—तुम्हें तो आँसू पोंछना भी नहीं आता। (मुस्कराता है) इतना मामूली-सा काम है !

मजीद : यह मामूली काम नहीं भाईजान।

अमजद : (मुस्कराकर) अच्छा भाई, बड़ा जानजोखों का काम है—आओ, इधर बैठो। सईदा के सालगिरह के तोहफ़े के बारे में सोचें। बैठो।

मजीद : (अमजद के पास कुर्सी पर बैठ जाता है) सोचिए।

अमजद : (आह भरकर) सोचते हैं भाई···सोचते हैं, सोचने के सिवा अब काम ही क्या है लेकिन ज़रा तुम भी सोचो।

[मजीद और अमजद दोनों सोचने में तल्लीन हो जाते हैं।]

सातवाँ दृश्य

[निगार विला के सामने बगीचे में। शाम का समय। फ़व्वारे का पानी बन्द है जैसे वह उबल-उबलकर तंग आ चुका है। पीछे नीलवर्ण की पहाड़ियाँ धुँध के कारण अपना अस्तित्व छिपाए बैठी हैं। फ़र्श पर घास एक-सी कटी हुई है। दायीं ओर फ़व्वारे से दूर हटकर घनी झाड़ियाँ हैं जिनके बीच में अमजद अपाहिजों वाली कुर्सी पर बैठा है। ऊपर को असगरी कुर्सी को दोनों हाथों में पकड़े है। वह उसे कभी-कभी चलाने लगती है।]

अमजद : नहीं असगरी, कुछ देर ठहरो।

असगरी : (ठहर जाती है) लेकिन अमजद मियाँ···

अमजद : मैं आज अपने जीवन का अंतिम घाव खाना चाहता हूँ।

असगरी : यह घाव खाना आप ज़रूरी समझते हैं तो अपने दिल ही में खा सकते हैं—लेकिन यह घाव तो आपके लग चुका है—इसे दुबारा क्यों खुलवाना चाहते हैं आप ?

अमजद : (मुस्कराने की कोशिश करते हुए) मेरी हालत में जो आदमी हो उसके बुद्धूपने की कोई हद नहीं रहती। अपने घावों के टाँके खोल-खोलकर देखता है। अंगूरों की जवानी, टीसों की कहानी सुनाता है और खुद को बहुत बड़ा शहीद समझता है···(हँसता है) तुम्हारी कभी कोई चीज़ टूटी नहीं, इसलिए तुम लोगों की

दर्दनाक हालत नहीं जानती हो जो ऊँचाई की सीमा को पहुँचकर गड्ढे में पड़े हुवाई किले बनाते हैं।

असगरी : (**मुस्कराती है**) मैं तो उन हदों से भी आगे निकल गई हूँ अमज़द मियाँ। बड़ी-बड़ी ऊँची इमारतें बनाकर खुद अपने हाथों से ढहा चुकी हूँ। ऐसा करते-करते मेरे दिल में भी गड्ढे पड़ चुके हैं।

अमजद : (**काँप जाता है**) असगरी, तुम बड़ी भयानक हो।

असगरी : (**हँसती है**) हर उजाड़ भयानक होता है। उस बेचारे को अपनी मनहूसी से फ़ुरसत कहाँ होती है जो दूसरों को डराए। वह तो खुद छिपा हुआ भयभीत होता है।

अमजद : तुम्हारी ज़िन्दगी किसी घटना का शिकार हुई है ?

असगरी : जी नहीं। उस व्यक्ति की ज़िन्दगी किसी घटना का क्या शिकार होगी जो स्वयं एक घटना है।

अमजद : तुम्हारी बातों से जले हुए मांस की बू आती है।

असगरी : इसलिए कि आपके सूंघने की ताकत जगी हुई है।

अमजद : पहले सो रही थी ?

असगरी : जी हाँ, बहुत गहरी नींद में।

अमजद : इसे जगाया किसने है ?

असगरी : उस गाड़ी ने जो पटरी से उतर गई है।

अमजद : (**बड़बड़ाता है**) उस गाड़ी ने जो पटरी से उतर गई। (**कुछ ऊँची आवाज़ में**) क्या यह फिर पटरी से उतरेगी ?

असगरी : जो अल्ला मियाँ को मंज़ूर है, वही होगा।

अमजद : अल्ला मियाँ का नाम मत लो—मेरी-उसकी दोस्ती खतम हो चुकी है।

असगरी : नहीं अमजद मियाँ, उस आदमी से हम जैसों की दोस्ती कभी खतम नहीं होती। टूट-टूट के आप जुड़ती है।

अमजद : यह सब बकवास है।

[दोनों एकदम चौंकते हैं। पैरों की आहट सुनाई देती है। मजीद और सईदा हाँफते हुए आते हैं। सईदा जो बहुत थकी हुई है, फ़व्वारे की मुँडेर पर बैठ जाती है। मजीद खड़ा रहता है।]

सईदा : आज तो मैं बहुत थक गई हूँ।

मजीद : गोकि बहुत दूर नहीं गए।

[स्तब्धता]

मजीद : क्या ही अच्छा होता, यदि मैं कराची चला गया होता !

सईदा : अच्छा ही होता !

मजीद : मेरी जान अजीब मुश्किल में फँस गई है—मैं कराची चला जाता—लेकिन

सवाल यह है कि क्या मैं उस मँझधार में अपनी किश्ती खेकर किनारे ले जाता ? नहीं, मैं ज़रूर असफल रहता ।

सईदा : मुझे मालूम है ।

मजीद : तुम्हें मालूम है—मुझे मालूम है—सिवा भाईजान के और सबको मालूम है और यही इस कहानी का सबसे कोमल भाग है।

सईदा : मैंने कई बार सोचा है कि उनसे कह दूँ, लेकिन (**उठ खड़ी होती है**) मुझे डर है कि वे इस शॉक को सह न सकेंगे ।

मजीद : मुझे खुद इस बात का डर है। डाक्टरों ने कहा है कि वे ज़्यादा से ज़्यादा एक बरस और ज़िन्दा रहेंगे। गरीब से ज़िन्दगी का इतना कम हिस्सा छीनना अत्याचार है ।

[झाड़ियों के पीछे अमज़द अपने दांत भींच लेता है। असगरी मज़बूती से उसका कंधा पकड़ लेती है ।]

सईदा : हमेशा कोशिश करनी चाहिए कि जब तक वे ज़िन्दा हैं, खुश रहें। उनकी भावनाओं को किसी प्रकार तनिक भी ठेस न लगे।

मजीद : और यदि हमारा कोई छाला रगड़ खाकर फूट पड़ा तो···

सईदा : (**लगभग चीखकर**) तो कयामत आ जाएगी ।

मजीद : इसलिए मैं सोचता हूँ कि चला जाऊँ, जब तक भाईजान···

सईदा : (**एकदम बात काटकर**) ऐसा न कहो मजीद···इतने ज़ालिम न बनो ।

[अमज़द अपाहिज़ों की कुर्सी में लरज़ जाता है। असगरी उसका दूसरा कंधा भी मज़बूती से पकड़ लेती है ।]

मजीद : मुहब्बत बड़ी ज़ालिम और खुदगर्ज़ होती है सईदा। कमबख्त दूसरों की मौत पर नाचने की इच्छा करते हुए भी नहीं शरमाती ।

सईदा : हमें ऐसे विचार दिमाग में नहीं लाने चाहिए।

मजीद : ठीक है, लेकिन आ जाएँ तो क्या करें ?

सईदा : क्या कर सकते हैं—चलो ।

[सईदा कोठी की ओर चलती है। मजीद उसके पीछे धीमे-धीमे कदम उठाता है। झाड़ियों के पीछे अपाहिज़ों वाली कुर्सी में अमज़द का सिर झुका हुआ है। उसके पीछे असगरी प्रतिमा बनी खड़ी है।]

असगरी : चलें ?

अमज़द : (**उसी तरह सिर झुकाए**) नहीं, अभी नहीं, मैं सोच रहा हूँ ।

असगरी : क्या ?

अमज़द : मालूम नहीं—शायद यह सोच रहा हूँ कि मुझे अब क्या सोचना चाहिए ?

असगरी : ऐसा सोच-विचार बिलकुल व्यर्थ होता है।

अमजद : (सिर उठाकर) व्यर्थ तो होता है, लेकिन फिर क्या करूँ ? (**स्तब्धता के बाद**) वे इतने ज़ालिम नहीं हैं जितनी तुम हो । तुम तो मुझे सोचने से भी मना करती हो। तुम बड़ी ज़ालिम हो असगरी।

असगरी : (**मुस्कराकर**) मुहब्बत बड़ी ज़ालिम और खुदगर्ज़ होती है अमज़द मियाँ। कमबख्त अपनी मौत पर भी नाचने से बाज़ नहीं आती।

अमजद : मेरे सामने आओ ।

[असगरी अमज़द के सामने आती है। अमज़द उसकी आँखों में आंखें डालकर देखता है । कुछ सोचता है और बड़बड़ाता है ।]

अमजद : यह किताब अब तक कहाँ पड़ी थी ?

असगरी : कहीं रुई की टोकरी में—अपनी सही जगह।

अमजद : चलो, मुझे ले चलो ।

[असगरी कुर्सी को धकेलती है और कोठी की ओर चलती है।]

आठवाँ दृश्य

[वही कमरा जो पहले, दूसरे और चौथे दृश्य में है । रात का समय । छत से हरी रोशनी फ़व्वारे की भाँति बिखर रही है । हर चीज़ का असली रंग बदला हुआ है जैसे असाधारण मरीज़ों का । पलंग खाली है। वह ऐसे खाली है मानो कभी आबाद ही नहीं हुआ था । असगरी अमज़द को अपाहिज़ों वाली कुर्सी पर घर में ले जाती है ।]

असगरी : दुलहन बेगम, बेगम साहब के कमरे में क्यों चली गईं ?

अमजद : डरती थी।

असगरी : आपसे ?

अमजद : (**मुस्कराकर**) मुझसे कोई क्या डरेगा ? वह अपने-आपसे डरती थी ।

असगरी : वे इतनी कमज़ोर नहीं हैं अमज़द मियाँ।

अमजद : समय बड़े पहाड़ को खोखला कर देता है। वह तो एक नौजवान लड़की है ।

असगरी : (**निस्तब्धता के बाद**) अब आप सोना चाहेंगे ?

अमजद : सोना··· (**हँसता है**) मेरी हँसी मत उड़ाओ असगरी। मेरे जलते हुए घावों की तौहीन होती है ।

असगरी : (**मौन के बाद**) क्या आपको सईदा से प्रेम है ?

अमजद : नहीं।

असगरी : तो फिर घाव कैसे हुए ?

अमज़द : मुझे सोचने दो—बोलो, इजाज़त देती हो सोचने की ?···

असगरी : आप सोचिए।

[निस्तब्धता जिसमें अमज़द सोचता है।]

अमज़द : मुझे सईदा से प्रेम नहीं है—जिस तरह आदमी मार्केट से अच्छी चीज़ चुनकर लाता है उसी तरह मैंने सैकड़ों लड़कियों में से उसे चुनकर अपनी बीवी बनाया था। मुझे अपने उस चुनाव पर गर्व था और उचित गर्व था। सईदा चरम सीमा की सुन्दर है-—उस पर मेरा केवल इतना हक है कि मैंने उसे चुना और अपनी बीवी बनाया। उस बीवी या साथिन का यह उत्तर इस कुर्सी में ढेर है, जो किसी दूसरे की मदद के बिना हिल-डुल नहीं सकता। डाक्टरों ने मुझे ज़्यादा से ज़्यादा एक साल ज़िन्दा रहने के लिए और दिया है—कुछ समझ में नहीं आता कि क्यों इस काल तक मैं उसे ऐसी ज़ंजीरों में बाँधे रखना चाहता हूँ जिसका हर भाग मेरी अपनी ज़िन्दगी की तरह गैरयकीनी है। कुछ समझ में नहीं आता··· **(सोचते हुए)** उसकी जवान खूबसूरती ही इसका कारण हो सकती है। **(एकदम चौंककर)** यही···यही···यही कारण है, और कोई नहीं। **(तकलीफ़ अनुभव करता है)** वह···वह दृश्य···यह दृश्य ···मुझे भूल सकता है। कभी वह नज़ारा···उस पलंग पर अपनी नाज़ुक कलाइयों के साथ लेटी दुनिया की सुन्दर से सुन्दर कामिनी को शरमा रही थी···यह दृश्य मेरे साथ चिपट गया है—नहीं, मैं उसके साथ चिपट गया हूँ। **(स्तब्धता के बाद)** असगरी !

असगरी : **(चौंककर)** जी !

अमज़द : क्या कोई ऐसा रास्ता निकल सकता है जिससे वह जल-भुनकर मुझसे अलग हो जाए ?

असगरी : हर मुश्किल की चोली में उसे आसान बनाने की ताली छिपी रहती है।

अमज़द : तो अब ढूंढ़नी चाहिए···लेकिन···मुझे मुश्किल क्यों मालूम देता है ?

असगरी : मालूम नहीं क्यों···यह मुश्किल आपकी ही मुश्किल है। इसके लिए आपका हाथ किसी अनाड़ी का हाथ नहीं होगा।

अमज़द : जानता हूँ···मैं अपने दिल की तमाम नसों से परिचित हूँ, जो इस गलत भाव की धड़कनें पैदा करती हैं। लेकिन आज इसका फ़ैसला हो जाएगा।

असगरी : किसका ?

अमज़द : मेरे सामने ।

[असगरी अमज़द के सामने आ जाती है।]

अमज़द : जाओ, पलंग पर लेट जाओ।

असगरी : **(हिचकिचाकर)** अमज़द मियाँ, मुझमें वह जवानी और खूबसूरती नहीं जो संसार के महान् सौंदर्य का उपभोग करने वाले को सन्तुष्ट कर सकूं। मेरी जवानी तो खुरदरे टाट की भाँति उपभोग में आ सकती है।

अमज़द : पलंग पर लेट जाओ असगरी।

असगरी : (आँखों में आँसू छलक पड़ते हैं) नहीं अमज़द मियाँ—पलंग को तकलीफ़ होगी। यह दुलहन बेगम के नरम और नाज़ुक शरीर का आदी है।

अमजद : मैं तुम्हें हुक्म देता हूँ।

असगरी : (सिर झुकाकर) आप मालिक हैं।

[पलंग पर लेट जाती है। आँखें छत में गड़ जाती हैं।]

अमजद : जानती हो, आज कौन-सी रात है ?···वह रात है जब एक तड़मड़ी जवानी और ज्यादा तड़मड़ी एकीकरण करने वाली है। यह कयामत की रात है। ऐश की रात है। इसके अँधियारे में चमकती पट्टी में पिघलकर एक सुदृश्य धातु का निर्माण करेगा। यह वह रात है जिसके बाद और कोई रात नहीं आएगी। उसकी अँधी आँखों में ऐसे काजल से तहरीर होगी जो उन्हें हमेशा के लिए चमका देगी। यह वह रात है जब मौत के निचुड़े हुए थनों मे ज़िन्दगी की अन्तिम बूँदें डरकर स्वयं ही बाहर आ जाएँगी। यह वह रात है जो अपनी कोख से असुरों को जन्म देगी, ऐसे सपूतों को जन्म देगी जो खुदा की इबादत में अपना जीवन सिला देंगे। यह वह रात है जब नरम-नरम बादलों का पानी गिरकर ज़मीन में चला जाएगा और बदले में खाक उड़ेगी। यह वह रात है जब लेखक अपना कलमदान औंधा करके किसी अँधेरे कोने में मुँह देकर रोएगा। यह वह रात है जब अमज़द इस दुनिया की तमाम खूबसूरतियों को तीन बार तलाक देता है और एक बदसूरती को अपना सम्बन्धी बनाता है··· (एकदम चीखता है) असगरी···असगरी !

[इसी बीच असगरी पलंग से उठकर खिड़की के पास पहुँचकर उसे खोल चुकती है और उसके साथ खड़ी होकर नीचे गहराइयों में देख रही है।]

अमजद : (चीखकर) यह क्या कर रही हो असगरी ?

असगरी : (खिड़की के पास खड़ी होकर अमजद को देखती है) प्रतीक्षा ज़रूरी है मेरे मालिक।

[नीचे कूद जाती है।]

अमजद : (दोनों हाथों से आँखें ढाँपकर) असगरी ! (हाथ हटाता है और कुछ देर खुली खिड़की से बाहर अँधेरे में देखता रहता है जो हरी दीवार में तारे की भाँति मुँह खोले है।) प्रतीक्षा ज़रूरी है। (बड़बड़ाता है) प्रतीक्षा ज़रूरी है। (ज़ोर लगाकर आगे कुर्सी बढ़ाता है। बड़ी मुश्किल से खिड़की तक पहुँचता है) मुझे मुश्किल को आसान करने का यह रास्ता मालूम था···लेकिन किसी उँगली पकड़ने वाले की ज़रूरत थी···

[खिड़की की चौखट दोनों हाथों से मज़बूती से पकड़ता है। अपना अपाहिज़ शरीर ताकत लगाकर ऊपर उठाता है और दूसरी ओर लटकना शुरू कर देता है।]

अमजद : मेरी पहाड़ियाँ—मेरी प्यारी पहाड़ियाँ ! मेरी प्यारी असगरी !

[अगला धड़ नीचे फिसलता है और एकदम उसका सारा शरीर अँधेरा खा जाता है अर्थात् गिर पड़ता है।]

कबूतरी

पात्र

चन्द्रा

दुर्गी

कम्बलपोश

कमलो

राधा

कान्ता

पटवारी

वैद्य

पहली लड़की, दूसरी लड़की, तीसरी लड़की, चौथी लड़की

[मुर्ग की बाँग—पथरीले ज़ीनों पर कदमों की आवाज़—फिर मुर्गे की बाँग—कदमों की आवाज़—मन्दिर का घण्टा एक बार बजता है—अन्तराल—दूसरी बार बजता है—अन्तराल—दो लड़कियों के गुनगुनाने की आवाज़ें जैसे वह होंठों ही होंठों में पूजन कर रही हैं—वह गुनगुनाहट कुछ क्षणों तक जारी रही—इसके बाद आरती शुरू होती है—आरती खत्म हो जाती है—अन्तराल—घण्टा एक बार बजता है—अन्तराल—दूसरी बार बजता है—पथरीले ज़ीनों पर कदमों की आवाज़ यह ज़ाहिर करने के लिए कि दोनों लड़कियाँ मन्दिर में से बाह निकल रही हैं।]

चन्द्रा : दुर्गी, आज कितनी ठण्ड है ! (सर्दी के कारण सी-सी करती है।)

दुर्गी : दाँत से दाँत बज रहे हैं।

[दूर से ढोर-डंगरों के गले में बँधे घुंघरुओं की आवाज़ आती है—कुछ क्षणों तक यह आवाज़ आती है, जिससे यह पता चले कि पास ही से ये मवेशी गुज़र रहे हैं।]

चन्द्रा : दुर्गी, आज वह तेरा कम्बलवाला दिखाई नहीं दिया, जो तेरी तरफ़ घूर-घूरकर देखता है।

दुर्गी : आज कम्बल न मिला होगा। (हँसती है) मैं पूछती हूँ चन्द्रा, यह मुआ हर रोज़ मुँहअँधेरे क्यों आन टपकता है। इसकी लाल आँखों से मुझे डर लगता है। चरस पीकर आता होगा।

चन्द्रा : जाने क्या पीकर आता है, पर मैं जानती हूँ कि तुझे देखकर उसकी प्यास बिलकुल बुझ जाती है—दुर्गी, सच कहती हूँ, वह तुझ पर बहुत बुरी तरह मरता है।

दुर्गी : तो मैं क्या करूँ—मरता है तो मरे—मेरा पीछा छोड़े—चन्द्रा, तू सोच तो सही, अगर यह मुआ हर रोज़ इसी तरह आता रहा और यह बात उड़ती-उड़ती उनके कानों तक पहुँच गई तो आफ़त ही आ जाएगी।

चन्द्रा : तो इसका कोई उपाय कर—ऐसी बातें कब तक छुपी रहेंगी। यह तो तुझे भी अच्छी तरह मालूम है कि वह सिर्फ़ तेरे लिए आता है।

दुर्गी : ले, मैंने कबूल लिया, पर अब तू कोई उपाय तो बता—किस तरह उसका आना बन्द हो सकता है। तुझे तो ऐसी बातें खूब सूझा करती हैं।

चन्द्रा : (**शरारतपूर्ण लहजे में**) तुझे कैसे सूझेंगी—तेरा मन तो हर वक्त उस घुड़सवार थानेदार की बाबत सोचता रहता है, जो एक रोज़ सेहरा बाँधकर तुझे ले जाएगा और तुझे वे तमाम बातें सुनाएगा जो अभी तक वह तुझसे नहीं कर सका। मैं कहती हूँ दुर्गी—तू बड़ी भाग्यवान है—ऐसा अच्छा वर तुझे मिल गया।

दुर्गी : तुझे भी मिल जाएगा। ज़रा बड़ी तो हो जा। ज़्यादा चिन्ता न किया कर। यह वर अपने-आप मिल जाया करते हैं।

चन्द्रा : मैं तो बड़ी हो जाऊँगी, पर तुझ जैसा रूप कहाँ से लाऊँगी। यह जो मीठी-मीठी बातें करने और दिल मोह लेने का ढंग तुझे आता है, मुझे कहाँ से आएगा—क्या तू सिखा देगी मुझे ?

दुर्गी : चन्द्रा, तू छेड़खानी करती है, पर मेरा दिल तो बताशे की तरह बैठ रहा है—इस निगोड़े कम्बलवाले ने तो मेरी रातों की नींद उचाट कर दी। (**मर्द के खाँसने की आवाज़—यह सुनकर दुर्गी डरी हुई मद्धिम आवाज़ में कहती है**) चन्द्रा, यह कौन खँखार रहा है—यह···यह···यह तो वही है।

चन्द्रा : (**सरगोशी में**) हाँ—वही है—वह बबूल के नीचे खड़ा है।

दुर्गी : अँधेरे में यूँ दिखाई देता है, जैसे इस पेड़ की छाल उतरकर एक तरफ़ खड़ी हो गई है।

चन्द्रा : हौले-हौले बात कर, सुन लेगा। (**सरगोशी में**) देख, मेरा कहा मान और आज उससे मिलकर सारा झगड़ा ही चुका दे। साफ़-साफ़ कह दे कि यूँ किसी के पीछे परछाईं की तरह लगा रहना अच्छा नहीं। ऐसा न हो कि किसी रोज़ बेकार थाना-थनौवल हो जाए—और जो मन में आए, उससे कह दीजो ताकि उसको पता लग जाए, इन तिलों में तेल नहीं—समझी ?

दुर्गी : समझ गई, पर मुझे डर लगता है—चन्द्रा, ऐसा न···

चन्द्रा : ऐसा न हो, वैसा न हो—अब तू छोड़ इस सोच-विचार को। जा, उससे बात कर। ऐसा मौका फिर नहीं मिलेगा।—आसपास इस वक्त कोई है भी नहीं।

दुर्गी : (झिझक के साथ) जाती हूँ।
चन्द्रा : अब चली भी जा—खड़ी-खड़ी टुकुर-टुकुर मेरा मुंह क्या देख रही है ? जा।
दुर्गी : तू भी साथ चल। दोनों उससे बात करें।
चन्द्रा : तो ठहर। मैं उसे यहीं बुलाती हूं—खड़ी रह। भागती कहाँ है ?
दुर्गी : डरकर तूने सचमुच उसे इशारा कर दिया—चन्द्रा, वह आ रहा है।
चन्द्रा : तो क्या हुआ ?

[कुछ क्षणों का अन्तराल—बिलकुल खामोशी]

दुर्गी : (सरगोशी से) पहले तुम्हें ही बात करनी पड़ेगी। मुझसे न बोला जाएगा।

(अन्तराल)

कम्बलपोश : (रुक-रुककर) मुझे···मुझे···क्या तुमने मुझे बुलाया था ?
चन्द्रा : हाँ। हमने ही बुलाया था। बोलो, तुम क्या चाहते हो ? तुम इस लड़की का पीछा क्यों नहीं छोड़ते ? क्यों हर रोज़ तुम इस मन्दिर के पास आकर खड़े होते हो ? अगर तुम्हें पूजा करनी होती है, तो तुम मन्दिर में क्यों नहीं जाते ? बाहर सर्दी में क्यों ठिठुरते रहते हो ?
कम्बलपोश : देवी, पूजा मन्दिरों के बाहर भी हो सकती है।
चन्द्रा : सुना तुमने, दुर्गी ?
दुर्गी : (घबराकर) चलो चन्द्रा, चलें।
चन्द्रा : अगर तुझे मन्दिरों के बाहर पूजा करनी है तो कर, पर दुर्गी की तरफ़ घूर-घूरकर क्यों देखा करता है ?
कम्बलपोश : मैं तो जिधर भी देखता हूँ, उधर मुझे अपने ही विचार नज़र आते हैं। मैं इन्हें ही घूर-घूरकर देखता हूँ। इसको तो मेरी आँख देख ही नहीं सकती। मेरे विचार हर चीज़ पर कुहरे की तरह छा जाते हैं।
दुर्गी : जाने क्या पहेलियाँ बुझा रहा है। आओ, चलें।
चन्द्रा : (दुर्गी से) ठहरो, मुझे पूरी बात तो कर लेने दो। (कम्बलपोश से) इसका मतलब यह है कि तू अपनी हठ नहीं छोड़ेगा ?
कम्बलपोश : हठ तो वह कर सकता है, जिसमें हठ करने की शक्ति हो, मैं क्या हठ करूँगा। मेरी तो कोई चीज़ भी मेरे कहने में नहीं।
चन्द्रा : तभी तो यह पागलपन तेरे सिर में समा गया है।
दुर्गी : (तंग आकर) मैं तुझसे एक बात पूछूं—क्या तू मुझसे प्रेम करता है ?
चन्द्रा : जवाब दे इसकी बात का।
कम्बलपोश : (उदास आवाज़ में) अब कोई बात जवाब देने की नहीं रही—मैं कल से इधर नहीं आऊँगा···

[खुश्क पत्तों पर चलने की आवाज़—कुछ क्षणों के लिए]

दुर्गी : चन्द्रा ! इसकी आवाज़ में इन सूखे हुए पत्तों की-सी खड़खड़ाहट थी—इस आदमी से मुझे इतना डर क्यों लगता है ?

[सूखे हुए पत्तों पर चलने की आवाज़—टहनियाँ चटखती हैं। पत्ते खड़खड़ाते हैं। ये आवाज़ें आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड होती जाएँ। निम्न गीत के सुर उभरते जाएँ :]

खड़-खड़ पतझड़ आई—पगले
खड़-खड़ पतझड़ आई

झक्कड़ चीखे, शाखें चटखीं, सूखे पत्ते टूटे
आशा की कलियाँ कुम्हलाईं, काँच के सपने टूटे
प्रेम का सुन्दर दीपक भड़का, मन की चिता जलाई
खड़-खड़ पतझड़ आई—पगले
खड़-खड़ पतझड़ आई

रास न आया दुखियारों का पल-भर का मुस्काना
आँख की इक झपकी में बिखरा प्रेम का ताना-बाना
कैसा फूटा भाग बनाया, हे भगवान दुहाई
खड़-खड़ पतझड़ आई—पगले
खड़-खड़ पतझड आई

[नोट : इस बात का खास तौर पर खयाल रखा जाए कि यह गीत एक ही ताल-लय में ब्राडकास्ट न हो। लेखक यह चाहता है कि गीत के सुर कभी धीमे हो जाएँ और कभी ऊँचे हो जाएँ, जिससे सुनने वालों को यह मालूम हो कि कोई आदमी दूर, बहुत दूर गा रहा है जिसकी आवाज़ हवा के झोंकों से आ रही है—यह गीत कम्बलपोश का होगा।]

कम्बलपोश : दूर-दूर तक जिधर नज़र दौड़ाता हूँ, ऊँचे-ऊँचे पेड़ दिखाई देते हैं, जिनकी टहनियों से पत्ते यूँ झड़ गए हैं, जैसे मेरी आशाएँ—अब मैं भी इस वीराने का एक रुंड-मुंड पेड़ हूँ—हवाएँ उदासियों से बोझिल हो रही हैं—सूखे पत्ते खड़खड़ाते हैं तो ऐसा मालूम होता है, उदास दिल धड़क रहे हैं। (**चील की उदास चीख**) चील की इस पतली आवाज़ ने मेरे सारे जीवन पर एक लकीर-सी खींच दी है। (**घबराकर**) मुझे क्या हो गया है ? (**चौंककर**) तुम···तुम कौन हो ?

कमलो : (**तुतलाकर**) मैं···मैं कमलो हूँ।

कम्बलपोश : कमलो कौन—तू यहाँ झाड़ियों के पीछे क्यों छुपी हुई थी ?

कमलो : मुझसे किसी ने कहा था कि तुम साधू हो—दिल की बातें बता सकते हो—मैं तुमसे कुछ पूछने आई थी।

कम्बलपोश : (**हँसता है**) यह तुमसे किसने कहा ?

कमलो : सारे गाँव वाले यही कहते हैं।

कम्बलपोश : (**हँसता है**) क्या कहते हैं ?

कमलो : गाँव में आजकल तुम्हारी बहुत चर्चा है। लोग कहते हैं कि तुम दुनिया छोड़कर इस जंगल में आ बैठे हो और ईश्वर-भक्ति कर रहे हो। अगर तुम किसी

को आशीष दोगे तो उसका बेड़ा पार हो जाएगा।

कम्बलपोश : (**सर्द आह भरकर**) जो अपने लिए कुछ न कर सका, वह तेरे लिए क्या कर सकेगा—भोली लड़की ! ये दुनिया वाले कैसे हैं ! जो आदमी बिलकुल निराश होकर एक कोने में बैठ जाए, उसे अपनी मुश्किलें आसान करने वाला समझने लगते हैं—बोल तो सही, तू क्या चाहती है ?

कमलो : इस फागुन को मेरा ब्याह होने वाला था, पर···

कम्बलपोश : बोल—बोल—इस फागुन को मेरा ब्याह होने वाला था, पर···

कमलो : (**शरमाकर**) हमारे गाँव का एक पटवारी है। उसकी बापू से नहीं बनती। उस कलमुंहे ने भाँजी मारी और ब्याह रुक गया। कोई ऐसी बात करो, जिससे यह रोक दूर हो जाए—अगले महीने दुर्गी का ब्याह हो रहा है। वह मुझसे दो बरस छोटी है। (**शरमाकर जल्दी-जल्दी**) अब···अब मैं तुमसे क्या कहूँ ? तुम सारी बात समझ गए हो।

कम्बलपोश : दुर्गी का ब्याह हो रहा है—क्या सचमुच दुर्गी का ब्याह हो रहा है ? क्या अगले महीने वह ब्याह दी जाएगी ? अगर यह सच है तो वह···इतनी सुन्दर क्यों थी ?

कमलो : क्या कहा ?

कम्बलपोश : (**सँभलकर**) कुछ नहीं—देख कमलो—मैंने आज तक अपने लिए भी ईश्वर से कुछ नहीं माँगा, पर मैं तेरे लिए ज़रूर प्रार्थना करूँगा। एक शर्त पर कि तुझे मेरा एक छोटा-सा काम करना होगा।

कमलो : मैं ज़रूर करूँगी।

कम्बलपोश : जब दुर्गी सज-धजकर दुलहन बन जाएगी, उसका मन कबूतरी के पोटे की तरह आने वाली घड़ियों के गर्म-गर्म खयालों से भर जाएगा, तो कमलो, तू उसे एक तरफ़ ले जाइयो और उसके कान में हौले-हौले कहियो, 'वह आदमी, जो तुझे मन्दिर के पास घूर-घूरकर देखा करता था, वह गुम हो गया है। अब सिर्फ़ उसकी आवाज़ रह गई है, जो सदा इस गाँव की पगडंडियों पर भटकती रहेगी'—भूल न जइयो, कमलो—जब कँवारपने की लौ आखिरी बार दुर्गी के मुखड़े पर झिलमिलाएगी, तो मेरी जगह तू आगे बढ़ेगी और धीरे से यह कहकर उसे बुझा देगी, 'ले, अब तो फिसलकर अँधेरे में डूब जा'—कमलो, ये बातें तुम्हें कहनी पड़ेंगी। (**यहाँ से पृष्ठ-भूमि में शहनाइयों की आवाज़ शुरू हो जाती है, बिलकुल धीमी**) जब शहनाइयाँ बज रही होंगी और ऐसा मालूम होगा कि तीखे-तीखे सुर आपस में नन्ही-नन्ही चिड़ियों की तरह लड़-झगड़ रहे हैं तो कमलो, तू उससे कहेगी, 'जा, अरमानों-भरी डोली में बैठने से पहले उस आदमी से मिल आ, जिसके दिल में अब कोई अरमान नहीं रहा। वह मन्दिर के पास तेरा इन्तज़ार कर रहा है···'

[**नोट :** शहनाइयों की आवाज़ पृष्ठभूमि से उभर आए। ऐसा मालूम हो कि शादी हो रही है। शहनाइयों के पीछे हुजूम का रिकॉर्ड भी लगा दिया जाए ताकि आवाज़

का यह परदा मोटा हो जाए—कुछ क्षणों के बाद शहनाइयों की आवाज़ फ़ेड कर दी जाए। ज्यों ही शहनाइयों की आवाज़ विलीन हो, पाँच-छः लड़कियों की हँसी का एक फ़व्वारा-सा फूट पड़े।]

चन्द्रा : राधा ! दुर्गी की इस चमचम करती चोली की तरफ़ तो देख। क्या फँसी-फँसी आयी है।

राधा : और यह इसकी घाघरी—ऊपर से मीठा-मीठा—नीचे से खुला-खुला झोल—दूर से देख, ऐसा लगता है, खुम्भी पर तितली बैठ गई है।

दुर्गी : चल हट, दूर हो मुई।

राधा : ओफ़्फ़ो ! बड़ी लाज आती है मेरी बन्नो को—आज रात···आज रात···(**दुर्गी उसका मुंह हाथ से बंद कर देती है। राधा की साँस बंद होने लगती है। चुनाँचे वह दुर्गी का हाथ हटाने की कोशिश करती है**) दुर्गी—दुर्गी—न कर—मेरी साँस रुक जाएगी—यह मेरी निगोड़ी नाक कल से बन्द है—अब छोड़ भी दे। (**दुर्गी हाथ हटा लेती है**) भई, ऐसा मज़ाक हमें अच्छा नहीं लगता और जो हम तेरा गला घोंट दें···

चन्द्रा : चल, दूर हो। मुई कलजीबी—

राधा : तुझे किसने बीच में पंच बनाया है ? मैं जो चाहूँगी, कहूँगी—अच्छा दुर्गी, मेरी बात तो सुन। (**शरारतपूर्ण लहजे में**) आज वह तेरा थानेदार लोटपोट ही तो हो जाएगा, तुझे इन कपड़ों में देखकर।

कमलो : अब तो दुर्गी थानेदारनी हो जाएगी।

[सब लड़कियाँ हँसती हैं।]

दुर्गी : तू क्यों जलती है ?

चन्द्रा : दुर्गी, बात सुन मेरी—इधर आ। (**दुर्गी के झाँझ बँधे पैरों की आवाज़**) अरे, मुझसे क्यों झेंपती है ? मैं थानेदार थोड़ी हूं।

दुर्गी : बोल, क्या कहना है तुझे ?

चन्द्रा : अगर उसने तुझे हथकड़ी लगा दी तो तेरी वे सारी बातें धरी रह जाएँगी, जो तूने मुझसे कही थीं—वह तेरी हठ नहीं मानेगा। उसे तो बहुत-से गुर आते होंगे मनाने के—क्यों राधा ? (**हँसती है**)

राधा : (**हँसती है**) सच है, हाथों में हथकड़ियाँ, पाँवों में बेड़ियाँ डाल दे तो क्या करेगी बेचारी दुर्गी—हार माननी ही पड़ेगी बाबा—यह थानेदार, मैं सुनती हूँ, बहुत कड़े मिज़ाज के होते हैं।

दुर्गी : बस, तू अब रुकेगी नहीं—अपनी बकवास करती ही चली जाएगी। (**लहजा बदलकर**) उनका मिज़ाज तो बहुत नर्म है—वह तो मुझसे कुछ नहीं कहेंगे।

चन्द्रा : हाथ तक न लगाएँगे—छुईमुई जो हुई।

राधा : दुर्गी ! सच-सच बता—उनसे मिले तुझे कितने दिन हो गए हैं ?

दुर्गी : (**झूठ बोलती है**) मैंने तो उन्हें कभी देखा ही नहीं। और फिर मैं उनसे क्यों मिलने लगी—मेरे क्या लगते थे, जो मैं उनसे मिलती !

चन्द्रा : मेरे सामने भी झूठ बोलने से बाज़ नहीं आई—अभी तो उससे कल ही मन्दिर के परली तरफ़ बबूलों के झुण्ड में छिप-छिपकर बातें कर रही थी और मैं दूर खड़ी देख रही थी कि कोई आ न जाए।

कमलो : दुर्गी, बता, क्या बातें हुई थीं ?

दुर्गी : जाने मेरी जूती, क्या बातें हुई थीं—मुझे क्या गर्ज़ पड़ी थी उससे मिलने की ? चन्द्रा, तू मुझसे ज़रूर पिटेगी।

राधा : दुहाई बाबा—परों पर पानी ही नहीं लेती—तो क्या हुआ ? तूने उनसे बात-चीत की तो बड़ा अच्छा किया। झिझक दूर हो गई—आज जब वह तुझे डोली में डालकर ले जाएँगे तो शर्म के मारे तू गठड़ी-सी तो न बनेगी। बड़ी मीठी-मीठी बातें होंगी। वह तुझे धीरे-धीरे छेड़ेंगे—गुदगुदाएँगे। कभी तू भी उनको सताएगी। चुहलें होंगी और फिर···

दुर्गी : (बात काटकर) तेरा मन क्यों ललचाता है ?

[एक और लड़की भागी-भागी आती है—'दुर्गी-दुर्गी' कहती—पहले यह आवाज़ दूर से आती है, फिर निकट होती जाती है।]

कान्ता : दुर्गी—दुर्गी—दुर्गी—बारात आ गई—(कमलो से) कमलो, दुर्गी का दूल्हा मैंने देखा—बड़ा सुन्दर है—यह बड़ी-बड़ी काली मूंछें, लम्बा-तड़ंगा, अच्छा गबरू जवान है। (यहाँ से शहनाइयों की आवाज़ फ़ेड इन की जाए—आहिस्ता-आहिस्ता आवाज़ उभरती जाए। बहुत आहिस्ता-आहिस्ता)—घोड़ी बहुत सुन्दर है। (दुर्गी से) दुर्गी ! अब तो तू खाट पर बैठी राज करेगी—राधा, चन्द्रा, कमलो ! आओ, चलें—बारात देखें—तू खिड़की से चुपके-चुपके सबकुछ देख लीजो—चलो, चलें।

[तीन-चार लड़कियों के जाने की आवाज़—हंसी और बातों का मिला-जुला शोर। शहनाइयों की आवाज़ थोड़ी उभर आती है—कुछ क्षणों तक कोई नहीं बोलता।]

दुर्गी : कमलो, जा, तू भी जा। बाहर जाकर तमाशा देख।

कमलो : मुझे एक ज़रूरी बात कहनी है तुझसे।

दुर्गी : ज़रूरी बात—कैसी ज़रूरी बात ?

कमलो : (दबी आवाज़ में) वह आदमी, जो तुझे मन्दिर के पास घूर-घूरकर देखा करता था, गुम हो गया है। (दुर्गी एक आह के साथ कहती है—'गुम हो गया ?') अब सिर्फ़ उसकी आवाज़ रह गई है, जो सदा उस गाँव की पगडंडियों पर भटकती रहेगी—फिर उसने कहा था···

दुर्गी : (कमज़ोर आवाज़ में) क्या कहा था ?

कमलो : जब कंवारपने की लौ आखिरी बार दुर्गी के मुखड़े पर झिलमिलाएगी तो मेरी जगह तू आगे बढ़ेगी और यह कहकर उसे बुझा देगी, 'ले, अब तो फिसलकर अँधेरे में डूब जा।'

[शहनाइयों की आवाज़ एक क्षण के लिए ऊँची हो जाती है ।]

दुर्गी : (**डरकर चीखती है**) कमलो—!

कमलो : उसने यह भी कहा था, जब शहनाइयाँ बज रही होंगी और ऐसा मालूम होगा कि तीखे-तीखे सुर आपस में नन्ही-नन्ही चिड़ियों की तरह लड़-झगड़ रहे हैं तो कमलो, तू उससे कहेगी, 'जा, अरमानों-भरी डोली में बैठने से पहले उस आदमी से मिल आ, जिसके दिल में अब कोई अरमान नहीं रहा ।—वह मन्दिर के पास तेरा इन्तज़ार कर रहा है'—बस, यही उसका सन्देश था, जो मैंने तुझे दे दिया।

दुर्गी : वह मन्दिर के पीछे मेरा इन्तज़ार कर रहा है—क्यों ?—कमलो, वह मन्दिर के पास मेरा क्यों इन्तज़ार कर रहा है ?—मैं नहीं जाऊँगी—मैं नहीं जाऊँगी—वह मुझे क्यों डराता है कमलो—वह क्यों मेरे पीछे पड़ा है—मैंने उसका क्या बिगाड़ा है—वह क्यों मेरी माँग का सिन्दूर मिटाना चाहता है—मैं नहीं जाऊँगी—मैं कभी नहीं जाऊँगी···

[शहनाइयों की आवाज़ ऊँची से ऊँची हो जाती है ··आखिर में झाँझ की झंकार के साथ यह आवाज़ बुलन्दी पर जाकर रुक जाती है—एक क्षण के लिए पूर्ण शान्ति—फिर सूखे हुए पत्तों और खुश्क टहनियों पर कम्बलपोश के चलने की आवाज़]

कम्बलपोश : (**खुश्क पत्तों पर चलते हुए**) नहीं आई, (**रुक जाता है**) नहीं आई। बारात चली गई। वह नहीं आई। आती भी क्यों ? मेरा उस पर क्या अधिकार था ? (**अन्तराल के बाद अपने-आपसे**) मूर्ख, वे बोल, जो तेरे होंठों पर नहीं आए, क्या उन्हीं के बल पर तू उसे यहाँ बुलवाना चाहता था—(**उदास हँसी**) कैसे-कैसे मूर्ख इस दुनिया में बसते हैं—(अन्तराल) वह आ जाती—उसे आखिरी बार देख लेता (**लहजा बदलकर**) तो क्या होता ? सब मन परचावे की बातें हैं। (**खुश्क पत्तों पर चलता है**) ठीक है। फिर उसको देखने और बार-बार देखने की चाह मेरे दिल में क्यों चुटकियाँ लेती है ? मेरे दिल की वीरानी कैसी है कि ज्यों-ज्यों बढ़ती है, एक आबादी-सी पैदा हो जाती है। आज बरसों का बागी मन क्यों चाहता है कि किसी मिट्टी की मूर्ति के सामने झुक जाए। (**खुश्क पत्तों पर चलने की आवाज़**) कुछ समझ में नहीं आता—वह अगर नहीं आई तो उसने ठीक किया। उसे क्या गरज़ पड़ी थी यहाँ आने की—मैं कौन हूँ···पर···पर···यह भी तो ठीक है कि मैं·· मैं···(**रुक जाता है**) यह ज़बरदस्ती है—मुझे उस पर कोई अधिकार नहीं—मैं मूर्ख हूँ—महामूर्ख—(**खुश्क पत्तों पर चलता है**) इस मन्दिर में वह पहली सूरज की किरण की तरह आया करती थी, पर अब नहीं आएगी—मन्दिर बिलकुल सूना हो जाएगा। मेरे उदास दिल की तरह—(**पथरीले ज़ीनों पर कदमों की आवाज़—मन्दिर का घण्टा एक बार बजता है—अन्तराल—दूसरी बार बजता है—अन्तराल**) इस मूर्ति की तरफ़ देखता हूँ तो ऐसा मालूम होता है कि मेरा कोई नामुकम्मल ख्याल बाहर निकलकर पथरा गया है—बासी फूलों की बास कितनी

उदास है—फूल में से जब बास निकलती है तो उसको तकलीफ़ ज़रूर होती होगी—फ़र्श पर चमेली की ये बिखरी हुई पत्तियाँ कितनी निढाल दिखाई देती हैं—मैं भी कितना निढाल हूँ—(अन्तराल) जी चाहता है, प्रार्थना करूँ···पर इन नींद के माते देवताओं को पहले जगा तो लूं। (कुछ क्षणों तक घण्टा बजता है) परमात्मा—दुनिया को तबाह और बर्बाद करना तेरे बायें हाथ का खेल है—तू भूचाल ला सकता है···आकाश से बिजलियाँ गिरा सकता है—तू सबकुछ कर सकता है। मैं विनती करता हूँ कि तू मेरे इस नन्हे-से दिल में उसका खयाल कुचल दे—यह नहीं कर सकता तो मेरी तमाम सोचने-समझने की ताकतें मुझसे छीन ले···मेरे पहलू में दिल की जगह बर्फ़ का ढेला रख दे, जिस पर कोई लकीर अगर खिंच भी जाए तो अपने-आप मिट जाए—मैं उसको भूल जाना चाहता हूँ, इसलिए कि उसको याद करने का मुझे कोई अधिकार नहीं···

[अन्तराल—पथरीले फ़र्श पर कुछ कदमों की आवाज़—घण्टा एक बार बजता है—अन्तराल—पथरीले ज़ीनों पर कदमों की आवाज़—फ़ेड आउट—फ़ेड इन—घोड़े की टाप]

[नोट : घोड़े की टापों की आवाज़ कुछ क्षणों तक आती रहे। इसके बाद घोड़े के रुकने की आवाज़ आए।]

थानेदार : तुम थक गई होंगी—यहाँ इस झाड़ की छाँव में कुछ देर सुस्ता लें, फिर चलेंगे। (घोड़े पर से उतरने की आवाज़)

दुर्गी : मैं तो नहीं थकी—आपने घोड़ी क्यों रोक ली ?

थानेदार : यहाँ कुछ देर बैठेंगे। कुछ बातें करेंगे। तुम्हारे घर पहुँच गए तो तुमसे बातें करने का मौका कहाँ मिलेगा ?

दुर्गी : (शरमीली हँसी) आपकी तो बातें ही खत्म नहीं होतीं—इतनी तो कर चुके।

थानेदार : अभी तो मैंने शुरू भी नहीं कीं और तुम घबरा गईं—मर्द बड़े बातूनी होते हैं दुर्गी। (हँसता है) लो, अब मेरा सहारा लेकर नीचे उतर आओ।

दुर्गी : (नीचे उतरती है) अब नीचे उतरी हूँ तो थकान हड्डियों तक पहुँच गई है—चलते रहते तो···

थानेदार : औरतें झूठ बहुत बोलती हैं।

दुर्गी : मैंने कब झूठ बोला ?

थानेदार : अब तुम चाहती हो कि जिस तरह मैं थाने में झूठ बोलने वालों से सच कहलवाता हूँ, उस तरह तुमसे भी कहलवाऊँ—सो यह मैं कर नहीं सकता।

दुर्गी : क्यों ?

थानेदार : इसलिए कि तुम्हारे सामने मैं थानेदार नहीं रहता।

दुर्गी : क्या रह जाते हो ?

थानेदार : सब जानती हो, फिर क्यों पूछती हो—चलो, आओ, बैठकर खा लें। (थोड़ा अन्तराल) ठहरो, मुझे यह चादर बिछा लेने दो—बैठ जाओ—बैठ जाओ···। मेरे

लिए काफ़ी जगह निकल आएगी—अब बैठ भी जाओ ।

दुर्गी : पहले आप बैठिए।

थानेदार : तो यह झगड़ा कभी खत्म न होगा। मैं कहूँगा, तुम पहले बैठो, तुम कहोगी, मैं पहले बैठूं—लो, अब बैठ जाओ—छाँव बड़ी घनी है। हवा भी खूब चल रही है।

दुर्गी : लो, बैठ गई—लीजिए, अब आपको जो बातें करनी हों, कीजिए।

थानेदार : किस कमबख्त को याद रहा है कि क्या कहना था—लो, थोड़ा-सा यह हलवा खा लो। कचौरी के साथ खाओ। अच्छा लगेगा।

दुर्गी : खाती हूं—आप मेरे मुँह में क्यों ठूंसते जा रहे हैं ?

थानेदार : तुम्हें बुरा लगा ?

दुर्गी : जी नहीं। बुरा क्यों लगेगा—मैं आप खा लूंगी। आप क्यूं तकलीफ़ करते हैं।

थानेदार : नहीं, तुम्हें मेरी जान की कसम—यह मेरे हाथ से ज़रूर खाओ।

दुर्गी : लाइए, खा लेती हूं। **(मुँह भर जाता है—हँसती है)** आपने तो मेरा मुँह भर दिया।

थानेदार : मेरे पास मोती होते तो इस वक्त उनसे तुम्हारा मुँह भर देता—दुर्गी—दुर्गी···

दुर्गी : कहिए ?

थानेदार : तुम बहुत अच्छी हो।

दुर्गी : (हँसती है) बस ?

थानेदार : बस।

दुर्गी : तो मुझे पानी पिलाइए। आपकी यह कचौरी मेरे गले में फंस गई है—पानी पिलाइए।

थानेदार : पानी—पानी तो यहाँ नहीं।

दुर्गी : जाने दीजिए—घर जाकर पी लूंगी।

थानेदार : नहीं, नहीं। अभी ला देता हूँ—यहाँ से कुआँ दूर नहीं। एक कोस से भी कुछ कम होगा और तुम्हारा गाँव तो यहाँ से बहुत दूर है। सारा रास्ता क्या प्यासी रहोगी ?

दुर्गी : आप क्यों तकलीफ़ करते हैं !

थानेदार : तुम यहाँ बैठो।

दुर्गी : अकेली ?

थानेदार : तो क्या हुआ—तुम यहाँ बैठो। मैं यूं चुटकियों में पानी लेकर आता हूँ—यहीं बैठी रहना।

दुर्गी : (हँसकर) आप जाइए, पर जल्दी वापस आइए।

[घोड़े पर सवार होता है—घोड़े की टापों की आवाज़—आहिस्ता-आहिस्ता यह आवाज़ फ़ेड आउट कर दी जाए।]

दुर्गी : लेट जाती हूँ—पर प्यास से गला सूख रहा है—जल्दी आ जाएँ। (दूर से किसी के गाने की आवाज़ आती है—याद रहे कि यह आवाज़ बहुत दूर से आए और आहिस्ता-आहिस्ता—बिलकुल आहिस्ता-आहिस्ता स्पष्ट हो) यह कौन गा रहा है ?

गीत

जोगी सोगी होते हैं,
जोगी रोगी होते हैं।

तपती रेत, सुलगता सूरज, नंगे सिर और नंगे पाँव,
तू क्या जाने किसके कारण हम फिरते हैं गाँव-गाँव।

जोगी सोगी होते हैं
जोगी रोगी होते हैं।

सावन ऋतु में जब आमों पर पापी पपीहा बोलता है,
तू क्या समझे मन का पंछी अपने पर क्यों तोलता है।

जोगी सोगी होते हैं,
जोगी रोगी होते हैं।

दुर्गी : कम्बलवाला—वही कम्बलवाला—अब मैं क्या करूँ—अब मैं क्या करूँ ?

कम्बलपोश : ठहरो—भागो नहीं—गिर पड़ोगी।

दुर्गी : तुम'''तुम क्यों मेरा पीछा करते हो—तुम यहाँ क्यों मेरे पीछे-पीछे आए ?

कम्बलपोश : मैंने तेरा पीछा नहीं किया—यह होनी है, जो हम दोनों का पीछा कर रही है—यहाँ अकेली तू क्या कर रही है ?

दुर्गी : मैं अकेली नहीं हूँ—वह पानी लेने गए हैं। अभी आ जाएँगे।

कम्बलपोश : तूने मेरी आवाज़ पहचान ली थी ?

दुर्गी : नहीं—(घबराकर) मैं जाती हूँ।

कम्बलपोश : ठहर जा।—मुझे तुझसे अभी कुछ कहना है—याद है, तूने एक बार मुझसे यह सवाल किया था, 'क्या तू मुझसे प्यार करता है'—आज उसका जवाब सुन ले—ऐसी कोई घड़ी नहीं गई, जब मैंने तुझसे प्रेम न किया हो—

[दूर से घोड़े की टापों की आवाज़ सिर्फ़ कुछ क्षणों के लिए]

दुर्गी : (बहुत घबराकर) वह आ गए।

कम्बलपोश : जब तक मैं चाहूँगा, यहाँ कोई नहीं आएगा। आज मुझमें इतनी शक्ति है कि मैं इस धरती के सदा घूमने वाले चक्र को भी कुछ देर के लिए रोक सकता हूँ—तू नहीं जानती, मेरी कमज़ोरियों ने मुझे कितना ताकतवर बना दिया है—खड़ी रह यहाँ—यहाँ—कुछ देर इसी तरह अपने चेहरे पर ज़र्दियाँ लिए खड़ी रह कि मैं तुझे आखिरी बार जी भरकर देख लूँ—तूने आँख क्यों मीच ली ?—यह तुझे एकाएक क्या हो गया ?—वह कौन-सी चीज़ है जो तेरी आँखें नहीं देखना चाहतीं ?

[एकदम फ़ायर की आवाज़—दुर्गी चीखकर गिर पड़ती है।···हुजूम का शोरगुल फ़ौरन ही शुरू हो जाए—इस पर नीचे लिखी बातें सुपर इम्पोज़ की जाएँ।]

एक लड़की : कैसे हुआ ?

दूसरी लड़की : समझ में नहीं आता।

पहली लड़की : बेचारी के हाथों की मेहंदी भी अभी नहीं उतरी थी।

दूसरी लड़की : वह कौन था, जिसने गोली चलाई ? परमात्मा करे, न रहे इस दुनिया के तख्ते पर।

पहली लड़की : थानेदार है। गोली मारने वाले को ज़रूर खोज निकालेगा।

दूसरी लड़की : मेरी तो आँखों में आँसू आ गए, जब मैंने दुर्गी को इस हालत में देखा। सेरों लहू निकल गया।

तीसरी लड़की : मुझे उसके बचने की आशा नहीं। तूने रंग नहीं देखा···हल्दी की तरह पीला पड़ गया है।

चौथी लड़की : कुछ बोल ही नहीं सकती।

[भीड़ का शोरगुल फ़ेड आउट कर दिया जाए—नीचे का संवाद जब शुरू हो तो पीछे सारंगी धीरे-धीरे सुरों में बजती रहे—कोई दर्दनाक ट्यून हो।]

थानेदार : दुर्गी—दुर्गी—कुछ मुँह से तो बोलो···

पटवारी : थानेदार साहब, अगर आपको कुछ पूछना है तो सिर्फ़ यह पूछिये कि गोली किसने चलाई—वैद्य जी कहते हैं कि बस अब चन्द मिनटों ही की बात है। जल्दी कीजिए।

थानेदार : मैं सब जानता हूँ।

वैद्य : इन बातों में भी वक्त खराब न कीजिए—ऐसा न हो कि···

थानेदार : (**प्यार से**) दुर्गी !

दुर्गी : (**कमज़ोर आवाज़ में**) जी !

वैद्य : अब जल्दी पूछ लीजिए।

थानेदार : पूछता हूँ, आप घबराइए नहीं। दुर्गी—ज़रा आँखें तो खोलो—मुझसे कुछ बातें तो करो—याद है, मैंने तुमसे क्या कहा था कि मैं तुमसे कुछ बातें करना चाहता हूँ—सुनोगी मेरी बातें—अच्छा, भला यह तो बताओ, क्या तुम्हें वे सब बातें याद हैं, जो वहाँ जंगल में हुई थीं—वह हरा-भरा दरख्त—वह उसकी घनी-घनी छाँव—घोड़ी पर से हमारा उतरना—वहाँ चादर बिछाकर बैठना—याद है तुम्हें···

पटवारी : (**चिन्तापूर्ण लहजे में**) थानेदार साहब···

वैद्य : आपने इतनी लम्बी बातें क्यों शुरू कर दीं—जो मतलब की बात है, वह पूछिए।

थानेदार : मैं अभी पूछता हूँ। (**दुर्गी से**) हाँ दुर्गी, तो ये बातें तुम्हें याद हैं न—जब कचौरी खाते-खाते तुम्हें प्यास लगी थी और मैं पानी लेने चला गया था—और तुमने मुझे कितना रोका था।

दुर्गी : (**एक आह के साथ**) जी हाँ।

वैद्य : थानेदार साहब ! परमात्मा के लिए आप जल्दी कीजिए ।

थानेदार : अच्छा दुर्गी, अब यह बताओ कि इसके बाद की घटनाएँ भी तुम्हें याद हैं ? मैं घोड़ी पर तुम्हारे लिए पानी लेकर आया था । तुम उधर दूर खड़ी थीं—फिर क्या हुआ था ?

दुर्गी : (**कमज़ोर आवाज़ में**) आपने फ़ायर किया था ।

[एक क्षण के लिए पूर्ण खामोशी]

थानेदार : (**सँभलकर**) हाँ, मैंने फ़ायर किया था—सामने झाड़ पर मुझे एक कबूतरी नज़र आई थी, जिसे एक बाज़ दबोचे हुए था । मैंने उस पर फ़ायर किया था । पर तुम यह बताओ कि तुम्हें किसने मारा ?—तुम मुझे उसका नाम बताओ—जिसने तुम पर गोली चलाई है । बहुत बड़ा जुर्म किया है—इतना बड़ा जुर्म कि उसकी सज़ा फाँसी है—अगर तुम कातिल का नाम बता दोगी, तो वह यकीनन फाँसी पर चढ़ा दिया जाएगा—जानती हो, फाँसी कितनी खौफ़नाक चीज़ होती है—उस वक्त तक आदमी रस्सी के फन्दे में लटका रहता है, जब तक कि उसकी जान निकल न जाए—अब बताओ, वह कौन आदमी था—मेरी बात समझ गई हो न···

दुर्गी : (**अन्तराल के बाद—अर्थपूर्ण हँसी के साथ**) मैं समझ गई—मैं समझ गई । (**आवाज़ डूब जाती है**)

थानेदार : (**ऊँची आवाज़ में**) दुर्गी—दुर्गी—दुर्गी··· (**अन्तराल**)

वैद्य : (**भरे हुए गले से**) दुर्गी परलोक सिधार गई और यह राज़ भी अपने साथ लेती गई ।

[कम्बलपोश का प्रवेश—चार-पाँच आदमियों की कानाफूसी की आवाज़]

वैद्य : यह आदमी कौन है ?

थानेदार : (**कम्बलपोश से**) तुम कौन हो ?

कम्बलपोश : मैं कौन हूँ ? (**प्रश्नवाचक अन्दाज़ में**) मैं कौन हूँ ?

थानेदार : क्या चाहते हो तुम ?

कम्बलपोश : कुछ भी नहीं चाहता—सिर्फ़ यह कहने आया हूँ कि दुर्गी को मारने वाला मैं हूँ—उसकी जान मैंने ली है—मुझे गिरफ़्तार कर लीजिए ।

[हैरत-भरी सरगोशियों का हुजूम—फिर फ़ेड आउट]

बीमार

पात्र

कुमार	:	बीमार
गिडवानी, रशीद, बेदी, आत्मासिंह	:	कुमार के दोस्त
माधो	:	कुमार का नौकर

[खाँसने की आवाज़ सुनाई देती है।]

कुमार : (खाँसता है) माधो—माधो—(खाँसता है) माधो···

माधो : (आवाज दूर से आती है) आया, साहब।

कुमार : इधर आ, भागकर···मैं···उफ़···उफ़···। इस बुखार ने मुझे किस कदर निढाल कर दिया···(खाँसता है) अरे, माधो !

माधो : आया, साहब। बस, अभी हाज़िर हुआ, सरकार।

[आवाज दूर से आती है।]

कुमार : तू जब तक हाज़िर होगा, मेरी जान लबों तक आ जाएगी, कमबख्त···मालूम होता है तुझे बुखार से कभी वास्ता नहीं पड़ा।

माधो : क्या हुक्म है, सरकार ?

कुमार : सरकार के बच्चे—इतनी देर से जो तुझे बुला रहा हूँ। क्या तूने कानों में रुई ठूंस रखी है ?

माधो : मैं···मैं···सरकार, बावर्चीखाने में बर्तन साफ़ कर रहा था। फ़रमाइए, क्या हुक्म है ?

कुमार : मुझे दवा पिला···वक्त हो गया है और तुझे खबर ही नहीं···कोई मरे कोई जिए तेरी बला से···(खाँसता है) परदेश तो वैसे ही दुःख से भरा होता है और जब बुखार चढ़ जाता है तो फिर और मुसीबतें आ घेरती हैं···(खाँसता है) दोस्त-यार इतने हैं पर किसी ने भूले से भी तो इस तरफ़ का रुख नहीं किया···दवा बनाई तूने ?

माधो : बना ली, सरकार···जो दवा डाकदर साहब ने रात को पिलाई थी—थोड़ी-सी, चार-पाँच घूँट, वह भी मैंने मिक्सचर में डाल दी है।

कुमार : क्या ?

माधो : यह बोतल वाली···(**मेज़ पर से बोतल उठाने की आवाज़**) यह रही बोतल, सरकार।

कुमार : (**ज़ोर से**) तेरा सत्यानाश हो···ब्रांडी के तीन पैग गारत कर दिए नाबकार··· (**खाँसता है**) यह तुझसे किसने कहा था कि प्योर मिक्सचर में ब्रांडी घोल दे···

माधो : नहीं, साहब। दूसरी बोतल की दवा भी तो डाल दी है।

कुमार : वह कौन-सी ?

माधो : यह रही, साहब। (**बोतल उठाने की आवाज़**)

कुमार : तेरा बेड़ा गर्क हो माधो···तेरा बेड़ा गर्क हो···जा, दूर हो जा···(**खाँसता है**) पाज़ी ! यू डी क्लोन की सारी शीशी तूने प्योर मिक्सचर में डाल दी है···तेरा सत्यानाश हो···(**खाँसता है**) तू आज मुझे किस किस्म की दवा पिलाना चाहता है ?

माधो : सरकार···!

कुमार : खबरदार, जो तूने अब कोई बात की···भाग जा यहाँ से, भाग जा···अरे, मैं तुझसे क्या कह रहा हूँ···दूर हो जा मेरी नज़रों से।

माधो : अच्छा, साहब। जाता हूँ···पर···

कुमार : तू चला जा यहाँ से। मैं कुछ सुनना नहीं चाहता··· (**खाँसता है**)···उफ़··· उफ़···खाँसी से बुरा हाल हो रहा है और इस मनहूस ने सारी दवा को बरबाद कर दिया···यह तो खैर गुज़री जो मैंने उससे पूछ लिया वरना प्योर मिक्सचर, ब्रांडी और यू डी क्लोन पीने पड़ते। (**बेअख्तियार हँसता है**) प्योर मिक्सचर, ब्रांडी, यू डी क्लोन···क्या जोड़ है···(**हँसता है। घंटी बजती है**)

कुमार : चले आओ···भई चले आओ···(**धीरे से**) शुक्र है कोई आया तो है।

[दरवाज़ा खुलने की आवाज़ सुनाई देती है।]

गिडवानी : क्या किस्सा है भई आज···तुम पेट भर के हँस रहे हो···क्या घर से खर्च आया है···या किसी लाटरी का टिकट निकल आया है ?

[कुमार ज़ोर से हँसता है···फिर ज़ोर-ज़ोर से खाँसना शुरू कर देता है।]

गिडवानी : अरे, क्या हो गया है तुम्हें ? पागल तो नहीं हो गए···और ये कम्बल क्या ओढ़ रखे हैं तुमने ?

कुमार : (**कमज़ोर आवाज़ में**) बैठ जाओ। मैं तुम्हें सबकुछ बताता हूँ। (**खाँसता है**) कल से मुझे बुखार आ रहा है। खाँसी भी है। (**खाँसता है**)

गिडवानी : तो, कौन-सी आफ़त आ गयी ?

कुमार : कल रात डाक्टर बुलवाया था। एक मिक्सचर दे गया है। दो खुराकें पी ली हैं। अब तीसरी पीनी थी। माधो को बुलाया कि बोतल में से दवा उँडेल दे और

उसने ये सारी बोतलें गिलास में खाली कर दीं।

गिडवानी : यू डी क्लोन और ब्रांडी ?

कुमार : हाँ, हाँ। ये पड़ा है न गिलास !

गिडवानी : (हँसता है) बाई गॉड···तुम्हारा यह माधो इस काबिल हो गया है कि उसे चिड़ियाघर भेज दिया जाए।

कुमार : मैं उसी की बेवकूफ़ी पर हँस रहा था।

गिडवानी : और मैं तुम्हारी बेवकूफ़ी पर हँस रहा हूँ। तुम्हें खाँसी हो रही है और बुखार भी है और अभी तक तुमने इलाज ही शुरू नहीं किया।

कुमार : मिक्सचर पी तो रहा हूं।

गिडवानी : वह भी इसी किस्म का होगा जैसा कि तुम्हारे माधो ने तैयार किया है··· ये डाक्टर भला क्या जानें खाँसी और बुखार का इलाज···तुमने मुझे कल इत्तला दी होती तो मैं चुटकियों में ठीक कर देता···खैर, अब भी सब ठीक हो जाएगा··· माधो कहाँ है ?

कुमार : अन्दर है। (खाँसता है)

गिडवानी : माधो···माधो !

माधो : आया, साहब···क्या हुक्म है ?

गिडवानी : तू इतना बड़ा हो गया है। मुँह पर इतनी बड़ी दाढ़ी लिए फिरता है। पर अभी तक तुझे बुखार का इलाज मालूम नहीं हुआ—जा, किसी अत्तार की दुकान से दो पैसे की इमली और दो पैसे का आलूबुखारा ले आ···और साथ ही बाजार से मिट्टी का एक आबखोरा भी ले आइयो···समझ में आ गया न ? दो पैसे की इमली और दो पैसे का आलूबुखारा···जा, भागकर जा।

कुमार : (खाँसता है) इमली और आलूबुखारा ?

गिडवानी : तुम यूं पूछते हो जैसे मैंने समरकंद और बुखारा मँगवाने भेजा है उसे।

कुमार : गिडवानी···ये दोनों चीज़ें खट्टी हैं और मैं (खाँसता है) खाँसी से मर रहा हूँ।

गिडवानी : तुम इन बातों को नहीं समझ सकते···लोहे को लोहा काटता है। खाँसी का तोड़ सिर्फ़ इमली और आलूबुखारा है। यह पुराने ज़माने का सबसे अच्छा इलाज है। सौ बीमारियों की एक दवा है। ज़रा अपनी ज़बान तो दिखाओ।

कुमार : (मुँह खोलने की आवाज़) लो।

गिडबानी : ज़रा और बाहर निकालो। मैं खींच तो नहीं लूँगा। आ करो।

कुमार : (ज़ोर से मुँह खोलता है) आ !

गिडवानी : कितनी मैली है। उफ़···कितनी मैली है। तुम्हें कब्ज़ की शिकायत भी है। बस, इस दवा से यूं आराम आ जाएगा, यूं (चुटकी बजाता है)···माधो लेकर आए तो उससे कहना कि वह इमली और आलूबुखारे को आबखोर के अन्दर डालकर इसमें पाव-भर पानी डाल दे। इस आबखोरे को खुली छत पर रात-भर ओस में रहने देना। सुबह उठकर उसे छानकर पी लेना।

कुमार : आराम आ जाएगा ?

गिडवानी : फ़ौरन । अच्छा, अब मैं जाता हूं । कल दोपहर तक तुम बिलकुल ठीक हो जाओगे । क्लब में मुलाकात होगी । गुड बाई !

कुमार : (खाँसता है) दरवाज़ा बन्द कर देना ।

[गिडवानी सीटी बजाता हुआ चला जाता है । माधो अन्दर दाखिल होता है ।]

कुमार : (खाँसता है) माधो, ले आया सब चीज़ें ?

माधो : जी हाँ, साहब—आपके दोस्त रशीद साहब आ रहे हैं ।

कुमार : कहाँ हैं ?

माधो : बस, आ रहे हैं, साहब···

रशीद : सुनाओ मियाँ, ये इमली और आलूबुखारे की चटनी कब से खानी शुरू की है —माधो कहता है तुम्हें खाँसी हो रही है और ऊपर से मौसम खराब है । क्यों, खुदकुशी करने का खयाल है, जीने से तंग आ गए हो ?

कुमार : (खाँसता है) अरे भई, दवा है । गिडवानी आया था । वही नुस्खा बता गया है । (खाँसता है) कहता था यूं चुटकियों में आराम आ जाएगा ।

रशीद : आराम चुटकियों में आ जाएगा । इसमें कोई शक नहीं···आज इस नुस्खे को पीओगे । यूं चुटकियों में तुम्हारा गला अन्दर से फूल जाएगा । साँस रुक जाएगा और तुम्हारी हड्डियाँ मरघट के किसी कोने में जल रही होंगी ।

कुमार : जाने दो यार, मज़ाक को—मेरी जान निकल रही है और तुम्हें हँसी सूझती है । ···क्या सचमुच वह ठीक नहीं ? (खाँसता है)

रशीद : नींबू का रस, अमचूर, इमली, आलूबुखारा, तेल के पकौड़े, आम का अचार, बेर, लाल मिर्च—ये सब कूटकर खा जाओ और दूसरी दुनिया का टिकट कटवा लो ।

कुमार : अब जाने भी दो इस मज़ाक को···क्या इस दवा से आराम न आएगा ?

रशीद : गिडवानी के नुस्खे अगर कामयाब होगे लगे तो शहर के सारे डाक्टर और हकीम हींग बेचना शुरू कर दें । अरे बाबा, कभी सुना है आज तक किसी ने खाँसी का इलाज इमली, आलूबुखारे से किया हो ? तुम्हें कुछ भी नहीं हुआ । मेरा खयाल है तुम्हारी छाती में बलगम बैठ गया है । सो वह एक मिनट में साफ़ हो सकता है ।

कुमार : बलगम है तो सही । सीना भारी-भारी मालूम होता है ।

रशीद : सिर में दर्द भी होगा ?

कुमार : थोड़ा-थोड़ा ।

रशीद : ठीक, और बदन भी दुखता होगा ?

कुमार : रात-भर दुखता रहा है ।

रशीद : तो ऐसा करो···माधो···

माधो : जनाब···

रशीद : तू यहाँ खड़ा है। अच्छा, देख मैं तुझे नुस्खा बताता हूँ। भागकर नुक्कड़ वाले अत्तार से बनवा ला।—दो पैसे का उनाब, एक पैसे का बहीदाना, एक पैसे की मुलैठी और दालचीनी, एक पैसे का बनफ़शा और खुदा तेरा भला करे···एक पैसे का रेशा खत्मी···बस दौड़कर ये तमाम चीज़ें ले आ। (**कुमार से**) एक बर्तन में डालकर थोड़े से पानी में इनको खूब जोश देना और छानकर गर्म-गर्म पी लेना। पीने के बाद नाक-मुँह लपेटकर सो जाना। सारी तकलीफ़ दूर हो जाएगी।

माधो : मैं जाऊँ, साहब ?

कुमार : जा, मगर जल्दी आइयो।

रशीद : और तुम्हारे पिण्डे में दर्द भी तो है ?

कुमार : हाँ, हाँ, है।

रशीद : तो इसका इलाज मालिश है। यह तुम्हारे जिस्म में खून की रफ़्तार को तेज़ करेगी। यानी जितनी खून की हरकत तेज़ होगी उतनी ही सेहत बढ़ेगी। खून की हरकत ठीक होने पर आक्सीजन बहुत मिकदार में खून के ज़रिए जिस्म में पहुँचेगी ···तुम समझ रहे हो न···तो मालिश जो है···सिर्फ़ उसी से खून की हरकत ठीक की जा सकती है। तुम कपड़े उतार दो।

कुमार : सर्दी है।

रशीद : अमाँ, हटाओ इस कम्बल को। तुम्हें ठीक भी होना है कि नहीं ? चलो उतारो बनियान-वनियान।

कुमार : मालिश कौन करेगा ?

रशीद : तुम खुद और कौन···बस, बस, यह चड्ढी रहने दो। अब मालिश के मानी सुन लो। तुम्हें सबकुछ समझाए देता हूँ। मालिश जिस्म को आहिस्ता-आहिस्ता हाथों से रगड़ने को कहते हैं। पहले आहिस्ता-आहिस्ता हथेली से जिल्द के हरेक हिस्से को रगड़ो। फिर ज़ोर-ज़ोर से मलो। पाँव, छाती, पेट, सीना, रान। जिस्म के हर हिस्से पर मालिश होनी चाहिए। मालिश करने से पहले नारियल, सरसों, जैतून या बादाम का तेल, घी या वेज़लीन लगा लेनी चाहिए। इससे बदन को तकलीफ नहीं पहुँचेगी···समझ गए न ?

कुमार : समझ गया। मेरे पास वेज़लीन तो है।

रशीद : ठीक है। तो बस शुरू कर दो—अल्लाह का नाम लेकर···

कुमार : तुम जा रहे हो ?

रशीद : भई, माफ़ करना। मुझे ज़रूरी काम है, वरना मैं यहाँ ज़रूर ठहरता। अच्छा, खुदा हाफ़िज़—(**चला जाता है।**)

कुमार : उफ़, कितनी सर्दी है।··· (**खाँसता है**) बदन का जोड़-जोड़ सर्दी से जम रहा है।

[दरवाज़े पर दस्तक की आवाज़]

बेदी : बेदी है, बेदी··· (**दरवाज़े से आवाज़ आती है**) कोई जिन्न-भूत नहीं है।

कुमार : तो आ जाओ न अन्दर···बाहर खड़े क्या चिल्ला रहे हो। (**खाँसते हुए**)

[दरवाज़ा खुलने की आवाज़]

बेदी : यह क्या सिलसिला है···अरे···तुम तो पहलवानी सीख रहे हो···क्यों, पढ़ना-बढ़ना छोड़ दिया ?

कुमार : मैं मर रहा हूँ और तुम्हें मज़ाक सूझ रहा है। (**खाँसता है**)

बेदी : भई वाह, मरने की भी खूब कही। डण्ड पेल रहे हो और कहते हो मर रहा हूँ। (हँसता है) आखिर बताओ तो सही यह सिलसिला क्या है ?

कुमार : कल से बुखार आ रहा है। खाँसी की शिकायत भी है··· (**खाँसता है**)

बेदी : और तुम डण्ड पेल रहे हो। कुश्ती भी लड़ोगे।

कुमार : सुन तो लो···अभी रशीद आया था। उसने कहा है कि मालिश से आराम आ जाएगा।

बेदी : (हँसता है) कहता था कि मालिश से आराम आ जाएगा। (**ज़ोर-ज़ोर से हँसता है**) अबे, वह तुझे चुगद बना गया है। (हँसता है) अजीब मसखरा है और तुम भी कितने बुद्धू हो कि उस नटखट की बात मान गए। तुम्हें सचमुच खाँसी आ रही है क्या ?

कुमार : तो और क्या झूठ बक रहा हूँ ? (**खाँसता है**)

बेदी : अरे, तुम्हें तो वाकई खाँसी की शिकायत है। सीने में दर्द तो नहीं क्या ?

कुमार : है तो सही। रशीद कह रहा था कि बलगम बैठ गया है।

बेदी : सीने में दर्द हो रहा है न ?

कुमार : हाँ, हाँ।

बेदी : तो यहाँ नंग-धड़ंग क्यों बैठे हो—क्या मरने का खयाल है—लोगों को धड़ाधड़ निमोनिया हो रहा है···उठो, उठो। मैं कह रहा हूँ, जल्दी उठो।

कुमार : उठता हूँ।

बेदी : जल्दी करो···बिस्तर में लेट जाओ···बस, बस, यह कम्बल ओढ़ लो···कोई और कम्बल है···है···यह भी ऊपर डाल लो। बस, बस, मैं यह ओवरकोट···यह भी ऊपर डाल देता हूँ···माधो···माधो···

कुमार : बाहर गया है।

बेदी : कहाँ भेज दिया तुमने उसे···आए तो इस कमरे को फ़ौरन अँगीठी से गर्म कराओ···तुम भी निरे अहमक हो···

कुमार : (**खाँसता है**) अरे भई, क्या हुआ ?

बेदी : हुआ क्या ? अगर मैं वक्त पर न पहुँचता तो सबकुछ होकर खत्म—दूसरे दिन का सूरज देखना तुम्हें नसीब न होता। जनाब को ज़ुकाम है, खाँसी है, सीने में दर्द है, फेफड़ों में वरम हो गया है और इलाज क्या हो रहा है ? डण्ड पेले जा रहे हैं। कल तुम्हारे पेट में दर्द होगा तो नाचना शुरू कर दोगे। परसों तुम्हारी आँखें दुखेंगी तो क्रिकेट खेलकर उस मर्ज़ का इलाज करोगे। हद हो गई—कोई

अकलमंद आदमी पास न हो तो इससे बढ़कर हिमाकतें भी हो सकती हैं—मामूली बात पर तुमने अपनी बेसमझी में मर्ज़ को इतना बढ़ा लिया है।

कुमार : (खाँसता है) तुम अब यह लेक्चर क्यों दे रहे हो ?

बेदी : लेक्चर इसलिए दे रहा हूँ कि जनाब को निमोनिया होने के करीब-करीब है।

कुमार : निमोनिया ?

बेदी : जी हाँ, निमोनिया। और आपके फेफड़ों पर सर्दी का असर हो चुका है।

कुमार : (खाँसता है) क्या कह रहे हो, बेदी ?

बेदी : निमोनिया को निमोनिया—प्लेग तो कह नहीं सकता—सुनो, अब अपनी बकवास बन्द करो। मैं अपने घर से राई का पलस्तर बनवाकर भेजता हूँ। उसे गर्म-गर्म सीने पर लगा देना। फ़ौरन आराम आ जायेगा। तुम्हें ज़ुकाम भी तो है···ठहरो ···मेरी जेब में इसका इलाज मौजूद है—यह रहा।

कुमार : क्या है ? (खाँसता है)

बेदी : कुछ भी हो। तुम्हें आम खाने से गर्ज़ है न कि पेड़ गिनने से। यह लो। इसकी एक चुटकी भरकर सूंघ लो।

कुमार : (खाँसता है) पता भी तो चले, क्या है ?

बेदी : नसवार है—नसवार—ज़ुकाम के लिए अक्सीर है— सूंघ लो—साँप तो नहीं है, जो तुम्हें डस लेगा।

कुमार : यहाँ तिपाई पर रख दो। अभी सूंघता हूँ।

बेदी : शाबाश—तो अच्छा—मैं चलता हूँ—मुझे वकील के यहाँ जाना है—पर तुम इसे याद से सूंघ लेना। पलस्तर मैं अभी भिजवा देता हूँ। बेफ़िक्र रहो। कल तक तुम बिलकुल ठीक हो जाओगे— माधो—आ गया तू ?

माधो : जी हाँ, साहब।

बेदी : अच्छा भई, मैं अब चलता हूँ।

माधो : सरकार, मैं जुशाँदा ले आया हूँ। अत्तार के पास मुलैठी नहीं थी। इसलिए पान वाले से खुशबू की गोलियाँ लेता आया हूँ।

कुमार : कत्था और चूना भी ले आ।

माधो : बहुत अच्छा, सरकार।

कुमार : फिर इन चीज़ों को पान में लपेटकर मेरे हलक के अन्दर उतार दे।

माधो : बहुत अच्छा, सरकार।

कुमार : (ज़ोर से चिल्लाता है) भाग जा यहाँ से माधो—भाग जा—मैं दीवाना हो जाऊँगा।

माधो : सरकार, मेरा कसूर ?

कुमार : तू अब ज़्यादा बक-बक न कर···भाग जा यहाँ से···नाबकार···पाज़ी···बेवकूफ़ ···अहमक··· (ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाता है) उफ़, उफ़···कैसे पागल नौकर से वास्ता पड़ा है···कहाँ रख गया है नसवार···यह रही···थोड़ी-सी सूंघ ही लूं··· (सूँघता है—छींकों की आवाज़)

कुमार : कितनी तेज़ है ! (**खाँसता है—छींक—खाँसी—छींक**)

आत्मासिंह : कुमार···कुमार···वही हुआ जिसका खटका था। तुमने उस नालायक वेदी का कहा मान ही लिया। भला वह जाहिल डाक्टरी क्या जाने···मेरी और उसकी रास्ते में बहस भी हुई। अब भागा-भागा यहाँ आ रहा हूं। और यह देखता हूँ कि तुम नाक में पाव-भर नसवार ठूंसे बैठे हो—मैं पूछता हूँ तुम्हारी अकल कहाँ चरने गई है···

[इस दौरान कुमार की छींकों की आवाज़ आती रहती है।]

कुमार : (**छींकें**) मैं तो बहुत तंग आ गया हूँ। सुबह से एक हज़ार इलाज बदल चुका हूँ—जो आता है—हिकमत का नया पिटारा खोल देता है। (**छींक**) अब (**छींक**) मैं क्या···(**छींक**) करूँ ?

आत्मासिंह : तुम कुछ न करो। मुझ पर भरोसा करो। मेरा बाप अव्वल दर्जे का हकीम था। उसका बाप यानी मेरा दादा भी हकीम था। मैं दवा-दारू के बारे में बहुत कुछ जानता हूँ। तुम्हारे अन्दर गर्मी बढ़ गई है, और तुम्हें कोई बीमारी नहीं। सीने में जलन-सी महसूस तो नहीं होती ?

कुमार : (**छींक**) होती है, थोड़ी-सी।

आत्मासिंह : थोड़ी ही होनी चाहिए···आँखों के आगे कभी-कभी अँधेरा भी छा जाता होगा ?

कुमार : सुबह तो ऐसा मालूम नहीं होता था···(**छींक**)

आत्मासिंह : अब छा रहा होगा—ठीक, बिलकुल ठीक—तो ऐसा करो--

कुमार : मुझे नींद आ रही है आत्मासिंह—मैं बहुत थक गया हूँ।

आत्मासिंह : यह पित्त की सबसे बड़ी निशानी है···कद्दू के टुकड़े सिर पर घिसो—बार्ले वाटर का तीन-चार दिन इस्तेमाल करो। और···और भला-सा नाम है उसका···हाँ, सन्दल का बुरादा और काफूर को पानी में भिगोकर बार-बार सूंघो ···खीरे और ककड़ी के बीज खाओ तो वे भी अच्छे रहेंगे।

कुमार : ठीक है—अब तुम जाओ। मैं सब चीज़ें मँगवा लंगा। मुझे नींद आ रही है।

आत्मासिंह : मैं जाता हूं। पर तुम भूल जाओगे। मैं खुद ही सारी दवाएं लेकर अभी आता हूँ।

कुमार : हाँ, हाँ। यह अच्छा रहेगा—दरवाज़ा भेड़ देना।

[दरवाज़ा भीड़ने की आवाज़]

कुमार : (**खाँसता है**) अगर अब कोई और आ गया तो मैं यकीनन पागल बन जाऊँगा। एक ही दिन में कितने इलाज मालूम हुए हैं। माई गॉड (**खाँसता है**)—प्योर मिक्सचर में ब्रांडी और यू डी क्लोन। इमली और आलूबुखारा। उनाब, बहीदाना, बनफ़शा, मुलैठी और दालचीनी, कत्था और चूना, खुशबू की गोलियाँ, तेल की मालिश, कोयलों की अंगीठी, राई का पलस्तर, नसवार (**छींकें**) और

अब कद्दू के टुकड़े, बार्ले वाटर, सन्दल का बुरादा और काफूर, खीरे और ककड़ी के बीज—कोई और आया···

[दरवाज़े पर दस्तक की आवाज़]

कुमार : कौन है ?—चले आओ।

नारायण : मैं आपका पड़ोसी हूँ। मुझे अभी मालूम हुआ कि आप कल से बीमार पड़े हैं। क्या मैं आपकी कोई खिदमत कर सकता हूँ ?

कुमार : शुक्रिया—तशरीफ़ रखिए।

नारायण : इलाज तो आप कर रहे होंगे ?

कुमार : जी हाँ, अगर आपको कोई इलाज मालूम है तो फ़ौरन बता दीजिए। ज़रा देर न लगाइए—मेरे सिर में दर्द है। दाँतों में पायोरिया हो रहा है। गठिया भी है। निमोनिया हो चुका है। प्लेग होने वाली है। हैज़ा कल हो जाएगा।

नारायण : फिर तो केस सीरियस मालूम होता है।

कुमार : हाँ, जी हाँ, बहुत सीरियस। हिस्टीरिया के दौरे पड़ते हैं।

नारायण : हिस्टीरिया···

कुमार : जी हाँ, हिस्टीरिया···पसली में दर्द है, दाँत निकल रहे हैं, इन्फ़्लूएंज़ा की निशानियाँ नज़र आ रही हैं, अंतड़ियों में ज़ख्म हो गया है, तपेदिक परसों तक हो जाएगा। बताइए, क्या आप इसका कोई इलाज बता सकते हो ? मालिखोलिया भी हो गया है।

नारायण : इसमें क्या शक है—इलाज, मेरा खयाल है···

कुमार : आपका खयाल यह है कि इन तमाम बीमारियों का इलाज सिर्फ़ एक है और वह यह कि दो छटाँक दूध में सिरका डालकर पिऊँ। सेब छीलकर सिर पर घिसूँ। नमक सुलेमानी में चावलों का आटा डालकर सारा दिन फाँकता रहूँ। गुड़ के शर्बत में हिना का इत्र घोलकर सूंघूं। हैज़लीन स्नो की मालिश करूँ। गर्म-गर्म कोलतार का पलस्तर सीने पर लगाऊँ। बकरी की मींगनियों पर कस्तूरी चढ़ाकर बबूल की छाल के अर्क के साथ निगलता रहूँ। डण्ड पेलूं, मुगदर घुमाऊँ, नाचूं, गाऊँ···यही कहना चाहते थे न आप—अब आप तशरीफ़ ले जाइए। आपका बहुत-बहुत शुक्रिया—माधो, माधो, माधो···

माधो : जी, आया साहब।

कुमार : इनको अत्तार की दुकान पर ले जाओ और ब्रांडी में पान के पत्ते डालकर इन्हें दो-तीन घूंट पिला दो।

नारायण : आप···आप···मैं···मैं···।

(फ़ेड आउट)

इन्तज़ार

पात्र

मन्तज़र : (आवाज में बेचैनी हो)

मन्तज़र का बौद्धिक प्रतिरूप : (आवाज़ मोटी हो)

अखबारवाला

वह जिसका इन्तज़ार किया जा रहा है

मन्तज़र का दोस्त

[नोट : शुरू से लेकर आखिर तक इस फ़ीचर में घड़ी की टिक-टिक सुनाई देती रहे। यह आवाज़ पृष्ठभूमि में हो।]

[घड़ी आठ बजाती है।]

मन्तज़र : सिर्फ़ आधा घंटा—सिर्फ़ आधा घंटा और फिर उसके बाद···यह टन की आखिरी डूबती हुई गूंज कितनी प्यारी थी—और···और···

मन्तज़र का बौद्धिक प्रतिरूप : ···अगर वह न आयी—यानी अगर···

मन्तज़र : क्यों न आएगी—ज़रूर आएगी। (**फीकी हँसी**) ये अंदेशे बिलकुल फ़िज़ूल हैं, (**अपने को तसल्ली देने के अन्दाज़ में**) उसने मुझसे वायदा किया है।

प्रतिरूप : वह वायदा ही क्या जो वफ़ा हो जाए।

मन्तज़र : कितना छोटा खयाल है—किसी के शे'र का एक मिसरा है शायद लेकिन कितना आम है—ऐसी शायरी ने ही तो—वह ज़रूर आएगी और शायरी—शायरी—अच्छी चीज़ है—तिपाई पर यह जो गुलदान पड़ा है, मैंने इसमें अभी तक फूल क्यों नहीं सजाए (**फूलदान की आवाज़**)···यह फूलदान उसे पसन्द है। आज वह इसे और भी पसन्द करेगी। नर्गिस और बनफ़शा के फूल उसे बहुत भाते हैं—यहाँ पर यह ठीक रहेगा—क्यों? (**सीटी बजाता है—एक खास धुन में**)

प्रतिरूप : (**उस धुन में यह शे'र गाता है—**)

वह आए घर में हमारे खुदा की कुदरत है,
कभी हम उनको कभी अपने घर को देखते हैं।

[अन्तराल]

मन्तज़र : (एक-एक लफ़्ज़ करके) वह—आए—घर—में—हमारे—खुदा—की—कुदरत—है—खुदा की कुदरत है—(चौंककर) खुदा की कुदरत यानी उसका आना बिलकुल अचानक था। शायर को उसकी आमद का यकीन नहीं था—भई होगा। मगर हमें तो पूरा-पूरा यकीन है—क्यों ?

प्रतिरूप : अगर···अगर···

मन्तज़र : हटाओ जी, इस खयाल को—हाँ—तो मैं क्या सोच रहा था—सोच क्या रहा था ?—सोचने की बात ही क्या है—वह ज़रूर आएगी—चंद मिनटों की बात है।

प्रतिरूप : एक घंटे में साठ मिनट होते हैं—साठ।

मन्तज़र : सत्ताइस मिनट और रह गए हैं—सिर्फ़ सत्ताइस—(घड़ी की टिक-टिक बुलन्द होकर फिर असली हालत पर आ जाए) हर चीज़ करीने से रखी हुई है—फूलदान भी सज गया—सिगरेट सुलगा लेता हूँ—एक सिगरेट कम से कम दस मिनट तक जलता रहेगा।

प्रतिरूप : साढ़े सात मिनट।

मन्तज़र : तो क्या हुआ—(सिगरेट सुलगाने की आवाज़) हाँ, तो बात यह है।

प्रतिरूप : क्या बात है—तुम खोये-खोये से क्यों हो ?

मन्तज़र : कोई बात नहीं। बात क्या होगी—एक सिर्फ़ इतना डर है कि···

प्रतिरूप : मौसम खराब है।

[कड़क की आवाज़]

मन्तज़र : यह बिजली की कड़क तो नहीं।

प्रतिरूप : सिगरेटों का डिब्बा जो आपने अभी-अभी खोला था, उसका ढकना आपके पैर के नीचे आ गया है।

मन्तज़र : (हँसता है)···आवाज़ बिलकुल बिजली की सी पैदा हुई—क्या ढकना ही था—ढकना ही था (खिड़की खोलने की आवाज़)···मौसम ज़्यादा खराब तो नहीं है—बादल ?—वह अब तो घर से चल पड़ी होगी—यह सिगरेट खत्म होने में ही नहीं आता—अँगुलियों में मसला गया है।

प्रतिरूप : दूसरा सुलगा लो। यूं थोड़ा-सा वक्त भी खर्च हो जाएगा।

मन्तज़र : नहीं, ज़्यादा सिगरेट मैं नहीं पीऊँगा। मुँह से बू आएगी। बहुत मुमकिन है उसे नागवार मालूम हो—उसी ने एक बार कहा भी तो था···

वह : (यानी वह जिसका इन्तज़ार किया जा रहा है)···तुम्हें मेरी ही जान की कसम जो अब सिगरेट पिओ···

मन्तज़र : मुझे हुक्मअदूली नहीं करनी चाहिए।(अन्तराल)

प्रतिरूप : सिगरेट बुझा दिया—अब यह वक्त कैसे कटेगा ?

मन्तज़र : यह ग्रामोफ़ोन बाजा जो है—रिकार्ड निकालकर बाहर रख दूं। बहुत मुमकिन है वह बजाना चाहे।

प्रतिरूप : एक रिकार्ड पूरे तीन मिनट तक बजता रहेगा।

मन्तज़र : तीन मिनट···(रिकार्ड लगाने की आवाज़)···तीन मिनट तक बजता रहेगा —क्या बुरा है—संगीत मुझे पसन्द है।

[नीचे का रिकार्ड बजाया जाए।]

सहगस का रिकार्ड—चण्डीदास फिल्म का

रात कटी गिन-गिन के तारे

[रिकार्ड पर से सुई एकदम हटा ली जाए।]

मन्तज़र : क्या वाहियात रिकार्ड है—रात कटी गिन-गिन के तारे—

प्रतिरूप : अभी तो आठ बजकर कुछ मिनट हुए हैं—सारी रात पड़ी है।

मन्तज़र : अभी आठ बजकर कुछ मिनट हुए हैं तो इसका मतलब है मैं—मैं इतना बेताब क्यों हो रहा हूँ—आ जाएगी—ऐसी बातों ही से तो इन लोगों का दिमाग सातवें आसमान पर पहुँच जाता है। मैं उसका इन्तज़ार बिलकुल नहीं करूँगा। कुर्सी पर बैठ जाता हूँ। मेज़ पर यह सफ़ेद कागज़ रखा ही है। इस पर इस महीने का हिसाब लिखना शुरू कर देता हूँ—हाँ—सिगरेट—पाँच रुपये···सिगरेट पाँच रुपये···

[यह आवाज़ धीमी होती जाए और जिसका इन्तज़ार किया जा रहा है उसकी आवाज़ उभरती आए।]

वह : तुम्हें मेरी जान की कसम, जो अब से सिगरेट पिओ—देखो तो कितने कमज़ोर हो रहे हो—बादाम खाया करो···

मन्तज़र : उसे मेरा इतना खयाल है···अब आ भी जाए। मगर···

प्रतिरूप : साढ़े आठ बजने में अभी काफ़ी देर है।

मन्तज़र : मैं समझता हूँ यह घड़ी फ़ास्ट है—क्या पता है कि···

प्रतिरूप : घड़ी स्लो हो।

मन्तज़र : जी, नहीं। इस घड़ी का वक्त बिलकुल सही है—अभी परसों ही तो ठीक करायी है—(अन्तराल) कहीं उसकी घड़ी में फ़र्क न हो।

प्रतिरूप : ऐसा हो सकता है।

मन्तज़र : तो यह कोई बड़ी बात नहीं—पाँच नहीं दस मिनट का फ़र्क होगा।

प्रतिरूप : उस वहम से लेकर अब तक दस मिनट मुश्किल से गुज़रे हैं—नहीं, अभी दस मिनट नहीं गुज़रे।

मन्तज़र : घड़ी में ज़रूर खराबी है—खोलकर न देख लूं।

प्रतिरूप : खोलकर आपको क्या नज़र आ जाएगा ?

मन्तज़र : कुछ नहीं। मैंने तो यह कहा था कि चलो यूं थोड़ा-सा वक्त गुज़र जाएगा।

प्रतिरूप : तो चलिए, पुर्ज़े खोलकर बैठ जाइए, मगर याद रहे, उस दिन की तरह फिर जुड़ेंगे नहीं।

मन्तज़र . नहीं (हँसता है) ···कैसे-कैसे अजीब खयाल आते हैं। (हँसता है—गाता है) कैसे-कैसे अजीब खयाल आते हैं—नहीं, वज़न ठीक नहीं है।

प्रतिरूप : यह आपको शायरी क्या सूझी है ?

मन्तज़र : (खूब हँसता है) ···यह शायरी भी अच्छी रही—अब आ भी जाए—वक्त क्या हुआ—साढ़े···

प्रतिरूप : अभी साढ़े कहाँ—सवा कहिए, सवा।

मन्तज़र : मुझे कोई काम भी नहीं है आज।

प्रतिरूप : इस महीने का हिसाब लिखना था।

मन्तज़र : अजी लानत हो हिसाब-किताव पर। यह भी कोई वक्त है हिसाब-किताब का—लेकिन ऐसे वक्त में करना क्या चाहिए ?

प्रतिरूप : उसको एक खत लिखना शुरू कर दो।

मन्तज़र : बिलकुल ठीक—(**अन्तराल**) इस पैड का कागज़ अच्छा रहेगा।

प्रतिरूप : हाँ, खुशबूदार है।

मन्तज़र : क्या लिखूँ—(**अन्तराल**) मजमून समझ में नहीं आता।

प्रतिरूप : लिखो कि मैं तुम्हारा बहुत इन्तज़ार करता रहा।

मन्तज़र : और जब वह आए तो यह खत उसको दे दूँ—खयाल अच्छा है—तो लिखता हूँ—(**अन्तराल**) मेरा खयाल है कि अब वह घर में चल पड़ी होगी—यह खत उसके आने तक खत्म न होगा—

प्रतिरूप : तुम खत लिखना शुरू तो करो।

मन्तज़र : मेरी प्यारी···तुमने आज वायदा किया था कि साढ़े आठ बजे आऊँगी—मैं तुम्हारा शिद्दत के साथ इन्तज़ार करता रहा—

प्रतिरूप : कितनी फुसफुसी इबारत है।

मन्तज़र : नहीं तो। (**अन्तराल**) वाकई फुसफुसी है—अब तो वह आती होगी। (**कागज़ फाड़ने की आवाज़**) खत की कोई ज़रूरत नहीं। मैं उसको ज़बानी बता दूँगा।

प्रतिरूप : बशर्ते कि वह आ जाए।

मन्तज़र : यह शर्त कैसी—वह ज़रूर आएगी।

प्रतिरूप : अगर···अगर···

मन्तज़र : नहीं, नहीं।

प्रतिरूप : हो सकता है कोई ऐसी बात हो जाए !

मन्तज़र : कैसे बेहूदा खयाल हैं।

प्रतिरूप : अगर वह न आयी तो ?

मन्तज़र : ज़रूर आएगी।

प्रतिरूप : देख लेंगे।

[दस्तक की आवाज़]

मन्तज़र : (**खुश होकर**) लो वह आ गयी—(**घबराकर**) सब चीज़ें ठीक हैं न—

सिगरेटों का डिब्बा—इसे कहाँ रखूं—कौन है—इसका ढकना कहाँ है—लानत—खाली ही कहीं छुपा देता हूँ—और—और यह—आया—बस अब सब ठीक-ठाक है।

प्रतिरूप : अपना दम तो दुरुस्त कर लो—हाँफ रहे हो।

मन्तज़र : दम-वम सब ठीक है—मेरा खयाल है उसको थोड़ा-सा डराना चाहिए।

अखबारवाला : (डरे हुए अन्दाज़ में)···अभी साहब—आपने तो मुझे डरा ही दिया—उफ़!

मन्तज़र : तुम—त—त—त—तुम—तुम कौन हो—तुम अखरबारवाले क्यों हो ? भाग जाओ यहाँ से

अखबारवाला : यह पूछने आया था कि दोनों 'अखबार'—'स्टेट्समैन' और 'हिन्दुस्तान टाइम्स' लाया करूँ या 'स्टेट्समैन'—जैसा आप हुक्म दें।

मन्तज़र : जितने भी हों ले आया करो।

अखबारवाला : बहुत अच्छा, सरकार।

[दरवाज़ा बन्द करने की आवाज़—अन्तराल]

मन्तज़र : इस अखबारवाले को भी इसी वक्त आना था—कमबख्त डर गया था। (हँसता है)

[हौले-हौले दस्तक देने की आवाज़]

मन्तज़र : (हँसी रोककर) आ गई—आ गई—

[दरवाज़ा खोलने और फिर एकदम बन्द करने की आवाज़]

अखबारवाला : (डरे हुए अन्दाज़ में) साहब—यह—यह—आप बार-बार मुझे क्यों डराते हैं ?

मन्तज़र : ओह, तुम क्या चाहते हो ? अब फिर क्यों आए हो—खुदा के लिए जाओ।

अखबारवाला : साहब, यह पूछने आया था कि उर्दू के अखबार भी ले आया करूँ ?

मन्तज़र : फ़ारसी, अरबी, गुजराती, मराठी, पंजाबी—सब ज़बानों के ले आया करो, मगर खुदा के लिए इस वक्त जाओ।

[दरवाज़ा बन्द करने की आवाज़]

मन्तज़र : हद हो गयी है।

प्रतिरूप : बड़े शर्म की बात है—वह दिल में क्या कहता होगा ?

मन्तज़र : अजी हटाओ—लेकिन मैं कहता हूँ वह अभी तक आयी क्यों नहीं—कहीं ऐसा तो नहीं हो गया···?

प्रतिरूप : कि वह भूल ही गयी हो।

मन्तज़र : ऐसा भला हो सकता है—बस, अब वह आती ही होगी। यहाँ से उसका घर भी तो काफ़ी दूर है और बहुत मुमकिन है पैदल आए।

प्रतिरूप : तो इसका मतलब यह होगा कि वह बहुत देर के बाद आएगी।

मन्तजर : मेरा मतलब यह तो नहीं था। वह घर से बहुत पहले की चल पड़ी होगी। घड़ी—घड़ी—यह घड़ी ज़रूर खराब हो गयी है—यह देखो, इसकी सैकेण्ड की सुई कितनी हौले-हौले चलती है।

प्रतिरूप : सामने क्लॉक मौजूद है।

मन्तजर : ···दोनों का वक्त मुझे सही मालूम नहीं होता—खैर, कल पता लग जाएगा। अभी तक दस मिनट बाकी हैं—गुज़र कितने चुके हैं ?

प्रतिरूप : सत्रह—तेरह अभी बाकी हैं।

मन्तजर : मैं दीवाना हो जाऊँगा।

प्रतिरूप : क्या कहा ?

मन्तजर : कुछ भी नहीं—तो नॉवेल पढ़ना शुरू कर देता हूँ—

[लकड़ी के साथ किसी चीज़ के टकराने की आवाज़]

मन्तजर : (**उछलकर**) लो वह आ गयी—आया।

प्रतिरूप : आपका पैर कुर्सी के निचले डंडे के साथ टकराया है, दस्तक नहीं हुई।

मन्तजर : फिर टकराएगा—उठ खड़ा होता हूँ—टहलता रहूँगा और पढ़ता रहूँगा।

[बेकरारी के साथ टहलने की आवाज़—घड़ी की टिक-टिक की रफ़्तार मद्धिम हो जाए मगर आवाज़ बुलन्द हो।]

मन्तजर : कुछ समझ में नहीं आता—अजब ऊटपटाँग इबारत है। (**किताब बन्द करने और मेज़ पर रखने की आवाज़**)···फिर पढ़ूँगा।

प्रतिरूप : दिल बैठता क्यों जा रहा है ?

मन्तजर : क्या मालूम···पानी पीता हूँ। (**पानी पीने की आवाज़**)···तल्खी—किस कदर तल्खी है हलक में—मेरा खयाल है ठीक वक्त पर आएगी।—पूरे साढ़े आठ बजे—(**चौंककर**)···अभी साढ़े आठ नहीं बजे—मैं···मैं···बैठ जाता हूँ।

[घड़ी बड़े-बड़े अन्तरालों के बाद टिक-टिक करती है। ऐसा मालूम होता है कि सैकेण्ड लम्बे हो गए हैं।]

मन्तजर : मुझे कुछ हो गया है।

प्रतिरूप : पहले तो कभी ऐसा नहीं हुआ था।

मन्तजर : पहले तो कभी ऐसा नहीं हुआ था। (**मेज़ पर अँगुलियों से ढोल बजाने की आवाज़**) मैं क्या कर रहा हूँ ?

[घड़ी की भयानक आवाज़। उठकर बेकरारी के साथ टहलना शुरू कर देता है।]

प्रतिरूप : पैर लड़खड़ा रहे हैं।

मन्तजर : तो अच्छा-भला बैठा तो था—उठकर चलने क्यों लगा—हलक सूख रहा है—लेकिन अब तो उसके आने में कोई देर नहीं—चन्द मिनटों की···

प्रतिरूप : चन्द मिनटों की जिनमें···(**घड़ी लम्बे-लम्बे साँस लेती है।**)

[कागज़ खड़खड़ाने की आवाज़]

मन्तजर : आज हवा कितनी तेज़ है—कैलेण्डर का कागज़ खड़खड़ा रहा है।

[बर्तन गिरने की आवाज़]

मन्तजर : इस मेरी पड़ोसिन के घर में हर वक्त बर्तन ही गिरते रहते हैं।
प्रतिरूप : आज तुम्हारे कान बड़े तेज़ हैं।

[नीचे का शे'र इस तरह गाया जाए कि हवा के झोंके के साथ उड़ता मालूम हो।]

फ़रेबे आरज़ू की सहल अंगारी नहीं जाती
हम अपने दिल की धड़कन को तेरी आवाज़े पा समझे

मन्तजर : हम अपने दिल की धड़कन को तेरी आवाज़े—पा समझे—आवाज़ें—पा समझे—आवाज़े—पा—दिल की धड़कन—(**घड़ी ज्यादा लम्बे साँस लेती है**) यह मेरे दिल को कुछ हो गया है या क्लॉक खराब हो गया है। मेरा हलक भी सूख रहा है···अभी वक्त नहीं हुआ।

[बेकरारी के साथ टहलता है। दरवाज़े पर दस्तक]

मन्तजर : (कमज़ोर आवाज़ में)···आ गई···आ गई—खुशी से मेरी आवाज़ ही नहीं निकलती···दरवाज़ा···दरवाज़ा···
प्रतिरूप : दरवाज़ा आपके सामने है।
मन्तजर : अरे हाँ···आया···आया।

[दरवाज़ा खोलने की आवाज़—दरवाज़ा खोलते ही नीचे की आवाज़ आती है।]

दोस्त : आदाब अर्ज़
मन्तजर : अ-अ-अ-अ—आदाब अर्ज़—क-क-क-क—कैसे तशरीफ़ लाए ?
दोस्त : मैं तुमको इस घोड़ी की बाबत कुछ बताने आया था।
मन्तजर : घो···घो···घोड़ी ?
दोस्त : अमाँ वही जिसकी बाबत काले खाँ कहता था कि बड़ी दुलत्तियाँ झाड़ती है। भई थी बड़ी मुँहज़ोर—पटरी नहीं जमने देती थी—बगधरियाँ करती थी—बगधरियाँ।
मन्तजर : बग—धरियाँ—जी।
दोस्त : मुँह की बहुत कड़ी थी—सीधी तनकर खड़ी हो जाती थी।
मन्तजर : जी, किसी सिलोतरी के हवाले कर दी होती।
दोस्त : तुम तो घास खा गए हो—कहाँ का सवार कहाँ की सिलोतरी—कदम रकाब में आ गया और बगटुट हो गयी—और मुझे तो पट्टे पर हाथ नहीं धरने देती थी—

ऐसा चमकती थी जैसे बिजली···

मन्तजर : मैं···मैं···

दोस्त : काठियावाड़ खेत की थी न—छूटे तो सरपट जाए। अंजर-पंजर ढीले कर दे···

मन्तजर : मैं···मैं···

दोस्त : यह मैं-मैं क्या करते हो ?

मन्तजर : मैं बीमार हूँ—सख्त बीमार हूँ—आप—आप—ओह—साढ़े आठ बजने वाले हैं।

दोस्त : (**फ़िकरमन्द लहजे में**) तुम बीमार हो—लेकिन भई, अजब बेवकूफ़ हो। मुझसे तुमने पहले क्यों नहीं कहा—अब इत्मीनान से अपना सारा हाल सुनाओ—मुझे कोई खिदमत बताओ—भई वा, अल्लाह कमाल कर दिया—और हाँ, पर साढ़े आठ बजे तुमने क्या कहा था ?

मन्तजर : (**मुर्दा आवाज़ में**) साढ़े आठ बजे—साढ़े आठ बजे मुझे दवा पीनी है।

दोस्त : लाओ, मैं पिला देता हूँ—कहाँ है दवा—साढ़े आठ बजने में कौन-सी देर है—दवा कहाँ है ?

मन्तजर : नहीं-नहीं—मैं खुद ही पी लूंगा—आप तकलीफ़ न करें—आप···आप··· आप जाइए।

दोस्त : मैं तुम्हें यहाँ बीमार छोड़कर कैसे जा सकता हूँ ?

मन्तजर : मैं···मैं···मैं बीमार नहीं हूँ—मैं अभी ठीक हो जाऊँगा—आप जाइए—ओह, खुदा के लिए आप जाइए। मुझे दिल का दौरा पड़ जाएगा।

दोस्त : दिल का दौरा—भई, अब तो मैं हरगिज़ नहीं जाऊँगा—बताओ, दवा कहाँ है ?

मन्तजर : वह मेरे पास नहीं है—आप जाइए—खुदा के लिए जाइए।

दोस्त : तुम्हें इस हालत में छोड़कर मैं डाक्टर के पास भी तो नहीं जा सकता।

मन्तजर : क्या कहा ? (**बेकरारी बढ़ती जाए। घड़ी की आवाज़ ज़्यादा लम्बे-लम्बे साँस ले**)—क्या कहा—आप डाक्टर के पास भी नहीं जाएँगे—मैं···मैं मर जाऊँगा—खुदा के लिए डाक्टर के पास दौड़े जाओ—मेरी हालत बहुत खराब है—मेरी—हालत—बहुत—नाज़ुक है—जाइए—(**आवाज़ कमज़ोर होती जाती है।**)

दोस्त : गश आ गयी—क्या हुआ ?—डाक्टर ?—कहाँ मिलेगा डाक्टर ? (**दरवाज़ा खोलने की आवाज़**) कोई डाक्टर मिल जाए इस वक्त। (**चला जाता है।**)

[घड़ी असली हालत में टिक-टिक करती है—कम से कम यह आवाज़ डेढ़ सैकेण्ड तक जारी रहे—आखिर में क्लॉक में खरखराहट पैदा होकर और एक टन की आवाज़ आए। उसकी टन की गूंज थोड़ी देर तक सुनाई देती रहे—घड़ी की टिक-टिक बन्द हो जाए और एक सैकेण्ड तक पूरी खामोशी छाई रहे—इस

खामोशी के बाद दरवाज़ा खुलने और जिसका इन्तज़ार किया जा रहा है, वह आए।]

वह : देखो तो किस मज़े से जनाब सो रहे हैं—गोया इनको मालूम ही नहीं मैं आ रही हूँ—काफ़ी गहरी नींद सो रहे हैं—खुदा जाने कहाँ से घूमते-घुमाते थककर आए होंगे। (**गुस्से के साथ**) तो मुझे क्या ज़रूरत पड़ी है कि यहाँ बिन बुलाए मेहमानों की तरह खड़ी रहूँ !

[हौले-हौले दरवाज़ा बन्द करने की आवाज़]

(**फेड आउट**)

इन्तज़ार का दूसरा रुख

पात्र

बलकीस	:	(आवाज़ में बेचैनी हो)
सुरैया	:	बलकीस की छोटी बहन (चंचल)
बलकीस की मां	:	रोबदार आवाज़
बलकीस का भाई	:	
बलकीस का बाप	:	

[छोटी बच्ची के हंसने की आवाज़]

बलकीस : खड़ी ही-ही हंस रही है—तुझसे जो काम कहा है, वह कर। याद रख, वह कान उमेठूंगी कि बिलबिला उठेगी—(**लहजा बदलकर**) जा मेरी बहन, बड़े ताक से मेरा चूड़ियों वाला बक्स उठा ला। पर ऐसे कि अम्मीजान को कानोंकान ख़बर न हो। जा—मेरी अच्छी बहन जो हुई।

सुरैया : (हंसते हुए) और जो मैं न जाऊं तो ?

बलकीस : मुझे हे-हे करके पीटे। मेरा मुर्दा देखे। ले, अब सुन लिया ? तुझे तो बड़ी बहन का कुछ लिहाज़ ही नहीं। निगोड़ी पड़ोसिनें तुझसे जो काम चाहे करा लें, एक फ़कत मुझ अल्लाह की मारी का तू कोई काम न करेगी।

सुरैया : मैं···मैं अपनी बहन का काम करूंगी—पड़ोसिनें जाएँ भाड़ में—मेरी बाजी और उनका क्या मुकाबला—तो चूड़ियों का बक्स ताक पर से उठाकर ऐसे लाऊँ कि अम्मीजान को कानोंकान खबर न हो—अच्छा, भला यह तो बताइए, इस काम के लिए मुझे इनाम क्या मिलेगा ?

बलकीस : सुरैया, जा। मुझे न सता। एक निगोड़ा मेरा दिल वैसे ही खराब है, दूसरे ऊपर से तू छेड़खानी कर रही है। जा, इस वक्त मुझे हँसी-ठट्ठा अच्छा नहीं लगता —आधा घंटा बाकी रह गया है और मुझे जहान-भर के काम करने हैं।

सुरैया : कहाँ जा रही हैं आप—सिनेमा देखने ? आप ज़रूर सिनेमा देखने जा रही हैं, तभी तो चूड़ियां निकलवाई जा रही हैं—मैं अगर आज आपके साथ न गई तो मेरा नाम भी सुरैया नहीं।

बलकीस : सुरैया, तू अब ज्यादा बक-बक न कर—जितना तुझसे कहती हूँ, उतना ही तू

मुझे तंग करती है—तेरी कसम, सिनेमा नहीं जा रही।

सुरैया : तो फिर ये तैयारियाँ किसलिए हो रही हैं ?

बलकीस : कैसी तैयारियाँ ?

सुरैया : ये नफ़ीसियाँ ?

बलकीस : मैंने कल की पहन रखी हैं।

सुरैया : यह लॉकेट ?

बलकीस : इसका पैन्डेण्ट खराब हो गया था। चार-पाँच दिन से बाहर पड़ा था। अब्बाजी ने अभी तक सुनार को भिजवाया ही नहीं था। मैंने सोचा, बाहर पड़ा-पड़ा और खराब हो जाएगा, इसलिए पहन लिया।

सुरैया : और यह साड़ी—यह नयी सैंडिल···

बलकीस : यह तू मेरा इम्तहान लेने क्या बैठ गयी है ? और मैं बेवकूफ़ नहीं जो तुझे हर बात का जवाब दिए चली जा रही हूँ, जैसे तू मेरी अम्मा है—चल, दफ़ा हो यहाँ से। मैं अब तक लिहाज़ ही किए जा रही थी—हाँ ! मैं बाहर जा रही हूँ। सुना, साढ़े आठ बजे मुझे वहाँ पहुँच जाना है। अपने काम से। चूड़ियाँ जाएँ जहन्नुम में। न पहनूँगी तो क्या होगा और फिर इस इल्तफ़ी से बहस कभी खत्म ही नहीं होगी।

सुरैया : आपा, आप नाराज़ हो गयीं मुझसे ?

बलकीस : चल हट। दूर हो—तुझसे कह जो दिया, आज मुझे यह छेड़खानी अच्छी नहीं लगती। मुझे आज ज़रूरी बाहर जाना है, पर मुसीबत यह है कि अम्मीजान इजाज़त नहीं देंगी। (**कुछ अपने-आप से, कुछ सुरैया से**) पिछले तीन दिन से लगातार शाम को बाहर जा रही हूँ। अगर आज उनसे इजाज़त माँगी तो वह भला क्या देंगी—हाय अल्लाह ! अब क्या होगा ? और मैं उनसे वायदा कर चुकी हूँ कि ठीक साढ़े आठ बजे पहुँच जाऊँगी।

सुरैया : (**भोलेपन से**) किससे ?

बलकीस : (**गैरइरादी तौर पर**) लतीफ़ साहब से।

सुरैया : (**हैरत से**) लतीफ़ साहब से ! यह लतीफ़ साहब कौन हैं ?

बलकीस : आठ बजकर दस मिनट हो गए हैं और—और—क्या कहा तूने ?

सुरैया : यह लतीफ़ साहब कौन हैं ?

बलकीस : लतीफ़ साहब··· (**चौंककर**) मुझे क्या मालूम कौन हैं—अर—अर—सचमुच यह कौन हैं ? सुरैया, तूने आज का सबक याद किया ?—कभी नहीं किया होगा।

सुरैया : यह लतीफ़ साहब कौन हैं ?

बलकीस : कह जो दिया मुझे मालूम नहीं।

सुरैया : अभी-अभी आप ही ने तो उनका नाम लिया था।

बलकीस : सुरैया, तू अब बहुत झूठ बोलने लगी—मैं भला क्यों किसी मरदुए का नाम लूं और—और फिर कोई ऐसा आदमी हो भी—हाँ ! यह तू बता, मैंने कहा क्या था ?

सुरैया : कहा था कि आपने किसी लतीफ़ साहब से साढ़े आठ बजे मिलने का वायदा किया है।

बलकीस : (**भिंचे हुए लहजे में**) खामोश—हौले बोल—(**ऊँची आवाज़ में**) जाने तू क्या वाही-तबाही बकती है।

[दूर से बलकीस की माँ की आवाज़ आती है—'बलकीस—बलकीस']

बलकीस : सुरैया, ले यह इकन्नी—दो पैसे की इमली ले लेना—पर याद रख, मैं हर रोज़ इमली के लिए पैसे न दूंगी—और देखो—आधी मेरे लिए रख छोड़ना—अम्मी मुझे बुला रही हैं—(**ऊँची आवाज़ में**) आई—और देख सुरैया, किसी से इन बातों का ज़िक्र न कीजो। समझ गयी ? ले, वह खुद आ रही हैं। तो तू भाग यहाँ से।

बलकीस की माँ : बलकीस, यह जो मैं तुझे दो घण्टे से बुला रही हूँ, तूने कानों में रुई ठूंस रखी है क्या ?

बलकीस : नहीं तो···

माँ : और यह मैं क्या सुनती हूँ !

बलकीस : क्या अम्मीजान !

माँ : कि तू आज फिर बाहर जाना चाहती है—मैं कहती हूँ लौंडों के साथ कुदक्कड़े न लगा। शरीफ़ बहू-बेटियों की तरह तेरा घर में जी ही नहीं लगता। दीदे का पानी ही ढल गया है—दुहाई बाबा, लोठा-सी हो गयी—तबीयत में से अभी तक आवारागर्दी नहीं गयी—याद रख, इस बुरी तरह पीटूंगी कि तेरे बंद-बंद ढीले हो जाएँ—यह मुए कालेज में दाखिल करके मैंने बड़ी सख्त गलती की।

बलकीस : आप तो नाहक बिगड़ रही हैं।

माँ : अभी तेरी उस सहेली के यहाँ से आदमी आया था कि बीबीजी तैयार हैं। कालेज के जलसे में जाना है।

बलकीस : जलसे में—अरे—सचमुच मैं तो बिलकुल भूल ही गयी थी—यह जलसा बहुत ज़रूरी है अम्मीजान।

माँ : जलसे और जलूस जाएँ भाड़ में—तू चल मेरे साथ और बैठकर आटा गूंध।

बलकीस : पर अम्मीजान···

माँ : बलकीस, मेरे साथ आज कोई बहाना नहीं चलेगा—समझी ? आज तुझे आटा गूंधना ही होगा।

बलकीस : आटा गूंधने के बाद तो मुझे इजाज़त दे दीजिएगा न ?

माँ : तू पहले चलकर आटा तो गूंध—फिर देखूंगी—चल—(**अचानक**) नहीं, मैं तुझे हरगिज़ इजाज़त न दूंगी। जलसा जाए जहन्नुम में—अब मुझे याद आया। तू चार रोज़ से लगातार सैर-सपाटे कर रही है। कल सिनेमा देखने गयी थी। परसों तेरी उस सहेली के यहाँ चाय थी। और—और—लेकिन तू मुझे बातों में न लगा। जा, काम कर—बैठ जा यहां मेरे सामने—बैठ जा।

बलकीस : पानी कहाँ है ?

माँ : यह तेरे पास ही तो पड़ा है—अब तुझे सुझाई भी कम देने लगा है ।

बलकीस : पहले यह आटा किसने गूंधना शुरू किया था ?

माँ : मैंने । क्यों ?

बलकीस : (आटा गूंधने की आवाज़) कुछ नहीं ।

[अन्तराल—आटा गूंधने की आवाज़ कुछ क्षणों आती रही ।]

माँ : बलकीस, तू यह मुक्कियाँ मार रही है कि किसी का सिर सहला रही है । तेरी मुक्कियों में ज़ोर ही नहीं । यूं आटा क्या खाक गुंधेगा—सिर से बला टाल रही है ।

[दूर से बलकीस के भाई की आवाज़ आती है, 'अम्मीजान, ज़रा इधर आइएगा ।']

माँ : आती हूँ ।

[बलकीस आटा गूंधती रहती है ।]

बलकीस : (धीमी आवाज़ में) सुरैया—सुरैया ! ज़रा बात सुन ।

सुरैया : (रहस्यमय लहजे में) क्या है ?

बलकीस : जा, दौड़कर देख, टाइमपीस में वक्त क्या हुआ है ?

[आटा गूंधने की आवाज़]

बलकीस : यह आटा गूंधना भी क्या मुसीबत है—मेरी सारी साड़ी चुन्नटों से भर गयी है । अल्लाह करे, न रहे इस दुनिया के तख्ते पर । इस नाबकार मामा को भी आज ही आना था अपनी बहन के यहाँ—मेरा सत्यानाश हो—यह पानी कहाँ से आ गया—खुश्का कहाँ है ?

सुरैया : आपा, वक्त मैं देख आई हूँ ।

बलकीस : क्या बजा है ?

सुरैया : सवा आठ ।

बलकीस : (घबराकर) सवा आठ—तो सिर्फ़ 15 मिनट बाकी रह गए !

माँ : (दूर से) सुरैया, तू चल यहाँ से, भाग—बलकीस, आटा गूंध ले तो भाई के कोट में दो बटन टाँक देना ।

बलकीस : आपने टाँक दिए होते—मुझे···

माँ : (गुस्से में) मुझे क्या ?

बलकीस : (तेज़ लहजे में) कुछ नहीं—आप तो बस यह चाहती हैं कि गला घोंट दें ।

बलकीस का भाई : बलकीस—बलकीस !

बलकीस : आग लगे बलकीस की जान को—यह भी नहीं चुकती यह बलकीस ।

भाई : अरे भई, क्या हुआ—क्या हुआ अम्मीजान ?

माँ : इसी से पूछ ले ।

भाई : क्या हुआ बलकीस ?

बलकीस : कुछ नहीं हुआ—तो क्या हुआ—मैं नहीं जाऊँगी जलसे में। बैठी आटा गूंधती रहूँगी—बटन टाँकती रहूँगी—साल-भर में एक बार जलसा होता है। इसमें जाने से भी आप रोकती हैं। (**सिसकियाँ**) भाईजान, कहाँ है आपका कोट ? लाइए, मैं बटन टाँक दूं।

भाई : भई अम्मीजान—आप वाकई इस पर बहुत ज़ुल्म कर रही हैं। जलसे में बलकीस को ज़रूर जाना चाहिए। सब लड़कियाँ जा रही हैं।

बलकीस : आपका कोट कहाँ है ? (**सिसकियाँ**) नहीं, मैं नहीं जाऊँगी।

माँ : सलीम, मैंने कब रोका है इसे—बेशक जाए, पर घर के कामकाज भी तो हैं। मुझ अकेली से सबकुछ थोड़े हो सकता है।

बलकीस : (**सिसकियाँ**) नहीं, मैं अब नहीं जाऊँगी—आटा मैंने गूंध दिया है—अब कोई और काम करने को दे दीजिए।

माँ : नहीं जाती तो न जाए—मेरी बला से—पर तूने ये टसुए बहाने क्या शुरू कर दिए हैं—सलीम, तुम इसकी बहुत तरफ़दारी करते हो—तुम्हारी तरफ़दारी ने इसको बिलकुल बिगाड़ दिया है।

भाई : नहीं, नहीं, अम्मीजान, यह बात नहीं। बलकीस बड़ी अच्छी लड़की है—(**बलकीस से**) बलकीस, देखो—जो काम अम्मीजान तुमसे कहें वह कर दो। फिर चली जाना।

बलकीस : लेकिन भाईजान, मुझे तो वहाँ ठीक···

भाई : नौ बजे पहुँचना है—नौ बजे ही तो पहुँचना है। मुझसे अभी सईद कह रहा था कि जलसे का वक्त यूं तो सवा नौ बजे मुकर्रर है, मगर नौ बजे उसकी बहन चली जाएगी। तुम नौ नहीं तो पौने नौ बजे यहाँ से चली जाना। चलो आओ, मेरे कोट में बटन टाँक दो।

बलकीस : लेकिन···लेकिन···

भाई : बस ! बस ! अब लड़ाई खत्म हो गयी—चलो, मेरे कोट में बटन टाँक दो।

बलकीस : चलिए···(**अन्तराल**)···(**धीमे लहजे में**) भाईजान, आपसे एक बात कहूँ—मानिएगा ?—नहीं, आप नहीं मानिएगा।

भाई : भई कमाल है। आप ही यूं कहती हो। आप ही वं कहती हो। पहले बात तो बताओ।

बलकीस : आपकी घड़ी में वक्त क्या हुआ है ? (**घबराकर**)

भाई : आठ बजकर···आठ बजकर उन्नीस हुए हैं।

बलकीस : आठ उन्नीस ! (**घबराकर**) ओह···तो आप ऐसा कीजिए, आज कोई और कोट पहन लीजिए। इस वक्त मुझसे बटन न टँकवाइए—मेरे अच्छे भाई जो हुए—मुझे वहाँ ठीक साढ़े आठ बजे पहुँच जाना है—तो इजाज़त है मुझे ? अम्मीजान, तो आप जानते ही हैं, मुझ पर कितनी बिगड़ रही थीं। चन्द लड़कियों को वहाँ इसलिए जल्द बुलवाया है कि जलसे का इन्तज़ाम वगैरह किया जाए—अब अगर मैं बुलाने पर भी न गयी तो प्रिंसिपल साहबा क्या कहेंगी—और फिर जलसे से थोड़ी देर पहले ज़रा गप्प भी रहेगी—आपको तो ये सब बातें मालूम हैं। इस

वास्ते आपसे कह रही हूँ—तो दूसरा कोट पहन लीजिएगा न ?

भाई : (हँसता है) तुमने तो मुझे कुछ बोलने ही नहीं दिया—अब तुम्हारी खुशी इसी में है तो मैं दूसरा कोट पहन लूंगा—जाओ, पर एक शर्त है, मुझे हमीदा की सारी बातें जलसे से वापस आकर सुनानी होंगी कि वह किस किस्म के कपड़े पहनकर आयी थी। और—और ऐसी ही चन्द और बातें—भई, हमारी उससे शादी हो रही है।

बलकीस : (खुश होकर) मैं वायदा करती हूं—आप देख लीजिएगा, फ़ोटो खींच दूंगी—फ़ोटो—तो—तो—मैं जाती हूँ—आप अम्मीजान से कह दीजिएगा कि उसे ज़रूरी जाना था।

भाई : हमीदा को मेरा सलाम कह देना।

बलकीस : (जल्दी में) कह दूंगी—(आवाज़ देती है) सुरैया—(कदमों की चाप) सुरैया—हाँ ! बात सुन सुरैया।

सुरैया : क्या है ?

बलकीस : बड़े कमरे में अब्बाजी तो नहीं बैठे हुए ?

सुरैया : नहीं आपा—वह अभी कागज़ लेकर बाहर निकले हैं।

बलकीस : अच्छा, तो ऐसा कर, मेरे लिए एक ताँगा मँगवा दे—जल्दी कर।

सुरैया : किराया क्या तय किया जाए ?

बलकीस : तू किराये-विराये को छोड़—मैं खुद तय कर लूंगी—भाग अब।

[थोड़ा अन्तराल]

बलकीस : (घबराकर) क्या है ? कौन था ?—कोई भी नहीं था—आज न जाने मुझे क्या हो गया है—मैं अब यहाँ खड़ी क्या कर रही हूँ—कोई चीज़ बाकी रह गयी है शायद—हाँ, रूमाल—(हँसती है) रूमाल तो मेरे हाथ में है—ज़रा बाल सँवार लूं—कंघी कहाँ है ?—हटाओ। ऐसे ही चलती हूँ।

[दूर से बलकीस के बाप की आवाज़ आती है।]

बाप : बलकीस—(आवाज़ करीब आ जाती है) बलकीस बेटा !

बलकीस : (घबराकर) जी अब्बाजी।

बाप : तू यहाँ खड़ी क्या कर रही है—इधर आ—अपना कलम लेकर मेरे कमरे में आ।

बलकीस : लेकिन अब्बाजी···

बाप : वह नीला पैड भी लेते आना।

[कदमों की चाप—अन्तराल]

बलकीस : (तंग आकर) मैं यहाँ से चली क्यों न गई—अब न जाने वह मुझसे क्या लिखवाना शुरू कर देंगे—सुरैया !

सुरैया : आपा, तांगा आ गया—गली के बाहर खड़ा है। आप जल्दी जाइए। वह ज़्यादा देर रुकेगा नहीं।

बलकीस : तू ऐसा कर—यहाँ खड़ी रह—जब अब्बाजी मुझे बुलाएँ तो कह देना, वह जल्दी-जल्दी में कालेज चली गयी है।

बाप : (दूर से आवाज़ आती है) बलकीस बेटा !

[बलकीस जवाब नहीं देती।]

सुरैया : (कानाफूसी में) कह दूं, चली गयी हैं ?

[बाप खुद आ जाता है।]

बाप : बलकीस !

बलकीस : (घबराकर) जी अब्बाजी !

बाप : मैंने तुझसे क्या कहा था ?

बलकीस : मुझे याद आया अब्बाजी—मैं सुरैया से अपने कलम की बाबत पूछ रही थी। न जाने कहाँ गुम हो गया है। काम के वक्त यूं ही चीज़ें गुम हो जाती हैं। और मुझे ठीक साढ़े आठ बजे जलसे में पहुंच जाना है।

बाप : तो अभी काफ़ी वक्त पड़ा है—मुझे सिर्फ़ एक खत लिखवाना है—शाबाश बेटा, आओ मेरे साथ—अपना कलम फिर ढूंढ़ लेना—मेरे कलम से तुम लिख लिया करती हो ?

बलकीस : अब्बाजी—

बाप : क्या है ?

बलकीस : भाईजान से आप क्यूं नहीं कहते—वह आपको लिख देंगे।

बाप : नहीं बलकीस। वह बड़ा बदबख़्त है। इसके अलावा कई बार बहुत-सी बातें अपनी तरफ़ से लिख दिया करता है—सिर्फ़ दो-तीन मिनट का काम है। आओ—अब बहाने न बनाओ—चलो।

बलकीस : चलिए—(**सुरैया से कानाफूसी में**) तू तांगेवाले से जाकर कह दे कि वह कपड़े बदल रही है। अभी आती है।

बाप : जल्दी जाना है तो जल्दी आओ।

[अन्तराल—कागज़ की खड़खड़ाहट]

बाप : अच्छा—देख लो, कागज़ पर कोई दाग-धब्बा तो नहीं ?

बलकीस : जी नहीं। बिलकुल साफ़ है।

बाप : मेरा मतलब है, तुमने कंघी-वंघी की होगी, हाथों को तेल लगा होगा—यह कागज़ नीचे रख लो।

[कागज़ की खड़खड़ाहट]

बलकीस : आप अब लिखवाना शुरू कीजिए।

बाप : ठहरो, मुझे मज़मून बना लेने दो—हाँ, तो लिखो—अज़ीज़-ए-मन—मेरा वह अज़ीज़ ही तो है—मैं अपने निसार की बाबत कह रहा हूँ—मेरा पता तो तुमने लिख दिया होगा ?

बलकीस : जी हाँ।

बाप : अंग्रेज़ी में लिखना चाहिए था। इसलिए कि उर्दू में अगर लिखोगी तो उसकी समझ में न आएगा।

बलकीस : अंग्रेज़ी ही में लिखा है—हाँ, तो लिखवाइए—अज़ीज़-ए-मन !

बाप : बाद दुआए-उम्र-दराज़ी के वाजह हो कि हम खैरियत से हैं और तुम्हारी खैरियत खुदाबन्द ताला से नेक चाहते हैं—लिख लिया ?

बलकीस : लिख लिया।

बाप : सूरत-ए-हाल यह है।

बलकीस : सूरत-ए-हाल यह है कि··· (**हौले से**) अजीब मुसीबत है !

बाप : क्या कहा ?

बलकीस : कुछ नहीं—आप आगे लिखवाइए।

[अन्तराल—बलकीस बेकरारी में टाँग हिलाना शुरू कर देती है। बाप की आवाज़ आती है।]

बाप : सूरत-ए-हाल यह है···तुम्हारी माँ कहाँ है ?

[बलकीस की टाँग ज़ोर से हिलती है।]

बलकीस : वह पड़ोसिन के यहाँ गयी हैं।

[अन्तराल]

बाप : उसको भी तो कुछ लिखवाना था।

बलकीस : आपको जो लिखवाना है वह तो लिखवा दीजिए—लिखवाइए।

बाप : लिखवाऊँ क्या खाक—तुम्हारी टाँग इस ज़ोर से हिल रही है कि···

[टाँग हिलने की आवाज़]

बलकीस : मेरी—मेरी टाँग—(**हिलने की आवाज़ बन्द हो जाती है**) ओह—अच्छा तो अब लिखवाइए—खुदा के लिए जल्दी कीजिए। (**टाँग फिर हिलती है।**)

बाप : तुम टाँग हिलाना तो बन्द करो।

बलकीस : (**टाँग हिलती रहती है**) अब कहाँ हिलती है—आप लिखवाइए।

बाप : लिखो—जब से तुम गए हो, यहाँ बला की गर्मी पड़ रही है। लोगों को धड़ाधड़ सन-स्ट्रोक हो रहा है—मैं घर से बिलकुल बाहर नहीं निकलता। गर्मी की इन्तहा यह है कि मेरे दो-तीन बाज़ मर गए हैं। जो दो सूरजमुखी थे वे मरने के करीब हैं। तुम जब गर्मियों के बाद यहाँ आओ तो चार-पाँच लक्के ज़रूर लेते आना—लिख लिया ?

बलकीस : जी हाँ। चार-पाँच लक्के ज़रूर लेते आना—बस ?

बाप : नहीं, अभी नहीं। लिखो—तुम्हारा लोहे का ट्रंक महफ़ूज़ पड़ा है। उसका ताला टूटा हुआ था जो मैंने बनवा दिया है। कहो तो उस पर रोगन भी करवा दूँ? मेरे खयाल में काला अच्छा रहेगा।—

बलकीस : काला अच्छा रहेगा—अपनी माँ को मेरा सलाम कहना—बच्चों को प्यार।

बाप : हाँ, बच्चों को प्यार··· (**अचानक चौंककर**)···मगर यह तुमने खत क्यों बंद कर दिया है? मुझे अभी तो और बहुत-सी बातें लिखवानी थीं···तुम्हारी माँ कहाँ है?

बलकीस : वह पड़ोस में गयी हैं—जनाब निसार अहमद साहब, बिल्डिंग कण्ट्रेक्टर—कोठी नं० तीन, रावलपिंडी—यह लीजिए, लिफ़ाफ़े पर पता भी लिख दिया—सुरैया से कहती हूँ, अभी पोस्ट करा दे—अच्छा, तो मैं अब जाती हूँ।

बाप : हाँ, इसे अभी पोस्ट करो—तुम्हारे भाई को दूंगा तो उसकी जेब में ही पड़ा रहेगा।—मगर बात तो सुन बलकीस—मैं समझता हूँ, बहुत-सी बातें रह गयी हैं।

बलकीस : वो अम्मीजान अपने खत में लिखवा देंगी—अच्छा अब्बाजी, मैं अब चलती हूँ। (**तेज़ कदमों की आवाज़—कुछ क्षणों के बाद**) बस, अब दौड़ बलकीस—साढ़े आठ बजने ही वाले हैं। (**घड़ी की टिक-टिक सुनाई देती है।**)

दूसरा दृश्य

मन्तज़र : मैं बीमार हूँ—सख्त बीमार हूँ। आप—आप—साढ़े आठ बजने वाले हैं।

दोस्त : (**फ़िकरमंद लहजे में**) तुम बीमार हो। लेकिन भई, अजब बेवकूफ़ हो। मुझसे तुमने पहले क्यों नहीं कहा? अब तसल्ली से अपना सारा हाल सुनाओ। मुझे कोई खिदमत बताओ—भई वा, अल्लाह कमाल कर दिया—और हाँ, साढ़े आठ बजे तुमने क्या कहा था?

मन्तज़र : (**मुर्दा आवाज़ में**) साढ़े आठ बजे—साढ़े आठ बजे मुझे दवा पीनी है।

दोस्त : लाओ, मैं पिला देता हूँ। कहाँ है दवा—साढ़े आठ बजने में अब कौन-सी देर है—दवा कहाँ है?

मन्तज़र : नहीं, नहीं। मैं खुद पी लूंगा—आप तकलीफ़ न करें—आप—आप—आप जाइए।

दोस्त : मैं तुम्हें बीमार छोड़कर कैसे जा सकता हूँ?

मन्तज़र : मैं—मैं बीमार नहीं हूँ—मैं अभी ठीक हो जाऊँगा। आप जाइए—ओह, खुदा के लिए आप जाइए—मुझे दिल का दौरा पड़ जाएगा।

दोस्त : दिल का दौरा—भई, अब तो मैं हरगिज़ नहीं जाऊँगा—बताओ, दवा कहाँ है?

मन्तज़र : वह मेरे पास नहीं है।—आप जाइए, खुदा के लिए जाइए।

दोस्त : तुम्हें इस हालत में छोड़कर मैं डाक्टर के पास भी तो नहीं जा सकता।

मन्तज़र : क्या कहा? (**बेक़रारी बढ़ती जाए**) आप डाक्टर के पास भी नहीं जाएँगे—मैं—मैं मर जाऊँगा—खुदा के लिए डाक्टर के पास दौड़े जाइए। मेरी हाल त

बहुत खराब है। मेरी—हालत—बहुत—नाज़ुक है—जाइए—(आवाज़ कमज़ोर हो जाती है।)

दोस्त : बेहोशी आ गयी—क्या हुआ—डाक्टर कहाँ मिलेगा—(दरवाज़ा खोलने की आवाज़)—(घबराहट के साथ बाहर जाने की आवाज़) अब कोई डाक्टर मिल जाए।

[घड़ी की टिक-टिक—आखिर में क्लॉक की खटखटाहट पैदा हो और एक टन की आवाज़ आए। टन की गूंज थोड़ी देर तक सुनाई देती रहे—घड़ी की टिक-टिक बन्द हो जाए। एक सैकेण्ड तक पूरी खामोशी बनी रहे—इस खामोशी के बाद दरवाज़ा खुले और बलकीस दाखिल हो।]

बलकीस : हैं तो वही—लेकिन देखिए, किस मज़े से जनाब सो रहे हैं गोया इनको मालूम ही नहीं कि मैं आ रही हूँ—काफ़ी गहरी नींद सो रहे हैं—खुदा जाने कहाँ से घूमते-घुमाते थककर आए होंगे। (नाराज़गी के साथ) तो मुझे क्या ज़रूरत पड़ी है कि यहाँ बिन बुलाये मेहमान की तरह खड़ी रहूँ ?

(फ़ेड आउट)

नीली रगें

पात्र

सईद : शायर (आवाज़ में जज़्बात का हजूम और शीरीं ज़बां)
कृष्ण : सईद का दोस्त
सुरैया : एक अजनबी औरत

सईद : (नीचे के शे'र पढ़ता है—)

मरमरी पैकर पै नीलम के खतूत
सर्द है दुनियाए ख्वाब
मेरे बर्फ़ानी तसव्वुर में मगर
बह रहा है नीलगूं सीमाब-सा
जिस तरह सारी हो कलब-व-रूह में
इक हंसी उफ़ई का ज़हर
चाँद में जिस तरह नीली शुआओं की झलक
मरमरी पैकर पै नीलम के खतूत[1]

कृष्ण : अब तुम दिन-ब-दिन शायर होते चले जा रहे हो।

सईद : मुझे भी यही महसूस होता है—इन नीली रंगों ने मुझे शायर बना दिया है। मेरे ज़हन की हर सिलवट में रगें रेंगती-रेंगती पहुंच गयी हैं। (**कृष्ण की ओर ज़ोर से मुखातिब होकर**) कृष्ण, तुमने कभी किसी औरत के ठण्डे हाथ अपने हाथों में दबाए हैं ?

कृष्ण : ठण्डे हाथ···?

सईद : ठहरो। मुझे अपना फ़िकरा दुरुस्त कर लेने दो। फिर जवाब देना। अब बताओ, क्या तुमने कभी किसी अजनबी औरत के ठण्डे हाथ अपने हाथों में दबाए हैं—

---

1. गोरे तन पर नीलम की रेखाएँ (और) सर्द है सपनों का (यह) संसार। मेरे बर्फ़ीले खयालों में मगर बह रही है नीले पारे-सी थरथराती एक धारा। दौड़ रहा हो जैसे दिल और रूह में एक सुन्दर नागिन का ज़हर। चांद में जैसे नीली किरणों की झलक।

ऐसे हाथ जो चाँद की तरह खुनक हों—किसी अजनबी औरत के हाथ, जो तुम्हारी ज़िन्दगी में यूँ दाखिल हो जैसे रात के सुनसान अँधेरे में कोई जुगनू भटकता हुआ निकले।

कृष्ण : (मज़ाक के तौर पर) अपनी दुम में लालटेन बाँधे—चाँद की डली चूसता हुआ उधर आ निकले। (हँसता है) तुम्हें आज क्या हो गया है सईद—यह एकदम ठण्डी औरत तुम्हारी ज़िन्दगी में कब दाखिल हुई—अगर सामने अंगीठी में दहकते हुए कोयले वाकई गर्म हैं तो जनाब को मालूम होना चाहिए कि आज दिसम्बर की एक सर्द रात है और सर्द रातों में बर्फ़ कोई नहीं पीता। शराब तक को इसकी सर्द आगोश से दूर रखा जाता है—मगर मैं तो सबक पढ़ने लगा—बताओ, यह सर्द हाथों वाली औरत कौन थी ?

सईद : सर्द हाथों वाली अजनबी औरत कहो—अजनबी (आह भरकर)···कृष्ण, तुम नहीं जानते यह अजनबीपन कितनी मज़ेदार चीज़ है। सोचो तो अगर खुदा भी हमारे देश का होता, हमारा देखाभाला होता तो—तो उसकी खुदाई कैसी होती—अजनबीयत क्या है—तुम नहीं समझ सकते—अजनबीयत···(अन्तराल)··· कभी-कभी हमारा जिस्म तालाब के ठहरे हुए पानी की तरह, जिसकी सतह पर कोई उड़ता-उड़ता पत्ता आ गिरे तो कँपकँपा उठता है। यह कँपकँपाहट जिसका कुछ मतलब होता है और कुछ मतलब नहीं भी होता। यह कँपकँपाहट जो सर्द और गर्म लहरों का एक उलझाव-सा होता है।(अन्तराल)नहीं—अजनबी औरत की अजनबीयत इससे ज़्यादा अजनबी होती है।

कृष्ण : (मज़ाकिया अन्दाज़ में) ठण्डे हाथों वाली अजनबी औरत की अजनबीयत ज़ाहिर है, इससे भी ज़्यादा अजनबी होती होगी और सर्द भी।

सईद : (खोये हुए अन्दाज़ में) गोरे-गोरे ठण्डे हाथ और उन पर फैली हुई नीली रगें जैसे बर्फ़ में नीलम की लकीरें—इन नीली रगों में कहीं-कहीं हाँफती हुई बुलबुल के जीने की सी फड़फड़ाहट···नहीं, मैं कहीं बहक न जाऊँ।

कृष्ण : आपको यह अन्देशा बहुत बाद में हुआ है—आप बहक चुके हैं। नहीं बहके हुए हैं ?

सईद : यह सुनकर मुझे ताज्जुब नहीं हुआ—जब तक इस दुनिया में औरत, शराब और फूल मौजूद है, इन्सान ज़रूर बहकेंगे और बहका हुआ इन्सान औरत, शराब और फूल से ज़्यादा खूबसूरत होता है।

× × ×

[संगीत के धीमे-धीमे सुर, जिनमें उल्लास करवटें ले—ऐसा उल्लास जिसमें दबे-दबे दर्द की झलक भी हो—औरत की हँसी बिखर-सी जाये। यह हँसी मासूम हो—कुछ क्षणों तक यह नगमा जारी रहे और आहिस्ता-आहिस्ता धीमा होकर पृष्ठभूमि में चला जाए।]

सुरैया : मैं बहक रही हूँ।

सईद : तुम्हारी ज़िन्दगी नया लिबास पहन रही है।

सुरैया : मुझे शर्म महसूस होती है।

सईद : यह नये कपड़ों का कसूर है।

सुरैया : उफ़, मेरे हाथ कितने ठण्डे हैं।

सईद : मेरे हाथों में दे दो···जवानी के खयालों की-सी गर्मी तुम उनमें पाओगी।

[सुरैया सर्दी के कारण 'सी-सी' करती है।]

सुरैया : आह—तुम्हारे हाथ गर्म हैं···माँ की गोद की तरह···मुझे याद है, मेरी माँ भी होती थी।

सईद : एक मेरी भी थी—माँएँ सबकी होती हैं, मगर मुसीबत यह है कि इनमें से अकसर मर जाती हैं—मेरी माँ को मरे इतने ही वर्ष हो गए हैं, जितने मुझे ज़िन्दा रहते।

सुरैया : (हलकी-सी हँसी) तुम—तुम—तुम दिलचस्प आदमी हो—तुम्हारा नाम क्या है ?

सईद : मेरा नाम—भई, हद हो गयी—पहले तुम अपना बताओ।

सुरैया : (सी-सी करती हुई) सर्दी ज़्यादा हो गई है।

सईद : अँगीठी में कोयले और डाल देता हूँ।

सुरैया : खत्म हो गए तो क्या करोगे ?

सईद : कुछ भी नहीं। खत्म हो जाएँगे तो —खत्म हो जाएँगे—(अन्तराल) लेकिन मेरे पास कागज़ों का एक अम्बार जो मौजूद है, इसको जलाना शुरू कर दूंगा।

सुरैया : लेकिन इन कागज़ों पर तो शे'र लिखे हुए हैं।

सईद : इसीलिए तो कहता हूँ कि जलाने के लिए अच्छे रहेंगे। तुम्हारे आने से पहले मैं इन शे'रों को बहुत सँभाल-संभालकर रखता था पर तुम्हारे आने पर मालूम हुआ कि इनमें से हरेक लकड़ी का खिलौना है—लकड़ी जलाने ही के काम तो आती है !

सुरैया : धुआँ देगी।

सईद : (अन्तराल) तुम्हारा नाम क्या है ?

सुरैया : मेरा नाम—मेरा नाम—देखो, तुमने अभी तक अँगीठी में कोयले नहीं डाले। मैं यह सर्दी बर्दाश्त नहीं कर सकती—मेरे हाथ—देखो, मेरे हाथ फिर सुन्न हो गए हैं—लाओ, मुझे अपने हाथ दो···कहाँ हैं तुम्हारे हाथ ?

सईद : ये रहे—ओ—कमरे में रोशनी नहीं है—ठीक लालटेन कोने में पड़ी है। उसकी कुप्पी का तला टूट गया था—लेकिन फिर इस अँधेरे में तुम्हें दिखता कैसे रहा —बखुदा तुम्हारे चेहरे की एक-एक रेखा मैंने गौर से देखी है। तुम्हारा तिल—

सुरैया : कहाँ पर है यह मेरा तिल ?

सईद : गोया मैंने देखा ही नहीं—मैं सच कहता हूँ, अभी-अभी तुम्हारा यह तिल चमक रहा था—वहाँ पर था। होंठों की तिकोन के ऊपर। दायीं आँख की पुतली की सीध में। यानी ऊपर से अगर सीधी रेखा आए तो इस तिल को ज़रूर छुए—क्या

गलत कहता हूँ ?

सुरैया : बिलकुल गलत ।

सईद : तो फिर मैंने कहाँ देखा था ?

सुरैया : यह तिल ठीक उसी जगह तुम्हारे चेहरे पर है ।

सईद : मेरे चेहरे पर ? नहीं । ऐसा हरगिज़ नहीं हो सकता—लेकिन—अरे, तुम शायद ठीक कहती हो । अब मुझे याद आया—यह तिल मेरे ही चेहरे पर है । कल जब तुम बर्फ़ानी रात में मुझसे मिली थीं और मैंने माचिस जलाकर तुम्हारी तरफ़ देखा था तो मुझे तुम्हारे होंठों के उभरे कोनों के ऊपर की जगह बहुत पसन्द आई थी और मैंने सोचा था कि अगर वह तिल, जो मेरे चेहरे पर बेकार पड़ा है, उड़-कर वहाँ चला जाए तो कैसा भला मालूम हो—(**अन्तराल**) वहाँ तिल ज़रूर होना चाहिए । चाहे वह मेरा हो या तुम्हारा ।

सुरैया : वहाँ तिल का होना इतना ज़रूरी क्यों है ?

सईद : अरे भई, वहाँ तिल का होना बहुत जरूरी है । अब मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ—देखो···ठहरो । मैं तुम्हें तसवीर बनाकर समझाता हूँ—लेकिन तुम देखोगी कैसे ? —सख्त अन्धेरा है···अब मैं तुम्हें कैसे समझाऊँ—लेकिन तिल का होना वहाँ पर बहुत ज़रूरी है—यानी मुझे सख्त रूहानी परेशानी होगी अगर वहाँ तिल न हुआ ।

सुरैया : तुम्हें रूहानी परेशानी नहीं होगी । इसलिए कि तिल वहाँ पर मौजूद है ।

सईद : होना चाहिए था—अगर न होता तो भी होता (**अन्तराल**)···लेकिन···लेकिन तुमने झूठ क्यों बोला ?

सुरैया : इसलिए कि यह तिल से ज़्यादा खूबसूरत चीज़ है—मेरा दिल चाहता था कि तुम्हें छेड़ूँ···मैं बड़ी चंचल हूँ । (**हँसी**)

सईद : तुम्हें झूठ नहीं बोलना चाहिए—अक्लमंदों का कहना है कि झूठ नुकसानदेह होता है ।

सुरैया : यह सबसे बड़ा और सबसे खूबसूरत झूठ है जो उन्होंने बोला—लेकिन मैं पूछती हूँ, तुमने झूठ क्यों बोला—अभी-अभी तुम कह रहे थे कि तुम्हारे होंठों के ऊपर वाकई एक तिल मौजूद है—क्या मैं देख सकती हूँ ?

सईद : (**बौखलाकर**) भई नहीं होगा और बहुत मुमकिन है हो—बहरहाल कहीं न कहीं ज़रूर है—बात यह है कि मैं अपना चेहरा बहुत कम देखता हूँ । आईने से मुझे नफ़रत है । इसमें असली शक्ल नज़र नहीं आती—मैंने जब अपना चेहरा इसमें देखा तो मुझे ऐसा महसूस हुआ कि इस पर किसी ने कलई कर दी है । लानत भेजो ऐसी वाहियात चीज़ पर—जब आईना नहीं था, लोग ज़्यादा खूबसूरत थे । अब आईना मौजूद है, मगर लोग खूबसूरत नहीं रहे ।

[अन्तराल]

सुरैया : सर्दी नाकाबिल-ए-बरदाश्त हो गयी है—अगर कोयले खत्म हो गए ?

सईद : (**अपने खयाल में**) तो मैं आईना जलाने शुरू कर दूंगा ।

सुरैया : आईने ?

सईद : और क्या—नहीं, मैं भूला—आईने नहीं, वे कागज़, जिन पर मैंने शे'र लिखे हैं—ये शे'र आईनों से भी बदतर हैं।

सुरैया : (हँसती है) तुम बहुत दिलचस्प आदमी हो—मैं बहुत खुश हूं—लेकिन कोयले ?

× × ×

[ऐसा नगमा शुरू हो जिसके सुर शुरू-शुरू में बुलन्द हों मगर बीच-बीच में धीमे हो जाएँ। ऐसा मालूम हो कि साज़ों में सुर बाकी नहीं रहे। संगीत के इस टुकड़े के दौरान कहीं-कहीं यह आवाज़ आती रहे, "लेकिन कोयले—लेकिन कोयले" यह आवाज़ सईद की हो।]

सईद : ···लेकिन कोयले···लेकिन कोयले—कितना अहम सवाल है। (अन्तराल) कृष्ण, यह शायरी सब बकवास है। आध सेर कोयले शायर के दो दीवानों के मुकाबले में ज्यादा देर तक जलते हैं और ज्यादा गर्मी पहुंचाते हैं—ठण्डे-ठण्डे गोरे हाथ, जिन पर नीली लकीरों का जाल-सा बुना हो, ज़रूर गर्म होने चाहिए।

कृष्ण : ज़रूर गर्म होने चाहिए—तुम्हारे चार दीवान क्या इन दो हाथों को गर्म नहीं कर सके ?

सईद : (आह भरकर) नहीं। काश, मैंने शायरी के बजाय कोयले चुनने का काम किया होता। अब तक मैंने चार बोरियाँ भर ली होतीं···

[अन्तराल]

कृष्ण : किस सोच में पड़ गए ?

सईद : सोच रहा था, अगर चार बोरियाँ कोयले से भर ली होतीं तो उस औरत को शे'रों की ज़रूरत होती—ठण्डे शे'रों की—मैं ऐसी कई औरतों को जानता हूँ जो शे'रों को मलाई-बर्फ़ की तरह प्लेट में डालकर चमचे से खाना पसन्द करती हैं—(अन्तराल) औरत निराली है या वह जो औरतों को बनाता है, निराला है ?

कृष्ण : दोनों निराले हैं। इसलिए कि दोनों हमारी समझ से परे हैं।

सईद : लेकिन लोग कहते हैं कि शायर दोनों को अच्छी तरह समझता है।

कृष्ण : यह भी शायरी है।

सईद : लेकिन मुझे ऐसा महसूस होता है कि मैंने औरत को समझने का गुर पा लिया है।

कृष्ण : बताओ, वह गुर क्या है ?

सईद : इसको समझने की कोशिश ही न की जाए।

× × ×

[दोनों हँसते हैं—इस हंसी के साथ ही उल्लासपूर्ण संगीत का टुकड़ा शुरू हो। आखिर में सुरैया के हंसने की आवाज़ आए।]

सुरैया : तुम मुझे समझने की कोशिश क्यों नहीं करते ?

सईद : हर चीज़ जो मेरे आसपास है, वह कहती है, मुझे समझो—इस अँगीठी का हर

बुझता हुआ कोयला भी यही कहता है—मुझे समझो—दूर आसमान पर ठिठके हुए तारे भी इसी चाह में टिमटिमा रहे हैं—चाँद, यह चाँदी की तश्तरी में जमा हुआ पानी—यह भी तो कहता है कि मुझे समझो—और तुम्हारे ठण्डे-ठण्डे हाथों पर ये नीली-नीली रगें जो कुँवारे खयालों की तरह मासूम हैं—क्या इनको समझने की कोशिश नहीं करनी चाहिए ?

सुरैया : खिड़की बन्द कर दो—चाँद की किरणें सर्दी में इज़ाफ़ा कर रही हैं—कोयले ·· बस, ये आखिरी कोयले थे क्या ?

सईद : हाँ, आखिरी थे।

सुरैया : तो अब क्या होगा—सईद, मेरे हाथ—हाय, मेरे हाथों का क्या होगा ?

सईद : मेरा नाम तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?

सुरैया : क्या तुम्हारा नाम सईद है ?

सईद : सईद ही तो है—और हो भी क्या सकता है ! पर तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?

सुरैया : (**हँसती है**) एक ज्योतिषी ने मुझसे कहा था, इन सर्दियों में तेरी ज़िन्दगी के अन्दर एक साअते सईद यानी खुशी की एक घड़ी आएगी—ये कुछ घड़ियाँ जिनमें मेरे ठिठुरे हुए हाथ आग तापते रहे हैं।

सईद : सुरैया—सुरैया—सुरैया—(**रुककर**) काश, मेरे पास और कोयले होते।

सुरैया : (**चौंककर**) लेकिन यह तो मेरा हाथ है—तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि मेरा नाम सुरैया है ?

सईद : यह तारा बहुत ऊँचा है, बहुत दूर और बहुत खूबसूरत।

सुरैया : क्या मैं खूबसूरत हूँ ?

सईद : खूबसूरत भी और बहुत परे भी।

सुरैया : खूबसूरत औरतों से तो लोग मुहब्बत करते आए हैं। तुम मुझसे मुहब्बत क्यों नहीं करते ? (**बदले हुए लहजे में**) ···तुमने अब तक यह राज़ मुझसे क्यों छुपाए रखा कि मैं खूबसूरत हूँ···आज जब कि कोयले खत्म हो चुके हैं और मेरी अँगुलियाँ बर्फ़ की डलियाँ बन रही हैं, तुमने मुझे बताया है कि मैं खूबसूरत हूँ—मैं खुश नहीं हुई—मैं तुमसे नाराज़ हो रही हूँ—सच कहती हूँ, तुमसे नाराज होने के लिए मैंने अपने-आपको बिलकुल तैयार कर लिया है—मैं जल्दी ही तुमसे बिगड़ने वाली हूँ। (**अन्तराल—लहजा बदल जाता है**) अच्छा बताओ, मैं कितनी खूबसूरत हूँ—तुम्हें अन्दाज़ा तो होगा ?

सईद : (**थोड़ा रुककर**) कागज़ जला दूं—कोयले बुझ रहे हैं।

सुरैया : पहले यह बताओ, मैं कितनी खूबसूरत हूँ···तुम्हें मेरी जान की कसम। ठीक-ठीक बताओ, मैं कितनी खूबसूरत हूँ ?

[कुछ क्षणों के लिए मौन]

सुरैया : बताओ न, बताते क्यों नहीं—(अन्तराल) आह, मैं समझ गयी ··तुम कभी नहीं बताओगे। तुम नहीं चाहते कि मुझे अपने हुस्न का ठीक अन्दाज़ा हो···तुम···

तुम···जलते हो···क्योंकि आज तक कोई खूबसूरत औरत तुम्हारी ज़िन्दगी में नहीं आई, इसलिए तुम चाहते हो कि मुझे मेरे हुस्न से बेखबर रखो···इस बेखबरी का तुम नाजायज़ फ़ायदा उठाना चाहते हो—लेकिन मैं खूबसूरत हूँ। तुम्हारे इस दबाव से मेरा हुस्न दब तो नहीं जाएगा—मेरे हाथों की नीली रगें···क्या कहा था एक बार तुमने···बर्फ़ में नीलम की लकीरें···नहीं, यह उनसे भी कहीं ज़्यादा खूबसूरत हैं—और मेरा तिल—होंठों के ऊपर के तिकोन के ऊपर वह नन्हा-सा नुक्ता—तुम मुझे बता चुके हो कि यह खूबसूरत है। अब यह और भी खूबसूरत होगा (हँसती है)···मैं अब शृंगार किया करूँगी—सोलह शृंगार। इससे मेरी और भी छवि निकलेगी। तुम मुझे बहुत करीब से देखते हो, लेकिन बहुत जल्द दूर से देखा करोगे और तरसा करोगे (अन्तराल)···तुम मुझे क्यों नहीं बताते कि मैं कितनी खूबसूरत हूँ ?

सईद : कोयले बिलकुल बुझ चुके हैं—अँगीठी में आखिरी चिंगारी सफ़ेद राख की गोद में आँखें मीच रही है।

सुरैया : तुम मेरी बात का जवाब क्यों नहीं देते—मैं तुमसे क्या पूछ रही हूँ—बताओ—बताओ सईद !

सईद : लो, वह आखिरी चिंगारी भी सो गई।

सुरैया : सईद, मैं तंग आ गयी हूँ। मेरा जी चाहता है कि गुस्से में ज़ोर-ज़ोर से अपने पैर इस फ़र्श पर मारूँ···तुम···तुम···तुम बहुत बदसूरत हो—और···और तुम्हारे पास निगोड़े कोयले भी नहीं हैं जो अपने हाथ ताप सकूँ···तुम कुछ भी नहीं हो—मैंने गलती की जो तुम्हारे पास चली आई—मैं अब फ़ौरन चली जाऊँगी। तुम्हारे पास मैं एक मिनट नहीं ठहर सकती।

[थोड़ा अन्तराल]

सईद : (उदास लहजे में) सचमुच जा रही हो ?

सुरैया : (गुस्से में) मुझे रोकने वाले तुम कौन ?

सईद : जाती हो तो मेरा यह कम्बल लेती जाओ—बाहर बहुत ज़्यादा सर्दी है।

सुरैया : तुम्हारी इस हमदर्दी का मेरे दिल पर कोई असर नहीं हुआ।

सईद : कम्बल लपेट लो, कहीं सर्दी न लग जाए।

सुरैया : तुम मेरे दिल और दिमाग पर हावी होने की कोशिश न करो—तुम्हारा यह कम्बल मुझे पसन्द नहीं। इसका रंग निहायत ही फ़िज़ूल है। अच्छा, तो मैं चली।

सईद : खुदा हाफ़िज़।

सुरैया : (तंग आकर) तुम कुछ न कहो—कुछ न बोलो—खामोश रहो—मैं जाना चाहती हूँ।

सईद : जाओ।

[अन्तराल—दरवाज़ा खोलने की आवाज़—अन्तराल—सुरैया की आवाज़ दूर से आए।]

सुरैया : चली गयी—लेकिन अब फिर न आऊँगी।

सईद : जाते वक्त तुम बहुत ज़्यादा हसीन हो गयी हो—इतनी खूबसूरत तुम पहले कभी न थीं।...

[नोट : धीरे-धीरे सुरों में कोई साज़ बजाया जाए। सईद नीचे दर्ज शे'र गाए—दर्दभरी धुन में—]

मौज-सी पानी में इक पैदा हुई
कह गयी
जैसे इक झोंका हवा का
पास से होकर निकल जाए कहीं
चन्द रोज़ा आरज़ुओं का चिराग
झिलमिलाकर बुझ गया।

(फ़ेड आउट)

टेढ़ी लकीर

पात्र

जावेद	:	
असलम अल्ताफ़ जमील अब्बास	:	जावेद के दोस्त
गुल खाँ	:	नौकर
मुआलन	:	(जो रेडियो का ऐलान पढ़ेगा)
एक गवैया	:	(जो इकबाल के शे'र गाएगा)
मजीद	:	

[शहनाई की आवाज़—आर्केस्ट्रा वह धुन बजा रहा है जो आमतौर पर ब्याह-शादी के मौके पर बजाई जाती है—यह संगीत इस अंदाज़ से बजाया जाए कि सुनने वाले यह समझें कि कोई बारात गुज़र रही है। इसलिए आहिस्ता-आहिस्ता यह संगीत फ़ेड हो जाए।]

जावेद : बाजों के इस शोर में और शादी में किसना तालमेल है—दोनों शुरू में शोर मचाते हैं और फिर आहिस्ता-आहिस्ता यह शोर गायब हो जाता है···और वह··· और वह निकाह पढ़ने वाला मुल्ला उससे बढ़कर और कौन चुगद हो सकता है। मैं जब उसका तसव्वुर करता हूँ तो मुझे उसमें और बारिश के बाद किसी जोहड़ के किनारे बैठे हुए मेंढक में कोई फ़र्क महसूस नहीं होता···लेकिन शायद मेंढक की हालत मुल्ला से बेहतर होती है। इसलिए कि वह सिर्फ़ बरसात में ही टर्राता है। हमारे मुल्ला साहब तो हर मौसम में···

असलम : क्या बेहूदा बकवास करते हो। आखिर तुम्हें इस दुनिया की कोई चीज़ पसन्द भी है ! शादी-ब्याह बकवास, दावतें फ़िज़ूल, मज़हब नाकारा, तालीम बेकार, दोस्ती बेहूदा···कोई चीज़ आपको इस दुनिया की पसन्द भी है—तो जनाब, ऐसा क्यों नहीं करते कि अपने लिए एक अलहदा दुनिया बना लें। उसी में रहें। अपनी पसन्द के कानून बना लें। औरत की बजाय कोई और चीज़ रच लें—यूं नेचर का 'बर्थ कन्ट्रोल' हो जाए तो जनाब की सारी ख्वाहिशें पूरी हो जाएँगी—माहौल

विला—कुछ होश की दवा करो।

जावेद : जिसका यह नुस्खा पीढ़ी-दर-पीढ़ी चला आ रहा है कि एक मुल्ला या पंडित बुलवाओ और उससे कुछ पढ़वाकर शादी कर लो—होश की दवा यही तहज़ीब फ़रमाएँगे न आप ? मर्द-औरत न हुई पहेली हो गयी—लेकिन ठहरिए। मैं आपसे एक सीधा-सादा सवाल पूछता हूँ। दलील से अलग होकर आप यह फ़रमाइए कि रस्मों पर इतनी शिद्दत से चिपके रहना क्या ज़रूरी है—शादी तो खैर हुई यानी इस चीज़ का मतलब इसलिए समझ में आ जाता है कि औरत मौजूद है, इसका कुछ न कुछ तो ज़रूर होना चाहिए। इस कुछ न कुछ का नाम आपने शादी तय किया है, जिस पर खाकसार को कोई एतराज़ नहीं। पर मैं पूछता हूँ कि शादी अगर हो तो साथ ही साथ रस्में क्यों हों यानी अगर मैं किसी औरत को जीवनसाथी बनाना चाहता हूँ और वह भी मुझे अपना जीवनसाथी बनाने के लिए तैयार है तो उसमें मुल्ला साहब का आना क्यों ज़रूरी है—शादी मेरी है यानी मेरी और उस औरत की। इसमें दूसरे लोग क्यों शामिल हों और फिर पुलाव क्यों पकें—बाज क्यों बजें और दूसरी एक हज़ार ऊटपटाँग बातें क्यों हों···और शादी का पैगाम—(**हँसता है**) बखुदा ये शादी का पैगाम भी अजीब चीज़ है।

अल्ताफ़ : लो भई असलम, शादी के पैगामों के बारे में भी अख्तर साहब की बातें सुन लो—फ़रमाइए हज़रत, इनके बारे में आपका निराला फ़लसफ़ा क्या कहता है ?

जावेद : (**हँसता है**) निराला फ़लसफ़ा क्या कहता है ? (**यह फ़िकरा फिर दोहराता है**) निराला फ़लसफ़ा क्या कहता है ? (**जैसे सोच रहा है। फिर एकदम**) यह तुम्हारे नज़दीक तिपाई पर जो सिनेमा का इश्तहार है, इसे पढ़कर सुनाओ। फिर बताऊँगा।

अल्ताफ़ : क्या पिक्चर देखने का इरादा है ?

जावेद : भई, नहीं। तुम यह इश्तहार तो पढ़ो।

असलम : लाओ, मैं पढ़ देता हूँ।

जावेद : पढ़ो।

असलम : लिखा है, (**कागज़ की खड़खड़ाहट**) लिखा है···आग का खेल उर्फ़ मदारी की आँख···गोहर टोन टाकीज़ का पहला शाहकार—सौ फ़ीसदी नाचता, बोलता और गाता फ़िल्म। खास अदाकार मिस मनीर और सीताराम—इसके साथ ही ज़िन्दा नाच व गाना भी होगा—नगीना टाकीज़—पहला खेल शाम छः बजे, दूसरा खेल साढ़े आठ बजे।

[**नोट :** मैंनेजर को प्रोग्राम बदलने का हक हासिल है। खरीदा हुआ टिकट वापस नहीं किया जाएगा। शराब पीकर दंगा-फ़साद करने वालों को हवाला-ए-पुलिस किया जाएगा। बिजली फेल होने की सूरत में टिकट के दाम वापस नहीं किए जाएँगे—नगीना टाकीज, अमृत बाज़ार]

जावेद : शादी के पैगामों में भी खेल का नाम होता है और खास अदाकारों का भी—यह भी लिखा होता है कि यह किसका पहला शाहकार है—ज़िन्दा नाच और गाने का ज़िक्र नहीं होता, मगर यूं यह चीज़ होती ज़रूर है···और फिर इस खेल के समय भी दर्ज होते हैं—अलबत्ता यह नोट साथ नहीं होता कि मैनेजर को प्रोग्राम बदलने का हक हासिल है। खरीदा हुआ टिकट वापस न होगा और फिर बिजली फेल होने की सूरत में टिकट के दाम वापस नहीं किए जाएँगे। हालाँकि इन बातों का हवाला इन पैगामों में ज़रूरी है।

असलम : मीन-मेख खूब निकालते हो और मज़ाक उड़ाने की कला भी तुम्हें खूब याद है। पर दोस्त, ज्यादा देर तक तुम इस मुश्किल रास्ते पर न चल पाओगे।

जावेद : सबसे बड़ी मुश्किल यह है कि तुम मुझे अभी तक नहीं समझ सके—ज्यादा देर तक मुझसे इस मुश्किल रास्ते पर न चला जाएगा। यही कहते हो न ?—लेकिन भई, मैं कुछ देर तो ज़रूर इस मुश्किल रास्ते पर चलूंगा। बस, मेरे लिए काफ़ी है।···तुम सीधी और हमवार सड़क के कायल हो जिसमें न कोई मोड़ हो न फेर, लेकिन बन्दा इस सड़क पर दो कदम नहीं चल सकता···सीधी सड़क पर तो हर आने वाली चीज़ सामने होती है। इसमें क्या खाक मज़ा आ सकता है···यानी हर चीज़ तुम्हारी निगाहों के सामने है। कोई चीज़ तुम्हारी निगाहों से ओझल नहीं। टेढ़े-मेढ़े मोड़ों और फेरों वाली सड़क हो तो कई आँखों से ओझल चीज़ें बड़े ड्रामाई ढंग में आँखों के सामने आती हैं—इस मोड़ पर एकदम कोई भारी-भरकम लॉरी तुम्हारे दिल में धड़का पैदा करती हाँफती हुई गुज़र जाती है—इस मोड़ पर अचानक कोई···कोई हसीन औरत इस अन्दाज़ से तुम्हारे सामने आती है जैसे अन्दर से कोई धुंधला-सा विचार एकदम ज़हन में कूद पड़े···ज़िन्दगी सिर्फ़ मोड़ों और फेरों ही की वजह से बसर करने के काबिल है वरना इसमें रखा ही क्या है···

असलम : खता कलामी माफ़ मगर आपने अभी-अभी हसीन औरत का ज़िक्र किया था—औरत में हुस्न तलाश करना आपने कब से शुरू किया है यानी मोड़ों पर हसीन औरतों के अचानक सामने आ जाने में आपने कब से दिलचस्पी लेनी शुरू की है ?

जावेद : (अन्तराल) बड़ा टेढ़ा सवाल किया है तुमने।

असलम : इसलिए कि आपसे सीधा-सादा सवाल किया ही नहीं जा सकता।

जावेद : ठीक है···ठीक है···(अन्तराल) मोड़ों पर हसीन औरतों के अचानक सामने आ जाने में कब से दिलचस्पी लेनी शुरू की है ? क्या ऐसा नहीं हो सकता कि मैं अपने कुछ अल्फ़ाज़ वापस ले लूं—नहीं, सिर्फ़ एक लफ़्ज़, औरत की बजाय गाय कह लेने दीजिए मुझे। इसमें आपका क्या हर्ज़ है ? हाँ, तो उस मोड़ पर अचानक कोई हसीन गाय इस अन्दाज़ से तुम्हारे सामने आती है जैसे···

असलम : दोस्त, हसीन गाय तो सामने आ गयी, यह अब अन्दर से वह धुँधला खयाल तुम्हारे ज़हन में नहीं कूदेगा···गाय की दुम तुम्हारे दिमाग तक नहीं पहुँच सकती,

जिसको थामकर वह खयाल ऊपर आ जाए।

जावेद : भई, मजबूरी भी कोई चीज़ है। क्या यह सच नहीं कि हमारे यहाँ सड़कों पर औरतों से ज्यादा गाय-भैंसें चलती हैं? औरतें हैं कहाँ? अब इसका इलाज क्या हो सकता है—यही वजह है कि अकसर आज़ादीपसन्द और आर्टिस्टिक तबीयत रखने वाले मर्द तंग आकर कोई डेरी फ़ार्म खोल लेते हैं।

असलम : आपने तंग आकर कोई डेरी फ़ार्म खोला?

जावेद : जी नहीं, इसके लिए भी तो गायों की ज़रूरत है। और मेरी ज़िन्दगी में न कोई चौपाया है न दोपाया—अलबत्ता उमंगें सीने में काफ़ी हैं—पर याद रहे, सिर्फ़ उमंगें—और मैं—और मैं क्या हूँ? बकौल आपके एक टेढ़ी लकीर जो सीधी लकीर के मुकाबले में हमेशा बड़ी होती है···यह बड़ापन···(हँसता है) यह बड़ापन अपने-आपको तसल्ली देने के लिए बुरा नहीं। क्या खयाल है अल्ताफ़ साहब!

अल्ताफ़ : खयाल?—मेरा ख़याल? मेरा खयाल आपके खयाल के मुकाबले में इतना लम्बा नहीं है जो आप अपने फ़लसफ़े के सिकन्दरी गज़ से माप सकें।

जावेद : अल्ताफ़-असलम, तुम दोनों मुझे अपना दोस्त समझते हो, और यह भी कहते हो कि तुम दोनों मेरे दोस्त हो। मैं आज तुमसे एक बात पूछता हूँ—क्या मैं वाकई बुरा हूँ—क्या मेरे खयालात वाकई इतने खतरनाक हैं कि यहाँ किसी चौराहे में खंभे बाँधकर मुझे कोड़े लगाए जाएँ? मैं चोर नहीं, डाकू नहीं। अगर मैं कभी सेंध लगाऊँगा तो अपने ही घर में चोरी करूँगा। अपनी ही चीज़ों को मेरी फूंकें इस तहज़ीब का चिराग बुझाना नहीं चाहतीं। मेरे अन्दर चन्द दीये रौशन हैं। मैं उनको ही जलाने-बुझाने के दिलचस्प खेल में मशगूल रहना चाहता हूँ। इस पर किसी को क्या एतराज़ हो सकता है और तुम जो मेरे दोस्त हो इसमें क्या ऐब देखते हो? (**खामोशी**) लेकिन···लेकिन इस कमरे की फ़िज़ाँ एकाएक इतनी उदास क्यों हो गयी है? क्या यह मेरी बातों का असर है या···या···

असलम : छोड़ो जावेद, इन बातों को···तुमने बिलकुल सच कहा था। हम तुम्हें नहीं समझ सकेंगे···अल्ताफ़, वो स्टेशन तो निकालो—रेडियो तुम्हारे करीब पड़ा है—जहाँ गाना हो जाए।

रेडियो

[इकबाल की यह नज़्म गायी जाए—]

यह देरो कोहन क्या है? अम्बार-ए-खसो-खाशाक!
मुश्किल है गुज़र इसमें बे नाला-ए-आतशनाक
रमज़ें हैं मुहब्बत की गुस्ताखी और बेबाकी
हर शौक नहीं गुस्ताख हर जज्ब नहीं बेबाक।
फ़ारग तो न बैठेगा महशर में जनूं मेरा
या अपना गरेबां चाक या दामने-यजदां चाक।

रेडियो : अभी-अभी आप एजाज़ साहब से हज़रते इकबाल का कलाम सुन रहे थे । अब आपको कल यानी ग्यारह फ़रवरी के प्रोग्राम के मुताल्लिक कुछ बताया जाएगा—कल—ग्यारह फ़रवरी को···

[अन्तराल]

रेडियो : हम देहली से बोल रहे हैं—अभी-अभी आप बाज़ार के भाव सुन रहे थे। अब आपसे कल यानी ग्यारह दिसम्बर के प्रोग्राम की चन्द दिलचस्पियों का ज़िक्र किया जाएगा ।

असलम : अल्ताफ़, तुम्हें याद है, जावेद से मिले हुए हमें पूरे दस महीने हो गए हैं। पिछली बार जब उससे गुफ़्तगू हुई थी उस दिन फ़रवरी की ग्यारह तारीख थी—आज दस दिसम्बर है। कहाँ गायब हो गया है ? कुछ समझ में नहीं आता ।

अल्ताफ़ : यही मैं सोचता हूँ। मुझे ऐसा महसूस होता है कि हमने उसे नाराज़ कर दिया है। उसके दिल को दुःख पहुँचाया है—असलम, जावेद का दिल बहुत नाज़ुक है। तुम्हें याद है उस रोज़ किस दर्दभरे लहजे में उसने हमसे पूछा था—क्या मैं वाकई बुरा हूँ—क्या मेरे खयालात वाकई इतने खतरनाक हैं कि यहाँ किसी चौराहे में खंभे से बाँधकर मुझे कोड़े लगाए जाएँ···मुझे जब उसके ये लफ़्ज़ याद आते हैं तो दिल में एक हलचल-सी मच जाती है···

[दस्तक की आवाज़]

अल्ताफ़ : देखना भई, कोई बाहर दस्तक दे रहा है ।

असलम : कौन है ? चले आओ। दरवाज़ा खुला है ।

[दरवाज़ा खुलने की आवाज़]

असलम : अच्छा ! यह तो अपना मजीद है । कहो भई मजीद, इतने दिन कहाँ रहे ?

मजीद : बीमार था, लेकिन भई, तुम लोग जावेद के निकाह पर क्यों नहीं आए ? क्या यहाँ नहीं थे ?

असलम : जावेद ? कौन-सा जावेद ?

मजीद : भई वाह—जावेद एक है, दो-दो नहीं हैं—तुम कितने जावेदों को जानते हो ?

अल्ताफ़ : तुम—तुम—तुम्हारा मतलब—यानी तुम्हारा मतलब अपने जावेद से है ?

मजीद : यह किस्सा क्या है ? एक ही जावेद को तो हम लोग जानते हैं और वह हमारा अपना ही था, पर अब तो किसी और का हो गया । बड़ी हैरत की बात है कि तुम लोग उसके बेहतरीन दोस्त हो और उसकी शादी के मुताल्लिक कुछ जानते ही नहीं ।

असलम : जावेद ने शादी कर ली ?

अल्ताफ़ : किससे ? कहाँ ? कब ?

मजीद : गुजराँवाला में एक दिसम्बर को—तुम—तुम—अब्बास को नहीं जानते—वह लम-तड़ंग जो हमारे साथ स्कूल में पढ़ा करता था ?

असलम : अच्छी तरह जानता हूँ। क्या हुआ उसको ?

मजीद : जावेद का निकाह उसी की बहन से हुआ है।

असलम : झूठ।

मजीद : मुझे इसमें झूठ बोलने की क्या ज़रूरत है ? अपनी लड़की को छोड़ने के लिए मैं गुजराँवाला गया था, वहाँ अब्बास से मुलाकात हुई इसलिए मुझे निकाह की रस्म में शामिल होना पड़ा।

असलम : और—और वहाँ मुल्ला साहब भी थे ?

मजीद : कौन से मुल्ला साहब ?

असलम : अरे भई वही, जो निकाह पढ़वाते हैं।

मजीद : उनके बिना निकाह कैसे हो सकता है ? कहीं तुम्हारा दिमाग तो नहीं बहक गया ? निकाह पढ़ने के वक्त जो कुछ हुआ करता है हुआ, जावेद ने सेहरा पहन रखा था और···

अल्ताफ़ : छुहारे भी बाँटे गए। और क्या वह इलायचीदाने भी थे ? एक-दूसरे का कबूल हुआ होगा और जावेद ने तीन बार सिर हिलाकर हाँ भी की होगी ?

असलम : क्यों नहीं ?

अल्ताफ़ : (ऊँची आवाज़ में) वह मारा—असलम, मार लिया जावेद को—अगर यह खबर सच है तो बन्दे को नाचने में भी कोई एतराज़ नहीं। मजीद, भई खुदा की कसम, क्या खबर सुनाई है तुमने—दिल बाग-बाग कर दिया। अब वह है कहाँ··· गुजराँवाला ही में है ? क्या इस वक्त कोई गाड़ी उधर जाती है ? मैं यह देखना चाहता हूँ कि वह अब हमसे आँख कैसे मिलाता है ? कहाँ गया जनाब का वह फ़लसफ़ा ? क्यों असलम, क्या फ़रमा रहे थे जनाब उस दिन ? ये शादी-ब्याह की रस्में क्या हैं ? और सरकार ने सेहरा भी लगाया···माँयों भी बैठे होंगे···(हँसता है—ज़ोर-ज़ोर से हँसता है) लेकिन अब मालूम यह करना है कि हज़रत हैं कहाँ ? उनसे कहाँ मुलाकात हो सकती है ?

असलम : क्यों मजीद, क्या तुम उसका पता बता सकते हो—लेकिन मैं हैरान हूँ वह गुजराँवाला कैसे पहुँच गया और यह—यह निकाह कैसे हो गया ?

मजीद : कैसी बहकी-बहकी बात करते हो—निकाह कैसे हो गया ? तुम्हारा निकाह कैसे हुआ था और—और तुम्हारी शादी कैसे हुई थी ?

असलम : छोड़ो इस बहस को। तुम नहीं जानते कि हम इस कदर हैरान क्यों हो रहे हैं—तुम सिर्फ़ इतना बताओ कि वह आजकल है कहाँ ?

मजीद : मैं जब गुजराँवाला से वापस आ रहा था तो वह कहीं जाने की तैयारियाँ कर रहा था, क्योंकि जो शादी के लिए इन्तज़ाम करना था···हाँ, मैं तुमको यह बताना तो भूल ही गया कि उसकी शादी एक जनवरी को हो रही है। यानी नये साल के शुरू के साथ ही उसकी नयी ज़िन्दगी भी शुरू हो जाएगी।

असलम : तो··· पहली जनवरी से पहले हम उससे नहीं मिल सकते···मगर तुम्हें इन सब

बातों का पता भी तो नहीं···अल्ताफ़, तुम इत्मीनान रखो, मैं सब खोज लगा लूँगा।

अल्ताफ़ : असलम, वह हमसे बचकर जाएगा कहाँ ?

[कदमों की चाप]

जावेद : मैं खुद हाज़िर हो गया हूँ।

असलम : जावेद !

अल्ताफ़ : जावेद !

मजीद : लो भई, जावेद तो खुद ही आ गया—इधर आओ यार, इन दोनों की ऊट-पटाँग बातों ने तो मुझे परेशान कर दिया है। तुम्हारे निकाह का इनको यकीन ही नहीं आता और फिर जाने क्या-क्या बातें की हैं इन्होंने। कब आए गुजराँवाला से ?

असलम : तो जनाब का निकाह हो गया ?

जावेद : (**गम्भीरता से**) जी हाँ।

अल्ताफ़ : मुल्ला साहब भी तशरीफ़ लाए थे ?

जावेद : जी हाँ, वह भी तशरीफ़ लाए थे।

असलम : माँयों भी बैठे होंगे आप ?

जावेद : जी हाँ।

असलम : और···और···

जावेद : जी हाँ।

असलम : यानी···यानी···

जावेद : जी हाँ।

अल्ताफ़ : तो···तो···गोया आप उस ऊँचे मीनार से नीचे तशरीफ़ ले आए हैं जहाँ बैठ-कर आप हम लोगों को देखा करते थे, यानी अब आपने भी लखलखा सूंघ लिया है ?

जावेद : जी हाँ।

असलम : अब आप यह फ़रमाइए कि एक ज़माने के बाद आपका यहाँ आना कैसे हुआ ?

जावेद : आपसे वोह सौ रुपये वापस लेने के लिए जो अर्सा हुआ आपने मुझसे कर्ज़ लिए थे। आपने कहा था जब तुम्हें जरूरत होगी मैं यह रकम वापस कर दूंगा।

असलम : जनाब को अपनी शादी के लिए यह रकम चाहिए—अपनी शादी के लिए, जो कि आज से कुछ अर्सा पहले आपके नज़दीक एक ऊलजलूल चीज़ थी।

जावेद : जी नहीं। मुझे ये रुपये अपनी शादी के लिए नहीं चाहिए। इससे भी ज़्यादा ज़रूरी काम मुझे इन रुपयों से निकालना है।

अल्ताफ़ : वह ज़रूरी काम क्या है ?

जावेद : मैं एक लड़की को अगुआ कर रहा हूँ—परसों रात मैं उसे भगाकर ले जाऊंगा

और ज़ाहिर है कि मुझे उस काम के लिए रुपयों की बहुत ज़रूरत है।

मजीद : और···और···वह तुम्हारी शादी···उस लड़की का क्या होगा जिसको तुम निकाह के बन्धन में बाँध चुके हो ?

असलम : (हँसकर) तो जनाब किसी लड़की को परसों अगुआ करने का इरादा रखते हैं ?

जावेद : जी हाँ—लड़की बिलकुल तैयार है और मैं भी बिलकुल तैयार हूँ। लेकिन इसके बावजूद हम उसे अगुआ ही कहेंगे—इसलिए कि अल्ताफ़ साहब और असलम साहब भी मेरे इस काम को अगुआ ही नाम देंगे।

असलम : आपकी यह गुफ़्तगू भी अगुआ से कम खतरनाक नहीं।

जावेद : तो लीजिए, मैं अपनी ज़ुबान बन्द करता हूँ—मेहरबानी करके वे सौ रुपये मुझे दे दीजिए ताकि मैं चला जाऊँ। मैं यहाँ ज़्यादा देर ठहरकर आप लोगों के दिमाग पर अगुआई कैफ़ियत छा जाने देना नहीं चाहता।

अल्ताफ़ : तुम बहुत रूखे हो गए हो जावेद !

असलम : तुम्हारे लहजे में यह तल्खी कहाँ से आ गयी ?

अल्ताफ़ : अपनी रामकहानी तो सुनाओ—इस दौरान तुम पर क्या-क्या बीती—बैठ जाओ—और—असलम, तुमने गौर किया, किस कदर दुबला हो गया है जावेद—जावेद, क्या हो गया है तुम्हें ?

मजीद : मैंने पिछले दिनों गुजरांवाला में जब इन्हें देखा तो यह इतने दुबले नहीं थे—अब तो···

जावेद : वे सौ रुपये आपने अभी तक मुझे नहीं दिए···शायद आपने मेरी बात पर यकीन नहीं किया—मैं सच कहता हूँ, परसों मुझे एक लड़की को अगुआ करके ले जाना है। और मेरे पास ज़्यादा वक्त नहीं जो मैं बेकार ज़ाया कर सकूं।

असलम : रुपये मेरी जेब में हैं···मैं अभी निकाले देता हूँ···रुपये ले लो, फिर बातें करेंगे ···(नोटों की खड़खड़ाहट—थोड़ा अन्तराल) सत्तर, अस्सी, नब्बे, और यह सौ। दस नोट हैं दस-दस के—लो।

जावेद : शुक्रिया—बहुत-बहुत शुक्रिया—अच्छा, अब मैं रुखसत चाहता हूँ।

असलम : चले जाओगे ?

अल्ताफ़ : कुछ देर ठहरोगे नहीं ?

मजीद : यह मामला क्या है ?

असलम : जावेद !

अल्ताफ़ : जावेद !

जावेद : मैं चला—लेकिन तुम दुआ करो कि खुदा मुझे कामयाबी दे।

[थोड़ा अन्तराल—एक सन्नाटा छाया रहता है।]

असलम : आज तारीख क्या है ?

मजीद : दस दिसम्बर ।

[अन्तराल]

अब्बास : आज दिसम्बर की तीस तारीख है—खुदा के लिए सोचो कि हम पर मुसीबत का कितना बड़ा पहाड़ टूट पड़ा है । इन तीन दिनों में हम क्या कर सकते हैं ? कुछ भी नहीं । दस रोज़ से लगातार हम उसे तलाश कर रहे हैं । मगर···मगर··· मैं अब क्या करूँ···किसी ने सच कहा है कि···

जमील : मैं खुद हैरान हूँ अब्बास---उससे मुझे यह उम्मीद हरगिज़ नहीं थी—मैं तो कहता हूँ कि अभी खामोश रहो—शायद···

अब्बास : नहीं, अब ज्यादा देर तक मुझसे खामोश नहीं रहा जाएगा । वालिद साहब की भी यही राय है कि जावेद साहब से सबकुछ कह दिया जाए । उसको अन्धेरे में रखना बहुत बड़ा ज़ुल्म है—मैंने इसीलिए तुम्हें यहाँ गुजराँवाला आने की तकलीफ़ दी है कि तुम वापस जाकर मजीद को सारी बात समझा दो । मजीद को मैंने यहाँ बुलवा लिया होता मगर उसको दफ़्तर से छुट्टी नहीं मिल सकती । मजीद जावेद को समझा देगा । आदमी शरीफ़ है । सुनकर खामोश हो जाएगा और शोर नहीं मचाएगा—अब तुम खुद ही गौर करो कि इसके सिवा और चारा ही क्या है ? ये हमारे नसीब हैं कि उसने हमारी नाक कटवाई ।

जमील : जो तुमने कहा है, मैं बड़े अच्छे तरीके से मजीद को समझा दूंगा—पर क्या यह बेहतर न होगा कि अभी एक-दो दिन और देख लिया जाए ?

अब्बास : क्या देख लिया जाए ? यह दिन देखना था सो देख लिया—नहीं जमील, यह तय है कि जावेद को सबकुछ बता दिया जाए ।

[नौकर का आना]

नौकर : एक साहब तशरीफ़ लाए हैं । आपसे मिलना चाहते हैं ।

अब्बास : कौन है ? कह दो, अब्बास घर पर नहीं ।

नौकर : बहुत अच्छा जनाब—यह कार्ड ले लीजिएगा उनका ।

[थोड़ा अन्तराल]

जमील : अरे भई, यह तो असलम है···नौकर को जल्द वापस बुलाओ ।

अब्बास : गुलखान-गुलखान—कौन, असलम ?—गुलखान, बात सुनो ।

जमील : असलम—वही असलम, जो लाहौर में हमारे साथ पढ़ता था—भई वाह, इतनी जल्दी भूल गए—तुम्हारी उसके साथ खतोकिताबत भी तो है ।

अब्बास : गुलखान—जाओ, उसको अन्दर ले आओ—मगर जमील, यह वही असलम है या कोई और है···और देखो, अगर वही है तो उससे कोई बात न करना । लेकिन अगर उसने पूछा कि शादी कब हो रही है तो मैं क्या जवाब दूंगा ?··· मेरी जान किस कदर मुसीबत में फँस गयी है ।···मैं तुमसे क्या कहूँ जमील,

वालदा ने तो अपना बुरा हाल कर रखा है···समझ में नहीं आता यह एकाएक क्या हो गया···

जमील : लो, वह असलम आ गया—आओ भई असलम···कैसे आये ?

अब्बास : आइए-आइए। तशरीफ़ लाइए। पर आने से पहले अपनी आमद से आगाह तो कर दिया होता···यहाँ···यहाँ···आप किसके पास ठहरे हैं···यानी क्या मेरा घर नहीं था···अभी परसों ही तो आपका खत मुझे मिला है। उसमें लिख दिया होता ···तशरीफ़ रखिए···हाँ···हाँ···तो मैं क्या कह रहा था···बात दरअसल यह हुई असलम साहब कि मैं···कि मैं बहुत परेशान रहा। यही वजह है कि मैं आपके खत का जवाब न दे सका।

असलम : कोई हर्ज़ नहीं और अपने आने की खबर देने के बारे में यह अर्ज़ है कि मुझे मालूम नहीं था कि मैं इतनी जल्दी इधर आ निकलूंगा···किस्सा यह है कि मुझे कल जावेद का खत मिला था। चुनाँचे मुझे फ़ौरन ही इधर का रुख करना पड़ा।

अब्बास : तो···तो···आपको मालूम है ?

असलम : जी हाँ।···और मेरी अक्ल काम नहीं करती कि उसने यह क्या हिमाकत की ?

जमील : देखो असलम ! अब जो कुछ होना था हो चुका···खुदा के लिए यह बात अब फैलने न पाए। तुम जानते हो इसमें एक बड़े खानदान की इज़्ज़त का सवाल है और अब्बास हमारा दोस्त है। लेकिन तुम यह बताओ कि जावेद ने अपने खत में तुम्हें क्या लिखा है···उसने उस अफ़सोसनाक वाकिया को किस रंग में देखा है ?

असलम : मैं कुछ समझ न सका, तुमने क्या कहा है···जावेद अपनी हिमाकतों को हमेशा ही से अजीबोगरीब रंग में देखता रहा है जो कि उसकी सबसे बड़ी हिमाकत है। ···मगर इस वाकिया ने तो मेरे होश गुम कर दिए हैं···यह बात किसके ज़हन में आ सकती थी ?

अब्बास : मैं आपका मतलब नहीं समझा—जावेद साहब ने क्या किया है ?

असलम : उसका खत पढ़ लीजिए··· (**कागज़ की खड़खड़ाहट**) जमील, मैं तुमसे क्या कहूँ—जावेद जैसा अजीबोगरीब आदमी दुनिया में फिर कभी पैदा न हो।

अब्बास : (**तुतलाकर**) यह···यह···यह···यह क्या किया जावेद साहब ने ?···यानी ···यानी···इसकी ज़रूरत ही क्या थी ? और हम दस दिन से अपनी खोज लगा रहे हैं—खाना-पीना और रात की नींद हम पर हराम रही है···मैं पूछता हूँ, इसमें उन्होंने क्या फ़ायदा देखा ?

असलम : यही तो मैं भी सोचता हूँ—निकाह हो चुका था। बीवी उसकी थी। वह जब चाहता उसे अपने घर ले जाता मगर यह अगुआ करने की ज़रूरत उसे क्यों महसूस हुई ? रात को वह उसे भगाकर क्यों ले गया ? और जैसा कि आप कहते हैं, आपको कुछ पता नहीं—खुदा जाने आपने यह दिन किस तरह गुज़ारे होंगे और वह—और वह—अब मैं उसको क्या कहूँ ?

अब्बास : टेढ़ी लकीर—यह देखिए न, खत पर टेढ़ी लकीरें खिची हुई हैं—इसका क्या मतलब है ?

तैमूर की मौत

पात्र

तैमूर
फ़रिश्ता-ए-मौत
सराये खानम
शाह-ए-मुल्क
चोबदार
मुहम्मद जलद
खलील सुल्तान
फ़ज़रुल्ला तबरेज़ी
नूरुद्दीन

[पाँच सौ वर्ष से कुछ अधिक समय हुआ है, जब एक आदमी ने सारी दुनिया पर काबिज़ होना चाहा। जिस काम में उसने हाथ डाला, कामयाब हुआ। आधी दुनिया से अधिक लश्करों को उसने एक के बाद दूसरे को नीचा दिखाया। कई शहरों को नींव समेत उखाड़ फेंका। उनकी ईंट से ईंट बजा दी।···कई सल्तनतों की दौलत अपने कब्ज़े में लाया और जिस तरह चाहा उसे खर्च किया। पहाड़ों की चोटियाँ काट-काटकर उन पर आरामगाहें बनाईं···दरियाओं के रुख बदल डाले। सड़कें और रास्ते बनाकर दो महाद्वीपों की तिज़ारत का माल उन पर से गुज़रने लगा। उस बर्बर युद्धप्रिय आदमी को हम तैमूरलैन या तैमूरलंग के नाम से याद करते हैं।

एशिया उसको अच्छी तरह जानता है। उस पर नाज़ भी करता है और अफ़सोस भी। कुछ लोग उसे 'गर्ग-ए-स्याह' भी कहते हैं मगर कुछ ऐसे भी हैं जो उसे 'शेर जयां' और 'गितीसतान' के खिताब से याद करते हैं। मशहूर शायर मिल्टन ने गजाजील की शानदार तसवीर में जो भयानक रंग भरे हैं, मालूम होता है, तैमूर के किस्सों पर गौर करने के बाद ही उसकी कलम में बला का ज़ोर आया था।

शायरों ने इस बर्बर इन्सान पर कल्पनाएं कीं, मगर इतिहासकारों पर खामोशी छायी रही कि वे तैमूर को किस खाने में मानें। वह किसी शाही खान-दान से ताल्लुक नहीं रखता था लेकिन अपने व्यक्तित्व से अलबत्ता वह एक

खानदान की नींव डाल गया। विनाशकारी था, ढहाने और गिराने वाला था। मगर जब बनाने की तरफ़ झुका तो उसने अनुपम इमारतें बनवायीं। सिकन्दर की तरह किसी बादशाह का लड़का नहीं था और न चंगेज़ की तरह किसी लाव-लश्कर वाले का वारिस। विजेता सिकन्दर के पास मकदूनियाँ के लोग और चंगेज़ के पास लड़ाकू गिरोह शुरू से मौजूद थे। मगर तैमूर ने खुद अपने लिए एक कौम बना ली।

असीम दर्जे की नफ़रत और असीम दर्जे की मुहब्बत जैसी तैमूर के साथ ज़ाहिर की गयी है, किसी दूसरे बादशाह के साथ ज़ाहिर नहीं हुई। तैमूर के दरबार में दो बड़े इतिहासकार हुए हैं। एक ने उसको शैतान बताया है और दूसरे ने उसके बारे में लिखा है कि उस जैसा महान् कभी पैदा नहीं हुआ। इब्ने अरब शाह लिखता है कि वह एक बेरहम कातिल, मकर-व-फ़रेब में उस्ताद, प्रतिहिंसा और प्रतिकार लेने में खुदा का कहर था।

शर्फ़ुद्दीन लिखते हैं कि साहस और दुःसाहस ने उसको तमाम तातारी शहंशाही पर ताजदार बनाया और तमाम एशिया को उसके सामने झुका दिया।

तैमूर यद्यपि दुनिया के बड़े लड़ाकुओं में बहुत बड़ा दर्जा रखता था, लेकिन बादशाहों में वह निकृष्ट बादशाह था। लायक, बहादुर था, उदार था, लेकिन शोहरत का इच्छुक, कठोर और ज़ालिम। अपनी निजी शान व शौकत के मुकाबले में वह दूसरे इन्सानों की खुशी को रत्ती-भर महत्त्व न देता था। उसकी निजी शोहरत ने उसकी शक्ति के आलीशान महल को सलामत रखा। लेकिन जब वह मरा तो यह महल भी उसके साथ ही गिर पड़ा—उसकी सल्तनत उसकी मौत के साथ ही मिट गयी।

इस संक्षिप्त खाके में, जो हम अब आपकी खिदमत में पेश करेंगे, तैमूरलंग की ज़िन्दगी के अन्तिम अध्याय की झलक दिखाई दे जाएगी, जब कि मौत उसके दरवाज़े पर दस्तक दिया चाहती है।]

फ़रिश्ता-ए-मौत (यमदूत) : (मोटी और डरावनी आवाज़ में) तैमूर, इधर देखो, ये लाशें पहचानते हो ?

तैमूर : (बेपरवाही से) लाशें, किसकी लाशें ?

फ़रिश्ता-ए-मौत : देखो, यह लाश किसकी है ? पहचानते हो ?

तैमूर : पहचानता हूँ—यह मेरे बड़े बेटे जहाँगीर की लाश है। मगर उसको मरे तो एक ज़माना हो चुका है।

फ़रिश्ता-ए-मौत : (हँसता है) और यह ?

तैमूर : यह उमर शेख की लाश है। मगर उसको मरे भी एक मुद्दत हो चुकी है।

फ़रिश्ता-ए-मौत : (हँसता है) यह···

तैमूर : मेरा पोता अमीरज़ादा मुहम्मद सुल्तान है। ज़ालिम मौत ने इसको भी न छोड़ा। बड़ा दिलेर था, बहादुर था। तमाम लश्कर इसको पूजता था। मुझे इसकी मौत

पर बहुत अफ़सोस हुआ था। (अन्तराल के बाद) इस नौजवान शाहज़ादे ने इकबाल और फ़तह की हालत में दुनिया से विदा ली (आह भरकर) वही फ़ौजें जो यह मरहूम समरकंद से अपने साथ लेकर गया था, अपने सरदार की लाश अपने कंधों पर उठाकर समरकंद वापस आयीं—रंगीन परचमों की जगह मातमी झण्डे थे—उसका मैंने ज्यादा खयाल न किया। लेकिन जब मरने वाले के दूधपीते बच्चे मेरे सामने लाए गए तो मुझे सख्त सदमा हुआ और कई दिन तक अपने खेमे से बाहर न निकला।

फ़रिश्ता-ए-मौत : (हँसता है) क्या अब भी तुम्हें मालूम नहीं हुआ कि तुमसे बढ़कर भी दुनिया में कोई शक्ति मौजूद है? ऐसी शक्ति जिसने तुम्हारे बेहतरीन साथियों को तुमसे हमेशा के लिए अलग कर दिया है? तुम्हारे शुरू ज़माने के बड़े-बड़े अमीर आज कब्रों में बेखबर सो रहे हैं—हाजी शेख सैफ़ुद्दीन कहाँ है? तुम्हारा वह जां-निसार जकोबरलास कहाँ है? अमीरज़ादा मुहम्मद सुल्तान, तुम्हारे बेटे रशीद का कलेजे का टुकड़ा, कहाँ है जिस पर तुम्हें इतना नाज़ है और तुम्हारा वह वफ़ादार और नमकहलाल अमीर आफ़ाबोगा कहाँ है जिसकी खिदमत के बदले में तुमने हरात की हकूमत उसको बख्श दी थी? कहाँ हैं ये सब लोग? तुमने जब अपने पोते मुहम्मद की बीमारी की खबर सुनी थी तो भागे-भागे उसके पास गए थे, जैसे तुम्हारे आने से यमदूत अपने पर समेटकर एक कोने में दुबक जाएगा। लेकिन मरीज़ की ज़ुबान ऐसी बन्द हुई कि आखिरी दम तक न खुली। वह तुमसे बात तक न कर सका। (पागलपन जैसी हँसी हँसता है।)

तैमूर : (घबराकर जागता है) बन्द करो इस हँसी को—बन्द करो इस शैतानी हँसी को—यह कौन है?

सराये खानम : क्या हज़रत साहब-ए-कुरान ने आज फिर कोई डरावना सपना देखा?

तैमूर : (अन्तराल के बाद) हाँ—जब से हम अपने पोते की लाश समरकंद से लेकर आए हैं, अजीब-अजीब सपने देखने से हमारी नींद खराब हो गयी है। सराये खानम, कुछ समझ में नहीं आता कि ये सपने हमें क्यों सता रहे हैं? क्या हम बूढ़े तो नहीं हो गए?

सराये खानम : (हँसती है) अमीर गौरगान जो आधी दुनिया फ़तह कर चुका है, कैसे बूढ़ा हो सकता है—और अभी तो आधी दुनिया बाकी है जो हुज़ूर के कदमों की छाप से खाली है।

तैमूर : तुम ठीक कहती हो सराये खानम! आधी दुनिया बाकी है, जो हमारे कदमों की छाप से खाली है। (हँसता है) जो आदमी एक बार पाँव रकाब में रखता है, उसे काठी पर पहुँचना ही पड़ता है। अभी तो हमने रकाब ही में पाँव रखा है। काठी पर पहुँचना अभी बाकी है।

सराये खानम : काठी मुल्क चीन ही हो सकती है। डरावने सपने आप यूं ही नहीं देखते रहे।

तैमूर : तुम बला की समझदार हो सराये खानम। कई दिनों से हम खाकान चंगेज़ी

सपने में देख रहे हैं—जानती हो तुम, ये वे लोग हैं जो अपने बड़े-बड़े लश्कर लेकर मुल्क चीन में पहुँचे थे। कल रात हमने अपने वालिद साहब को देखा था—वह मुझसे कह रहे थे···

सराये खानम : (दिलचस्पी लेते हुए) क्या कह रहे थे ?

तैमूर : उन्होंने अपने कबीले के फ़ौजी अमीरों की दास्तानें हमें सुनाईं कि किस तरह मवेशियों और लश्करों के साथ वह गश्त किया करते थे—पहाड़ों पर जब बर्फ़ गिरती तो नीचे उतर आते और जब बर्फ़ पिघलती तो फिर पहाड़ों पर पहुँच जाते। कारवां की सड़कों पर कमीनगाहों में बैठ जाते और अपने झण्डे के साए में, जिस पर सींग बने होते थे, चलते-चलते चीन तक पहुँच जाते। पूरा कबीला पाँच सौ मील पहाड़ी ज़मीन पर दो-दो महीने तक सैर व शिकार में लगा रहता। उन्होंने सफ़ेद घोड़ों की कुर्बानी का भी ज़िक्र किया जो कबीले के सरदार की कब्र पर ज़बह किए जाते हैं—ये घोड़े आसमान के दरवाज़े में, जहाँ शमाल के सितारे रौशन होते हैं, दाखिल हो जाते थे ताकि उन रूहों की खिदमत करें जो आसमानों से भी ऊपर किसी तबके में रहती हैं।

फिर उन्होंने मुल्क खता की उन शाहज़ादियों का नाम लिया जो अपने मुल्क से खाकान-ए-तातार के पास ब्याही आयी थीं और दहेज में हरीर व कतान और ऑज की चीज़ें गाड़ियों में भरकर साथ लायी थीं।—फिर उन्होंने मुझे यह भी बताया कि ज़फ़रमंद खाकान-ए-तातार जिस प्याले से मुँह लगाकर घोड़े का दूध पीते थे वह दुश्मन की खोपड़ी का होता था और उस पर सोना मढ़ा होता था। (**अन्तराल के बाद**) सराये खानम, दश्ते शामू की अब ऐसी कल्पना बँधी है कि एक लमहे के लिए भी यह दिमाग से नहीं निकलता।

सराये खानम : हिन्दुस्तान की हुकूमत आप अपने पोते मुहम्मद सुल्तान के भाई के हवाले कर चुके हैं और खुरासान की हुकूमत शाह रुख को दे चुके हैं। आपकी परेशानियाँ अब बहुत हद तक कम हो गयी हैं। मुल्क चीन पर चढ़ाई कर दीजिए।

तैमूर : यही सोच रहे हैं—सिर्फ़ यही एक सल्तनत ऐसी रह गयी है जो हमारा मुकाबला कर सकती है। यानी जिसको हराने में हम खुशी महसूस कर सकते हैं।

[किसी सरदार या अमीर पर तैमूर ने अपने इस इरादे को ज़ाहिर न किया। जाड़े का ज़माना था। इसलिए मजबूर होकर जितनी फ़ौज तबरीज़ की छावनी में थी, वही रहने दी। लड़ाइयों से जो इन्तज़ाम खराब हो गया था उसको ठीक करने के लिए तबरीज़ में कुछ देर बने रहे। लेकिन बहार के आते ही जब ज़मीन पर वनस्पतियाँ उभरने लगीं वह मशरिक की तरफ़ समरकन्द जाने के लिए अपने लश्कर और दरबारियों के साथ रवाना हो गया। अगस्त के महीने में समरकन्द आकर बाग में ठहरा। जामा मस्जिद, जो नयी-नयी बनकर तैयार हुई थी, उसका मुआयना किया।]

तैमूर : (गुस्से की हालत में) मीर-ए-इमारात को अभी तक हमारी खिदमत में क्यों हाज़िर नहीं किया गया ?

[अन्तराल]

तैमूर : हमने तुमसे कुछ कहा था, शाह-ए-मुल्क !

शाह-ए-मुल्क : हज़रत साहब, कुरान गौरगान-ए-आज़म के हुक्म की तामील हुआ ही चाहती है—मीर-ए-इमारात बस हाज़िर हुआ ही चाहते हैं।

तैमूर : उस नाबकार ने मस्जिद का सत्यानाश कर दिया है। हमारा खयाल था कि वह अपने फ़न में खूब महारत रखता होगा मगर उसकी बनायी मस्जिद देखकर हमें मालूम हुआ कि वह फ़न-ए-तामीर में बिलकुल कोरा है। उस कमबख्त ने अन्दर के दालानों को ज्यादा वसीह क्यों नहीं किया ? मुहम्मद जलद कहाँ है ? यह सब उसकी गफ़लत का नतीजा है। हमने तामीर का यह तमाम काम इसलिए उसके सुपुर्द किया था कि वह अपनी देखरेख में हमारी मर्ज़ी के मुताबिक मस्जिद बनवाये। मगर वह बिलकुल नाकारा साबित हुआ।

चोबदार : हुज़ूर, मुहम्मद जलद कदमबोसी की इजाज़त चाहते हैं।

तैमूर : अच्छा, हाज़िर होने दो।

[अन्तराल]

तैमूर : हमारी समझ में नहीं आता कि उसने दालानों को ज्यादा लम्बा-चौड़ा क्यों न किया ?

मुहम्मद जलद : गुलाम कोर्निश बजा लाता है, हज़रत साहब-ए-कुरान।

तैमूर : तुम्हारी कोर्निश कबूल नहीं की जा सकती, इसलिए कि तुमने हमारे हुक्मों के मुताबिक मस्जिद तैयार नहीं कराई—तुमने यकीनन अपनी मर्ज़ी को हमारे हुक्मों से ऊपर रखा और ऐसी हुक्मउदूली की सज़ा तुम समझते ही हो, बहुत कड़ी हुआ करती है।

मुहम्मद जलद : मगर आलीजाह···

तैमूर : हम कोई उज्र सुनने के लिए तैयार नहीं—हम तुम्हें इस मस्जिद का नक्शा अच्छी तरह समझा चुके थे जो हमने हिन्दुस्तान में देखी थी। उसी नक्शे के मुताबिक तुम्हें एक मस्जिद समरकंद में तैयार करने के लिए हमने हुक्म दिया था। इसका तुम्हारे पास क्या जवाब है कि दालान इतने छोटे क्यों बनवाये गए हैं ? क्या तुम इस काम को, जिसका हमने कल मुआयना किया है, सनते इमारतगरी का बेहतरीन नमूना समझते हो ? क्या इस किस्म की इमारत पेश करके तुम हमारी दाद चाहते थे ?

मुहम्मद जलद : आलीजाह, गुलाम का अब भी यही खयाल है, चाहे वह गलत ही हो कि यह मस्जिद हमारे मेमारों की सनत का बेहतरीन नमूना है। गुलाम अगर इस खयाल के मुताबिक दाद पाने की ख्वाहिश रखता हो तो कसूर उस खयाल का है।

तैमूर : चूंकि खयाल तुम्हारा है और अभी तक उस खयाल को अपने दिमाग में पाल रहे हो, इसलिए तुम और तुम्हारा खयाल दोनों हमेशा के लिए मिट जाने चाहिए। तुम अब जा सकते हो।

मुहम्मद जलद : बहुत अच्छा, आलीजाह !

[अन्तराल]

तैमूर : शाह-ए-मुल्क !

शाह-ए-मुल्क : इरशाद हज़रत साहब-ए-कुरान !

तैमूर : मुहम्मद जलद की तमाम जायदाद अमलाक गौरगान-आलम के हक से ज़ब्त कर ली जाए।

शाह-ए-मुल्क : हज़रत साहब-ए-कुरान के हुक्म की तामील हो जाएगी।

तैमूर : और मुहम्मद जलद, उसके लिए हम मौत की सज़ा तजवीज़ करते हैं कि वह इसी लायक है।

[उस ज़माने में तैमूर ने उन वज़ीरों का काम भी देखा जिन्हें अपनी गैरहाज़िरी में वह हुकूमत का काम सौंप गया था। किसी को इनाम दिया और किसी को फाँसी पर चढ़वाया। हकीकत यह है कि दिल की वह ताकत हैरतअंगेज़ होगी जिसने इस बुढ़ापे के जिस्म को ज़िन्दा रखा था—तैमूर को इसकी ज़रा भी परवाह न थी कि उसका क्या वक्त है। दो साल से नज़र कम होती जाती थी। आँखों के पपोटे ऐसे गिरे रहते थे कि मालूम होता था कि सो रहा है। उम्र उस वक्त एक कम सत्तर की हो चुकी थी—उस ज़माने में फ़रमान जारी किया कि एक जश्न जारी किया जाए पूरे दो महीने तक और कोई किसी से न पूछे कि यह जश्न किस-लिए किया जा रहा है। चुनाँचे बड़ी शान और बड़े कायदे के साथ जश्नों और दावतों का सिलसिला जारी हुआ और दो महीने तक जब धुँधला सूरज समरकंद के नीले पहाड़ों के पीछे छुपता था तो तमाम समरकंद एक विशाल रंगभूमि मालूम होता था।

जश्न का ज़माना खत्म हुआ तो तैमूर ने शाहज़ादों और अमीरों की एक मजलिस बुलाई।]

तैमूर : (ऊँची आवाज़ में) हमने तमाम एशिया को सिवाय चीन के फ़तह कर लिया है। हमने ऐसे बड़े-बड़े बादशाहों के सिर नीचे किए हैं कि हमारे कारनामे दुनिया में हमेशा याद रहेंगे। तुम लोगों ने बहुत-सी लड़ाइयों में हमारा साथ दिया है और कभी ऐसा न हुआ कि तुम्हें फ़तह न हुई हो। चीन हमारा शिकार है, उसको फ़तह करने के लिए बड़े ज़ोर और ताकत की ज़रूरत नहीं। बस, अब तुम मुल्क चीन को हमारे साथ चलो। फ़तह और कामयाबी हमारे आगे-आगे वहाँ पहुँच चुकी है। हम अपने बुज़ुर्गों के रास्ते और दीवार-ए-चीन से होते हुए मुल्क चीन में पहुँचेंगे। दो लाख का लश्कर समरकंद में जमा हो जाएगा। उसे हम अलग-अलग रास्तों में

बाँट देंगे और उन छावनियों की तरफ़ रवाना होंगे जो चीन की सड़क के किनारे हमने बनवा रखी हैं। जाड़े के खत्म होने और बहार के आने का इन्तज़ार हम मुनासिब नहीं समझते। बहार का मौसम वहीं चीन में हम अपनी फ़तह की खुशी में गुज़ारेंगे। लश्कर के एक हिस्से की कमान हम खलील सुल्तान के सुपुर्द करते हैं। दूसरे हिस्से को, जिसे अमीरज़ादा मुहम्मद सुल्तान अपने साथ लेकर निकला करता था, हम खुद लेकर चलेंगे। साथ रसद का सामान बहुत ज्यादा होना चाहिए ताकि सिपाहियों के लिए किसी चीज़ की कमी न हो।

[लश्कर ने समरकंद का दरिया यानी 'आबे राफ़शां' पार किया। तैमूर घोड़े पर सवार था। पहलू बदलकर उसने शहर की तरफ़ देखा। मगर नज़र इतनी न रही थी कि उसके बुर्ज और मीनार नज़र आते—नवम्बर का महीना था। जाड़ा बहुत ज़ोर पर था। जब समरकन्द से आगे एक पहाड़ी दर्रे में से गुज़रकर लश्कर आगे बढ़ा तो बर्फ़ गिरनी शुरू हुई। हवाएँ उत्तरी इलाकों से उठ-उठकर मैदानों में तेज़ी के साथ चलने लगीं। कुहरे और काले बादलों ने फ़िज़ाँ को अँधेरा कर दिया। जब फ़ौजें कुछ और आगे बढ़ीं तो तमाम दुनिया बर्फ़ से सफ़ेद नजर आयी। दरियाओं और नदियों का पानी जम गया था—सड़कों पर बर्फ़ के तोंदे गिरने लगे थे। आदमी और घोड़े सर्दी से मरने शुरू हुए।]

खलील सुल्तान : बर्फ़ से बचाव के लिए मैंने ताशकन्द के पास फूस के मकान बनवाये हैं। मेरा लश्कर उन्हीं मकानों में उतरा है। हज़रत साहब-ए-कुरान भी वहीं तशरीफ़ ले चलें।

तैमूर : नहीं अमीरज़ादा खलील सुल्तान, हम वहाँ नहीं जाएँगे।

खलील सुल्तान : हज़रत साहब-ए-कुरान, बर्फ़ का गिरना नाकाबिल-ए-बरदाश्त हद तक ज़्यादा हो गया है। गाड़ियों और ऊँटों की कतारें जो सफ़ेद ज़मीन पर एक लकीर-सी मालूम होती हैं, आगे नहीं बढ़ सकेंगी। सारा दरिया आजकल बर्फ़ से ढका है। तीन गज़ मोटी बर्फ़ की चादर उसकी सतह पर जमी हुई है।

तैमूर : तो क्या हुआ ?

खलील सुल्तान : उस दरिया को पार करना बहुत मुश्किल है।

तैमूर : मगर नामुमकिन तो नहीं ?

खलील सुल्तान : ठीक है हज़रत साहब-ए-कुरान, मगर बर्फ़ की इन सिलों को काटना बड़ा मुश्किल काम है। सर्दी इतनी ज़्यादा है कि रगों में खून जमा जा रहा है।

तैमूर : कई साल हुए सीर और वोह पर हमला करते वक्त भी हमें ऐसी बर्फ़ानी सिलों का सामना करना पड़ा था, मगर सफ़र बराबर जारी रखा गया।

खलील सुल्तान : हज़रत साहब-ए-कुरान, मैं एक बार फिर अर्ज़ करना चाहता हूँ कि सर्दी बड़ी बेरहमी से हर चीज़ को गारत करने पर तुली हुई है। बर्फ़बारी और ओलाबारी और बारिशों की इन्तहा नहीं रही है—तिरछे सूरज की ज़र्द रोशनी बर्फ़ की सतह पर चमकती है मगर उसकी गर्मी नहीं। आपने जो नमदे के खेमे

लगाए हैं वे भी इस गज़बनाक सर्दी का मुकाबला नहीं कर सके—हज़ारों मवेशी मर गए हैं। सैकड़ों सिपाही मौत की ठण्डी गोद में सो चुके हैं।

तैमूर : खलील सुल्तान, तुम हमारे बेटे के बेटे हो, सलाह और नसीहत का यह दफ़्तर बन्द रखो। सुनो ! जब रास्ते साफ़ हो जाएँ तो अपनी फ़ौज को फ़ौरन लेकर 'अतरार' में कुछ देर आराम करेंगे और बहार के शुरू होते ही जब सर्दी में ज़रा-सी कमी होगी, आगे बढ़ जाएँगे।

[उस हुक्म के मुताबिक मार्च, 1405 का आना था कि तैमूर का लश्कर उठा और चला परचम लहराये। फरेरे उड़ने लगे। गोरख की आवाज़ बुलन्द हुई। फ़ौजों ने मुआयने के लिए कतारें बनायीं और हज़ारा जात के अफ़सरों ने अपने-अपने नक्कारचियों को जमा किया कि रात बीतने पर नफ़ीरी और संज बजाकर सुबह की सलामी उतारें। नफ़ीरी की आवाज़ें बुलन्द हुईं। ढोल और नक्कारे गरजने लगे। लाखों घोड़ों की टापों की आवाज़ें भी इस शोर में शामिल थीं।

यह सलामी तो बेशक थी, मगर उनकी जो दुनिया से चल बसे थे। अतरार में तैमूर का इन्तकाल हो गया—लश्कर हुक्म के मुताबिक शमाल की सड़क से हरकत में आया। शाही झण्डे के साये में 'ओगलन' तैमूर का घोड़ा तैयार खड़ा था, मगर उस पर कोई सवार नहीं था—तैमूर मरने के करीब था।]

सराये खानम : मैंने हज़रत साहब-ए-कुरान की बीमारी की खबर समरकंद में सुनी। बहुत तेज़ी से सफ़र तय करके अतरार पहुँची हूँ। हकीम साहब, फ़रमाइये, अब इनका क्या हाल है ?

फ़ज़रुल्लातबरेजी : मल्का-ए-आलम, हज़रत साहब-ए-कुरान का मर्ज़ इलाज से बाहर है।

सराये खानम : तो क्या—तो क्या—

फ़ज़रुल्लातबरेजी : होनी को किसने टाला है। अब हज़रत साहब-ए-कुरान का वक्त नज़दीक है। हज़ार जतन यह गुलाम कर चुका है। बड़े-बड़े नुस्खे तजवीज़ कर चुका हूँ। मगर कोई फ़ायदा न हुआ। एक अकसीर अर्क था। उसकी कई बोतलें पिलवा चुका हूँ मगर जिस्म में हरकत पैदा नहीं होती। अब कुछ दिनों से कुरानखानी और दुआएँ माँगने का सिलसिला जारी है।

[दूसरे कमरे में]

तैमूर : (कमज़ोर आवाज़ में) शान और मर्दानगी के साथ हमेशा तलवार के कब्ज़े पर हाथ रहे। आपस में मेलजोल और एकता बनाये रखना। फूट में तबाही है। मुल्क चीन की फ़ौजकशी हरगिज़-हरगिज़ मुल्तवी न करना। सुन रहे हो···?

नूरुद्दीन, शाह-ए-मुल्क : सुन रहे हैं, हज़रत-ए-कुरान !

तैमूर . जब मैं मर जाऊँ तो कपड़े न फाड़ना, दीवानों की तरह भागते न फिरना, क्योंकि

ऐसी बातों से परेशानी और बदअमनी पैदा होती है। नूरुद्दीन, शाह-ए-मुल्क, तुम दोनों ज़रा और करीब आ जाओ।

[अन्तराल]

तैमूर : करीब आ गए ? सुनो, जहाँगीर के बेटे फ़कीर मुहम्मद को मैं अपना जांनसीन मुकर्रर करता हूँ। उसे समरकंद में रहना होगा। तमाम लश्कर और दीवानी मामलों पर उसे पूरे अधिकार होंगे। मेरा हुक्म है कि तुम सब अपनी तमाम उम्र उसकी ताबेदारी में गुज़ार देना। उसे तमाम दूर-दराज़ मुल्कों से समरकंद पर हुकूमत करनी होगी। अगर तुमने इसका पालन न किया तो फिर इसका नतीजा अफ़सोस और खतरनाक होगा।

शाह-ए-मुल्क : हज़रत साहब-ए-कुरान की वसीयत के मुताबिक अमल होगा मगर अर्ज़ है कि आप अपने पोतों को भी बुलवा लें ताकि यह हुक्म वे भी अपने कानों से सुन लें।

तैमूर : (बेकरारी के साथ) बस, यह आखिरी दरबार है। खुदा को—खुदा को यही मंजूर था। **(अन्तराल)—(सर्द आह भरकर)** इस वक्त और कोई तमन्ना इसके सिवाय न थी कि अपने पोते शाह रुख को एक बार देख लेता, मगर यह नामुमकिन है।

[यह नामुमकिन का लफ़्ज़ शायद पहली बार तैमूर की ज़बान पर आया। जिस फ़ौलाद की तबीयत ने ज़िन्दगी की राह इस तरह तय की थी जैसे कोई पथरीली ज़मीन पर हल चलाता निकल जाए, इस ज़िन्दगी के खात्मे को भी बिना उज्र-व-शिकायत मंज़ूर किया।]

किलोपेट्रा की मौत

पात्र

किलोपेट्रा
एन्टोनी
आयरस
शारमैन

[किलोपेट्रा दुनिया की सुन्दरतम औरत थी। उसकी सुन्दरता कई इंकलाबों और खून-खराबों का कारण बनी। इस सहरा के हुस्न-व-इश्क के किस्से जहाँ दरिया नील के मल्लाहों को अब तक याद हैं, वहाँ तमाम दुनिया को भी मालूम हैं।

किलोपेट्रा मिस्र के नालायक बादशाह बिलमोस मोलियत की बेटी थी। यह बादशाह सन् 80 ई० पू० तक राज्य करता रहा। उसने अपनी सतरह वर्ष की जवान बेटी किलोपेट्रा के सिर पर अपना जंग से भरपूर ताज रखकर इस दुनिया से विदा ली।

मल्का-ए-मिस्र किलोपेट्रा विजेताओं की विजेता थी। उसने जूलियस सीज़र को और उसकी मौत के बाद मार्क एन्टोनी को, जिसके हाथ में उन दिनों दुनिया की बागडोर थी, अपने हुस्न-ए-नूर से प्रभावित किया।

इस हसीन कातिला ने एन्टोनी को हमेशा के लिए तबाही के प्रवाह में बहा दिया। ऐतिहासिक घटनाएँ बताती हैं कि एन्टोनी ने अपनी बीवी ओक्ताया के अरुचिकर रवैये से मजबूर होकर उसके भाई 'ओक्तेदयानूस' की सख्त तौहीन की जिसका नतीजा यह हुआ कि उनके बीच एक चौड़ी खाई बन गयी। पारथीनों पर विजय पाकर ओक्तेदयानूस ने एन्टोनी के रोम को पूरे तौर पर नाराज़ करने की कोशिश की और सिकन्दरिया के पुराने सम्मान को ज़बरदस्त धक्का लगाया। उसने साफ़ तौर पर ऐलान कर दिया कि रोम की सल्तनत का असली हकदार किलोपेट्रा और उसका बेटा सीज़रीयन है। इन हालात को देखते हुए ओक्तेदयानूस और एन्टोनी की ज़मायतों में जंग होनी ज़रूरी थी।

चुनाँचे अक्सीएम के मुकाम पर एक महत्त्वपूर्ण युद्ध हुआ। इस युद्ध में किलोपेट्रा भी शामिल थी। मगर वह अपनी जान बचाकर भाग निकली और सिकन्दरिया में पनाह ली। एन्टोनी हार खाकर वापस चला आया, जहाँ उसने अपनी

वफ़ादार फ़ौजों को दोबारा जमा करने की कोशिश की।

एन्टोनी और किलोपेट्रा अब महसूस करने लगे थे कि उन्होंने एक-दूसरे को समझने में भूल की है। चुनाँचे दोनों के दिलों पर गम और अफ़सोस की घटाएँ छा गयीं। लेकिन एक आरज़ू अभी तक उनके दिलों में बाकी थी कि अन्त में उनका मिलाप हो जाएगा।

एन्टोनी लीबिया से नाउम्मीद होकर सिकन्दरिया आया। इस दौरान ओक्तेदयानूस की फ़ौजें सिकन्दरिया के दरवाज़ों तक पहुँच गयीं।

एन्टोनी ने एक बार फिर अपनी खोई ताकत और दिलेरी से काम लेकर दुश्मन का मुकाबला किया लेकिन फ़ौज ने उसका साथ छोड़ दिया। बिलकुल तन्हा, दिल में हज़ारों हसरतों का खून लिए जब वह अपने महल में आया तो कासिद ने खबर दी कि किलोपेट्रा ने आत्महत्या कर ली है। यह असल में किलोपेट्रा की एक चाल थी। उसे डर था कि एन्टोनी उसकी गद्दारी पर खुश न होगा।

लेकिन किलोपेट्रा को खबर हुई तो उसने बड़ी विनती से अपने आशिक को कहला भेजा कि जिस तरह सम्भव हो वह उसके पास चला आए। चुनाँचे एन्टोनी के सेवक अपने ज़खमी स्वामी को उठाकर उस इमारत के दरवाज़े तक आए जिसमें किलोपेट्रा ने स्वयं को छुपा रखा था। किलोपेट्रा ने डर से दरवाज़ा न खोला। एक खिड़की से नीचे रस्सियाँ फेंकीं जिनकी मदद से ज़खमी एन्टोनी कमरे के अन्दर आया।]

किलोपेट्रा : एन्टोनी—एन्टोनी—(रोकर) तेरे दुश्मनों को क्या हो गया है—यह लहू—यह लहू—कोई है—कोई है—आयरस—आयरस—कुछ करो—पवित्र देवताओं की खातिर कुछ करो।

एन्टोनी : यह कौन है—यह किसका हाथ है—तू ज़िन्दा है—तू ज़िन्दा है—आह! मेरी मौत को कितना सदमा पहुँचा है! वह मुड़-मुड़कर तेरी ज़िन्दगी की तरफ़ देख रही है—किलोपेट्रा—किलोपेट्रा—

किलोपेट्रा : एन्टोनी, मैं ज़िन्दा हूँ पर मौत की गोद में—तू तसल्ली रख, तेरी मौत अकेली सफ़र पर नहीं जाएगी। तू मुझ पर शक करता है। एन्टोनी, तू समझता है कि मैंने लड़ाई में तुझे धोखा दिया। नहीं, नहीं, पवित्र देवताओं की कसम, नहीं। मैं डर गयी थी। युद्धभूमि में मेरी रूह के कदम लड़खड़ा गए थे। मैं भाग निकली। जान बचाने के लिए नहीं, आत्महत्या करने के लिए। इसीलिए मैंने तुझे खबर भेजी। पर मुझे यह मालूम नहीं था कि तू मुझसे पहले ही इस राह पर चल पड़ेगा जिस पर तेरी महबूबा चलने का इरादा कर रही थी।

एन्टोनी : जानेमन, मुझे तुझ पर पूरा भरोसा है—छोड़ इन बेकार की बातों को। ज़िन्दगी और मौत के बीच जब एक मुट्ठी-भर रेत का फ़र्क रह जाए तो ऐसी बातें नहीं करनी चाहिए। आओ, प्यार-मुहब्बत की बातें करें।

किलोपेट्रा : (फूट-फूटकर रोती है) एन्टोनी—एन्टोनी !

[थोड़ा अन्तराल]

एन्टोनी : किलोपेट्रा, यह तूने क्या किया ? अपना सारा चेहरा मेरे बड़े चाहने वाले भी न दे सके—ज़िन्दगी की ये थोड़ी-सी घड़ियाँ जो मौत ने मुझे बख्शी हैं, फ़िज़ूल बातों में खत्म न हों—जानेमन, अभी तक मेरे पास चूमने के लिए होंठ, यौवन का नज़ारा करने के लिए आँखें और तेरी सुरीली आवाज़ सुनने के लिए कान मौजूद हैं—आ—उस पुरानी याद को ताज़ा करें जब ऊदी-ऊदी घटाएँ झूमकर आती थीं और तेरे सुरीले नगमे यूँ उठते थे जैसे दो आतिशा-शराब से चिनगारियाँ —जब तेज़ आवाज़ हवा में पहेलियाँ बिखेरती थीं—याद हैं तुझे, वे नील नदी की रातें··· **(आवाज़ हलकी हो जाती है।)**

किलोपेट्रा : (घबराकर) एन्टोनी···

[थोड़ा अन्तराल]

एन्टोनी : (होश में आकर) क्यों—नहीं, नहीं—मैं ज़िन्दा हूँ। मुझे याद है, क्या कह रहा था। नील नदी की रातें सिर्फ़ इसलिए खामोश होती थीं कि तुझे एन्टोनी से कुछ कहना होता था—जो सिर्फ़ इसलिए अँधियारी होती थीं कि तुझे नकाब डालने की परेशानी न उठानी पड़े। मुझे याद हैं—मुझे याद हैं वे रातें, जब तेरी उजली पेशानी से मैं स्याह ज़ुल्फ़ें यूं हटाता था जैसे यूनानियों की देवी अरोरा रात के स्याह परदे हटाकर पूर्व दिशा के रुपहले फाटक खोल दे।—आह, लेकिन अब इस याद की कब्र बनने वाली है। इस सीने में जो कि ज़ख्मी हो रहा है—किलोपेट्रा, तेरा एन्टोनी अब कुछ घड़ियों का मेहमान है।

किलोपेट्रा : (चिल्लाकर) एन्टोनी—एन्टोनी—मेरे स्वामी, तेरी कनीज़ के दिल में इतनी ताकत नहीं कि वह ऐसी दुःख-भरी बातें सुन सके। किलोपेट्रा के सीने में औरत का दिल है, एन्टोनी।

एन्टोनी : जब एन्टोनी मर जाए तो सब्र करना और ज़िन्दा रहना।

किलोपेट्रा : ऐसा हरगिज़ नहीं होगा—किलोपेट्रा की ज़िन्दगी तेरी ज़िन्दगी से लिपटी हुई है। मायूस न हो प्यारे ! क्या पता कि ये ज़ख्म अच्छे हो जाएँ।

एन्टोनी : इन ज़ख्मों ने पुराने घाव भी हरे कर दिए हैं। मेरे जिस्म से अब खून के आखिरी कतरे निकल रहे हैं। लेकिन क्या यह हैरत की बात नहीं कि जो शख्स लोहे और लहू से खेलता रहा, जिसका ओढ़ना-बिछौना जंग का मैदान था, आज मैदान-ए-जंग में किसी दुश्मन के हाथों मरने की बजाय एक हसीन औरत की गोद में सिर रखकर जान दे रहा है। योद्धा सिपाही होने की हैसियत से मुझे यह मौत पसन्द नहीं कि किसी सतत विजेता को ऐसी मौत सन्तोष नहीं दे सकती—लेकिन चूंकि मैं जंगी सिपाही के मुकाबले में आशिक ज़्यादा हूँ, इसलिए यह मौत मेरे लिए राहत का कारण है। मुझे यह तसल्ली तो मिली कि मैं तेरे लिए मरा हूँ—सिर्फ़ तेरे लिए किलोपेट्रा—किलो···

किलोपेट्रा : एन्टोनी—एन्टोनी···(चिल्लाती है) एन्टोनी—आयरस—आयरस—आयरस—मेरी दुनिया अँधेरी हो गई—मैं उजड़ गई—बर्बाद हो गई।

[शहर पर अब ओक्तेदयानूस का कब्ज़ा था। एन्टोनी की फ़ौज ने हथियार डाल दिए थे। इसलिए शहर को नष्ट-भ्रष्ट करने की ज़रूरत नहीं पड़ी।

ओक्तेदयानूस ने किलोपेट्रा को गिरफ़्तार करने के इरादे से एक फ़ौजी अफ़सर गालस को रवाना किया। उसकी इच्छा थी कि किलोपेट्रा को ज़िन्दा गिरफ़्तार करके उसके सम्मुख पेश किया जाए। गालस इस अभियान में कितना सफल हुआ, इसके विषय में इतिहास से हमें पता चलता है कि बातें करते-करते वह किसी बहाने से किलोपेट्रा को दरवाज़े के पास ले आया। इसी दौरान तीन आदमी खिड़की के रास्ते इमारत में उतरे और किलोपेट्रा से वह खंजर छीन लिया जिसे वह हाथ में लिए खड़ी थी। उसने यह निश्चय कर रखा था कि अगर किसी ने उसको गिरफ़्तार करना चाहा तो वह खंजर से अपना काम तमाम कर लेगी।

किलोपेट्रा को पता था कि उसके साथ किस किस्म का सलूक किया जाएगा। उसने जब यह सुना कि उसे देशनिकाला दे दिया जाएगा तो उसने इजाज़त माँगी कि उसे एन्टोनी की कब्र की ज़ियारत करने दी जाए। यह इजाज़त उसे मिल गई। चुनाँचे अन्तिम बार कुछ सिपाहियों और एक-दो सहेलियों के साथ एन्टोनी की अन्तिम आरामगाह की तरफ़ रवाना हुई।]

किलोपेट्रा : (**रोनी आवाज़ में**) एन्टोनी—कब्र की गहराइयों से निकल आ।—तेरी किलोपेट्रा आँखों में आँसू, दिल में गम और जिगर में टीसें लिए तेरे पास आई है। शोकपूर्ण है, अत्यन्त शोकाकुल है। एन्टोनी, तेरी मौत इस जीवन पर ऐसे निशान छोड़ गई है जो कभी नहीं मिटेंगे—तुझसे उसने सच्ची मुहब्बत की, सिर्फ़ तुझे ही उसने वह गौहर दिया जिसको हासिल करने के लिए फ़रिश्ते भी आसमान पर तड़पते होंगे। (**फूट-फूटकर रोती है**) लेकिन···लेकिन मैं तेरी कातिल हूँ—मैंने ही मनों मिट्टी तेरे सीने पर डाली है। तेरी ज़िन्दगी पर मौत का भारी पत्थर मैंने ही रखा है। मैं ज़िन्दा हूँ लेकिन अकेली—तेरी कब्र की तन्हाई उस तन्हाई से कम डरावनी है जिसमें कि मैं लिपटी हूँ। तू मुर्दा है लेकिन एक नयी ज़िन्दगी के रास्ते पर चल रहा है। मैं ज़िन्दा हूँ लेकिन मौत की तमन्ना नहीं कर सकती। वे मेरी मौत नहीं चाहते, ज़िन्दगी चाहते हैं—ज़िन्दगी जो कि लगातार एक मौत होगी। अय आराम करने वाले, जबकि तू मौत की गोद में बेखबरी से सो रहा है, मुझ पर बुरी तरह से ज़ुल्म ढाए जा रहे हैं। कुदरत के सितम के तरीके देख—देख—तू रोमन है और मिस्र में दफ़नाया गया है। मैं मिस्री हूँ और रोम में दफ़न की जाऊँगी—एन्टोनी—एन्टोनी—इस बेबसी की स्थिति में तुझे मैं कुछ नज़र नहीं कर सकती। मेरी ज़िन्दगी हाज़िर है जिसके हर ज़र्रे पर तेरे बोल और आँसू चमक रहे हैं—अब तेरी कनीज़ के दिल में कोई तमन्ना है तो सिर्फ़ यह कि मरने के बाद इसे तेरे पहलू

में दफ़न किया जाए···क्या मेरी यह ख्वाहिश पूरी होगी—मैं कुछ नहीं कह सकती —कुछ नहीं कह सकती ।

[ओक्तेदयानूस ने हुक्म दे रखा था कि मल्का पर सख्त पहरा रहे ताकि वह आत्म-हत्या न करने पाए। उसका इरादा था कि कैदी बनाकर किलोपेट्रा को रोम ले जाए और वहाँ अपनी जीत की खुशी में शानदार जुलूस निकाले। उस जुलूस में वह किलोपेट्रा को ज़ंजीरें पहनाकर अपने जुलूस में रखे। मगर मल्का-ए-मिस्र को यह बेइज्ज़ती मंज़ूर न थी।

किलोपेट्रा उस इमारत में, जो कि उसने खासतौर पर अपने लिए ही ओसियस के मन्दिर के पास बनवाई थी, नज़रबन्द थी। उसके साथ उसकी दो बाँदियाँ थीं—आयरस और शारमैन ।]

[आयरस मल्का-ए-मिस्र को यह गीत सुनाती है—]

अय नील की रानी
रफ़्तार में उड़ते हुए बादल की रवानी
होंठों के खमों पर शफ़क आलूद सा पानी
अय नील की रानी
सीना है कि लहरों में कँवल नाच रहे हैं
ज़ुल्फ़ें हैं कि लहराती हैं सावन की जवानी
अय नील की रानी।

किलोपेट्रा : (उकताकर) बन्द कर—बन्द कर आयरस इस गीत को—मौत को ऐसी लोरियाँ न सुना। आने दे उसे—आने दे—

आयरस : मल्का-ए-मिस्र की तबीयत आज नासाज़ मालूम होती है।

किलोपेट्रा : (हँसती है) मल्का-ए-मिस्र—मेरा मज़ाक उड़ाती है आतरी !···तेरी मल्का से तो वे बाँसुरी बजाने वाली घोघरिया हज़ार दर्जे बेहतर हैं जो अपना गला जब चाहे काट सकती हैं। मल्का-ए-मिस्र से तो वे कसलियाँ बड़े आराम व शान्ति में हैं जो सिकन्दरिया के गली-कूचों में राह चलने वालों से आँख लड़ाती हैं। क्या वाकई मैं मल्का हूँ—क्या वाकई मैं मिस्र की वह वीर शासक हूँ जिसका गुलाम बनने में एन्टोनी जैसे विजेता ने गर्व महसूस किया था? क्या सचमुच मैं वही महारानी हूँ जिसकी पलक के इशारे पर हरमशन जैसा बागी नाचा—क्या मैं वही हसीना हूँ जिसकी एक अदा ने सीज़र को तमाम जंगी दाँव-पेच भुला दिए—नहीं, नहीं, मैं कुछ भी नहीं हूँ। सिर्फ़ एक औरत बाकी रह गई हूँ जो रोमियों के डर से एक चुहिया की तरह अपने बिल में दुबकी बैठी हूँ। मैं जल्दी ही गिरफ़्तार कर ली जाऊँगी। मेरे इन गोरे-गोरे टखनों पर, जिन पर सोने-चाँदी की खलखान झनझनाहटें न्यौछावर करते थे, लोहे की मोटी ज़ंजीरें पहनाकर वह मुझे रोम के बाज़ारों में फिराएँगे। मुझे नंगा कर दिया जाएगा। रोम के कुंजड़ों और हज्जामों की औरतें

भी उस हुस्न का नज़ारा करेंगी जो अब तक सिर्फ़ कुछ खुशनसीब लोगों तक सीमित रहा है। रोम का तपता हुआ सूरज मेरे इस गदराये जिस्म की तमाम लुनाइयाँ भस्म कर देगा—मल्का—क्या मल्का ऐसी ही बदनसीब औरतों का नाम होता है ? (अन्तराल) क्या इस ज़िल्लत से बचने की कोई तरकीब नहीं—

शारमैन : जान-बख्शी पाऊँ तो कुछ अर्ज़ करूँ ?

किलोपेट्रा : (हँसती है) जान-बख्शी—कह, तुझे क्या कहना है—शारमैन, तेरी इन स्याह आँखों में आँसू आज ऐसे चमक रहे हैं जैसे काली घटाओं में पानी—बता, तुझे क्या कहना है ?

शारमैन : मल्का-ए-मिस्र, मल्का-ए-मिस्र ही रहेगी···उसके दुश्मनों को अपने इरादे में नाकामी का ही मुंह देखना पड़ेगा।

किलोपेट्रा : कैसे—कैसे शारमैन ! जल्दी बता, यह कैसे हो सकता है ?

शारमैन : मेरे मुंह में खाक···अगर मल्का को दुश्मन ज़लील करने का ही इरादा रखते हैं तो बेहतर है कि···

किलोपेट्रा : लेकिन यह क्योंकर हो सकता है—तू ठीक कहती है शारमैन। इस तरकीब से मल्का, मल्का ही रहेगी। मरते दम तक उसकी शान में फ़र्क नहीं आएगा। लेकिन तू जानती है कि हम पर कितनी कड़ी निगरानी की जा रही है। यमदूत के परों की फड़फड़ाहट अगर पहरेदारों ने सुन ली तो मालूम है मुझे, ओक्तेदयानूस मेरी औलाद के साथ कैसा सलूक करेगा—और तू जानती है, अगर मैं अपनी कोशिश में नाकाम रही तो वह मौत के दरवाज़े एक अर्से तक मुझ पर बन्द कर देगा। वह मुझे आहिस्ता-आहिस्ता मारना चाहता है। मगर ऐसा नहीं होना चाहिए। तेरे कहने के मुताबिक उसको अपने इरादों में नाकामी होनी चाहिए··· आयरस, आयरस !

आयरस : इरशाद !

किलोपेट्रा : मुझे अब ऐसा साँप चाहिए जो सिर्फ़ एक बार डसने से मुझे मौत की नींद सुला दे। क्या सिकन्दरिया के सँपेरे तेरी काली ज़ुल्फ़ों के बदले तुझे ऐसा साँप नहीं देंगे ?

आयरस : कनीज़ कोशिश करेगी।

किलोपेट्रा : और देख, वह साँप इस तरह मेरे पास लाया जाए कि पहरेदारों को बिलकुल शक न हो।

आयरस : लौंडी होशियारी से काम लेगी।

किलोपेट्रा : शाबाश आयरस, शाबाश ! तेरी मल्का की मौत हमेशा तेरी अहसानमद रहेगी। अब तू जा और अपना काम कर। मैं इस कमरे में तेरा इन्तज़ार करूंगी।

[शारमैन बरबत के तार छेड़ती है।]

किलोपेट्रा : शारमैन, छोड़ इस बरबत को—जा, मेरे स्नान का सामान तैयार कर। मेरा बेहतरीन लिबास निकाल—मेरा जिस्म आज कीमती इत्रों से बसा दे—

मल्का, मल्का ही रहेगी—उसका वकार कभी उस रोमी कुत्ते के आगे घुटने नहीं टेकेगा—जा, मेरी मौत के स्वागत की तैयारियाँ कर।

[किलोपेट्रा ने स्नान किया। शारमैन ने उसको खुशबुओं में लपेट दिया। जो लिबास उसने मौत का स्वागत करने के लिए पहना, बहुत महीन और खुशरंग था। सिर पर ताज था, जिस पर गिद्ध बना हुआ था। गिद्ध के फैले हुए पंख किलोपेट्रा के कानों को ढाँपे हुए थे। वह बला की हसीन नज़र आ रही थी।]

किलोपेट्रा : शारमैन, इधर आ और उन अलबेली और अलमस्त हसीनाओं की दास्तानें सुना, जो सिकन्दरिया की सड़कों पर हुस्न और इश्क का छिड़काव करती रहती हैं और उन अल्हड़ छैल-छबीली कमसिन बाँसुरी बजाने वाली छोकरियों की बातें कर जो मिस्र के बगीचों में अपनी जवानी के राग अलापती फिरती हैं—देवी अमश्तर के मन्दिर में जाने वाली उन कुँवारियों के रंगीन अफ़साने सुना जिनकी जवानियाँ फट पड़ने वाले जाम हैं। मिस्र के उन इश्कपेशा नौजवानों की कहानियाँ बयान कर जिनके लबादों की हर शिकन में कई-कई कँपकँपाहटें लटकी रहती हैं।

शारमैन : कनीज़ को गाने के सिवाय और कुछ नहीं आता।

किलोपेट्रा : तो उठा बरबत और एक ऐसा गीत सुना कि फ़रिश्ते भी आसमान की खिड़कियाँ खोल दें।

[शारमैन गीत गाती है—]

पल-पल तारे टूट रहे हैं क्यों तेरे नैनन से
—मेरी अजकमलाये
आग बुझे तो राख से खेलो राख बुझे तो मन मिले
—जीवन खेल है प्यारी
ढूंढ़े से रास्ता न मिले तो राह में हँसना गाना
— दुनिया गीत है सजनी
दुःख ही दुःख हैं जब किस्मत में सेमन परचाना
—अपनी रीत है सजनी
नींद न आये तो रातों को तारे गिन-गिन काटो
—उफ़ ये डूबे तारे
काँटों पर हँस-हँस कर लेटो, और यूं ही दिन काटो
—ये दिन प्यारे-प्यारे
पल-पल तारे टूट रहे हैं···

किलोपेट्रा : कितना हसीन गीत है—कैसी दिलकश आवाज़ है। आँसुओं की अनोखी दुनिया इसमें आबाद है—(डरकर) शारमैन—शारमैन—तू कहाँ है—आ, मेरी छाती से चिमट जा—बादल छा रहे हैं—(बादल गरजते हैं) अंधकार फैलता जा रहा है—अब मुझे ज़ाना होगा—अब मुझे जाना होगा।

आयरस : मल्का-ए-मिस्र के सफ़र का सामान तैयार है।

किलोपेट्रा : तू आ गयी—तू आ गयी आयरस—ले आई वह साँप—कहाँ रखा है तूने उसे—(**अधिकारपूर्ण स्वर में**) मल्का जब चाहेगी सफ़र करना शुरू करेगी—मैं मल्का हूँ, कनीज़ नहीं आयरस—तू जानती है, मेरे सिर पर गिद्ध की शक्ल का ताज होगा—गिद्ध के फैले हुए परों के नीचे मेरे कान छुपे होंगे। बादल बरसेंगे—बिजली चमकेगी। इस शान से तेरी मल्का की सवारी निकलेगी। इस शान से उसकी मौत का रथ आसमान की ओर रवाना होगा। जब चाँद अपने लम्बे-चौड़े थाल में तारे उसकी खिदमत में पेश करेगा। चलो आयरस, चलो—मेरा वक्त बहुत कीमती है।

आयरस : मल्का-ए-मिस्र के लिए यह लौंडी नारंगियों की एक टोकरी भेंट के तौर पर लाई है।

किलोपेट्रा : इसका ढकना उठाओ।

आयरस : (**ढकना उठाती है**) पहरेदारों की निगाहें इन खुशरंग फलों के नीचे काले नाग को नहीं देख सकीं जो मिस्र का सबसे ज़हरीला साँप है।

किलोपेट्रा : सबसे ज़हरीला साँप—(**धीमी आवाज़ में**) तुझे यकीन है कि इसका ज़हर वाकई बड़ा घातक है ?

आयरस : लौंडी को इसका यकीन है मगर आपको···

[साँप फुफकार के साथ आयरस को डसता है—आयरस गिर पड़ती है।]

किलोपेट्रा : टोकरी बन्द कर दे शारमैन—टोकरी बन्द कर दे। आह, गरीब आयरस मर गयी। शारमैन, ला, यह टोकरी मुझे दे। मेरी कनीज़ मेरी राह देखती होगी। मैं उसे ज़्यादा देर इन्तजार में नहीं रखना चाहती। आह, इन नारंगियों की खुशबू कितनी प्यारी है ! (**अन्तराल**) सूरज डूब रहा है। काली घटाएँ छा रही हैं। मैं दुआ माँगना चाहती हूँ शारमैन—मैं दुआ माँगना चाहती हूँ। लेकिन मुझसे तो सारे देवता नाखुश हैं।

[दूर से इबादतगाहों (मन्दिर, मस्जिद, गिरजा आदि) से नरसिंहे आदि की आवाज़ आती।]

किलोपेट्रा : आह—ये नरसिंहे और तरमई की धीमी-धीमी आवाज़ कितनी मनोहर है—आज नील दरिया भी कितना निखरा हुआ है—शारमैन, मेरी मुहब्बत की सारी दास्तानें इस दरिया की लहरों में लिपटी हुई हैं। अलविदा, नील की बल-खाती लहरो, अलविदा। रेत के टीले के पीछे छिपने वाले सूरज, अलविदा। रेगिस्तान में लहराती पगडंडियो, अलविदा। खजूर के लम्बे-लम्बे दरख्तो, मेरा सलाम कबूल करो। घास की काँपती हुई पत्तियो, मेरा सलाम लो। किलोपेट्रा ज़िन्दगी से प्यार ज़रूर करती है—पर मौत से डरती नहीं—मौत—आह ! ऐसे हालात में मौत का ज़ायका कितना मीठा होता है। (**टोकरी का ढकना खोलती है—साँप उसे डसता है**) शारमैन, अलविदा—

[किलोपेट्रा (मल्का-ए-मिस्र) ज़मीन पर गिर पड़ती है।]

कमरा नंबर 9

पात्र

शीरीं : एक शोख चंचल लड़की—
तेज़ बोलने वाली

ज़मान : बेपरवाह-सा आदमी—
शीरीं का भाई

फ़ज़लू : घर का नौकर

रानी : भंगिन

नासर : शीरीं का एक चाहने वाला।

[दरवाज़े पर दस्तक]

ज़मान : देखो शीरीं, दस्तक न दो—पढ़ो यह क्या लिखा है ?

शीरीं : (बेपरवाही से) क्या लिखा है ?

ज़मान : तुम इतनी जल्दबाज़ी क्यों करती हो—यह देखो, तुम्हारे सामने क्या है—लिखा है—मेहरबानी करके दस्तक न दीजिए।

शीरीं : दस्तक न दें तो क्या करें ?

ज़मान : वह करो जो लिखा है।

शीरीं : क्या लिखा है ?

ज़मान : यह तुम्हारी ज़िद भी अजीब किस्म की है—यानी सबकुछ पढ़ चुकी हो और मुझसे पूछे जा रही हो कि क्या लिखा है—बखुदा वे लोग बेवकूफ़ हैं जो तुम्हें अक्लमंद समझते हैं।

शीरीं : मैं इस वक्त बहस करने के मूड में नहीं हूँ। तुम्हें बताना होगा कि क्या लिखा है ?

ज़मान : लिखा है, 'दस्तक न दीजिए—साहबेखाना को आवाज़ दीजिए।'

शीरीं : यह तुम्हारा साहबेखाना जो कोई भी है, दीवाना है।

ज़मान : खुदा का वास्ता, आहिस्ता बोलो—वह सुन लेगा तो···

शीरीं : तो क्या होगा··· (ज़ोर से दस्तक देती है।)

ज़मान : (डरकर) भई, मैं चला।

[अन्दर से एक कड़कती आवाज़ सुनाई देती है, 'कौन है ?']

शीरीं : (डरकर) ज़मान ! ठहरो, मैं भी आयी। (**भागने की आवाज़**) ठहरो—मैं कहती हूँ ज़मान, 9 नम्बर में ज़रूर कोई दीवाना रहने के लिए आया है—चलो भागो—अल्लाह कसम, आवाज़ में दीवानगी थी—तुमने नहीं सुनी ?

ज़मान : मैंने सबकुछ सुन लिया है—तुम अब घर चलो।

[अन्तराल—दरवाज़े पर दस्तक की आवाज़]

शीरीं : दस्तक क्यों देते हो ? चले आओ अन्दर। दरवाज़ा खुला है।

ज़मान : (चौंककर) ओह !··· (हँसता है) भई, हद हो गई है—मैं किसी और का मकान समझे हुए था।

[दरवाज़ा खोलने की आवाज़]

शीरीं : (आवाज़ देती है) फ़ज़लू—फ़ज़लू !

फ़ज़लू : (आवाज़ दूर से आती है) आया, बीबीजी।

शीरीं : ज़मान, तुम फ़ज़लू को नीचे चौकीदार के पास भेजो। वह उससे पूछकर आए कि 9 नम्बर में कौन साहब आए हैं।

फ़ज़लू : जी, बीबीजी।

ज़मान : देखो फ़ज़लू, नीचे चौकीदार के पास जाओ और उससे बातों-बातों में पूछो कि 9 नम्बर में कौन साहब आए हैं।

शीरीं : क्या नाम है—कहाँ से आए हैं—क्या काम करते हैं—शादीशुदा हैं या···

ज़मान : इतनी बातें पूछने की ज़रूरत क्या है—सिर्फ़ नाम ही काफ़ी है।

शीरीं : नहीं, नहीं फ़ज़लू, तुम यह सबकुछ दरयाफ़्त करो।

फ़ज़लू : बहुत अच्छा, बीबीजी।

[अन्तराल]

शीरीं : ज़मान, यह आदमी मुझे बड़ा अजीबोगरीब मालूम होता है।

ज़मान : यह तुमने कैसे जाना ?

शीरीं : इन्सान के अन्दर एक छठी हिस होती है—यही हिस मुझसे कहती है।···ठहरो, मैं मालिक मकान को टेलीफ़ोन करती हूँ—उसको इस आदमी के बारे में बहुत-सी बातें मालूम होंगी।

ज़मान : (हँसता है) मेरी छठी हिस कहती है कि यह आदमी तुम्हें दीवाना बना देगा।

[नम्बर मिलाने की आवाज़]

शीरीं : हलो···हलो···सेठ साहब हैं ?—नहीं हैं—आप कौन हैं ? मैनेजर—ज़रा साफ़ बोलिए—आपने हकलाना क्यों शुरू कर दिया—मैं कृष्ण बिल्डिंग के फ़्लैट नम्बर 6 से बोल रही हूँ—जी हाँ—देखिए—9 नम्बर में कौन साहब आए हैं ?—यानी 9 नम्बर फ़्लैट किसने किराए पर लिया है—(अन्तराल) जी—जी—जी—तो आपको उनके बारे में कोई इल्म नहीं—लेकिन मैं पूछती हूँ कि आपने

असली किरायेदार का नाम-पता क्यों दरयाफ़्त नहीं किया··· (इरादा बदल लेती है)···कुछ नहीं—शुक्रिया। (टेलीफ़ोन का चोंगा रख देती है।)

ज़मान : क्या कहता है ?

शीरीं : ये लोग अजब बेवकूफ़ हैं—एक तो औरत की आवाज़ सुनकर यूं बौखला जाते हैं जैसे···अब मैं क्या कहूं—और यह भला क्या दस्तूर है कि नाम-पता किसी और का लिख लिया जाए और मकान में रहने के लिए कोई दूसरा आए। कहता है, एक साहब, जिनका नाम ख्वाजा गुलाम हसन है, आए। किराया अदा किया और यह कहा कि किरायेनामे पर उनका नाम लिखा जाए क्योंकि उनके दोस्त जो कि 9 नम्बर के असली किरायेदार हैं अपने नाम से कभी मकान किराये पर नहीं लिया करते।

ज़मान : तुम्हारी छठी हिस के दुरुस्त होने का यह पहला सबूत है।

फ़ज़लू : सरकार, चौकीदार को इस बात का कुछ पता नहीं कि 9 नम्बर में कौन रहता है।

शीरीं : तुमने उससे कुछ पूछा भी था या ऐसे ही बीड़ी पीकर लौट आए हो ?

फ़ज़लू : जी नहीं, बीबीजी। मैंने उससे सारी बातें कुरेद-कुरेदकर पूछीं मगर उसको कुछ मालूम भी हो—वह तो कहता है कि मुझे उस किरायेदार की बाबत सिर्फ़ इस बात के सिवाय और कुछ मालूम नहीं कि वह ज़मीन पर सोता है।

शीरीं : यह बात चौकीदार को कैसे मालूम हुई ?

फ़ज़लू : भंगिन ने उसको बताया था कि एक दिन उसने साहब को सीमेण्ट के फ़र्श पर बिस्तर-तकिये बगैर लेटे देखा।

शीरीं : और, कुछ और···

फ़ज़लू : जी, और तो कोई बात नहीं।

शीरीं : (जल्दी-जल्दी) फ़ज़लू—ठहरो—भंगिन अभी तक बिल्डिंग ही में होगी—जाओ, उसको देखो। अगर मिल जाए तो उसे फ़ौरन मेरे पास भेजो। कहना, एक ज़रूरी काम है।

[ज़मान हँसता है—पेट भरकर हँसता है।]

शीरीं : (नाराज़गी-भरी हैरत के साथ)···या वहशत !

ज़मान : शीरीं, मेरी समझ में नहीं आता तुम उस आदमी में इतनी दिलचस्पी क्यों ले रही हो—तुम्हें तो मर्दों से नफ़रत है।

शीरीं : मुझे इसमें खाक भी दिलचस्पी नहीं—मैं तो सिर्फ़···

ज़मान : यह भी अच्छी रही—दिलचस्पी नहीं तो यह बाल की खाल क्यों निकाली जा रही है—भई शीरीं, मुझे हँसी तो इस बात पर आती है कि जितना तुम उस आदमी की बाबत दरियाफ़्त करती हो, उतना ही वह भूल-भुलैया बनता जाता है—मैं कहता हूँ उसको जानने की क्या ज़रूरत है ?

शीरीं : तो चलो हटाओ इस किस्से को।

[टेलीफ़ोन की घण्टी बजती है।]

ज़मान : (टेलीफ़ोन का चोंगा उठाता है) हलो—यस—यस—(दबी-दबी आवाज़ में शीरीं से) शीरीं, बट साहब तुमसे बात करना चाहते हैं।

शीरीं : (बेपरवाही से) पूछो, क्या कहना चाहता है ?

ज़मान : मैं तुम्हारा सेक्रेटरी नहीं हूँ—जो कहना है आप कहो।

शीरीं : मेरे अच्छे भाई जो हुए—उसे किसी न किसी हीले से टाल दो।

ज़मान : हलो—मौजूद हैं—जी-जी—(शीरीं से) बट साहब यहाँ आने की इजाज़त चाहते हैं।

शीरीं : आना चाहता है तो आ जाए, मगर उससे कहो कि ऐसा लिबास पहनकर न आए जिसमें वह दर्ज़ियों का छपा हुआ इश्तहार हो—वह जब भी नया सूट पहनकर आता है, मुझे ऐसा महसूस होता है कि उसने सूट नहीं पहना बल्कि सूट ने उसको पहन रखा है।

ज़मान : (हँसी दबाकर) हलो बट साहब, आप फिर कभी तशरीफ़ लाइए। आज उसको कहीं बाहर जाना है—आदाब अर्ज़—(दबी हुई हँसी उभर आती है—खूब हँसता है) भई क्या फ़िकरा कसा है।

शीरीं : मैं सच कहती हूँ। कालर में उसकी गर्दन और पतलून में उसकी टाँगें हमेशा सोचती रहती हैं कि हम किस मुसीबत में फँस गयी हैं।

ज़मान : सच तो यह है कि तुम्हें मर्दों से खुदावास्ते का बैर है—यानी तुम्हें कोई भाता ही नहीं—अच्छा, भला यह तो बताओ उस बेचारे निसार में क्या नुक्स है ? बेहद शरीफ़ है—मिलनसार है—नेक है।

शीरीं : उसका मुँह मुझे पसन्द नहीं—जब वह बात करता है तो उसका मुँह इकन्नी डालकर प्लेटफ़ार्म टिकट निकालने वाली मशीन की झिरी-सा बन जाता है— ऐसा न हो, मैं किसी दिन उसके खुले हुए मुँह में इकन्नी डाल दूँ।

ज़मान : (हँसता है) तुम्हारी इकन्नी वह डकार लिए बगैर हज़म कर जाएगा—प्लेटफ़ार्म टिकट उसमें से नहीं निकलेगा। अच्छा, तो शौकत के बारे में तुम्हारा क्या खयाल है ?

शीरीं : खुदा के लिए उसकी बात न करो। वह जब भी आता है और कुछ देर यहाँ बैठता है तो मुझे उससे दूध की बू आती रहती है।

ज़मान : (हँसता है) यह भी अच्छी रही !

शीरीं : और क्या—यानी जब न तब वह दूध ही की बात करेगा—जैसे दुनिया में गाय-भैंसों और बकरियों के सिवा और कुछ है ही नहीं। मुझे दूध से सख्त चिढ़ है। अव्वल तो दूध की रंगत ऐसी है कि कोई शरीफ़ आदमी उसे पसन्द नहीं कर सकता। दूसरे, उसका ज़ायका बहुत वाहियात है। पिओ तो घण्टों तबीयत मितलाती रहती है।

ज़मान : मगर शौकत के सामने तुमने कभी अपने इन खयालों का इज़हार नहीं किया।

शीरीं : उसकी वजह यह है कि वह इसकी विटामिन्स गिनवाना शुरू कर देता है और विटामिन्स को समझना मेरी समझ से परे है—मैं ऊलजलूल किस्म के शायरों के

सोनेट समझ सकती हूँ मगर किसी गिज़ा की विटामिन्स नहीं समझ सकती।

ज़मान : (हँसता है) अब एक नासर बाकी रह गया है—उसके मुताल्लिक भी कुछ हो जाए।

शीरीं : नासर यूं तो बहुत अच्छा आदमी है—मगर उसमें तहरीकी कुव्वत की कमी है। वह बहुत अच्छा पका हुआ सालन है मगर जिसमें नमक कम हो। वह एक ऐसा ड्रामा है जिसमें क्लाइमेक्स फुसफुस होकर रह जाए। मैंने खूब गौर से उसके किरदार की जाँच की है। मैं समझती हूँ किसी न किसी जगह उसमें कोई खामी ज़रूर रह गयी है। यह मैं नहीं कह सकती कि कहाँ। उसमें ओरिजिनैलिटी भी नहीं। शक्ल और सूरत से वह एक ओरिजिनल, ज़हीन नौजवान दिखाई देता है, मगर जब उसके अन्दर झाँककर देखा जाए तो वह एक मामूली इन्सान नज़र आता है। इन्सान के नाते वह बहुत अच्छा है—बहुत अच्छा है—मगर इन्सानियत के अलावा थोड़ी-सी हैवानियत भी होनी चाहिए। यानी एक ऐसी चीज़ जो इन्सान में एक किस्म का अनोखापन पैदा कर दे—तुम मेरा मतलब नहीं समझोगे।

ज़मान : (हँसता है) मैं समझ गया हूँ—तुम्हारा मतलब यह है कि इंसान में एक खास किस्म का विटामिन होना चाहिए। (हँसता है—खूब हँसता है)

शीरीं : न मालूम ऐसी संजीदा बातों में तुम्हें मज़ाक का पहलू कहाँ से नज़र आ जाता है—तो अब खामोश हो जाओ—तोबा—हँसी है या प्लेग—

[दस्तक की आवाज़]

शीरीं : देखो, कौन आया है ?

ज़मान : (हँसना बन्द करता है) जो भी होगा खुद-ब-खुद आ जायेगा—अरे, यह तो खुद नासर है।

[अन्तराल]

नासर : आदाब अर्ज़।

शीरीं : (जलकर) यह दिल्ली है—अभी-अभी आप भजनलाल से एक गीत सुन रहे थे—अब आप उन्हीं से एक और गीत सुनेंगे जिसके अगले बोल ये हैं—तुम्हें शर्म नहीं आती सजनी—नासर, खुदा के लिए अन्दर दाखिल होते ही हमको यूं आदाब अर्ज़ न करो—यूं मालूम होता है, रेडियो बोल पड़ा है—अब बैठ भी जाओ—कहो, कैसे आए ?

नासर : मैं इसलिए हाज़िर हुआ था कि···

शीरीं : यहाँ सोफ़े पर बैठ जाओ और इत्मीनान से अपनी हाज़िरी का सबब बताओ।

नासर : मैं आज पिक्चर देखने जा रहा हूँ। क्या आप भी साथ चल सकती हैं यानी अगर आपको फ़ुरसत हो तो।

शीरीं : बस, तुम यही पूछने आए थे ?

नासर : जी हाँ। फ़कत यही पूछने आया था। पिक्चर अच्छी है और मुझे यकीन है कि

आपका वक्त ज़ाया नहीं होगा।

ज़मान : यह तुमने कैसे कहा कि इसका वक्त ज़ाया न होगा। इसका वक्त तो अच्छी से अच्छी चीज़ देखने पर भी ज़ाया हो जाया करता है—खुद पूछ लो।

फ़ज़लू : बीबीजी—

शीरीं : क्या बात है फ़ज़लू···हाँ, मैं समझ गयी—भंगिन मिल गयी तुझे ?

फ़ज़लू : जी हाँ—बाहर खड़ी है।

शीरीं : मैं अभी आयी। (उठने की आवाज़—फिर कुछ क्षणों तक ऊँची एड़ी के शू की टप-टप सुनाई दे) रानी, मैंने तुझे एक खास काम के लिए बुलाया है। यह 9 नम्बर के फ़्लैट में कौन रहता है ?

रानी : जी, एक आदमी रहता है।

शीरीं : (हँसती है) हाँ-हाँ—फ़्लैटों में आदमी ही रहते हैं। मैं पूछती हूँ—यह आदमी कौन है, कैसा है, क्या करता है ?

रानी : बीबीजी, इस बात की तो मुझे खबर नहीं, पर इतना जानती हूँ कि एक गोरे-चिट्टे बाबूजी हैं, जो अकेले पड़े रहते हैं।

शीरीं : मैंने सुना है कि तुमने एक रोज़ चौकीदार को बताया था कि यह आदमी जो 9 नम्बर में रहता है, बिस्तर-तकिये के बगैर नंगे फ़र्श पर लेटता है। क्या यह बात सही है ?

रानी : जी हाँ, यह बात बिलकुल सही है—उनके घर में कोई मेज़-कुर्सी, चारपाई, पलंग नहीं है।

शीरीं : तो रहते कैसे हैं ?

रानी : बीबीजी, यह मुझे पता नहीं, कैसे रहते हैं। फिर एक रोज़ मैंने उनसे पूछा था—बाबूजी, आपका फ़र्नीचर कब आएगा ?

शीरीं : तो उन्होंने क्या जवाब दिया था ?

रानी : कहा था, फ़र्नीचर-वर्नीचर मैं पसन्द नहीं करता। ये जो आजकल की कुर्सियाँ-मेज़ें हैं, उनकी लम्बी-लम्बी टाँगें मुझे अच्छी नहीं लगतीं—ऐसा मालूम होता है सूखी-सूखी टाँगों वाले आदमी उठक-बैठक कर रहे हैं—वह तो बीबीजी, कुछ अजीब-से आदमी हैं।

शीरीं : (हँसती है) हाँ, तो और क्या कहते थे ?

रानी : अब मैं आपसे क्या कहूँ। कहते थे, अगर मैंने कुर्सियाँ और मेज़ें मँगवायीं तो उनकी टाँगों को ढकने के लिए पतलूनें भी बनवाऊँगा। (हँसती है)

शीरीं : (हँसती है) कोई और बात तुम्हें उनके मुताल्लिक मालूम हो ?

रानी : और तो कोई बात नहीं है। पर मैं इतना ज़रूर कहूँगी, वह सफ़ाई बहुत पसन्द करते हैं। हर रोज़ मुझसे सारे कमरों के फ़र्श धुलवाते हैं।

शीरीं : खाना कहाँ से खाते हैं ?

रानी : एक होटल से उनका हर रोज़ खाना आता है।

शीरीं : बस, मुझे यही पूछना था—अब तुम जा सकती हो।

रानी : सलाम, बीबीजी।

शीरीं : सलाम—लेकिन ठहरो—उनका नाम जानती हो ?

रानी : नहीं, नहीं, मुझे उनका नाम मालूम नहीं है।

शीरीं : अच्छा, तो जाओ।

रानी : सलाम, बीबीजी।

शीरीं : सलाम।

[कुछ क्षणों का अन्तराल—फिर शीरीं के चलने की आवाज़—एकदम ठहरने की आवाज़—साथ ही भारी कदमों की चाप]

शीरीं : बस, जा रहे हो—कुछ देर बैठोगे नहीं ?

नासर : अब फिर कभी आऊँगा—आप—आपने तो पिक्चर देखने से इन्कार कर दिया है।

शीरीं : यह जो तुम मुझे हर वक्त आप-आप करते रहते हो इसीलिए मैं तुम्हारे साथ कहीं जाने को तैयार नहीं होती—यानी जब भी तुम आते हो, खुलकर बात ही नहीं करते। आखिर तुम्हें हो क्या गया है—यहाँ जितने लोग आते हैं, उनमें से एक सिर्फ़ तुम हो जिसको मैं पसन्द करती हूँ। जिससे बातें करने को मेरा जी चाहता है। मगर तुम कुछ ऐसे आप-आप की उलझनों में पड़ते हो कि अदालती ज़बान में लिखी हुई अर्ज़ी बनकर रह जाते हो—उस रोज़ तुम मुझे सिनेमा ले गए। खुदा की कसम, मैं तुम्हारी खामोशी से इस कदर परेशान हो गयी थी कि जी चाहता था कि उठकर दौड़ती हुई जाऊँ और सामने चलती हुई फ़िल्म में घुस जाऊँ।

नासर : मुझे अफ़सोस है कि मेरी वजह से आपको उस रोज़ इतनी परेशानी उठानी पड़ी।

शीरीं : उफ़, ओह—भई, कैसे बर्फ़ जैसे ठण्डे इन्सान से वास्ता पड़ा है, और कुछ नहीं तो इस वक्त यह कहकर मेरा दिल खुश कर दिया होता कि तुम बेवकूफ़ हो जो खामोशी से घबराती हो।

नासर : मैं यह कैसे कह सकता हूँ ? मुझे खुद खामोशी अच्छी नहीं लगती।

शीरीं : तो अपनी इस आदत को दूर क्यों नहीं करते ?

नासर : यह आदत दूर हो सकती है अगर मैं किसी ऐसी औरत से शादी कर लूं जो खूबसूरत बातें करती हो।

शीरीं : इससे तुम्हारा मतलब ?

नासर : मैं खूबसूरत बातें करने वाली औरतों को पसन्द करता हूँ। अगर मेरी शादी किसी ऐसी औरत से हो जाए तो मैं समझता हूँ कि मेरी खामोशीपसन्द तबीयत में इन्कलाब आ सकता है।

शीरीं : साफ़-साफ़ बातें क्यों नहीं करते कि तुम मुझसे शादी करना चाहते हो।

नासर : इससे पहले एक बार मैं इशारे से आपसे दरख्वास्त कर चुका हूँ।

शीरीं : (जलकर) और नाचीज़ ने इशारे से जनाब को इसका जवाब दे दिया था।

नासर : मैं आपके इस इशारे को समझ न सका।

शीरीं : तो लीजिए। अबकी बार जनाब खुले लफ़्ज़ों में मुझसे सुन लें कि आपकी-मेरी शादी सिर्फ़ इसलिए नहीं हो सकती कि आप ज़रूरत से ज़्यादा शरीफ़ आदमी हैं —आपमें और सब खूबियाँ मौजूद हैं मगर आपमें ओरिजिनैलिटी बिलकुल नहीं है।

नासर : ओरिजिनैलिटी से आपका क्या मतलब है ?

शीरीं : वह चीज़ जो आपमें नहीं है—मगर आपको देर हो जाएगी—सिनेमा का वक्त हो रहा है।

नासर : जी हाँ—अच्छा तो आदा···

शीरीं : (बात काटकर) आदाब अर्ज़—

[नासर थोड़ा-सा हँसता है।]

शीरीं : यह आप हँसे थे ?

नासर : (एकदम संजीदा होकर) जी हाँ।

शीरीं : क्यों ?

नासर : ऐसे ही। अच्छा ··आदा···

शीरीं : (फ़ौरन) आदाब अर्ज़।

[नासर के चलने की आवाज़—दरवाज़ा खुलता है। फिर बन्द होता है—इसके बाद शीरीं ज़ोर-ज़ोर से हँसना शुरू करती है—हंसते-हँसते दूसरे कमरे में पहुँचती है।]

ज़मान : इतनी हँसी आखिर किस बात पर आ रही है ?

शीरीं : (हँसी मुश्किल से रोककर) तुम आहिस्ता-आहिस्ता नासर की तरह आदाब अर्ज़ करो। मैं तुम्हें बताती हूँ—कहो—आदाब अर्ज़।

ज़मान : आदा···

शीरीं : आदाब अर्ज़। (हँसना शुरू कर देती है।)

[ज़मान और शीरीं दोनों हँसते हैं।]

ज़मान : तुमने गरीब नासर को ज़रूर छेड़ा होगा। मैं कहता हूँ उस बेचारे को ज़्यादा तंग न किया करो। बड़ा शरीफ़ आदमी है।

शीरीं : उसकी ज़रूरत से ज़्यादा शराफ़त पर ही तो मुझे एतराज़ है—खैर, छोड़ो इस किस्से को—इस फ़र्नीचर के बारे में तुम्हारा क्या खयाल है ?

ज़मान : किस फ़र्नीचर के बारे में ?

शीरीं : यही जो इस कमरे में पड़ा है—तुम्हारा क्या खयाल है—क्या इन कुर्सियों, मेज़ों और तिपाइयों की टाँगें तुम्हें नंगी-नंगी नज़र नहीं आतीं ?

ज़मान : मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा।

शीरीं : मेरा मतलब यह है कि इन टाँगों की तरफ़ देखकर तुम्हारे दिमाग में क्या यह

खयाल नहीं आता कि इनकी—मैं यह कहना चाहती हूँ कि ये टाँगें क्या तुम्हें नंगी-नंगी दिखाई नहीं देतीं ?

ज़मान : ये क्या तुम ऊटपटाँग बातें कर रही हो। क्या इन मेज़ों, कुर्सियों और तिपाइयों की टाँगों के लिए तुम कोई लिबास तैयार करना चाहती हो ? (हँसता है) तरक्की-पसन्दी न जाने इस दौर में कितनी तरक्की कर गयी है।

शीरीं : नोज़ तुमसे कोई बात करे—लो बाबा, मेरी तोबा। भूल हुई मुझसे जो मैंने यह बात शुरू की—

[उठ खड़ी होती है—फ़र्श पर कुछ क्षण चलने की आवाज़—फिर साज़ छेड़ने की आवाज़—उसको आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड कर दिया जाए—मुर्ग की अज़ान—अन्तराल]

रानी : फ़ज़लू—ऐ फ़ज़लू !

फ़ज़लू : क्या है रानी ?

रानी : ज़रा इधर तो आ।

[अन्तराल]

फ़ज़लू : क्या है ?

रानी : कल बीबीजी ने मुझसे 9 नम्बर के साहब की बाबत कुछ पूछा था। आज मुझे एक नयी बात की खबर लगी है।

फ़ज़लू : क्या ?

रानी : मैं अभी-अभी उधर गयी तो देखा कि साहब रो रहे हैं···

शीरीं : रो रहे थे—कौन रो रहे थे ?

रानी : बीबीजी, सलाम।

शीरीं : सलाम—मगर यह तू किसकी बात कर रही थी ?

रानी : 9 नम्बर के साहब की।

शीरीं : 9 नम्बर के साहब—तो क्या वह सचमुच रो रहे थे ?

रानी : जी हाँ। मैं अभी-अभी उधर से ही आ रही हूँ—उनकी आँखों से मोटे-मोटे आँसू टपक रहे थे—जाने क्यों इतना रो रहे थे—मैंने जब उनकी तरफ़ देखा तो उन्होंने मुझसे कहा—'रानी, कभी तू भी रोई है ?' मैंने कहा—'हाँ साहब, कई बार रोई हूँ।' इस पर उन्होंने कहा, 'नहीं रानी, तू कभी नहीं रोई—रोना तो वह होता है, जो आवाज़ न दे'—अब मालूम नहीं बीबीजी, उससे उनका क्या मतलब था ?

शीरीं : रोना वह होता है जो आवाज़ न दे। (चौंककर) क्या कहा ?

रानी : जी, कुछ भी नहीं।

शीरीं : कोई और बात ?

रानी : और तो कोई बात नहीं है—मैंने जल्दी-जल्दी कमरे साफ़ किए और इधर चली आयी।

शीरीं : खैर—फ़ज़लू, जा एक काम कर । एस्प्रीन ले आ—रात मुझे नींद नहीं आयी। दर्द के मारे सिर फटा जा रहा है । भाग के जा ।

फ़ज़लू : बहुत अच्छा, बीबीजी ।

[शीरीं के चलने की आवाज़—कुछ क्षणों तक यह आवाज़ आती रहे जिससे यह ज़ाहिर हो कि वह दूसरे कमरे में जा रही है ।]

शीरीं : ज़मान—ज़मान—अभी तक सो रहे हो ?

ज़मान : नहीं तो—ऐसे ही लेटा हुआ···

शीरीं : कुछ सुना तुमने—रानी भंगिन ने मुझे अभी-अभी बताया है कि 9 नम्बर का वह पुरअसर आदमी रो रहा है ।

ज़मान : तो क्या हुआ—हँसना-रोना सभी के साथ है ।

शीरीं : मेरा मतलब है कि कोई बहुत बड़ा सदमा होगा जो वह रोया—

ज़मान : ऐसा हो सकता है ।

शीरी : मेरा खयाल हैं कि तुम जाओ और उससे मिलो—बहुत मुमकिन है कि हम उसका गम हलका कर सकें ।

ज़मान : लेकिन मैं तो उसे जानता ही नहीं ।उसकी शक्ल तक भी तो मैंने अभी नहीं देखी ।

शीरीं : इसी बहाने मुलाकात भी हो जाएगी ।

फ़ज़लू : बीबीजी, एस्प्रीन ले आया हूँ ।

शीरीं : लाओ, मुझे दो ।—ज़मान, तुम उठो और वहाँ जाओ ।

फ़ज़लू : बीबीजी, 9 नम्बर में से किसी के गाने की आवाज़ आ रही है ।

शीरीं : गाने की आवाज़ ! कौन गा रहा है ?

फ़ज़लू : यह मुझे मालूम नहीं ।

शीरीं : आवाज़ औरत की है या मर्द की ?

फ़ज़लू : आवाज़ तो मर्द की है, बीबीजी—पर बड़ी सुरीली है ।

शीरीं : मैं खुद जाकर सुनती हूँ—फ़ज़लू, दरवाज़ा बन्द है या खुला है ?

फ़ज़लू : बन्द है, बीबीजी ।

ज़मान : तुम खामख्वाह क्यों उस आदमी में दिलचस्पी ले रही हो ? सिर में तुम्हारे दर्द है । बैठो । एस्प्रीन खाओ और आराम करो ।

शीरीं : मैं अभी आयी ।

[चलने की आवाज़—दरवाज़ा खुलता है—फिर चलने की आवाज़—निम्नलिखित गज़ल के शुरू के स्वर करीब आते जाते हैं—]

मेरे काबू में न पहरों दिल-ए-नाशाद आया
वह मेरा भूलने वाला जो मुझे याद आया।
लीजिए सुनिए अब अफ़साना-ए-फ़ुरकत मुझसे
आपने याद दिलाया तो मुझे याद आया।
आपकी बज़्म में सब कुछ है मगर दाग नहीं
हमको वह खाना खराब आज बहुत याद आया।

[आहिस्ता-आहिस्ता यह गज़ल फ़ेड होती जाती है—दरवाज़ा खोलने की आवाज़ आती है। शीरीं कमरे तक चलती है—उसकी आवाज़]

ज़मान : सुन आयी हो गाना ?

शीरीं : कोई उस फ़्लैट में दाग की एक फड़कती हुई गज़ल गा रहा था—अच्छा गला पाया है। आवाज़ में दर्द है और उस दर्द में खलुस है—अच्छा शे'र है—(उसी अंदाज़ में गाती है—)

लीजिए सुनिए अब अफ़साना-ए-फ़ुरकत मुझसे
आपने याद दिलाया तो मुझे याद आया।

ज़मान : बहुत अच्छा शे'र है।

शीरीं : (कुछ और सोचते हुए) हाँ, खूब है—(अन्तराल) मगर वह तो इससे कुछ देर पहले रो रहा था—क्या बात है, मेरी समझ में तो कुछ भी नहीं आता—यह आदमी अजब पहेली बनता चला जा रहा है।

ज़मान : (दूर से) क्या कहा ?

शीरीं : कुछ नहीं—यह शे'र भी अच्छा है—(गाती है—)

मेरे काबू में न पहरों दिल-ए-नाशाद आया
वह मेरा भूलने वाला जो मुझे याद आया।

भई कुछ भी हो, गज़ल हिन्दुस्तानी शायरी की जान है।

[दूर से आवाज़ आती है नासर की—नासर फ़ज़लू से पूछता है—'क्या ज़मान साहब अन्दर हैं ?' फ़ज़लू जवाब देता है—'जी हाँ।']

शीरीं : ज़मान, नासर आए हैं।

ज़मान : (बुलन्द आवाज़ में) नासर साहब, अन्दर तशरीफ़ ले आइए।

[अन्तराल]

शीरीं : आदाब अर्ज़, नासर साहब।

नासर : तस्लीमात—कहिए, कैसी तबीयत है ?

शीरीं : अल्लाह का शुक्र है—फ़रमाइए, आप खैरियत से तो हैं ?

नासर : जी हाँ, बिलकुल तन्दुरुस्त हूँ—ज़मान साहब, आप उधर खड़े क्या कर रहे हैं ?

ज़मान : मैं दाग का दीवान देख रहा हूँ। (एक गज़ल निकालता है।)

शीरीं : 9 नम्बर में एक साहब आए हैं—उनके मुंह से दाग की एक गज़ल सुनी—खूब गाते हैं।

नासर : आपकी उनसे मुलाकात हुई ?

शीरीं : मुलाकात तो नहीं हुई। मैं बाहर कॉरीडोर में खड़ी थी। अन्दर से गाने की आवाज़। चुनांचे मैं कुछ देर वहाँ खड़ी यह गज़ल सुनती रही—मालूम नहीं कौन है ?

नासर : तो आप उनको बिलकुल नहीं जानते ?

शीरीं : कैसे जान सकते हैं जब कि वह घर के बाहर यह बड़ा नोटिस लगाए रखते हैं —'अज राहे करम दस्तक न दीजिए—साहबेखाना को आवाज़ दीजिए।'

नासर : ज़ाहिर है।

शीरीं : मैं सुनती हूँ, इस आदमी की अजीबोगरीब आदतें हैं—घर में उसके कोई मेज़, कुर्सी, चारपाई वगैरह नहीं है—कभी रोता है—कभी हंसता है—

नासर : यह आपको कैसे मालूम हुआ ?

शीरीं : इसकी तफ़सील में जाने की क्या ज़रूरत है—बस, किसी न किसी तरीके से मालूम कर लिया।

नासर : यह मैंने आपसे इसलिए पूछा था कि मैं उस आदमी को अच्छी तरह जानता हूँ।

शीरीं : किसको ?

नासर : वही जो नौ नम्बर में रहने के लिए आया है।

शीरीं : क्या नाम है उसका ?

नासर : नाम—कुछ ऐसा ही नाम है—क्या अहमद ? मैं उसे बहुत अच्छी तरह जानता हूँ।

शीरीं : तो आप उनसे हमारा इन्ट्रोडक्शन करा सकते हैं ?

नासर : अभी चलिए।

शीरीं : चलिए—मगर वह कहीं बुरा न माने—यानी मुमकिन है वह बहुत चिड़चिड़ी तबीयत का हो।

नासर : जी नहीं। वह तो बेहद शरीफ़ आदमी है—चलिए। ज़मान साहब, आप भी चलिए।

ज़मान : नहीं भाई। तुम लोग जाओ—मुझे कपड़े बदलने पड़ेंगे और···

शीरीं : हम दोनों चलते हैं।

[दोनों के चलने की आवाज़—दरवाज़ा खुलता है—फिर दोनों के कदमों की चाप]

शीरीं : आप दस्तक देंगे या आवाज़ ?

नासर : इन दोनों की ज़रूरत नहीं—चलिए—दरवाज़ा खुला है। (दरवाज़ा खुलने की आवाज़) आइए, आ जाइए—(आवाज़ देता है) अरे भई, कोई है ? (लम्बा अन्तराल)

शीरीं : अभी तक आए नहीं।

नासर : वह आ गए हैं।

शीरीं : (दबी आवाज़ में) कहाँ हैं ?

नासर : यह आपके सामने कौन खड़ा है ?

शीरीं : (दबे लहजे में) कहाँ ?

नासर : शीरीं, तुममें ज़रूरत से ज़्यादा भोलापन है—यह मुझे बिलकुल पसन्द नहीं—ज़ाहिरा तुम बहुत शोख और चंचल हो मगर असल में तुम हद दर्जे की भोली-भाली हो—इतने दिन हो गए हैं तुम्हें मुझसे मिलते हुए, मगर तुमने मुझे बिलकुल नहीं समझा—नौ नम्बर का आदमी मेरे सिवा और कौन हो सकता है ?

शीरीं : यह—यह—यह क्या कह रहे हो तुम ?

नासर : अब खामोश रहो—ऐसा न हो कि मैं बिगड़ जाऊँ—बैठो—चाय पीएँ—(लहजा बदलकर) यह फ़र्नीचर मैंने खास तौर पर बनवाया है—कहो, कैसा है ?

शीरीं : मगर—मगर—पर कैसे हो सकता है ?

नासर : लीजिए सुनिए अब अफ़साना-ए-फ़ुरकत मुझसे
आपने याद दिलाया तो मुझे याद आया ।

(फ़ेड आउट)

करवट

करवट

पात्र

बीवी

मियाँ

लड़की

सुन्दरी

एक मर्द, दूसरा मर्द, तीसरा मर्द

[मेज़ पर खाना और छुरी-काँटे रखने की आवाज़]

बीवी : चलिए, खाना तैयार है।

मियाँ : ज़रा ठहरो। मुझे एक मेहमान का इन्तज़ार है।

लड़की : कौन आ रहे हैं ?

मियाँ : तुम्हें अभी मालूम हो जाएगा। एक औरत आने वाली है।

बीवी : औरत ?

मियाँ : हाँ, औरत जो हमारी पड़ोसिन है।

लड़की : हमारे पड़ोस में तो कोई औरत नहीं रहती।

मियाँ : भूलती हो।

बीवी : एक वेश्या है जो कुछ दिनों से साथ वाले मकान में रहती है। सारा दिन ऊधम मचाए रखती है। वह तो हो नहीं सकती।

मियाँ : वह क्यों नहीं हो सकती ?

बीवी : इसलिए···इसलिए कि वह एक बाज़ारी औरत है।

लड़की : सब उसे नफ़रत की निगाहों से देखते हैं।

मियाँ : चूँकि सब उसे नफ़रत की निगाहों से देखते हैं, इसीलिए मैंने उसे दावत दी है और अपने यहाँ बुलाया है।

बीवी : लोग क्या कहेंगे ?

मियाँ : यह कहेंगे कि मैंने एक गन्दी औरत को अपने घर बुलाया और उसे अपनी बीवी और लड़की के साथ बैठाकर खाना खिलाया। उससे बातें कीं और फिर रुखसत कर दिया।

लड़की : क्या इससे कोई फ़ायदा होगा ?

मियाँ : फ़ायदा सिर्फ़ यह है कि वह अपना सुधार कर सके। मैं तुम दोनों को कई बार कह चुका हूँ कि इन्सान का हर वक्त सुधार हो सकता है। इसलिए कि इसमें नेकी का गुण कभी खत्म नहीं हो सकता। खतरनाक से खतरनाक मुजरिम के सीने में भी किसी कोने के अन्दर नूर का एक ज़र्रा होता है जिसे अगर छेड़ा जाए तो उसके स्याह दिल को रौशन करने का सबब बन सकता है। यह वेश्या, जो थोड़े दिनों से हमारे पड़ोस में आयी है, सिर्फ़ जिस्मानी तौर पर खराब है—रूह एक पाकीज़ा चीज़ है। उसे कोई ताकत मैला नहीं कर सकती। खराब कामों से सिर्फ़ परदे के पीछे छुप जाती है। जितना ज्यादा इन्सान बुराइयाँ करता है उतना ही ज्यादा परदा मोटा होता जाता है। मगर इसका मतलब यह नहीं कि उसका ज़मीर, जो रूह का दूसरा और आसान नाम है, मर जाता है। उस परदे को आहिस्ता-आहिस्ता या एकदम हटा दिया जाए तो उस इन्सान का दिल-व-दिमाग फिर से रौशन हो सकता है।

बीवी : क्या आप उस औरत का सुधार कर सकेंगे ?

मियाँ : अगर एक चिराग से दूसरा चिराग रौशन हो सकता है तो एक इन्सान दूसरे इन्सान को नेकी का रास्ता ज़रूर बता सकता है। यह नेक काम मुझसे हो जाए तो मुझसे खुशनसीब इन्सान और कौन होगा—दुआ करो कि ऐसा ही हो।

लड़की : फिर भी उसका यहाँ आना मुझे पसन्द नहीं।

मियाँ : लड़की, तुझे इस खयाल ही से काँपना चाहिए कि तू एक इन्सान से नफ़रत कर रही है। तुझे याद नहीं, ऐसी ही एक वेश्या को पत्थर मार-मारकर मारने वालों से हज़रत ईसा ने कहा था, "तुममें से जो गुनाहगार नहीं वह उसे पत्थर मार सकता है।" हम सब गुनाहगार हैं। इसलिए हमें किसी को नफ़रत की निगाह से नहीं देखना चाहिए।

लड़की : अगर वह वाकई अच्छी हो जाए तो इससे बेहतर और क्या होगा। लेकिन सवाल यह है कि क्या वो भी अच्छा बनना चाहती है ?

बीवी : देखेंगे।

मियाँ : काम शुरू करने से पहले आदमी को अपने ऊपर भरोसा होना चाहिए। जब से वह यहाँ आयी है, मैं सोचता रहा हूँ। उठते-बैठते, खाते-पीते यही सोचता रहा हूँ कि मुझमें क्या इस काम का बीड़ा उठाने की ताकत है ? आज पन्द्रह दिन से लगातार सोच-विचार करने के बाद जब मैंने महसूस किया कि मैं यह काम कर सकता हूँ तो मैं उसके पास गया। मुझे देखकर वह घबरा गयी। जब मैंने उससे कहा—"आज रात हमारे घर आओ और शाम का खाना मेरी बीवी और लड़की के साथ खाओ" तो वह भौचक्की-सी हो गयी—मैंने महसूस किया कि उस रोशनी में, जो उसके अन्दर दबी पड़ी है, एक हरकत-सी पैदा हुई। उसने बड़ी कोशिश से अपने लहजे में शराफ़त पैदा की और जवाब दिया—"आपकी बहुत मेहरबानी—मैं हाज़िर हो जाऊँगी।"

[दूर से एक अश्लील किस्म का रिकार्ड बजने की आवाज़ आती है। रिकार्ड बजने के कुछ लमहों बाद ही मर्दाना कहकहों का शोर सुनाई देता है जैसे दो-तीन मर्द शराब पीकर गाने का लुत्फ़ उठा रहे हों। ये आवाज़ें दूर से आ रही हैं।]

बीवी : अब वह हाज़िर हो चुकी—यह शोर सुना आपने ?

मियाँ : सुना—लेकिन मैं निराश नहीं हुआ।

बीवी : मेरा कहा मानिए और उसके सुधार का खयाल छोड़िए।

लड़की : और मालिक-मकान से मिलकर उसे बाहर निकालने की कोशिश कीजिए।

बीवी : मैं सुनती हूँ कि मालिक-मकान को इस बात की कुछ खबर ही नहीं कि उसका मकान एक बाज़ारी औरत ने किराए पर लिया है।

मियाँ : यहाँ से निकाल दी जाएगी तो कहीं और जा रहेगी।

लड़की : कम से कम यहाँ की गन्दगी तो दूर होगी।

मियाँ : अपने घर का कूड़ा किसी और घर के आगे ढेर कर देना अक्लमंदी नहीं। क्यों न उस गन्दगी को हमेशा के लिए दूर करने की कोशिश की जाए।

बीवी : आपने कोशिश की थी मगर वह नहीं आई।

मियाँ : मैं एक बार फिर कोशिश करूँगा।

[पृष्ठभूमि में अश्लील गानों और कहकहों का शोर उभरता है। इसका मतलब यह है कि दृश्य बदल गया है और हम दर्शकों को वेश्या के मकान में ले गए हैं—रिकार्ड खत्म होता है।]

एक मर्द : वाह वा···वाह वा···वाह वा !

दूसरा मर्द : क्या कहने हैं सुन्दरी बाई के !

तीसरा मर्द : क्या है, जो यहाँ नहीं है। शराब, ठण्डा सोडा, नई-नई फ़िल्मों के रिकार्ड —सुन्दरी बाई का कोठा तो अजायबघर है, अजायबघर।

पहला मर्द : (हँसता है) अजायबघर में शराब, ठण्डा सोडा और नई फ़िल्मों के रिकार्ड कहाँ—जो बात करेगा साले, अजीब ही करेगा।

[सब हँसते हैं।]

सुन्दरी : मेरा कोठा अजायबघर नहीं तो चिड़ियाघर ज़रूर है।

[सब हँसते हैं।]

पहला मर्द : रंग-रंग के जानवर आते हैं।

तीसरा मर्द : सुन्दरी बाई ! यह बात ठीक नहीं। हमें जनावर बना दिया—क्या हम जनावर दिखाई देते हैं ?

सुन्दरी : (मुस्कराकर) चिड़ियाघर में शेर भी तो होते हैं, खाँ साहब।

महला मर्द : (अपने साथी की पीठ ठोंककर) वाह मेरे शेर···!

[सब हँसते हैं।]

तीसरा मर्द : बातें करना तो कोई सुन्दरी से सीखे ।

सुन्दरी : जी कहाँ बातें करनी आती हैं—आज एक दाढ़ी वाले बुज़ुर्ग आए। उनके सामने तो मैं बिलकुल गूंगी हो गयी थी ।

पहला मर्द : क्या करने आए थे मौलाना ?

सुन्दरी : कहते थे, आओ, रात का खाना हमारे घर खाओ।

तीसरा मर्द : आदमी मेहमाननवाज़ थे ।

पहला मर्द : जो बात करोगे उलटी—गधे, चुगद कहीं के—मेहमान तो वह खुद था सुन्दरी बाई का—हाँ, तो सुन्दरी बाई, फिर क्या हुआ ? पेट भरा तुमने उसका ?

सुन्दरी : नहीं। वह सचमुच दावत देने आया था—वह सामने मकान है उसका।

दूसरा आदमी : क्या कहती हो सुन्दरी—अरे, वह तो बहुत बड़े वो हैं···

तीसरा आदमी : क्या मतलब ?

दूसरा आदमी : वही···यानी बड़े नेक आदमी हैं···कैसे आ गए यहाँ ?

सुन्दरी : बात यह है कि मेरा आना-जाना यहाँ लोगों को बहुत बुरा लगा है। निगोड़े चाहते हैं, किसी न किसी तरह मुझे इस मकान से धक्का मिल जाए। अब क्या बताऊँ तुम लोगों को। नाक में दम कर दिया है पड़ोस के लौंडों ने। कोठों पर चढ़-चढ़कर कूड़ा-करकट फेंकते हैं—जरा बाहर नज़र डालो—ये सब हड्डियां आज ही फेंकी गई हैं—अब कल सवेरे भंगिन आएगी तो उठवाऊँगी···मेरा खयाल है कि वह भी इसीलिए आया था। मरदूद !यूं तो खाने की दावत दे गया था । जाती तो महीन-महीन चुटकियाँ लेकर या तो नसीहतें करता या फ़ज़ीहतें ।

तीसरा आदमी : अजी, हटाओ साले को ।

दूसरा आदमी : अच्छा हुआ, जो तुम न गयीं । अगर चली जातीं तो बन्दा तो जंगल की राह लेता—मियाँ, सुन्दरी का दम बहुत गनीमत है ।

पहला आदमी : क्या शक है !

सुन्दरी : आग लगे सुन्दरी और उसके दम को । कहीं भी तो चैन नहीं मिलता निगोड़-मारी को—दर-ब-दर की ठोकरें लिखी हैं नसीब में । देख लेना यहाँ से भी लोग चन्द दिनों के बाद निकाल बाहर करेंगे। अब मैं क्या कहूँ उनसे। किसी से कुछ लेती नहीं, देती नहीं। फिर जाने क्यों मुझ निगोड़मारी की जान के पीछे पड़े रहते हैं—इधर तुम लोगों की खुशामद करूँ, उधर उनके आगे हाथ जोड़ूँ···दो महीने का किराया पूरे अस्सी रुपये पेशगी मुंशी ठोंक-बजाकर ले गया, फिर इस मकान का दरवाज़ा खोला गया था—कुछ भी हो, अब मैंने भी फ़ैसला कर लिया है, मर जाऊँगी पर इस मकान से कभी नहीं निकलूंगी ।

[दरवाज़े पर दस्तक होती है।]

पहला आदमी : यह कौन ?

सुन्दरी : होटल का छोकरा होगा ।

दूसरा आदमी : हाँ, खाली बोतलें लेने आया होगा ।

[दरवाज़ा खुलता है।]

सुन्दरी : कौन हो तुम ?

मियाँ : मैंने, मेरी बीवी ने, मेरी लड़की ने अभी तक खाना नहीं खाया—हम तुम्हारे इन्तज़ार में थे।

सुन्दरी : मुझे फ़ुरसत नहीं है, जाओ।

मियाँ : कितनी देर में फ़ुरसत हो जाएगी ? हम एक-दो घण्टे और इन्तज़ार कर सकते हैं।

सुन्दरी : तुम देखते नहीं यहाँ कौन बैठे हैं ?

मियाँ : देख रहा हूँ। मेरे भाई हैं। ये भी साथ चलें।

सुन्दरी : अपने इन भाइयों को साथ ले जाओ। मैं नहीं जाऊँगी।

मियाँ : क्यों ?

सुन्दरी : बस, मैं नहीं जाऊँगी। यह तुम हिन्दी की चिन्दी क्या करते हो !

मियाँ : माफ़ी चाहता हूँ···लेकिन एक बार फिर दरख्वास्त करूँगा कि तुम अपना वायदा पूरा करो। हम दो घण्टे और तुम्हारा इन्तज़ार कर सकते हैं।

सुन्दरी : (**स्वर में कड़वाहट और गुस्सा पैदा हो जाता है**) तुम चाहते क्या हो मुझसे—दफ़ा क्यों नहीं होते यहाँ से—ये जिन्हें तुम अपना भाई कहते हो, अव्वल दर्जे के शराबी-कबाबी हैं—सुना ? ये मेरे ग्राहक हैं। मैं इनके पास अपना-आप बेचती हूँ —समझे ? मैं एक बाज़ारी औरत हूँ—एक वेश्या—क्या चाहते हो तुम मुझसे ? मैं किसी के घर नहीं जाया करती। मेरी सजी-सजाई दूकान मौजूद है—लोग खुद चलकर यहाँ आते हैं···जो माल बेचती हूँ, तुम्हें खरीदना हो तो आओ, अपने इन भाइयों के साथ बैठ जाओ—एक बोतल शराब की मँगाओ, पीओ और पिलाओ···

दूसरा आदमी : सुन्दरी···

सुन्दरी : खामोश रहो···तंग कर रखा है इन शरीफ़ आदमियों ने मुझे—आज तो मुझे जी हलका कर लेने दो—दिन और रात के खाने पर इनके यहाँ जो हड्डियाँ जमा होती हैं, मेरे घर के सहन में फेंक दी जाती हैं। जो कूड़ा इकट्ठा होता है, इधर लुढ़का दिया जाता है। इन्सान को इन्सान ही नहीं समझा जाता—अब मुझे दावत दी जा रही है—क्यों ? क्या ज़हर देने का इरादा है ?

मियाँ : मुझे अफ़सोस है। कुछ लोगों की बेवकूफ़ी के कारण तुम्हें दुःख पहुँचा। जो कूड़ा तुम्हारे घर फेंका जाता है, कहो तो मैं हर रोज़ झाड़ू देकर साफ़ कर दिया करूँ ?

सुन्दरी : मुझे इसकी ज़रूरत नहीं—जाओ, यहाँ से दफ़ा हो जाओ—जाओ।

दूसरा आदमी : सुन्दरी !

सुन्दरी : सुनते हो कि नहीं—मैं कहती हूँ भाग जाओ यहाँ से।

दूसरा आदमी : सुन्दरी—खामोश हो जाओ अब—(**दूसरी ओर मुंह करके**) आप इस वक्त तशरीफ़ ले जाइए। चढ़ गई है इसके दिमाग को।

सुन्दरी : चढ़ गई है, मेरे दिमाग को···चलो ऐसा ही सही···अब जाओ। टुकुर-टुकुर मेरा मुँह क्या देखते हो ? क्या और बेइज्ज़ती करवाना चाहते हो ?

मियाँ : मेरी तुमने कोई बेइज्ज़ती नहीं की—मैं फिर आऊँगा।

सुन्दरी : इस वक्त तो जाओ। (ज़ोर से दरवाज़ा बन्द कर देती है।)

दूसरा आदमी : (थोड़े अन्तराल के बाद) सुन्दरी, यह तुमने क्या किया—च्च च्च च्च —कभी-कभी तुम हद ही कर देती हो।

सुन्दरी : बकवास मत करो···

[वही रिकार्ड लगाती है जो पहले बजाया गया है—कुछ देर बजाने के बाद उसको आहिस्ता-आहिस्ता धीमा कर दिया जाए। जब नीचे की वार्ता शुरू हो तो पृष्ठ-भूमि में इस रिकार्ड की आवाज़ आती रहे।]

लड़की : मालूम होता है उन्हें नाकामी हुई है।

बीवी : रिकार्ड जो अब बजना शुरू हुआ है उससे तो यही पता चलता है।

लड़की : जब न तब यही रिकार्ड बजाया जाता है। मैं तो सुनते-सुनते तंग आ गई हूँ। कमबख्त टूट भी तो नहीं जाता।

बीवी : न कभी यह टूटेगा न कभी यह वेश्या यहाँ से दफ़ा होगी।

[रिकार्ड खत्म होता है। शराबियों के कहकहों की आवाज़]

लड़की : जाने किस बात पर इतनी हँसी आती है उन्हें ?

बीवी : मज़ाक उड़ा रहे हैं तुम्हारे बाप का।

[दरवाज़ा खोलने की आवाज़]

मियाँ : मेरा किसी ने मज़ाक नहीं उड़ाया। वे तो बहुत शरीफ़ आदमी हैं।

बीवी : कौन ?

मियाँ : वही जो उस औरत के पास बैठे हैं। मैं गया तो उन्होंने मेरी बड़ी इज्ज़त की।

बीवी : आपके साथ वह नहीं आई ?

मियाँ : अपने मेहमानों को छोड़कर कैसे चली आती !

लड़की : ज़रूर उसने इन्कार किया होगा।

मियाँ : आदमी कभी-कभी जल्दी में गलत फ़ैसला कर लेता है। बाद में उसको बदल भी देता है।

बीवी : चलिए, खाना ठण्डा हो रहा है।

मियाँ : मैं नहीं खाऊँगा, तुम दोनों खा लो।

लड़की : इस औरत ने तो आपका खाना-पीना और सोना हराम कर दिया है—लानत भेजिए···

मियाँ : लड़की, वो इन्सान जो दूसरे इन्सान पर लानत भेजे, इन्सान कहलाने का कभी हकदार नहीं हो सकता। वह बेचारी पहले ही एक लानत में गिरफ़्तार है। अब उस पर तुम और लानतें भेजना चाहती हो। दुनिया में लानतों का रिवाज इसी वजह से

तो है—जाओ, खाना खाओ और आराम करो ।

[दूर से लड़ने-झगड़ने की आवाज़ें आती हैं। उन आवाज़ों में सुन्दरी की आवाज़ भी शामिल है ।]

बीवी : यह क्या हुआ ?

लड़की : शरीफ़ आदमी अपनी शराफ़त दिखा रहे हैं ।

[शोर तेज़ हो जाता है ।]

बीवी : यह तो कोई बहुत बड़ी फ़ज़ीहत मालूम होती है ।

मियाँ : मैं जाकर देखता हूँ ।

बीवी : नहीं, आप न जाइए···

लड़की : शराबी हैं, नशे में कोई चीज़ दे मारेंगे···

बीवी : यह तो झगड़ा मालूम होता है, अपने पड़ोसियों से कर रही है ।

मियाँ : वे सताते जो रहते हैं। मैं उनको समझाता हूँ ।

[दूर से आवाज़ आती है किसी मर्द की, जो सुन्दरी को रोकना चाहता है—"सुन्दरी ···सुन्दरी···रुक जाओ···ठहरो सुन्दरी···!" साथ ही कदमों की दबी-दबी चाप भी सुनाई देती है—फिर एकदम दरवाज़ा ज़ोर से खुलता है और माइक्रोफ़ोन के बिलकुल पास ही मर्द 'सुन्दरी' पुकारता है ।]

सुन्दरी : (साँस फूला हुआ है) यह क्या तमाशा बना रखा है तुम शरीफ़ों ने···एक पल के लिए भी मुझे चैन नहीं लेने दिया जाता···क्या बिगाड़ा है मैंने तुम लोगों का ? बताओ ! बताते क्यों नहीं···बड़े भोले, बड़े शरीफ़ बनते हो। पर ये काँटे तुम्हारे ही तो बोए हुए हैं···आए थे मुझे खाने की दावत देने—दो घण्टे मेरा इन्तज़ार करने को तैयार थे । पर उन हरामी लौंडों को पत्थर देकर भेजने में तुमने एक मिनट की देर न की···देखते हो मेरा माथा···देखते हो यह लहू···डूब मरना चाहिए तुम्हारी शराफ़त को ।

दूसरा आदमी : सुन्दरी, अब चलो यहाँ से ।

सुन्दरी : तुम डरते हो ? इस बेईमान और धोखेबाज़ से डरते हो ? सामने खड़ी हूँ न। मुँह नोच डालूं अगर एक लफ़्ज़ भी मुँह से निकाले—रण्डी से उलझने का मज़ा न चखा दूं तो मेरा नाम सुन्दरी नहीं···नाक में दम आ गया है मेरा। हर रोज़ एक नया तरीका मुझे छेड़ने का निकाला जाता है। हर रोज़ मेरे घर में गन्दगी फेंकी जाती है—सुन लो, अगर फिर कभी मुझे यूं सताया गया तो मुझसे बुरा कोई न होगा। तुम्हारी इन नेक बीवियों की ज़िन्दगी दूभर कर दूंगी···

मियाँ : गुस्सा ठण्डा हो गया—अब मुझे बताओ, बात क्या हुई ?

सुन्दरी : (और अधिक क्षोभ के साथ) मेरा गुस्सा उस वक्त ठण्डा होगा जब तुम्हारे मुँह पर थूक दूंगी—थू···

दूसरा आदमी : (घबराकर) सुन्दरी···

सुन्दरी : बको नहीं···सुना, अब मेरा गुस्सा ठण्डा हुआ है।
मियाँ : (बड़ी आजिज़ी के साथ) तो बैठ जाओ और हमारे साथ खाना खाओ।
सुन्दरी : तुम···तुम···

[भावनाओं के उफ़ान के साथ रो देती है और तेज़ कदमों से बाहर चली जाती है। दरवाज़ा बन्द होता है। कदमों की आवाज़ कुछ लमहों तक जारी रहती है—रोने की आवाज़ भी साथ-साथ आती है—इसका मतलब यह है कि सुन्दरी अपने घर जा रही है।]

दूसरा आदमी : सुन्दरी !
सुन्दरी : (रोते हुए) चुप रहो।
दूसरा आदमी : तुमने बहुत बड़ी गलती की।
सुन्दरी : (रोते हुए) मैं कहती हूँ चुप रहो—चुप रहो—चुप रहो।
दूसरा आदमी : कितना शरीफ़ आदमी है।
सुन्दरी : सात झाड़ू और हुक्के का पानी इसकी शराफ़त पर।
दूसरा आदमी : कभी-कभी तुम बिलकुल आपे से बाहर हो जाती हो···
सुन्दरी : (रोते हुए) दूर होते हो या नहीं यहाँ से··· (धक्के देकर उसे बाहर निकाल देती है) खबरदार, फ़िर कभी यहाँ न आना···जाओ···जाओ···(दरवाज़ा ज़ोर से बन्द कर देती है और खुद फूट-फूटकर रोना शुरू कर देती है)···कभी-कभी मैं बिलकुल आपे में नहीं रहती···मेरा दिल पत्थर का तो नहीं है···और यह चोट जो मेरे माथे पर लगी है···और यह लहू···मैं इसका बदला न लेती···थूक ही तो फेंकी थी मैंने। भाला तो नहीं मार दिया था···बैठ जाओ और खाना खाकर जाओ ···जैसे मुझे खाने को कुछ मिलता ही नहीं। भिखारिन हूँ···(रोती है)···पाजी कहीं का···(उस रिकार्ड पर सुई रखती है। रिकार्ड बजना शुरू होता है···सुन्दरी की सिसकियाँ भी साथ-साथ सुनाई देती हैं)···मरदूद···धोखेबाज़···(कुछ सैकेण्ड रिकार्ड बजता है—सुन्दरी मन की बौखलाहट से उकताकर चिल्ला उठती है) नहीं ···नहीं···नहीं···

[रिकार्ड एकदम उठा लेती है और ज़मीन पर पटक देती है। फिर फूट-फूटकर रोना शुरू कर देती है। रोने की यह आवाज़ आहिस्ता-आहिस्ता समाप्त कर दी जाए।]

[अन्तराल]

बीवी : आज कई दिन से रिकार्ड नहीं बजा।
लड़की : शोर-वोर भी सुनाई नहीं दिया।
मियाँ : पता नहीं क्या बात है। तीन-चार बार उसके घर गया हूँ। अन्दर से दरवाज़ा बन्द होता है। दस्तक देता हूँ, पर कोई बोलता ही नहीं।
बीवी : शायद बीमार हो।

मियाँ : मैंने यही सोचा था और इसीलिए गया भी था, पर उसने दरवाज़ा ही नहीं खोला।

लड़की : उसने आपसे उस दिन जो सलूक किया···

मियाँ : भूल जाओ उसको। ऐसी बातें कभी याद नहीं रखनी चाहिए।

बीवी : क्या आपका अब भी यही खयाल है कि उसे सुधारा जा सकता है ?

मियाँ : बिलकुल।

बीवी : कैसे ?

मियाँ : कुदरत खुद-ब-खुद कोई रास्ता पैदा कर देगी।

[दरवाज़े पर दस्तक होती है।]

बीवी : (लड़की से) बेटी, देखो तो कौन है ?

मियाँ : तुम बैठो, मैं देखता हूँ।

[कदमों की चाप—दरवाजा खोलने की आवाज़]

मियाँ : आओ—आओ—आ जाओ।

सुन्दरी : (शर्मिन्दगी के अहसास के साथ) मैं···मैं···

मियाँ : कई बार तुम्हारे मकान पर गया मगर शायद तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं थी।

सुन्दरी : (रुँधी हुई आवाज़ के साथ) मुझे···मुझे माफ़ कर दीजिए।

मियाँ : (मुस्कराकर) किस बात की माफ़ी माँगती हो···आओ, बैठो···तुमने कोई बात ऐसी नहीं की जिससे मुझे रंज पहुँचा हो।

सुन्दरी : मैंने उस दिन बहुत बड़ा पाप किया। मुझे माफ़ कर दीजिए। (पाँवों पड़ते ही रोना शुरू कर देती है।)

मियाँ : अरे···रे···यह क्या···सुन्दरी, उठो···मुझे गुनाहगार न करो।

सुन्दरी : आप एक बार कह दीजिए कि मैंने माफ़ कर दिया।

मियाँ : लो भई, कह दिया···उठो अब···

सुन्दरी : (सुबकियाँ) इतने दिन मुझे नींद नहीं आई···बस, सोचती रही···क्या-क्या खयाल मुझे नहीं आए···कई बार सोचा, कुछ खाकर मर जाऊँ···

मियाँ : खुदकुशी कमज़ोर आदमी करते हैं।

सुन्दरी : मैं तो ज़रूर कर लेती अगर मुझमें हिम्मत होती।

मियाँ : यह हिम्मत ही कमज़ोरी का दूसरा नाम है।

सुन्दरी : मुझे माफ़ कर दिया न आपने ?

मियाँ : (मुस्कराता है) हाँ, कर दिया···आओ, बैठो।

सुन्दरी : मैं बस माफ़ी माँगने और यह कहने आई थी कि कल यहाँ से चली जाऊँगी।

मियाँ : सुनो तो···सुनो तो···

[कदमों की चाप]

मियाँ : चली गई··· (अन्तराल) खैर—

लड़की : क्या यह वही औरत थी ?
मियाँ : वही, बिलकुल वही। मगर तुमने इन्कलाब देखा ?···कुछ ही दिनों में क्या से क्या हो गई है।
लड़की : आज चेहरे पर पाउडर-सुर्खी भी नहीं थी।
मियाँ : (अन्तराल) मगर यहाँ से जा क्यों रही है ?
बीवी : क्या करेगी यहाँ रहकर—शायद कहीं बाहर जाकर शरीफ़ाना ज़िन्दगी बसर कर सके।
मियाँ : शरीफ़ाना ज़िन्दगी यहाँ रहकर भी बसर कर सकती है···मुझे उसको समझाना चाहिए। कहाँ दर-ब-दर मारी-मारी फिरेगी···उसको यह बेवकूफ़ी नहीं करनी चाहिए।
बीवी : अब आप उसी के पास जा रहे हैं ?
मियाँ : हाँ।

[कदमों की चाप कुछ क्षणों तक—इसके बाद दस्तक]

सुन्दरी : (अन्दर से आवाज़ देती है) कौन है ?
मियाँ : मैं···

[दरवाज़ा खुलता है।]

मियाँ : अन्दर आ सकता हूँ ?
सुन्दरी : (घबराते और कुछ झेंपते हुए) आइए···आइए।

[दरवाज़ा बन्द होता है।]

मियाँ : तुमने तो सचमुच जाने की तैयारी कर ली !
सुन्दरी : जी हाँ। कल चली जाऊँगी।
मियाँ : कहाँ जाओगी ?
सुन्दरी : चली जाऊँगी कहीं···इस ज़िन्दगी से अब नफ़रत हो गयी है।
मियाँ : इतनी जल्दी ?
सुन्दरी : आदमी को बदलते क्या देर लगती है ?
मियाँ : तुम जाओ नहीं···यहीं रहो।
सुन्दरी : जी नहीं। अब मैं यहाँ नहीं रहूँगी।
मियाँ : मैं थोड़ी देर के लिए यहाँ बैठ सकता हूँ ?
सुन्दरी : क्यों नहीं—यह आप क्या कह रहे हैं···शौक से बैठिए।
मियाँ : (रुककर) नहीं—मेरा आना तुम्हें नागवार गुज़रा है।
सुन्दरी : जी नहीं। नागवार क्यों गुज़रने लगा···आप···आप···तशरीफ़ रखिए।
मियाँ : (बैठ जाता है)···तुम बहुत अच्छी हो।
सुन्दरी : जो आप अच्छे होते हैं वे बुरों को भी अच्छा समझते हैं।
मियाँ : तुममें क्या बुराई है ? एक थी सो दूर हो गयी···अब आराम से ज़िन्दगी बसर

करो। यहाँ से जाने की क्या ज़रूरत है? तुम्हें कोई नहीं सताएगा। मैं इसका वायदा करता हूँ।

सुन्दरी : आपकी बहुत मेहरबानी। लेकिन वहाँ मेरा गुज़र कैसे होगा···किसी घर में आप मुझे नौकर करा दें···लेकिन मुझे नौकर कौन रखेगा?

मियाँ : यहाँ मेरे पास बैठो···बैठ जाओ···**(सुन्दरी झिझकती-झिझकती पास बैठ जाती है)** तुम नौकर बनना चाहती हो···किसकी?

सुन्दरी : कोई भी रख ले।

मियाँ : **(आवाज़ में लड़खड़ाहट-सी पैदा हो जाती है)** और जो कोई खुद तुम्हारा नौकर बनना चाहे? **(सुन्दरी का हाथ अपने हाथ में लेता है, मगर वह फ़ौरन यूं हटा लेती है जैसे साँप ने डस लिया हो)** मेरा मतलब है—मेरा मतलब है···

सुन्दरी : क्या मतलब है आपका?

मियाँ : देखो सुन्दरी···अब तुम्हें कोई न सताएगा। बड़े आराम से ज़िन्दगी बसर करोगी···कुछ दिनों ही में बहुत बड़ा फ़र्क महसूस होगा और···और···**(खुश्क मुस्कराहट के साथ)** तुम्हारी ज़िन्दगी अब एक नयी करवट बदलेगी···सुन्दरी, तुम नहीं जानतीं कि तुम कितनी सुन्दर हो···तुम्हें बुरे-बुरे आदमियों की संगत में देखकर मुझे कितना दुःख होता था···लेकिन अब···तुम खामोश क्यों बैठी हो··· कुछ बोलो···कुछ कहो···

सुन्दरी : **(एकदम उठ खड़ी होती है। बहुत कुछ कहना चाहती है, मगर कह नहीं सकती)** चले जाइए यहाँ से।

मियाँ : लेकिन···लेकिन···

सुन्दरी : चले जाओ यहाँ से।

मियाँ : अच्छा···अच्छा···तो मैं कल आऊँगा···तुम सोच लेना।

[कदमों की चाप—दरवाज़ा खुलने, फिर एकदम ज़ोर से बन्द करने की आवाज़—उसके बाद फिर कदमों की चाप। कुछ लमहों बाद दरवाज़ा खुलने की आवाज़ जिसका मतलब है कि हमारा कैरेक्टर अपने मकान में पहुँच गया है।]

बीवी : मिल आए?

मियाँ : हाँ, मिल आया···वह तो जाने के लिए बिलकुल तैयार थी।

बीवी : आपके कहने से रुक गयी?

मियाँ : हाँ, रुक ही गयी। बहुत देर तक समझाना पड़ा।

बीवी : क्या कहती थी?

मियाँ : कुछ नहीं। बेचारी बहुत परेशान थी—आदमी परेशान हो ही जाता है। उस हालत में वर्षों एक ही डगर पर चलते-चलते एकदम नया रास्ता अख्तियार करते वक्त दिल-व-दिमाग पर बहुत असर पड़ता है।

लड़की : तो अब वह नहीं जाएगी?

मियाँ : कहाँ जाएगी?···इस जगह और दूसरी जगह में फ़र्क ही क्या है—कुछ भी

नहीं···मैंने उसको समझाया कि तुम्हें नयी करवट लेनी चाहिए ताकि तुम्हारी ज़िन्दगी खुशगवार बन जाए, तुम्हारे सब दलिद्दर दूर हो जाएँ···

बीवी : बहुत खुशी की बात होगी अगर वह समझ जाए ।

[दूर से सुन्दरी और एक मर्द के कहकहों की आवाज़ आती है। साथ ही वही अश्लील रिकार्ड बजना शुरू होता है जो पहले कई बार सुन्दरी के घर बजता रहा है···आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड आउट ।]

अकेली

पात्र

सुशीला : एक नौजवान औरत, जिसकी आवाज़ में रतजगे की खरखराहट हो

किशोर : एक दौलतमंद आदमी—आवाज़ में बाँकपन हो

मोती : एक साधारण भावुक नौजवान (युवक)

चपला : एक साधारण कुँवारी लड़की

मदन : किशोर का दोस्त

कुली तथा अन्य चार-पाँच आदमी

[रेलगाड़ी चलने की आवाज़—इस आवाज़ पर निम्नलिखित आवाज़ सुपर इम्पोज़ की जाए—]

भूमिका : ज़िन्दगी की गाड़ी चली जा रही है—दनदनाती हुई—किसे मालूम है कि इसके भारी-भरकम पहियों के नीचे कितने पत्थर पिस जाते हैं। कितनी जानदार चीज़ें इसके सदा घूमने वाले चक्कर की लपेट में आ जाती हैं।...ज़िन्दगी की गाड़ी यूं ही चलती रहेगी—दनदनाती हुई। बच्चे घुटनियों चलते रहेंगे—जवान ऊँची-ऊँची फ़िज़ाओं में उड़ते और गिरते रहेंगे—बुढ़ापा रोता रहेगा। जवानी चिल्लाती रहेगी और—

—ज़िन्दगी की गाड़ी अनथक चलती रहेगी—दनदनाती हुई। तनबीर तकदीर से टकराती रहेगी—उम्मीद और मायूसी आपस में टकराती रहेंगी—

—हुस्न अपना दस्तरख्वान बिछाये इश्क को दावत देता रहेगा और—

—जिन्दगी की गाड़ी दनदनाती रहेगी।

[एक औरत और एक मर्द। दो औरतें और एक मर्द। दो मर्द और एक औरत। यह चक्र आदि से जारी है और अन्त तक जारी रहेगा। किस्सा-ए-आदम रंगीनतर होता जाएगा और ज़िन्दगी की फ़ौलादी गाड़ी पेच खाती हुई चलती रहेगी।]

[गाड़ी की आवाज़ कुछ क्षणों तक जारी रहेगी—फिर उसी गाड़ी के ठहरने की

आवाज़ आए। याद रहे कि रात का वक्त है। खोमचे वालों की उदास और थकी हुई आवाज़ कभी-कभी सुनाई दे। इस दौरान इंजन की साँय-साँय बराबर आती रहे। नीचे का टुकड़ा उन आवाज़ों पर सुपर इम्पोज़ किया जाए।]

सुशीला : (घबराये हुए स्वर में) कुली—कुली—(और ज़ोर से) कुली !

एक आदमी : क्यों भई, कोई कुली है ?

सुशीला : मोहन—मोहन—मोहन कहाँ गया ?

वही आदमी : मोहन !

सुशीला : कुछ नहीं—कुली—कुली !

कुली : जी हुज़ूर।

सुशीला : (घबराकर) यह मेरा सामान बाहर निकालो—कौन-सा स्टेशन है ?

कुली : यह एक सूटकेस और बिस्तरा ही है या कुछ और भी है ?

सुशीला : (अपने-आपसे) मोहन कहाँ गया ?—यह कौन-सा स्टेशन है ? ठहरो कुली ! असबाब अभी न उतारो—उनका बिस्तर-ट्रंक कहाँ गया ?

कुली : (अपने ध्यान में) एक आना फेरे का, मेम साहब। आपसे ज़्यासती थोड़े लूंगा।

सुशीला : असबाब बाहर निकाल दिया—लेकिन—लेकिन यह कौन-सा स्टेशन है ? मोहन कहाँ है—मेरे सूटकेस का ताला किसने खोला है ?

कुली : ऐसे ही खुला पड़ा था।

[ट्रंक खोलने की आवाज़—फिर दबी-दबी चीख]

सुशीला : मेरे ज़ेवर—मैं लुट गई—

कुली : क्या हुआ, मेम साहब ?

सुशीला : (परेशानी की हालत में) कुछ नहीं—तुम जाओ। मेरा असबाब यहीं पड़ा रहने दो।

[कुछ क्षणों तक इंजन की साँय-साँय—फिर सीटी की आवाज़—इंजन की चीख। फिर गाड़ी चलने की आवाज़—आहिस्ता-आहिस्ता यह आवाज़ धीमी होती जाए।]

किशोर : म···म···मैं समझता हूँ आप किसी का इन्तज़ार कर रही हैं।

सुशीला : (चौंककर) मोहन, तुम ! (फिर तुरन्त निराश होकर) मोहन कहाँ है ?

किशोर : (बड़े बाँके अन्दाज़ में) मैं समझता हूं आपको किसी का इन्तज़ार है।

सुशीला : (घुटी-घुटी आवाज़ में) जी नहीं। मैं अकेली हूँ।

किशोर : (मुस्कराकर) आप अकेली नहीं हैं—कुली, इनका असबाब उठाओ।

[दूर से गाड़ी की चीख। मद्धिम आवाज़ आए और थोड़ी देर थरथराकर डूब जाए।]

× × ×

[सुशीला के नाचने की आवाज़]

किशोर : भई सुशीला, खूब नाचती हो—ऐसा मालूम होता है, हवा में सिगरेट का धुआँ परेशान हो रहा है—आँखों के सामने खूबसूरत अदाओं और लचकीले खयालों का एक भंवर-सा बन जाता है। एक अजीब चक्कर में आदमी फँस जाता है। समझ में नहीं आता तुम कहाँ से शुरू होती हो और कहाँ खत्म हो जाती हो।

[नाच बन्द हो जाता है। ज़मीन पर घुंघरुओं के साथ सुशीला के चलने की आवाज़ आती है।]

सुशीला : एक सिर्फ़ आपने दाद दी है तो क्या हुआ। मैं कुछ और भी चाहती हूँ।

किशोर : क्या चाहती हो तुम—तुम्हें और किस चीज़ की ज़रूरत है?

सुशीला : यह मकान—इसके आठ बड़े-बड़े सुनसान कमरों—एक छोटे से बाग और तीन-चार नौकरों की झुकी हुई कमर के आगे क्या और कुछ भी नहीं—मैं चाहती हूँ—मैं चाहती हूँ—जाने मैं क्या चाहती हूँ?

किशोर : (हँसकर) कुछ चाहकर न चाहना ही औरत की सबसे बड़ी चाह है—लेकिन मैं पूछता हूँ, आजकल तुम सोचती क्या रहती हो?

सुशीला : (दुखी लहजे में) मैं यह सोचती रहती हूँ कि इस खाली-खाली घर में मैं एक खूबसूरत तिपाई हूँ जिसको आप अपनी मर्ज़ी से सजाते रहते हैं।

किशोर : इसलिए कि तिपाई और औरत में कोई ज्यादा फ़र्क नहीं—तिपाई पर से अगर कपड़ा सरक जाए तो बड़े-बड़े कीमती फूलदान गिरकर चकनाचूर हो जाया करते हैं और···

सुशीला : बस-बस, परमात्मा के लिए इससे आगे न कहिएगा—किशोर साहब! आप औरत को बिलकुल नहीं जानते—वह मर्द औरत को क्या जानेगा जिसे प्लेट-फ़ार्म पर खोये हुए टिकट की तरह एक औरत मिल गयी हो—मैं जो कुछ चाहती हूँ मुझे मालूम है। आज से दो वर्ष पहले जब मैं घर से भागकर सोने और चाँदी के चोर मोहन के साथ एक रेलगाड़ी में सवार हुई थी उस वक्त मेरे दिल में जिस बात की चाह थी, मुझे अब भी याद है—और सच पूछिए तो वही अधूरी चाह, वही प्यासी ख्वाहिश मेरे अन्दर तड़प रही है—वे शब्द जो मेरी ज़ुबान की नोक पर आकर जम गए थे, पिघलकर बाहर निकलने के लिए बेताब हैं—मैं अकेली हूँ—किशोर साहब, मैं अकेली हूँ—दो वर्ष से मैं इस खौफ़नाक तौर पर सुनसान मकान में इन घुंघरुओं की उदास झनझनाहटें सुनती हूँ—दुनिया में घुंघरुओं की झनझनाहट के अलावा और बहुत-सी आवाज़ें मौजूद हैं। मैं सब-की-सब सुनना चाहती हूँ—मैं चाहती हूँ कि मेरे इर्द-गिर्द हुजूम हो। मैं उस भीड़ के अन्दर घिर जाना चाहती हूँ—आवाज़ों के समुद्र में डुबकियाँ लगाना चाहती हूँ—मैं बहुत कुछ चाहती हूँ।

× × ×

[भीड़ का शोर। यह टुकड़ा उस पर सुपर इम्पोज़ किया जाये—]

अ : वार फ़ण्ड के सिलसिले में सुशीला का नाच।
ब : मिस सुशीला पहली बार स्टेज पर।
ज : टाउन हॉल में एक शानदार समारोह।
द : राय बहादुर लाल किशोर चन्द जी की नेक कोशिशें।

[भीड़ का शोर बड़ी सफ़ाई से नाच के एक टुकड़े में जज़्ब किया जाए। नाच पूरे साज़-बाज़ (आर्केस्ट्रा) के साथ हो—तोड़े वग़ैरह लिए जाएँ। जब नाच खत्म हो जाए तो दाद के नारे बुलन्द हों। तालियाँ पीटी जाएं। आहिस्ता-आहिस्ता यह शोर जज़्ब हो जाए।]

सुशीला : (**सख्त घबराहट में—लहजा लरज़ता हो जैसे—भावनाओं से भरपूर**) मैं··· मैं···मैं आप लोगों की कद्रदानी···मैं आप लो गों की कद्रदानी का शुक्रिया अदा करती हूँ। (**हलक में जैसे कुछ फँस जाता है**)···मैं पहली बार स्टेज पर आई हूँ —इसलिए—इसलिए—(**हँसने की कोशिश करते हुए**)कुछ घबरा-सी गयी हूँ— मैंने इतनी भीड़ कभी नहीं देखी—मैं—मैं—मैं—(**जल्दी से**) एक बार फिर आपका शुक्रिया अदा करती हूँ।

[भीड़ का शोर और तालियों की आवाज़]

[**नोट :** यह शोर आहिस्ता-आहिस्ता खत्म कर दिया जाए।]

किशोर : तुमने मेरी ताली की आवाज़ सुनी थी सुशीला !

सुशीला : (**भीड़ का असर अभी तक उस पर कायम है**) नहीं, मैंने किसी की ताली की आवाज़ नहीं सुनी—मुझे तो ऐसा महसूस होता था कि तकदीर के दो बड़े-बड़े हाथ मेरे कानों के पास एक न खत्म होने वाली बीन बजा रहे हैं—उफ़, यह आवाज़ कितनी भयानक थी !

किशोर : दो बरस में तन्हाई खत्म हो चुकी—इन आठ सुनसान कमरों, नौकरों की झुकी हुई कमरें और छोटे से बगीचे के आगे बहुत कुछ पड़ा है, जिसका सफ़र तुमने अब शुरू कर दिया है। घबराओ नहीं। दुनिया उतनी बड़ी नहीं जितनी कि तुम समझे बैठी हो—(**हँसकर**) अब क्या सोच रही हो ?

सुशीला : यह—यह सोच रही हूँ—मैं पूछती हूँ, आप मुझसे मुहब्बत क्यों नहीं करते— (**भावुक आवाज़ में**) दो साल हो गए हैं मुझे यहाँ आए हुए। आपने एक बार भी मुझे मुहब्बत की नज़रों से नहीं देखा—मैं औरत हूँ। एक नामुकम्मिल औरत हूँ— —कुर्सी नहीं हूँ—एक बार भी आपने मुहब्बत-भरा वाक्य मुँह से नहीं निकाला— क्या मैं खूबसूरत नहीं ? क्या मुझमें वे खूबियाँ नहीं जो मर्द के दिल में मुहब्बत पैदा करती हैं ? मुझमें क्या नुक्स है जो आपने मुझे उन निगाहों से देखना नहीं चाहा जो औरत के अन्दर भावनाएं पैदा करती हैं ? जो औरत को बताती हैं कि वह औरत है, मिट्टी की ढेली नहीं—दो वर्ष तक मैं सोचती रही हूँ। दो वर्ष तक मैं आपकी निगाहों में मुहब्बत की उदासी ढूंढ़ती रही हूँ मगर···मैं पूछती हूँ, मुझे

यहाँ लाने में आपका मतलब क्या था—आपने कोई हाथी खरीद लिया होता, कोई बन्दरिया पाल ली होती—कोई मैना पिंजरे में डाल ली होती—

किशोर : (मुस्कराकर आहिस्ता-आहिस्ता) लो, अब पूछो क्या पूछती हो ?

सुशीला : (थककर) मैं कुछ नहीं पूछना चाहती ।

किशोर : तो मैं तुमसे एक बात पूछता हूँ—मैंने इन दो वर्षों में एक बार भी तुम्हें मुहब्बत-भरी नज़रों से नहीं देखा । यह ठीक है—अब तुम यह बताओ कि क्या तुम मुझसे मुहब्बत करती हो—मुझसे मुहब्बत करती हो ?

[कुछ क्षणों तक चुप्पी रहे ।]

किशोर : बोलो—क्या तुम मुझसे मुहब्बत करती हो—क्या तुम मुझसे मुहब्बत कर सकती हो ?

सुशीला : (रुककर) नहीं—मैं आपसे मुहब्बत नहीं करती—मैं आपसे मुहब्बत···नहीं ···मैं इसके बारे में इस वक्त निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकती । लेकिन मेरा खयाल है कि मैं आपसे कभी मुहब्बत नहीं कर सकूंगी । इसलिए कि आप औरत से कोसों दूर हैं ।

किशोर : तुम ठीक कहती हो, मैं औरत से उतना ही दूर हूँ जितना कि ध्रुव तारा इस भू-मण्डल से दूर है । लेकिन इसमें मेरा कोई कसूर नहीं । तुम गौर करो तो यह सारा कसूर इस दूरी का है—मैं···मैं···तुम जानती हो कि मैं एक दौलतमंद आदमी हूँ—चीज़ें खरीदने का आदी—मैंने सिर्फ़ तुम्हारे मुँह से 'मुहब्बत, मुहब्बत' नहीं सुनी । यह शब्द मैं इससे पहले कई बार सुन चुका हूँ । मैं चाहता हूँ कि इससे मुझे दिलचस्पी पैदा हो जाए, मगर अफ़सोस यह है कि तुम दौलतमन्द नहीं हो—तुम मेरी बातों का मतलब कैसे समझोगी—मुहब्बत (हँसकर) वास्तव में यह कोई दिलचस्प चीज़ होगी । मगर मैं सिर्फ़ इतना जानता हूँ कि या तो कोई चीज़ पसंद की जाती है या नापसंद । मैं तुम्हें पसंद करता हूँ—इसके बावजूद तुम्हें पसंद करता हूँ कि तुम मुझसे मुहब्बत नहीं करतीं—मेरा मतलब यह है कि मुझे पसंद नहीं करतीं ।

सुशीला : मैं आपको पसंद ज़रूर करती हूँ, इसलिए नहीं कि आप मुझसे मुहब्बत करते बल्कि इसलिए कि आप अच्छे आदमी हैं । आप अगर मुहब्बत करना भी चाहें तो नहीं कर सकेंगे—और मैं—और मैं ऐसे मुकाम पर पहुँच चुकी हूँ जहाँ एक ऐसा खतरनाक मोड़ आता है कि पिछली ज़िन्दगी की तमाम घटनाएँ ओझल हो जाती हैं ।

किशोर : मेरी समझ में कुछ नहीं आता । (हँसकर) सुशीला, तुम्हारी बातें समझने के लिए मुझे ज़रूर किसी से मुहब्बत करनी पड़ेगी । अच्छा, भला यह तो बताओ, मुहब्बत करने के लिए पहले क्या कुछ करना पड़ता है ? मेरा मतलब है कि मुहब्बत मेरे दिल में किस तरीके से पैदा हो सकती है ? क्या तुम मेरे अन्दर मुहब्बत पैदा कर सकती हो ?

सुशीला : (रुककर) किशोर साहब आपने बड़ी सख्त गलती की जो मुझे सजा-सँवारकर उस दुनिया में ले आए जो ख्वाहिशों से भरी हुई है। मैं अकेली अच्छी थी। अब मुझे भीड़ से डर लगता है। किशोर साहब, मैं एकाकी रहना चाहती हूं—मुझे डर है—अगर मेरे गूंगे जज्बात अहसास की तीव्रता से बोल पड़े तो मेरे कान बहरे हो जाएँगे। मुझे कोई आवाज़ सुनाई न देगी। आपकी आवाज़ भी सुनाई न देगी।

किशोर : (हँसता है) तुम दीवानी हो।

× × ×

[धीमे-धीमे सुरों में वायलन बजाई जाए—नीचे का वार्तालाप जब तक जारी रहे उसकी पृष्ठभूमि में वायलन बजती रहे।]

मोती : (फुसफुसाहट में) सुशीला, सचमुच तुम दीवानी हो।

सुशीला : नहीं। तुम नहीं समझते मोती, तुम्हारी बातें ऐसी हैं कि मैं बहक जाती हूँ—

मोती : तुम कितनी सुन्दर हो—

[साँसों की आवाज़]

मोती : चाँद की रोशनी में तुम्हारी गर्दन देखता हूँ तो ऐसा मालूम होता है कि मेरा ही कोई हसीन खयाल जम गया है।

[साँसों की आवाज़]

मोती : तुम्हारे साँस मेरे साँसों में घुल-मिल रहे हैं—आज की रात कितनी पुरअसर है।

[सुशीला तेज़ी से साँस लेती है।]

मोती : तुम उस रात स्टेज पर नाच रही थीं और मैं एक कोने में बैठा तुम्हारी हर लचक को अपने दिल में जज्ब कर रहा था—

सुशीला : (बेखुद होकर) मोती—(आवाज भिंच जाती है) मोती, आओ—यहाँ से भाग जाएँ—लेकिन कहाँ जाएँगे—ठहरो—चलो ऐसी जगह चलें जो बड़ी विशाल हो लेकिन जिसकी परतें उठाकर हम जब चाहें अपने अन्दर छुपा सकें।

मोती : चलो।

सुशीला : चलो—मुझे ऐसी जगह ले चलो जहाँ मैं एक बार खुलकर नाच सकूं—जहाँ मेरे टखने घुंघरुओं की तमाम भनभनाहटें निचोड़ दें—जहाँ मैं हरकत की आखिरी सीमा तक पहुँचकर स्थिर हो जाऊँ।

मोती : जहाँ ज़िन्दगी के आदि और अन्त का कुछ पता न चले।

सुशीला : हाँ, ऐसी जगह हो—(अन्तराल) मोती—यह दुनिया बड़ी सुन्दर है।

मोती : आज रात के दो बजे बालकनी के नीचे मैं तुम्हारा इन्तज़ार करूंगा—आज ही

रात हमें यहाँ से भाग जाना चाहिए—

सुशीला : दो बजे—

× × ×

[क्लॉक दो बजाता है—टन-टन—आखिरी टन की गूंज थोड़ी देर तक सुनाई दे।]

मोती : (आवाज़ दूर से आए फुसफुसाहट के रूप में) सुशीला, सुशीला !

[सुशीला के टहलने की परेशान आवाज़]

मोती : सुशीला—सुशीला !

सुशीला : आ गया—आ गया—अब मैं क्या करूँ—(अन्तराल—फुसफुसाहट में) मोती—मोती !

मोती : सुशीला, हाँ, मैं हूँ मोती—आओ—जल्दी नीचे चली आओ। सब सामान तैयार है।

सुशीला : आहिस्ता बोलो—आहिस्ता बोलो—देखो, बाहर का दरवाज़ा बन्द है। अब मैं कैसे नीचे आऊँ—बालकनी से उतर आती, मगर मेरे पास कोई रस्सी भी नहीं ···(दरवाज़े पर दस्तक होती है)···यह कौन—तुम परे हट जाओ मोती—

[अन्तराल—फिर दरवाज़ा खोलने की आवाज़]

सुशीला : (सख्त घबराकर) आप···किशोर साहब, आप ?

किशोर : (हँसकर) अरे—अभी तक तुम सोईं नहीं—मैं समझा ! कल तुम्हारी सालगिरह जो है—इसी खुशी में नींद नहीं आती होगी—नये साल और नये कदम में कोई खास फ़र्क तो नहीं होता—

सुशीला : मैं—मैं—हाँ, सालगिरह—बैठिए—मैं—मैं—

किशोर : तुम्हारे लिए आज मैंने एक तोहफ़ा खरीदा था—यह लो, साड़ी है। उम्मीद है, तुम इसे पसन्द करोगी—ठहरो, मैं तुम्हें खोलकर दिखाता हूँ—साड़ियाँ खोलने का तरीका मुझे कभी नहीं आएगा—देखो तो रस्सा बना दिया है।

सुशीला : रस्सा ?

किशोर : सुबह तुम्हें ऐसे कितने तोहफ़े मिलेंगे—मैं चाहता था कि सालगिरह पर सबसे पहला तोहफ़ा तुम मेरी तरफ़ से कबूल करो।

सुशीला : श···श···शुक्रिया।

किशोर : अच्छा, अब मैं जाता हूँ—तुम सो जाओ और अच्छे-अच्छे सपने देखो—यह साड़ी सँभाल लो—मुझे उम्मीद है तुम इसे पसन्द करोगी। (जम्हाई लेता है) भई, मुझे तो सख्त नींद आ रही है—मैं चला।

[अन्तराल—फिर दरवाज़ा बन्द करने की आवाज़—कपड़ों की तेज़ सरसराहट]

सुशीला : (भिंचे हुए लहजे में)···मोती···मोती !

मोती : क्या है—तुम कहाँ चली गयी थीं—नीचे उतरने के लिए कोई सामान पैदा किया ?

सुशीला : नहीं तो—मोती, अब मैं एक मिनट यहाँ नहीं ठहरना चाहती—ठहरो, एक चीज़ मिल गयी—मेरे पास साड़ी है—इसे जंगले से बाँधकर नीचे उतर आऊँगी—तुम यहाँ ठहरो—

[अन्तराल]

सुशीला : यहाँ बाँध देती हूँ।

मोती : मज़बूती से—सँभलकर-सँभलकर—अभी नहीं—अभी नहीं—बस, अब ठीक है—कूद जाओ।

[कूदने की आवाज़]

सुशीला : (**मंज़िल तय करने के बाद**) उफ़—अब चलो—तुम्हारी मोटर कहाँ है ?

[अन्तराल—फिर मोटर चलने की आवाज़]

[किशोर हँसता है।]

किशोर : चली गयी—और साड़ी भी काम आ गयी—चलो भई, अब सोते हैं। सख्त नींद आ रही है। (**जम्हाई लेता है।**)

× × ×

[नाच की गत शुरू हो—पहले बिलकुल धीमी हो, फिर आहिस्ता-आहिस्ता बहुत तेज़ हो आए। इसके साथ-साथ सुशीला के नाचने की आवाज़ भी आए, फिर आहिस्ता-आहिस्ता लय धीमी होती जाए और संगीत और नृत्य की आवाज़ पृष्ठ-भूमि में चली जाए—नीचे की वार्ता इस पर सुपर इम्पोज़ की जाए।]

मोती : ऐसा मालूम होता है, आसमान से घुंघरुओं की बारिश हो रही है—कितने सुहाने दिन हैं और कैसी प्यारी रातें हैं !

सुशीला : मैं खुश हूँ—मैं बहुत खुश हूँ—इन खुली-खुली फ़िज़ाओं में मुझे ऐसा मालूम होता है कि मैं फैलती जा रही हूँ—मोती, मैं यह चाँद उठाकर अपने सिर के नीचे तकिया बनाकर रख लूं ?

मोती : मेरे बाज़ू पर सिर रखकर सो जाओ—यह चाँद से ज्यादा आरामदेह होगा।

सुशीला : मेरी नींदें—कहाँ गयीं मेरी नींदें···

मोती : सो जाओ—सो जाओ···

[धीमे-धीमे सुरों में एक धुन शुरू हो जिसमें नीचे का गीत मोती गाए—]

गीत

तारों से अलबेली परियाँ छम-छम करती आएँ
मीठी-मीठी लोरी देकर मन तेरा बहलाएँ
मुंदी पलकों पर आकाश की खुशबुएँ बरसाएँ
बीती बातें हलके-फुलके सपने से बन जाएँ

नींदें सुन्दरता का गहना
स्वर्ग-से नींद नगर में रहना

किरणों की सीढ़ी से उतरें टम-टम करते तारे
पौ फटने तक हौले-हौले नाचें हर के द्वारे
मन सागर में डुबकी मारें सपने प्यारे-प्यारे
छट जायँ सब गम के बादल कट जायँ दुख सारे

मोती : नींदें सुन्दरता का गहना

सुशीला : स्वर्ग-से नींद नगर में रहना

सुशीला : (**एकदम**) नहीं—नहीं—मैं नहीं सोना चाहती—मैं नहीं सो सकती—मैं जागती रहूँगी।

[नाच की गत शुरू हो—नृत्य का एक तेज़-सा चक्र शुरू हो—कुछ क्षणों के तेज़ चक्रों के बाद एकदम आर्केस्ट्रा बन्द हो जाए और ऐसा मालूम हो कि बहुत-से घुंघरू फ़र्श पर बिखर गए हैं—इसके बाद एकदम खामोशी छा जाए।]

मोती : (**घबराये हुए स्वर में**) घर से तार आया है कि जल्दी पहुँचो—मुझे अभी जाना होगा—तुम्हें यहाँ अकेली छोड़कर मैं जा रहा हूँ—मैं—

× × ×

[करुणापूर्ण संगीत का टुकड़ा—नीचे की वार्ता उस पर सुपर इम्पोज़ की जाए।]

सुशीला : तशरीफ़ रखिए—मेरा ही नाम सुशीला है।

चपला : तार मैंने भेजा था—इसलिए कि मैं तुमसे अकेले में बात करना चाहती थी। (**भावना की अधिकता के साथ**) तुम खूबसूरत हो।

सुशीला : आपकी निगाहें खूबसूरत हैं। बैठ जाइए। आप थकी-थकी मालूम होती हैं।

चपला : मैं इस घर में नहीं बैठूंगी जहाँ दूसरे घरों को बरबाद करने वाली औरत रहती है।

सुशीला : मैं आपका मतलब नहीं समझी !

चपला : तो मुझे साफ़ लफ़्ज़ों में तुमसे यह कहना पड़ेगा कि मैं उस आदमी की मंगेतर हूँ जिसको तुम करीब-करीब तबाह कर चुकी हो। मेरी जुर्रत की शायद तुम दाद न दे सको—मैं रस्म-व-रिवाज के तमाम बन्धन तोड़कर यहाँ तुम्हारे पास पहुँची हूँ—मुझे मेरा मंगेतर वापस दे दो—मुझे तुमसे नफ़रत है। इसलिए कि तुम डसने वाली नागिन हो। मगर मैं—मैं—तुम जानती हो, तुम्हारी वजह से एक सिर्फ़ मैं तबाही के गार में नहीं गिरूँगी बल्कि वह भी बर्बाद हो जाएगा—उसका बाप उसका त्याग करने वाला है।

सुशीला : इसमें मेरा कसूर—मैं उसके बाप से जायदाद नहीं माँगती—मैं किसी से कुछ नहीं माँगती—इसके मिलने के बाद मैं और किसी चीज़ की ख्वाहिश कर सकती हूँ।

चपला : तुम बहुत स्वार्थी हो।

सुशीला : हर आदमी स्वार्थी होता है। क्या आप नहीं हैं—अच्छा, भला यह तो बताइए, क्या आपको मोती से मुहब्बत है ?

चपला : यह कैसा बेढब सवाल है—मैं उससे मुहब्बत करूँगी—मुझे उससे मुहब्बत करनी पड़ेगी, इसलिए कि वह मेरा होने वाला पति है—वह मुझे प्यारा न होता तो मैं यहाँ तुम्हारे पास क्यों आती ?

सुशीला : (हँसती है) आपको अभी उससे मुहब्बत पैदा होगी, मगर मैं तो उससे मुहब्बत कर रही हूँ—किसका हक उस पर ज्यादा हुआ—आपका या मेरा ?

चपला : मुझे ज्यादा बातें बनानी नहीं आतीं—मैंने सच्ची-सच्ची बात तुमसे कह दी है—यह मुझे मालूम ही था कि तुम मेरी भावनाओं की कद्र न करोगी—सच है, एक नाचने-गाने वाली औरत···

सुशीला : (**बात काटकर**) यह फ़रमाइए, आप चाहती क्या हैं ?

चपला : (**रोना शुरू कर देती है**) मैं कुछ नहीं चाहती—तुम अपने हठ से बाज़ न आओगी तो वह तबाह हो जाएगा—और—और—मैं बर्बाद हो जाऊँगी।

सुशीला : मेरे बारे में क्या सोचा ?

चपला : तुम्हारे बारे में मैं क्या सोच सकती हूं—तुम मुझसे बेहतर अपने बारे में सोच सकती हो—तुमने दुनिया देखी है—मैंने तो आज पहली बार घर से बाहर कदम निकाला है। (**रोता है।**)

सुशीला : रोइए नहीं—मुझे आपसे हमदर्दी है—जाइए, मैंने आपका होने वाला मोती आपको दे दिया—(**गमगीन हँसी के साथ**) मैं उसको आपकी और उसकी बेहतरी के लिए छोड़ती हूँ। मगर मैं उसकी मुहब्बत अपने दिल से नहीं निकाल सकूंगी—काश—मैं आपके लिए यह भी कर सकती—मेरी दुआ है कि आप उससे मुहब्बत कर सकें—मोती तो मुहब्बत करने में माहिर है···

[झाँझ की आवाज़]

किशोर : (**झुँझलाकर**) यह मुहब्बत-मुहब्बत की रट तुमने क्या लगा रखी है। मैं तुमसे हज़ार बार कह चुका हूँ कि सुशीला से मुझे मुहब्बत नहीं है—नहीं है, नहीं है। (**अन्तराल**) मुझे उसकी गैरहाज़िरी ज़रूर महसूस होती है। इसलिए कि मैं इन्सान हूँ, पत्थर नहीं हूँ—इस कमरे में जब उसकी बिखरी हुई चीज़ें देखता हूँ तो मुझे उसकी याद ज़रूर सताती है, इसलिए कि दो-ढाई वर्ष तक मैं उस दिलचस्प औरत को लगातार देखता रहा हूँ—यही वजह है कि आज मैंने उसकी तमाम चीज़ें आग में झोंक देने का इरादा कर लिया है—आहिस्ता-आहिस्ता उसकी याद ज़रूर खत्म हो जाएगी।

मदन : भई, अजब इन्सान हो। तुम्हारी कोई बात मेरी समझ में नहीं आती। मुहब्बत नहीं करते हो और करते भी हो। अब यह तुम्हारा नया दर्शन सुन रहा हूँ। लगाओ आग इन चीज़ों को—चलो—झोंको इनको अँगीठी में—कुछ देर यह भी तमाशा रहे।

किशोर : लो। (चीजें आग में झोंकने की आवाज़) यह लो। (और आवाज़)

मदन : और यह जनाब ने मदारियों की तरह सुशीला का रेशमी रूमाल अपने कोट की आस्तीन में क्यों छुपा लिया है ?

किशोर : (लाजवाब होकर) कौन—कौन कहता है—रूमाल—आस्तीन—तुम—तुम झूठ कहते हो।

मदन : (हँसता है) मैं झूठ कह सकता हूँ मगर तुम्हारी घबराहट झूठ नहीं बोलती।

किशोर : मैंने—मैंने अगर उसका रूमाल अपनी आस्तीन में रख लिया है तो क्या बुरा किया है—मुझे क्या उसके एक छोटे से रूमाल पर भी हक नहीं—यह रूमाल मेरा अपना ही तो है—(अन्तराल) तुम यहाँ बैठो—मैं ज़रा बाग में हो आऊँ—(अन्तराल)

[तभी दरवाज़ा खुलने की आवाज़]

किशोर : (एकदम हैरान होकर) सुशीला—तुम आ गयीं ?

सुशीला : (गमज़दा संजीदगी से) हाँ, आ गयी—बेखटके अन्दर चली आयी—इसलिए कि आप मुझसे मुहब्बत नहीं करते। मुझे सिर्फ़ पसन्द करते हैं।

किशोर : (फिर पहली-सी शान के साथ) छोड़ो इन बातों को—मुझे मालूम था तुम ज़रूर वापस आओगी—यह दुनिया बहुत छोटी है सुशीला। मदन, देखा, मैंने तुमसे क्या कहा था—सुशीला आ गयी—सुशीला, तुम किधर देख रही हो ? तुम्हारी ये चीज़ें पुरानी हो गयी थीं—मैंने अँगीठी में डाल दिया—अब नयी खरीदंगे। मदन, तुम बेवकूफ़ों की तरह मेरी तरफ़ क्या देख रहे हो—(नाच की गत शुरू हो) सुशीला, फिर वही दिलचस्पियाँ रहेंगी।

[नृत्य का टुकड़ा—भीड़ और तालियों का शोर—कुछ क्षणों के बाद यह खत्म हो जाए।]

सुशीला : फ़रमाइए, मुझसे मिलने की आपने क्यों तकलीफ़ की ?

मोती : (गुस्सा दबाकर) जैसे तुम मुझे जानतीं ही नहीं—मैं तुम्हारे लिए बिलकुल अजनबी हूँ—देखो सुशीला—मैं ज्यादा बात करना नहीं चाहता—मैं तुमसे सिर्फ़ एक बात पूछने आया हूँ।

सुशीला : पूछिए।

मोती : तुम मुझे छोड़कर क्यों चली आयीं ? तुमने मेरी वापसी का इंतज़ार क्यों नहीं किया ?

सुशीला : (आत्मिक दुःख महसूस करते हुए) इसलिए कि तुम्हारे मुकाबले मैं कहीं दौलतमंद हूँ। तुम्हारे पास कुछ भी नहीं था। तुम अपने बाप के रहमो-करम पर थे।

मोती : (हैरान होकर) तुम—तुम—तुम मेरी हतक कर रही हो—मैं—मैं—

सुशीला : अब आप तशरीफ़ ले जाइए। मेरे और मुलाकाती भी हैं।

[दरवाज़ा खुलने की आवाज़]

किशोर : सुशीला, चेहरे से सेंट-वेंट उतार लिया—यह—यह···

सुशीला : यह मिस्टर मोतीलाल हैं—मैं आपका परिचय कराना भूल गयी—मिस्टर मोती, किशोर साहब से मिलिए—किशोर साहब, यह मिस्टर मोती हैं। आपने अखबारों में इनके पिता की डैथ की खबर पढ़ी होगी।

किशोर : दिल की हरकत बन्द हो गयी थी, शायद—

मोती : (झुंझलाकर) मेरा दिल काफ़ी मज़बूत है किशोर साहब। आप सन्तुष्ट रहें—

सुशीला : यही वह साहब हैं, जिनके पास दौलत के अंबार हैं—आप अच्छे-खासे कार्टून मालूम होते हैं।

[अन्तराल—फिर काफ़ी ज़ोर से दरवाज़ा बन्द करने की आवाज़]

किशोर : (ज़ोर से हँसता है) आदमी दिलचस्प है।

सुशीला : (उदास हँसी) हाँ—कुछ दिलचस्प ही है—चलिए—मैं बहुत थक गयी हूँ।

[दरवाज़ा खुलने की आवाज़—अन्तराल—फिर मोटर स्टार्ट होती है—चलती है—फ़ेड अप]

× × ×

मोती : मेरे पास काफ़ी समय है—तुम बेफ़िक्र रहो—मैं यह चाहता हूँ कि इस किशोर का सारा बिज़नेस तबाह हो जाए। जगह-जगह उसके मुकाबले में दफ़्तर कायम किए जाएं। कोशिश की जाए कि मार्केट पर हमारा कब्ज़ा हो जाए—समझे—इसमें कोई शक नहीं कि यह जुआ है, लेकिन मैं इसे खेल जाना चाहता हूँ।

[अन्तराल—मोटर की आवाज़—फ़ेड अप]

× × ×

[टेलीफ़ोन की घंटियों का शोर—अनन्त घंटियाँ बज रही हों—उन आवाज़ों के बीच-बीच में 'हलो—हलो—हलो किशोर साहब—हलो—हलो—' की आवाज़ आती रहे।]

[मोटर के चलने की आवाज़—निम्न वार्ता उस पर सुपर इम्पोज़ की जाए—]

सुशीला : जी चाहता है आज यूं ही मोटर चलती रहे—दरख़्त पीछे भागते चले जा रहे हैं, जैसे बीती हुई घड़ियाँ—ज़माना इस मोटर से ज़्यादा तेज़ चलने वाला है।

किशोर : आज तुम फ़लसफ़ा छाँट रही हो।

सुशीला : इन्सान जिसका दुनिया में कोई मकसद न रहे, दार्शनिक हो जाता है।

किशोर : (हँसकर) ये आज तुम क्या बहकी-बहकी बातें कर रही हो ?

सुशीला : इन्सान जिसने अपने खयाल के मुताबिक कोई अच्छा काम किया हो, अकसर बहक जाता है।

किशोर : तुमने क्या कोई अच्छा काम किया है ?

सुशीला : जी हाँ, बड़ा अच्छा काम किया है।

किशोर : वह क्या ?

सुशीला : टेलीफ़ोन आया था कि दौलत के खेल में आपका मुकाबला मोती से है—उस अनाड़ी से—मैंने उस पर तरस खाकर आपको वह बात न बतायी।

किशोर : (आश्चर्यचकित) यह तुम क्या कहती हो—वह—वह—वह टेलीफ़ोन मेरे नाम आया था—और वह आदमी मोती था !

सुशीला : जी हाँ, मोती। याद है एक बार आपने कहा था—औरत और तिपाई में कोई फ़र्क नहीं होता। तिपाई पर से अगर कपड़ा सरक जाए तो बड़े-बड़े कीमती फूलदान गिरकर चकनाचूर हो जाते हैं।

किशोर : मुझसे पहेलियाँ न बुझाओ।

सुशीला : (उदास हँसी के साथ) औरत आपकी निगाहों में तिपाई होगी। मगर यकीन जानिए, वह कुदरत की सबसे बड़ी पहेली है। मैंने उसको बचा लिया और आपको तबाह कर दिया— भला पूछिए तो क्यों ?

किशोर : क्यों ?

सुशीला : इसलिए कि मुझे उससे मुहब्बत थी—और मैं—और मैं—मैं नहीं—आप—आप मुझे सिर्फ़ पसन्द करते थे—औरतें अकलमंदी की हद तक अहमक होती हैं—आपका क्या खयाल है ?

किशोर : बारीक रेशमी साड़ियाँ और औरतें हमेशा मेरे लिए पहेली रही हैं। तुम्हें उससे मुहब्बत थी तो उसे छोड़ क्यों आयीं ?

सुशीला : औरतों को यह भी शौक होता है कि अपनी साड़ियाँ दूसरों को तोहफ़े के तौर पर दे दें—दूसरों के जिस्म पर अपने दिए हुए कपड़ों को देखकर भी वे खुशी हासिल कर लेती हैं—मैंने अपनी मुहब्बत किसी और को पहना दी और खुश हो गयी। मेरा खयाल है, मेरा तोहफ़ा लेकर उसको मुहब्बत करने का सलीका आ गया होगा।

किशोर : एक तोहफ़ा तुमने मुझे भी दिया है।

सुशीला : मैं भूल गयी हूँ—कौन-सा तोहफ़ा ?

किशोर : (हँसकर) कितनी कृतघ्न हो—अपने इस अनाड़ी दोस्त को इतनी जल्दी भूल गयीं ! इस पर तुमने जो अहसान किया है, मैंने तोहफ़े के तौर पर कबूल कर लिया है—रसीद चाहिए ?

सुशीला : मैं कुछ और ही सोच रही हूँ—मुझे ऐसा मालूम होता है कि मैंने फिर नये सिरे से अपना सफ़र शुरू किया है—वही गाड़ी है—वही प्लेटफ़ार्म है···

× × ×

[मोटर की आवाज़ रेलगाड़ी की आवाज़ में डूब जाए—इंजन की साँय-साँय—सीटी की आवाज़—इंजन की चीख—फिर गाड़ी चलने की आवाज़—आहिस्ता-आहिस्ता यह आवाज़ धीमी हो जाए।]

किशोर : मैं समझता हूँ आप किसी का इन्तज़ार कर रही हैं।
सुशीला : (चौंककर) मोहन, तुम ! (फिर फ़ौरन ही नाउम्मीद होकर) नहीं, मोहन कहाँ ?
किशोर : मैं समझता हूँ आपको किसी का इन्तज़ार है।
सुशीला : (घुटी-घुटी आवाज़ में) जी नहीं—मैं अकेली हूँ।
किशोर : (मुस्कराकर) आप अकेली नहीं हैं।

[मोटर की आवाज़ फिर उभरकर आए—कुछ क्षणों के बाद यह आवाज़ आहिस्ता-आहिस्ता धीमी कर दी जाए—फ़ेड आउट]

रणधीर पहलवान

पात्र

रणधीर पहलवान : (आवाज़ मोटी और कड़ी)
सावित्री : ज़मींदार की भोली-भाली लड़की (आवाज़ में कंपन)
शामू : सावित्री का चाहने वाला (तेज़ मिज़ाज जवान-खयाल)
ज़मींदार : सावित्री का बाप (धूर्त और चालबाज़)
मुनीम :
शामू की माँ :
माधो : रणधीर पहलवान का शागिर्द
थानेदार :
गाँव की तीन-चार लड़कियाँ, चार-पाँच एक्स्ट्रा

[ढोर-डंगरों के हाँकने की आवाज़—घुंघरुओं की झनझनाहट बगैर—हाँकने के साथ-साथ यह आवाज़ भी आती है—"अय, तुझे साँप काटे—तेरी टाँग टूट जाए,, —नीचे का गीत शुरू हो, जिसकी पृष्ठभूमि में गाय-बैलों के डकराने और उनके ही गले में बँधी हुई घंटियों की आवाज़ आती रहे।]

गीत

लिए डाँगर ढोर चला—चलो दर्शन कर लें हीर के
घटा गरज-गरज के आ रई
भर भर के पानी ला रई
रहे बोल पपीहे मोर—हम चेले राँझे पीर के

[नोट : जब घटा का ज़िक्र आए तो पृष्ठभूमि में बिजली के कड़कने की आवाज़ पैदा की जाए।]

शामू : (एक लम्बा साँस लेता है) अभी तक आई क्यों नहीं—कहीं नज़र नहीं आती—मन में कैसे-कैसे वहम उठते हैं—(किसी गाय से गुस्से में) ए, तुझे साँप काटे—

सीधी होकर चल मुर्दार— (फिर साँस लेता है) इश्क बुरी बला है—कहाँ मैं एक गरीब मज़दूर, कहाँ वो गाँव के ज़मींदार की बिटिया—बहुत बुरा फँसा है शामू बेटा, इस प्रेम के चक्कर में।

[सावित्री की तेज़ हँसी की आवाज़]

शामू : (चौंककर) कौन···सावित्री ?

सावित्री : (हँसती है) बहुत बुरा फँसा है तू इस प्रेम के चक्कर में—(बनावटी गम्भीरता के साथ) बहुत बुरा फँसा है—यही बात है न शामू ? तो तू साफ़ कह दे, तेरी-मेरी टूट गयी—मैं तो यह पहले ही जानती थी कि तू ऐसा ही करेगा।

शामू : यह तू आज किस बात पर बिगड़ बैठी है ? अरे भई, सुना तो होता कि मैं क्या कह रहा था। मैं तो नसीब की बात कर रहा था। क्या यह झूठ है कि तू हमारे ज़मींदार की बेटी है और क्या यह सच नहीं कि मैं एक गरीब मज़दूर हूँ ? (हँसता है) सावित्री, प्रेम के पंथ न्यारे हैं। जो होगा देखा जाएगा। छोड़ तू इन बातों को। आ, चलें।

सावित्री : (बिगड़कर) आ चलें—तुझे पता भी है कि मैं यहाँ दो घण्टे से तेरी राह देख रही हूँ। सचमुच मर्द बड़े वो होते हैं—मैं नहीं चलूंगी—यह भी कोई बात है कि तेरे लिए हर रोज़ मुझे बापू की झिड़कियाँ सहनी पड़ें। तू तो चुपके से अपने घर चला जाता है।

शामू : जितनी झिड़कियाँ तुझे अब तक मिली हैं, सब-की-सब मुझे दे दे—ले, बस अब खुश हुई ?

सावित्री : नहीं शामू, अब मैं चलती हूँ—बहुत देर हो गयी और फिर घटा छा रही है। अगर रास्ते में बरखा शुरू हो गयी तो क्या होगा—तुझे देख लिया है। बस, आज यही काफ़ी है।

शामू : तो सचमुच जा रही हो ?

सावित्री : जाने को जी तो नहीं चाहता, पर क्या करूँ ! बापू का डर भी तो है। उनको पता चल गया तो मार डालेंगे—हाँ, तेरे सिर में कल दर्द हो रहा था। अब क्या हाल है ?

[चार-पाँच लड़कियों की हँसी की आवाज़]

एक लड़की : (बनावटी मर्दाना आवाज़ में) अभी कुछ-कुछ दर्द है। तू सिर दबा दे तो यूं चुटकियों में आराम आ जाएगा।

शामू : (घबराकर गायों को हाँकता है तथा अर्थपूर्ण आवाज़ में चिल्लाता है) अय, तुझे साँप काटे—तेरी टाँग टूट जाए।

दूसरी लड़की : सावित्री, बेचारे का सिर दबा दिया होता—पर मैं पूछती हूँ, यह तेरा क्या लगता है ?

तीसरी लड़की : अरी सुन तो—बड़ी चालाक बनती है—सुना, वह मुआ तुझे गाली दे गया है।

सावित्री : झूठ क्यों बकती है ? उसने गाली कब दी है?

पहली लड़की : देख सावित्री, अगर उस मुए ने सचमुच मुझे गाली दी है तो मुझ जैसा बुरा कोई न होगा। मैं लिहाज़ न करूंगी।

सावित्री : उसने गाली तुझ थोड़े ही दी है। वह तो अपने ध्यान में जा रहा है।

पहली लड़की : बंसरी, तू मुझे बता, क्या कहा था उसने ?

[दूर से शामू की आवाज़ आती है—"अय, तुझे साँप काटे—तेरी टाँग टूट जाए।"]

तीसरी लड़की : यही कहा था जो अब कह रहा है।

सावित्री : बंसरी, तू तो एक उलफ़ती है, जंग कराएगी—वह उसको थोड़े कह रहा था। देखती नहीं गाएँ हाँक रहा है।

पहली लड़की : ले, मैंने मान लिया—अब बता, उस शामू के साथ मीठी-मीठी बातें क्या कर रही थी ? भई बिन्दो, कुछ भी हो, सावित्री ने अपने लिए अच्छा गबरू जवान चुना है।

सावित्री : चल हट—लाज तो नहीं आती ऐसी बातें करते।

पहली लड़की : ओ हो—बड़ी आयी मेरी लाज वाली !

दूसरी लड़की : मैं भी कहूँ कि रोज़ यह घाट की तरफ़ क्यों आती है ?

तीसरी लड़की : इस ग्वाले से मिलने।

पहली लड़की : तो क्या हुसा—ग्वालों के पहलू में दिल नहीं होता ?

[सब ज़ोर-ज़ोर से हँसती हैं। आहिस्ता-आहिस्ता यह हंसी फ़ेड हो जाए।]

[रणधीर पहलवान हँसता है—ज़ोर-ज़ोर से]

माधो : अमाँ जाने दो उस्ताद—तुम्हारे पहलू में दिल नहीं पत्थर है—वह करारी लौंडिया है कि मैं क्या कहूँ।

रणधीर : (**हँसता है**) अजी हटाओ—तुम पाँसा फेंको।

माधो : फेंकता हूँ। पर उस्ताद, कही मैंने दिल की बात है—यह साला शामू किस्मत का धनी है।

रणधीर : (**गुस्से में बात काटकर**) तुम पाँसा फेंकते हो या नहीं ?

माधो : (**डरकर**) यही बात तुम्हारी मुझे अच्छी नहीं लगती। ज़रा-सी बात पर गरजने लगते हो—लो, ये पच्चीस धरे पड़े हैं।

रणधीर : माधो—यहाँ दस और पच्चीस फेंकते हैं—लो, ये पच्चीस देख लो और लो ये दस—सदके जाइए, राजा नल के ही आए।

माधो : उस्ताद, राजा नल को तुमने सिद्ध कर लिया, पर वह लौंडिया सावित्री तुमसे काबू नहीं हुई !

रणधीर . (गुस्से में) कै बार तुमसे कह चुका हूँ माधो, तुम मुझे न छेड़ा करो वरना किसी रोज़ ताव में आकर मैं कुछ कर बैठूंगा, पर तुम टलते ही नहीं—पहलवान आदमी हूँ। डण्ड पेलता हूँ—मुगदर घुमाता हूँ। मुझे इश्क से क्या काम—शराबी-कबाबी हूँ। सरकार मुझे दस नम्बरियों में गिनती है। कई बार जेल हो चुकी है।

इश्क क्या खाक करूँगा—हाँ, सोचने की बात है।

[अन्तराल]

माधो : तो छोड़ो इस किस्से को—चलो, एक-दो बाज़ी और चौसर की रहें।

रणधीर : (बुझे मन के साथ) नहीं भाई—बस, अब कल।

माधो : चलें ?

रणधीर : हाँ भई, अब अखाड़े की तरफ़ जाऊँगा—आना हो तो उधर आ जाइयो।

[अन्तराल]

[इस अन्तराल के बाद रणधीर भद्दी आवाज़ में गाना शुरू करता है—

दीवाना बनाना है तो दीवाना बना दे
वरना कहीं तकदीर तमाशा न बना दे।

इस शे'र को लहर में रणधीर कई बार दोहराता है।]

रणधीर : (ऊँची आवाज़ में जैसे दूर बैठे आदमी को सम्बोधित कर कह रहा है) दीनू काका !

दीनू : सरकार, क्या हुक्म है ?

रणधीर : लस्सी बनायी ?

दीनू : अभी बना देता हूँ।

रणधीर : नहीं, मैं आज नहीं पीऊँगा।

दीनू : इधर दूकान की तरफ तो आइए पहलवान साहब—मिज़ाज कैसे हैं आपके ? हाँ, कल की हार-जीत कैसी रही ?

रणधीर : कैसी हार और कैसी जीत ? मतलब शराब से है, सो वह मिल ही जाती है। (गाता हुआ चल देता है) दीवाना बनाना है तो दीवाना बना दे—वरना कहीं···

दीनू : दरबारीमल, कुछ सुना तुमने, यह रणधीर पहलवान गा रहा है।

[गाने की आवाज़ दूर से आए।]

दरबारीमल : भई, वाह—क्या गला पाया है ! पर मैं पूछता हूँ, आज उसे गाने की क्या सूझी है—पहले तो कभी गाना यूं सवार नहीं हुआ था पहलवान पर।

[रणधीर के गाने की आवाज़ आती है—दीवाना बनाना है तो दीवाना बना दे, वरना कहीं तकदीर···]

[आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड किया जाए]

[सावित्री दर्दभरी धुन में नीचे का गीत गाए—]

तेरे बिना यह दुनिया सारी ज़हर दिखाई दे
गोली जैसा ज़ख्म पड़ा मनै फेर दिखाई दे
अब सोच लिया यो मन में
क्यूं डाली जान बिधन में
इन सीली-सीली बातों में ना खैर दिखाई दे
तेरे बिना यह दुनिया सारी ज़हर दिखाई दे

[सावित्री गाने के बाद ठण्डी साँस भरती है।]

शामू की माँ : सावित्री !

सावित्री : कौन है ?

शामू की माँ : डर नहीं बेटा—मैं हूँ शामू की माँ।

सावित्री : क्या है माताजी ?

शामू की माँ : इधर आ मेरे पास। घबरा नहीं, मुझे सारी बातों की खबर है। इसीलिए तो तेरे पास आई हूँ। देख सावित्री, तेरा और शामू का कोई जोड़ नहीं। तू एक धनवान की बेटी है और वह एक गरीब मज़दूर। इसमें तेरी ही बदनामी है बिटिया। उसको समझाती हूँ पर वह तो परों पर पानी ही नहीं पड़ने देता। मुझे कोई बात ही करने नहीं देता। इसी वास्ते तेरे पास आयी हूँ कि तू समझदार है—

सावित्री : माताजी, मैं—मैं···

शामू की माँ : मैं कहती हूँ, अगर तुम दोनों न मानोगे तो ज़रूर कोई आफ़त खड़ी हो जाएगी। उसका तो सिर फिर गया है। मैंने सुना है, कुछ दिनों से उसने किसानों को ज़मींदारजी के खिलाफ़ उकसाना शुरू कर दिया—मैं तुझसे क्या कहूँ बेटा, मेरी जान तो बड़े जोखिम में फँस गयी है—जब से यह बात सुनी है मेरा दिल बतासे की तरह बैठा जा रहा है—मेरा कहा मान और उससे मिलना छोड़ दे।

सावित्री : पर माताजी··· **(रोना शुरू कर देती है)** यह कैसे हो सकता है ? मैं उससे मिलना कैसे छोड़ सकती हूँ—**(सिसकियाँ)** आप मुझसे यह क्यों कहती हैं—मैं··· मैं···

शामू की माँ : बात सुन सावित्री, सावित्री—अरे, तूने रोना शुरू कर दिया है—ज़रा ठहर तो—**(अपने-आप से)** भाग गई !

[पैरों में पहने हुए झाँझनों की आवाज़—अन्तराल—इस अन्तराल के दौरान सावित्री के चलने की आवाज़ आती रहे—आहिस्ता-आहिस्ता—साथ ही साथ सिसकियों की आवाज़ भी सुनाई दे।]

सावित्री : (रोनी आवाज़ में) मैं अब कहाँ जाऊँ—क्या करूँ—अब क्या होगा— **(थोड़ी देर बाद गाती है—दर्दभरी धुन में—)**

तेरे बिना यह दुनिया सारी ज़हर दिखाई दे
गोली जैसा ज़ख्म पड़ा मनै फेर दिखाई दे
अब सोच लिया यो मन में
क्यूं डाली जान बिघन में
इन सीली-मीली बातों में ना खैर दिखाई दे
तेरे बिना यह दुनिया सारी ज़हर दिखाई दे

[आहिस्ता-आहिस्ता गीत फ़ेड किया जाए।]

ज़मींदार : आओ पहलवान, आओ, इधर मेरे पास बैठो—बैठ जाओ !

रणधीर : आपने मुझे बुलाया। क्या काम है ?

ज़मींदार : अरे भाई, ज़रा आराम तो कर तो। काम तो जब तक ज़िन्दगी है होते ही रहेंगे। (**आवाज़ देकर**) मुनीमजी—मुनीमजी !

मुनीम : सरकार, क्या हुक्म है ?

ज़मींदार : रणधीर पहलवान की पिछले महीने की और इस महीने की तनख्वाह अभी तक क्यों नहीं दी ? यह बहुत बुरी बात है। देखो, आइन्दा ऐसी गड़बड़ न हो। हाँ, तो अभी रुपये लाकर पहलवान साहब को दे दो।

मुनीम : बहुत अच्छा, सरकार।

पहलवान : ज़मींदारजी, आप क्यों तकलीफ़ करते हैं। आप ही का तो खाता हूँ। फिर ले लूंगा।

ज़मींदार : नहीं पहलवान, यहाँ कौड़ी-कौड़ी का हिसाब किया जाता है। तुम काम करते हो। ये पैसे मुफ़्त थोड़े लेते हो। हाँ, तो यह बताओ—हाँ, तो मैं क्या बात कर रहा था—बोतल मँगवाऊँ ? वह शराब खिंचवाई है कि तुम्हारी तबीयत साफ़ हो जाए—मुनीमजी, वो कल चार बोतलें आयी थीं। उनमें से दो पहलवान साहब की हैं। कोई और उड़ाकर न ले जाए।

रणधीर : अपनी खिंचवाई हुई है ?

ज़मींदार : हाँ, हाँ, खास तौर पर मैंने अपने लिए खिंचवाई थी। बीच में कई मसाले भी डलवाए हैं—हाँ भई पहलवान, किस्सा यह है कि इस शामू ने कुछ दिनों से मुझे तंग करना शुरू कर दिया है—किसानों को मेरे खिलाफ़ उकसा रहा है जिससे लगान वसूल करने में मुश्किल पैदा हो गयी है—है तो बड़ी मामूली-सी बात, पर तुम जानते ही हो, अगर मैं खामोश रहा तो शह पकड़ जाएँगे। कल मुनीम से बातें हो रही थीं। मैंने कहा, हमारा पहलवान जो है, वह शामू को यूं चुटकियों में ठीक कर देगा—क्यों पहलवान, यह तुम्हारा दाएँ हाथ का काम है न !

रणधीर : (**खुश होकर हँसता है**) मैंने समझा था, न जाने कितना बड़ा काम आप इस बार मेरे सुपुर्द करेंगे। आप कोई चिन्ता न करें। शामू की सारी अकड़ मैं यूं दूर कर दूंगा।

ज़मींदार : देखा मुनीम, मैंने क्या तुमसे झूठ कहा था ! **खैर**, लो पहलवान, यह थोड़ी-सी नमूने के तौर पर पीओ···इत्तफ़ाक से बाहर ही पड़ी थी। (**उँडेलने की आवाज़**)

रणधीर : बस, बस, ज़मींदारजी, बस, आपने तो सारा गिलास भर दिया।

ज़मींदार : भई पहलवान, पीते तो तुम्हीं हो। तुम्हारे सामने हम तो दूधपीते बच्चे हुए। यह गिलास तुम सोडे के बिना एक ही घूंट में खाली कर दोगे।

रणधीर : ज़मींदारजी, अब वह ज़माने नहीं रहे। कभी पिया करता था। अब तो दिल-बहलावा रह गया है—अब वे दम-खम बाकी नहीं रहे।

[गटागट पीने की आवाज़]

ज़मींदार : तो पहले मटके ही खाली करते होगे ?

रणधीर : बड़ी तेज़ है—छुरी की तरह सीना काटती चली गयी।

ज़मींदार : तो एक गिलास और चले—(**उँडेलता है**)

रणधीर : ज़मींदारजी, अब वह दम-खम नहीं रहे। मैं सच कहता हूँ, आज से छः वर्ष पहले अगर आपने रणधीर पहलवान को देखा होता तो···

ज़मींदार : (**बात काटकर**) लो, पीओ।

रणधीर : (**गटागट पीने के बाद**) बस, इस शामू को ठीक करना है या कोई और काम भी है—शराब क्या है, खंजर है।

मुनीम : सरकार, मुझे इस बात का डर है कि कहीं शामू रणधीर का दुश्मन न हो जाए।

रणधीर : क्या कहा ! (**हँसता है**) मेरा दुश्मन ! (**हँसता है**)

ज़मींदार : तुम भी निरे बेवकूफ़ हो मुनीम ! पहलवान को सब गुर याद हैं। वह सिरे से उसका सफ़ाया ही न कर देगा।

रणधीर : एक धप्पे की मार है—माँ कसम, (**हिचकी लेता है**) माँ कसम, एक डाँट लगाऊँ तो मारे दहशत के बेहोश हो जाए।

ज़मींदार : बात ज्यादा बढ़ानी नहीं चाहिए—रुपये-पैसे की तो तुम फिक्र न करो। अगर कोई ऐसी बात हो भी गयी तो मैं सब बन्दोबस्त कर दूंगा। पाँच सौ रुपया मैंने इस काम के लिए अलग रख छोड़ा है। मेरा मतलब यह है कि अगर चुपके से यह काँटा निकाल ही दिया जाए तो क्या बुरा है ?

[जोशभरी भीड़ की आवाज़]

शामू : मैं ज़मींदार की आँखों में काँटे की तरह खटक रहा हूँ। अगर उसका बस चले तो मुझे फाँसी पर लटकवा दे। मगर वह पापी मुझसे डरता है, क्योंकि मैं उसके सारे भेद जानता हूं। इसलिए वह मेरी परछाईं से भी डरता है। भाइयो, मेरी बात याद रखो, ज़ालिम कभी बहादुर नहीं होता। तुम बिलकुल न घबराओ। वह तुम्हारा बाल भी बाँका न कर सकेगा। हम उससे भीख तो नहीं माँगते। हम उससे वह चीज़ माँगते हैं जो वह हमसे छीन चुका है। उसकी डाँट-डपट में बिलकुल न आओ और ऐसे ही डटे रहो। सरकार के कानों तक यह बात पहुँच गयी तो समझो बेड़ा पार है। उसके ढोल का पोल सारा खुल जाएगा।

एक आदमी : शामू भैया, तुमको यह भी पता है कि उसने रणधीर पहलवान को रुपये-पैसे का लालच देकर हमारे खिलाफ़ कर दिया है। कल शराब पीकर वह तुम्हें गालियाँ दे रहा था।

शामू : मैं जानता हूँ—पर वह हमारा क्या बिगाड़ सकता है। उस कुत्ते की कोई परवाह न करो। वह ज़मींदार से भी ज्यादा पापी है। उसका नाम न लो मेरे सामने। मेरा खून खौलने लगता है।

[झाँझ की तेज़ आवाज़]

रणधीर : (**सख्त गुस्से में**) उसने मुझे कुत्ता कहा ?

माधो : हाँ, हाँ, उस्ताद ! मैंने इन कानों से सुना है।

रणधीर : उसने मुझे कुत्ता कहा —उसने रणधीर पहलवान को कुत्ता कहा। अब अगर वह पर लगाकर आसमान पर उड़ जाए तो भी मैं उसे ज़िन्दा न छोड़ूंगा— (**और ज़्यादा गुस्से में**) माधो, वह तेरे उस्ताद को गालियाँ देता गया और तू खामोश खड़ा रहा ! तूने उसकी ज़ुबान क्यों न खींच ली। लेकिन क्या हुआ, मैं अभी जाकर उसको मज़ा चखाता हूँ। उसने रणधीर पहलवान को समझा क्या है ?

[झाँझ की तेज़ आवाज़]

[शामू के गुनगुनाने की आवाज़। थोड़ी देर गुनगुनाने के बाद वह यह गीत शुरू करता है—]

गर कह दे तू मुँह से कि मेरी है—तेरी इतनी ही बात बहुतेरी है
देखिए मैं हूँ खत्री का लड़का
मरने का नहीं करता धड़का
मैं तड़का तू रात अँधेरी है···

रणधीर : तू यहाँ खड़ा क्या टर्रा रहा है ?

शामू : ओह, रणधीर पहलवान ! क्यूँ, मेरा गाना पसन्द नहीं आया ?

रणधीर : मैं पूछता हूँ यहाँ झाड़ियों के पीछे तू अकेला खड़ा क्या कर रहा है ?

शामू : गा रहा था। अब तेरा मुँह देख रहा हूँ।

रणधीर : तू खत्री का लड़का है न, मरने-मारने से तो बिलकुल नहीं डरता ! (**व्यंग्य से**) खत्री का लड़का जो हुआ !

शामू : जा, अपना रास्ता पकड़, बहुत बातें कर चुका।

रणधीर : यह मेरे हाथ में तुझे लाठी नज़र आ रही है कि नहीं ?

शामू : तू लड़ना चाहता है तो लड़, यह हेरा-फेरी क्या करता है ?

रणधीर : तुझसे क्या लड़ूंगा, एक लाठी तेरे सिर पर मारूँ तो तू ज़मीन में घुटनों तक गड़ जाए।

शामू : तेरी लाठी उठने से पहले ही अगर···

रणधीर : ले, सँभल जा। (**लाठी उठाने की आवाज़—फिर ज़ोर की चीख**) कौन— उफ़—(**सँभलकर**) सावित्री···

सावित्री : शामू···शामू···यह मैंने क्या कर दिया—अब क्या होगा ?

रणधीर : सावित्री, तूने मेरा माथा लहूलुहान कर दिया है। याद रख, इसकी सज़ा तुझ भुगतनी पड़ेगी। शामू, तुझसे मैं फिर निपट लूंगा। सावित्री बीच में आ गयी, वरना आज मैंने तुम्हारा कचूमर निकाल दिया होता।

सावित्री : (**डरे हुए लहजे में बिलकुल आहिस्ता**) चला गया। पर मुझे डर है, वह फिर आएगा और तुझे मारेगा।

शामू : देखा जाएगा···तू अपनी बाल्टी उठा।

सावित्री : मैं इन झाड़ियों के पीछे छुपी हुई थी। जब उसने तुम पर वार करने के लिए लाठी उठायी तो बाल्टी अपने-आप मेरे हाथ से निकल गयी। शामू, उसको बहुत गहरी चोट आयी है। वह मुझसे ज़रूर बदला लेगा। हाय ! अब क्या होगा ?

[रुपयों की छनाछन]

ज़मींदार : आओ, आओ पहलवान, आओ। मुनीम ! यह ढेरी उठा लो, बाकी हिसाब फिर करेंगे। आओ, यहाँ बैठ जाओ। अरे, यह तुम्हारे माथे को क्या हुआ ?

रणधीर : कुछ भी नहीं।

ज़मींदार : कुछ भी नहीं कैसे ? यह पट्टी क्यों बाँध रखी है ?

रणधीर : चोट आ गयी है।

ज़मींदार : कैसे ?

रणधीर : कल शामू से ज़रा चख-चख हो गयी थी।

मुनीम : उसने तुम्हें घायल कर दिया ! हमें क्यों बना रहे हो पहलवान ?

रणधीर : उसने मुझे घायल नहीं किया।

ज़मींदार : तो फिर किसने किया ? तुम मुझे बताओ, वह कौन है ?

रणधीर : अब मैं आपसे क्या कहूँ ? यह, यह—बात यह है कि चूक मुझसे ही हुई, मैं अपने, मैं अपने ध्यान में रहा और उसने वार कर दिया।

मुनीम : किसने ?

रणधीर : सा--सा—(**बदलकर**) शामू ने—लेकिन क्या हुआ ! आज फिर दो-दो हाथ हो जाएँगे।

ज़मींदार : लेकिन, भई रणधीर, लोग-बाग सुनेंगे तो क्या कहेंगे कि पहलवान ने उस कल के लौंडे से···

मुनीम : पर ज़मींदारजी, पहलवान बच्चा थोड़े ही है। उसने सब बन्दोबस्त कर लिया होगा।

ज़मींदार : मज़ा तो तब है कि रणधीर बदनामी से पहले ही उसका सफ़ाया कर दे। न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी। क्यों मुनीम ?

मुनीम : बावन तोला पाव रत्ती की बात कही है।

ज़मींदार : और मुझसे जिस किस्म की मदद पहलवान लेना चाहे, मैं देने को तैयार हूँ। पाँच सौ देता हूँ। चुपके से अपना काम करे और किसी दूसरे शहर चला जाए।

मुनीम : और जब मामला ठण्डा हो जाए तो फिर वापस चला आए।

रणधीर : रुपये-पैसे की बात छोड़िये। मैं आपका काम कर दूंगा ज़मींदारजी, और बहुत जल्दी कर दूंगा। एक आदमी मारना कोई कठिन काम नहीं। मैं कुछ और ही सोच रहा था। यह अब फ़ैसला कर लिया है कि शामू ज़िन्दा न रहेगा।

ज़मींदार : पर रणधीर, काम ऐसे हो कि किसी को कानोंकान खबर न हो—मेरा मतलब है कि···

मुनीम : बावन तोला पाव रत्ती की बात कही है।

ज़मींदार : और मुझसे जिस किस्म की मदद पहलवान लेना चाहे, मैं देने को तैयार हूँ। पाँच सौ देता हूँ। चुपके से अपना काम करे और किसी दूसरे शहर चला जाए।

मुनीम : और जब मामला ठण्डा हो जाए तो फिर वापस चला आए।

रणधीर : रुपये-पैसे की बात छोड़िये। मैं आपका काम कर दूंगा ज़मींदारजी, और बहुत जल्दी कर दूंगा। एक आदमी मारना कोई कठिन काम नहीं। मैं कुछ और ही सोच रहा था। यह अब फ़ैसला कर लिया है कि शामू ज़िन्दा न रहेगा।

ज़मींदार : पर रणधीर, काम ऐसे हो कि किसी को कानोंकान खबर न हो—मेरा मतलब है कि···

[इस वाक्य का आखिरी हिस्सा फ़ेड कर दिया जाए।]

[सावित्री नीचे का गीत गाती है—]

एक नज़र में देख पिया को बरसों तरसी हूँ
बरखा में ज्यूं काली बदरिया,
रो-रो बरसी हूँ
आस मिलन की जी का सहारा
ध्यान में निश-दिन रूप तुम्हारा
समझाए कोई मुझ दुखिया को
मैं दरस पिया को तरसी हूँ

रणधीर : (मोटी आवाज़ में) सावित्री !

सावित्री : (डरकर चीखते हुए) उई, कौन ?

रणधीर : मैं, रणधीर पहलवान, जिसका माथा कल तूने घायल किया था। याद है, मैंने उस वक्त क्या कहा था ?

सावित्री : (सहमकर) मुझे माफ़ कर दो रणधीर, मुझे माफ़ कर दो, मुझे बख्श दो !

रणधीर : (हँसता है) क्यों, डर गयी ?

सावित्री : (लड़खड़ाती आवाज़ में) हाँ।

रणधीर : ठहर जा, जाती कहाँ है ? बदला लिए बिना मैं तुझे बिलकुल नहीं छोड़ूँगा। तूने समझा क्या था मुझे। रणधीर पहलवान हूँ, रणधीर पहलवान। खून ही पी जाया करता हूँ।

सावित्री : (बहुत ज्यादा सहमकर) मुझे माफ़ कर दो !

रणधीर : क्यों माफ़ कर दूं ? क्या तूने मेरा माथा ज़ख्मी नहीं किया ? (रोबदार आवाज़ में) मैं बदला लिए बिना तुझे कभी नहीं छोड़ूँगा। जिन हाथों ने मेरा माथा ज़ख्मी किया वही इस पर पट्टी बाँधेंगे। बोल, बाँधेगी पट्टी ?

सावित्री : बाँधूंगी पहलवान !

रणधीर : तू अपनी ओढ़नी से कपड़ा फाड़ और पट्टी बनाकर मेरे माथे पर जल्दी बाँध वरना—(कपड़ा फाड़ने की आवाज़) चल बाँध—खड़ी सोचती क्या है ?

सावित्री : पहलवान, तुम बैठ जाओ तो मैं बाँधूं। यूं मेरा हाथ नहीं पहुँचेगा।

[रणधीर हँसता है।]

रणधीर : ले बैठ गया।

[अन्तराल—पट्टी बांधी जाती है।]

सावित्री : अब मैं जाऊँ ? पट्टी मैंने बाँध दी है।

रणधीर : फूंक भी मारो।

[फूंक मारने की आवाज़]

सावित्री : जाऊँ ? अब जाती हूँ।

रणधीर : भागती हैं ! ठहर जा, भागती कहाँ है ?

सावित्री : छोड़ दे···छोड़ दे मुझे—रणधीर, छोड़ दे मेरी कलाई—मेरी चूड़ियाँ टूट जाएँगी।

रणधीर : कहाँ गयी तेरी वह चुलबुलाहट ? एक मरोड़ा दूं ?

सावित्री : मेरी कलाई टूट जाएगी रणधीर। **(दर्द से चिल्लाती है)** छोड़ दे, छोड़ दे मुझे। **(रोना शुरू कर देती है)** परमात्मा करे न रहे तू इस दुनिया के तख्ते पर। कीड़े चलें तेरे तन-बदन में। खड़े का खड़ा ज़मीन में समा जाए।

रणधीर : **(शर्मिन्दगी के लहजे में)** सावित्री—सावित्री—

सावित्री : **(रोये चली जाती है)** परमात्मा करे तुझ पर बिजली गिरे, तेरी जवानी टूटे, जिस तरह तूने मेरी कलाई मरोड़ी है, परमात्मा करे तेरी गर्दन मरोड़ी जाए। **(और तेज़ी से रोती है।)**

रणधीर : **(पुचकारने के अंदाज़ में)** न रो···न रो सावित्री, न रो···तू रोती है तो मेरे दिल को बड़ा दुःख होता है। मैंने तुझसे मज़ाक किया था। मैं भला तुझे तकलीफ़ पहुँचाकर खुश हुआ हूँ—न रो—न रो सावित्री, न रो···ले, मुझे मार ले—ले, यह पत्थर ले और मेरे सिर पर दे मार—मैं तो तुझसे प्रेम करता हूँ···

सावित्री : **(रोना बन्द करके)** क्या कहा, तुझ जैसे पापी को प्रेम करने का क्या अधिकार है ?

रणधीर : नहीं सावित्री, मैं तुझसे प्रेम नहीं करता—**(हँसता है)** मैं तुझसे कैसे प्रेम कर सकता हूँ ? मैं बड़ा ज़ालिम, बड़ा पापी हूँ। तू ठीक कहती है। मैं—मैं—कुछ नहीं—मैं बेवकूफ़ हूँ—मुझे माफ़ कर दे।

[सावित्री की हलकी-हलकी सिसकियों की आवाज़—फ़ेड आउट]

[शराबियों का शोर और हुड़दंग]

एक शराबी : माधो,···जहाँ तेरा पसीना गिरे वहाँ मैं अपना खून बहाने को तैयार हूँ। तू मुझे एक गाली नहीं, सौ गालियाँ दे ले—तेरी बात का मैं कभी गुस्सा कर सकता हूँ ?

माधो : **(हँसता है)** अमाँ, छोड़ो इस किस्से को। दीनू काका, आज उस्ताद से एक बाज़ी शतरंज की हो गयी। तेरी कसम, दस हाथों में उसके दोनों घोड़े तबेले में बँधवा दिए—अय लाला किशोरीमल—एक अधिया और भेज दे।

दूसरा शराबी : आजकल उस्ताद कहीं दिखने में नहीं आता—कहाँ रहता है ?

माधो : मैं बताऊँ आजकल वह क्या करता है ? **(हास्यमय ढंग से)** इश्क करता है, इश्क।

[सब ज़ोर-ज़ोर से हँसते हैं।]

तीसरा शराबी : **(लहर में आकर गाता है)** क्या सुनाएँ माजरा-ए-दर्द-ए-दिल।

माधो : क्यूं तेरी शामत आयी है। बस, अब काफ़ी हो गया। अब जाने दे।

तीसरा शराबी : कल उस्ताद को गाते सुना, तो आज यूं ही लहर में आ गया—(चौंककर) भई, बहुत बड़ी उम्र है हमारे उस्ताद की—आओ, आओ उस्ताद, आओ।

माधो : ओह, उस्ताद, आओ उस्ताद, आओ, अभी तुम्हारी ही बातें हो रही थीं।

एक शराबी : माधो कह रहा था, उस्ताद इश्क लड़ा रहा है इश्क···

[एक शराबी के गाने की आवाज़ आती है—इश्क की मजबूरियाँ, लाचारियाँ···]

माधो : उस्ताद का इश्क भी ग्रांडील इश्क होगा···

रणधीर : (दुःखपूर्ण गंभीरता के साथ) उस्ताद क्या इश्क करेगा ! माधो, पापी को प्रेम करने का कोई अधिकार नहीं। मैं बड़ा पापी, बड़ा ज़ालिम हूँ, मैं प्रेम नहीं कर सकता···तूने एक बार कहा था और सच ही तो कहा था कि उस्ताद, तेरे पहलू में दिल नहीं, पत्थर है।

माधो : मैंने तो वो ऐसे ही कहा था, वरना सच्ची बात तो यह है उस्ताद, तुम्हारे पहलू में बड़ा ही नर्म दिल है।

रणधीर : नहीं, तू झूठ कहता है—मेरे पहलू में दिल नहीं, पत्थर है—एक बार फिर कह—उस्ताद, तेरे पहलू में दिल नहीं, पत्थर है। (हँसता है) पत्थर···पत्थर··· पत्थर ही तो है। लेकिन···कोई प्रेम करता है तो इसमें मेरे बाबा का क्या जाता है ? मैं उसको नहीं मारूँगा। ज़मींदार जाने और उसका काम जाने।

माधो : कहाँ चले उस्ताद—मैंने अभी अधिया मँगवाई है—बैठ जाओ।

रणधीर : मैं ज़मींदार से मिलने जा रहा हूँ, एक ज़रूरी काम है। अभी आता हूँ।

[कदमों की चाप जो आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड हो जाए।]

ज़मींदार : मुनीम, तुमने बात तो ठीक कही है। (हुक्का पीता है।)

मुनीम : सरकार, मैंने अपने ये बाल धूप में सफ़ेद नहीं किए। सोचने की बात है कि रणधीर अगर पकड़ा जाए और थाने में यह कह दे कि मुझे ज़मींदार ने शामू को कत्ल करने के लिए कहा था तो बैठे-बिठाये एक और मुसीबत खड़ी हो जाए।

ज़मींदार : तो इसका इलाज बड़ा सरल है।

मुनीम : वह क्या ?

ज़मींदार : शामू को रणधीर मारे और रणधीर को कोई और साफ़ कर दे—या फिर यह हो सकता है कि उसको ज्यादा शराब पिला दी जाए और जब वह बेहोश हो जाए तो उसे उठाकर रेल की पटड़ी पर रख दिया जाए। (डरकर) मुनीम, यह आवाज़ तुमने सुनी ?

मुनीम : नहीं तो।

ज़मींदार : मुझे ऐसा मालूम होता है कि बाहर दरवाज़े के पीछे कोई खड़ा था···

मुनीम : अजी नहीं, आपको ऐसे ही वहम हुआ है।

ज़मींदार : (हुक्के के छोटे-छोटे कश लेता है)···लेकिन भई, डर लगता है।

[हुक्के की गुड़गुड़ाहट—फ़ेड आउट]

[एकदम भीड़ का शोर ऊँचा हो जिस पर नीचे के टुकड़े सुपर इम्पोज़ किए जाएँ—]

अ : रामू भैया, सुना तुमने, ज़मींदारजी का खून हो गया।

ब : खून ! ज़मींदारजी का खून ?

ज : ज़मींदारजी का खून हो गया। शामू को पकड़कर थाने ले गए हैं।

द : जिस बात का मुझे खटका था आखिर वही हुई। मैं न कहता था कि शामू का गुस्सा एक दिन ज़रूर रंग लाएगा।

ल : चलो, चलो। उठो, थाने में चलते हैं। शामू को पकड़कर वहीं ले गए हैं।

म : लाश बाहर खेतों में पड़ी थी और शामू उसके सिरहाने खड़ा था और इधर से थानेदार साहब, जो दौरे से वापस आ रहे थे, उधर ही आ निकले।

न : ज़रूर फाँसी हो जाएगी।

व : पर शामू कहता है कि मैं निर्दोष हूँ।

× × ×

सावित्री : (रोते हुए), शामू···शामू···तू मुँह से बोलता क्यों नहीं ? कहता क्यों नहीं कि मैं निर्दोष हूँ। तूने मेरे बापू को नहीं मारा। तू मेरे बापू को कैसे मार सकता है ? (ऊँची आवाज़ में) शामू निर्दोष है—थानेदारजी, शामू निर्दोष है।

शामू की माँ : शामू बेटा ! (फूट-फूटकर रोना शुरू कर देती है) मैं तुझे रोकती रही बेटा, पर तूने मेरी एक न सुनी।

शामू : मैं बिलकुल निर्दोष हूँ माँ।

एक आदमी : फिर ज़मींदारजी का खून किसने किया ?

[भीड़ का शोर बन्द हो जाए—रणधीर का बुलन्द कहकहा सुनाई दे।]

रणधीर : (नशे की हालत में) चलो, दुनिया से एक पापी कम हुआ। (हँसता है) उसकी नीयत खराब थी जिसका फल उसको मिल गया। रेल के नीचे अगर उसकी लाश कुचली जाती तो मज़ा आ जाता। (हँसता है) बड़ा चालाक बना फिरता था। (आवाज़ देता है) लाला किशोरीमल—अय लाला !

किशोरीमल : (दूर से आवाज़ आती है) आया पहलवान, आया···बोलो, क्या हुक्म है ?

रणधीर : आज तुम्हारी शराब को क्या हो गया है ? मालूम होता है बीच में ही पानी मिला देते हो।

किशोरीमल : नहीं उस्ताद ! तुम्हें तो खास तौर पर निखालिस चीज़ देता हूँ।

रणधीर : हटाओ, एक बोतल और भेज दो। सुना तो, आज ठेका खाली-खाली क्यों नज़र आता है ?

किशोरीमल : ज़मींदारजी का कत्ल जो हो गया है। सारा गाँव तो थाने में बैठा है—

शामू पकड़ लिया गया है न !

रणधीर : (**ज़ोर-ज़ोर से हंसता है**) कोई मरे कोई जिए, मेरी बला से—लाओ, बोतल लाओ। यह तो खत्म हो गयी।

[गटागट पीने की आवाज़—फिर होंठ चाटने की आवाज़]

रणधीर : (**अपने-आप से**) पाँच सौ रुपया देता था दूसरे को मारने के लिए (**हँसता है**) ···वाह रणधीर पहलवान ! तुम्हारे क्या कहने हैं !

[सावित्री का प्रवेश]

सावित्री : रणधीर—(**घबराहट में**) रणधीर—रणधीर कहाँ है ?

[यह आवाज़ देर से आए]

रणधीर : (**चौंककर**) कौन ?

सावित्री : रणधीर—रणधीर पहलवान !

रणधीर : कौन ? सावित्री ? सावित्री, तू यहाँ क्या करने आयी है ? जा, जा, चली जा यहाँ से। यह जगह, यह जगह—जा, यह जगह बहुत बुरी है। यहाँ बुरे आदमी आते हैं सावित्री। जा, चली जा यहाँ से।

सावित्री : रणधीर··· (**रोना शुरू कर देती है।**)

रणधीर : क्या हुआ ? क्या हुआ सावित्री ! तू रोती क्यों है ?

सावित्री : वो शामू को पकड़कर थाने ले गए हैं। कहते हैं, उसने बापू को मारा है।

रणधीर : तो उसने मारा होगा।

सावित्री : यह झूठ है, बिलकुल झूठ है। उसने मेरे बापू को नहीं मारा। वह बिलकुल निर्दोष है। वह मुझे मिलने के लिए खेतों में जा रहा था कि रास्ते में उसे लाश पड़ी दिखाई दी। बस, उसका उतना ही दोष है। (**रोती है**)···रणधीर, मैं मर जाऊँगी।

रणधीर : हाय, यह तू कैसी बात मुँह से निकालती है !

सावित्री : (**भावनाओं की रौ में**) नहीं, मैं ज़हर खाकर मर जाऊँगी—अगर शामू को कुछ हो गया तो—तो—(**ज्यादा ज़ोर से रोना शुरू कर देती है।**)

रणधीर : न रो सावित्री, न रो, तू ज़िन्दा रहेगी। तुझे ज़िन्दा रहना होगा। तू घर चल। मैं जाकर देखता हूँ थाने में कि बात क्या है। चल, तू घर चल। सचमुच तू तो पगली है। बेकार अपनी जान हलकान कर रही है। चल।

[कदमों की चाप—फ़ेड आउट]

[भीड़ का शोर। नीचे की वार्ता उस पर सुपर इम्पोज़ की जाए। शोर की आवाज़ ऊँची हो जाए—रणधीर के आने से]

एक लड़की : शामू की माँ, रणधीर।

शामू की माँ : रणधीर—

एक आदमी : दारू पी रखी है—झूम रहा है ।

दूसरा आदमी : सीधा थानेदार की तरफ़ जा रहा है ।

थानेदार : (**रोबदार आवाज़ में**) रणधीर, रणधीर, बाहर खड़े रहो । अब्दुल रहमान, तुम इसको रोकते क्यों नहीं ?

रणधीर : खबरदार, जो मुझे किसी ने हाथ लगाया ।

थानेदार : आने दो इसे । बोलो, क्या कहना है ?

रणधीर : कुछ नहीं । मैं यह देखने आया था कि ज़मींदारजी को किसने कत्ल किया है ?

थानेदार : यह मेरा हाकिम बनाकर तुम्हें किसने भेजा है ? ख़ैर, कातिल को देखना है, देख लो, वह तुम्हारे सामने खड़ा है ।

[रणधीर ज़ोर से कहकहा बुलन्द करता है ।]

रणधीर : (**कहकहे के साथ**) शामू ? इस शामू ने ज़मींदार को मारा है ? (**हँसता है**) थानेदार साहब ! (**हँसता चला जाता है**) थानेदार साहब, आपने गलत आदमी को पकड़ लिया है ।

थानेदार : रणधीर, ज़्यादा बकवास न करो । जाओ, भाग जाओ यहाँ से ।

रणधीर : (**हँसता है**) मैं कहता हूँ थानेदार साहब, जिस आदमी ने आज तक चिड़िया तक नहीं मारी, वह एक आदमी को जान से कैसे मार सकता है ?

शामू : उड़ा ले मेरी हँसी, उड़ा ले मेरी हँसी ।

रणधीर : (**हँसता है**) अरे भई, मैंने झूठ थोड़े कहा है—(**हँसता है**) थानेदार साहब, मैं सच कहता हूँ, शामू निर्दोष है—ऐसा डरपोक और बुज़दिल कभी कातिल नहीं हो सकता । कत्ल वह कर सकता है जिसके बाज़ुओं में शक्ति हो—यह मुरदार भला किसी को क्या मारेगा ?

[शोर की आवाज़ बुलन्द होकर धीमी हो जाए ।]

एक आदमी : (**दूर से आवाज़ आती है**) थानेदार साहब, इससे पूछिए, अगर शामू ने ज़मींदारजी को नहीं मारा तो फिर किसने मारा ?

रणधीर : तू मुझसे पूछ । थानेदार से क्यों पूछने को कहता है । थानेदार क्या मेरा खुदा है ? ले सुन ले, ज़मींदार को मैंने मारा है । इन हाथों से मैंने उसका काम तमाम किया है—इन हाथों से । देख लिए ? अब शामू के हाथ भी देख । बता, क़त्ल कौन कर सकते हैं ? (**थानेदार से**) थानेदार साहब, हथकड़ी खोलकर मुझे पहना दो ।

[शोर ज़्यादा हो जाता है ।]

शामू की माँ : मेरा बच्चा—सावित्री—सावित्री—शामू निर्दोष है ।

सावित्री : रणधीर—रणधीर—

रणधीर : (**हँसता है**) सावित्री, मैंने तुझसे कहा नहीं था कि घर चल के बैठ । तू यहाँ

क्या करने आयी है ? जा, चली जा यहाँ से ।

सावित्री : (आवाज़ भर्रा जाती है) रणधीर, रणधीर, तुम बहुत अच्छे आदमी हो ।

रणधीर : (गमगीन हँसी के साथ) नहीं सावित्री, मैं बड़ा ज़ालिम, बड़ा पापी हूं ।

मुझे प्रेम करने का कोई अधिकार नहीं। मेरे पहलू में दिल नहीं, पत्थर है···

[सावित्रीं की सिसकियों की आवाज़]

(फ़ेड आउट)

चूड़ियाँ

पात्र

हामिद : कालेज का एक जवान छात्र—तबीयत शायराना

सईद : हामिद का दोस्त

डिप्टी साहब : हामिद के पिता

सुरैया : हामिद की बहन

हमीदा :

माँ : हामिद की माँ

दुकानदार, हमीदा की एक और सहेली, तारवाला और एक नौकर

पहला दृश्य

[कालेज होस्टल का एक कमरा। हर चीज़ करीने से रखी है। बहुत कम फ़र्नीचर है, लेकिन ठिकाने से रखा है और खूबसूरत दिखाई देता है। पलंग की चादर उजली है। मेज़ का कपड़ा भी साफ़-सुथरा है। दीवारों पर चुगताई की सिर्फ़ दो तस्वीरें नज़र आती हैं जिनके फ्रेम बहुत ही नाज़ुक हैं। मेज़ पर कुछ किताबें रखी हैं जिनमें से अकसर शायरों के दीवान हैं। हामिद आरामकुर्सी में पूरे लिबास में बैठा अखबार पढ़ रहा है और उसका दोस्त सईद लोहे के पलंग पर लेटा दो नर्म-नर्म तकियों पर कुहनी जमाए, हाथ ठोड़ी के नीचे रखे हामिद की तरफ़ देख रहा है जो अखबार पढ़ने में व्यस्त है।]

हामिद : (अखबार के पीछे से) अपने अज़ीज़ों और दोस्तों को तोहफ़े दीजिए—हैं भई! इश्तहार की सुर्खी दिलचस्प है—अपने अज़ीज़ों और दोस्तों को तोहफ़े दीजिए—शादी, ब्याह और सालगिरह और इसी किस्म के दूसरे मौकों पर हसीन तोहफ़े ही देने चाहिए—आपका दिया हुआ आईना, आपका पेश किया हुआ फूलदान, आपका भेजा हुआ हार—ज़रा गौर फ़रमाइए, इन हसीन तोहफ़ों में कितनी शायरी है—हमारे शोरूम में तशरीफ़ लाइए और अपने दोस्तों, अपने अज़ीज़ या अपने···

[सईद खाँसता है।]

हामिद : ···को तोहफ़ा देने के लिए अपने मनपसन्द शे'रों का चुनाव कीजिए।

सईद : लाइए, अखबार मेरे हवाले कीजिए···मैं जंग की ताज़ा खबरें पढ़ना चाहता हूँ।

हामिद : (अखबार चेहरे पर से हटाते और उसे तह करते हुए) आपको जंग से इतनी दिलचस्पी क्यों है ?

सईद : इसलिए कि मैं बहुत सुलह-पसन्द आदमी हूँ।

हामिद : यह जंग भी सुलह-पसन्द आदमी ही कर रहे हैं। (अखबार तह करते हुए उठता है) खैर, हटाइए इस किस्से को। मैं आपसे यह अर्ज़ करने वाला था कि मैं एक हसीन तोहफ़ा खरीदना चाहता हूँ।

सईद : (करवट बदलकर) किसके लिए ?

हामिद : (अखबार मेज़ पर फेंकते हुए) इसका अभी फ़ैसला नहीं हुआ।

सईद : खूब !

हामिद : तोहफ़ा ले आएँ तो बाद में फ़ैसला कर लिया जाएगा।

सईद : (उठकर पलंग पर बैठ जाता है) ठीक, लेकिन आपका कोई दोस्त ? कोई अज़ीज़ ? कोई···?

हामिद : यहाँ आपके सिवा कोई नहीं।

सईद : (खुश होकर) तो···

हामिद : जी नहीं। तोहफ़ा मैं आपको नहीं देना चाहता।

सईद : क्यों ?

हामिद : (कुर्सी लेकर सईद के पास बैठ जाता है) इसलिए कि आपको अपनी पैदाइश की तारीख ही मालूम नहीं—फ़रमाइए, आप कब पैदा हुए थे ?

सईद : ऐसी चीज़ कौन याद रखता है !

हामिद : तब आपकी सालगिरह का सवाल ही पैदा नहीं होता।

सईद : जी हाँ। बिलकुल पैदा नहीं होता।

हामिद : रही आपकी शादी, तो इसके बारे में मुझे यकीन है कि कभी हो ही नहीं सकती।

सईद : यानी इस मामले में आप मुझसे भी कहीं ज़्यादा नाउम्मीद हो चुके हैं ?

हामिद : जी हाँ। इसलिए कि आप कभी यह फ़ैसला नहीं कर सकेंगे कि आपको पचास बरस की औरत चाहिए जिसमें सोलह वर्ष की अल्हड़ लड़की की नज़ाकत हो या आपको सोलह वर्ष की लड़की चाहिए जिसमें पचास वर्ष की औरत की पुख्तगी मौजूद हो—लेकिन मेरा सोचने का तरीका बिलकुल अलग है।

सईद : (पलंग पर से उठकर आरामकुर्सी पर बैठ जाता है, जहाँ पहले हामिद बैठा था) जो मुझे भी अच्छी तरह मालूम है। लेकिन क्या इसका यह मतलब है कि आप तोहफ़ा खरीदने के बाद ही शादी के मसले पर गौर करेंगे ?

हामिद : लगभग ऐसा ही होगा।

सईद : तो ज़ाहिर है कि आप कोई ज़नाना तोहफ़ा खरीदेंगे।

हामिद : बिलकुल ज़ाहिर है। (**पलंग पर लेट जाता है। उसी तरह जिस तरह सईद लेटा था**) मैंने अगर कोई मर्दाना तोहफ़ा खरीदा तो इसका यह मतलब होगा कि मैं बहुत खुदगर्ज़ और कमीना हूँ।

सईद : क्या शक है···मेरा मतलब···

हामिद : आपका मतलब ठीक है, इसलिए कि तोहफ़ा मेरी तरफ़ से मेरी तरफ़ होगा। लेकिन हो सकता है कि मैं अपनी सालगिरह मना लूं, क्योंकि मुझे अपनी पैदाइश की तारीख अच्छी तरह याद है—मेरा मतलब है, ज़बानी याद नहीं, नोटबुक में लिखी हुई मौजूद है।

सईद : इस सूरत में भी आपका तोहफ़ा आपकी तरफ़ से आप ही की तरफ़ होगा।

हामिद : (**बिस्तर पर उठकर बैठ जाता है**) अरे हाँ—यह तो होगा—तो इसका यह मतलब हुआ कि तोहफ़ा खरीदने के बाद मुझे कोई औरत···

सईद : (**उठ खड़ा होता है**) या लड़की तलाश करनी पड़ेगी जिसके साथ आप शादी कर सकें।

हामिद : हाँ, ऐसी औरत।

सईद : या लड़की।

हामिद : या लड़की मुझे हर हालत में तलाश करनी पड़ेगी।

सईद : हर हालत में क्यों ?

हामिद : हर हालत में नहीं—सिर्फ़ उस हालत में जब मैंने तोहफ़ा खरीद लिया होगा।

सईद : यह हालत बहुत ही काबिल-ए-रहम होगी।

हामिद : कुछ भी हो···मैं तोहफ़ा खरीदने का फ़ैसला कर चुका हूँ—अब यह बदल नहीं सकता—आइए, चलें।

[हामिद टोपी पहनता है—सईद ज़रा आईने में अपने बाल ठीक करता है—हामिद मेज़ पर से अखबार उठाता है।]

हामिद : चलिए।

सईद : चलिए।

[दोनों बाहर निकल जाते हैं।]

दूसरा दृश्य

[तोहफ़ों की दुकान—लम्बी-चौड़ी जगह है जहाँ अनगिनत अलमारियाँ रखी हैं। बड़े-बड़े शीशे के शो-केस रखे हैं। प्रत्येक चीज़ झिलमिल-झिलमिल कर रही है। बहुत-से ग्राहक जमा हैं। कुछ आ रहे हैं, कुछ जा रहे हैं। हामिद और सईद उधर

आते हैं। हामिद के हाथ में अखबार है। वहै उस दुकान का पता देख रहा है। दुकानदार नये ग्राहकों को देखकर उनकी ओर ध्यान देता है और पास आता है।]

दुकानदार : फ़रमाइए···

हामिद : तोहफ़ों की यही दुकान है, जिसका इश्तहार···

दुकानदार : आप इस अखबार में देख रहे हैं—आइए—आइए···

[दुकान के ज़रा अन्दर चले जाते हैं—इतने में कुछ क्षणों के बाद दो लड़कियाँ आती हैं। बड़ी तेज़-तर्रार।]

हमीदा : (दुकान के नौकर से) तोहफ़ों की यही दुकान है ?

नौकर : जी हाँ। यही दुकान है और गवर्नमेंट से रजिस्टर्ड।

हमीदा : रजिस्टर्ड ?

नौकर : जी हाँ—अन्दर तशरीफ़ ले जाइए, मेम साहब।

[दोनों लड़कियाँ दुकान के अन्दर चली जाती हैं। हमीदा उस शो-केस के पास पहुँचती है जहाँ हामिद दुकानदार के साथ खड़ा है और झुककर शो-केस में रखी हुई चीज़ों को देख रहा है।]

हामिद : (दुकानदार से) मुझे आपकी सब चीज़ें पसन्द आई हैं। (अचानक हमीदा की तरफ़ देखता है) खासतौर पर वह चीज़ तो खूब है···

[हमीदा के गाल एकदम सुर्ख हो जाते हैं।]

दुकानदार : कौन-सी ?

हामिद : (दुकान के एक कोने की तरफ़ इशारा करके) वह पुतली जो उस कोने की रौनक बढ़ा रही है।

दुकानदार : कद्र-अफ़ज़ाई का शुक्रिया। फ़रमाइए, कौन-सा तोहफ़ा बाँध दूं ? मेरा अपना खयाल है कि···

हामिद : (हमीदा की तरफ़ देखते हुए) फ़रमाइए, फ़रमाइए, आपका अपना खयाल क्या है ?

दुकानदार : किसके बारे में ?

हामिद : (चौंककर) इन्हीं···इन्हीं तोहफ़ों के बारे में।

दुकानदार : मेरा अपना खयाल है···मगर आप किस मौके के लिए तोहफ़ा चाहते हैं ?

हामिद : हाँ, यह बताना वाकई ज़रूरी है—(आवाज़ देता है) सईद साहब···सईद साहब !

सईद : हाज़िर हुआ—

हामिद : आप इन्हें बता दीजिए कि मुझे किस मौके के लिए तोहफ़ा चाहिए।

[हमीदा खिलखिलाकर हँसती है।]

हामिद : यह कौन हँसा ?

दुकानदार : लड़कियाँ हैं, हँस रही हैं।

हामिद : हाँ, लड़कियाँ हैं, हँस रही हैं···किस्सा यह है कि मुझे अपनी पत्नी के लिए··· मेरा मतलब है कि उस बीवी के लिए जो मेरी बीवी होनी चाहिए और बहुत जल्द होनी चाहिए, एक तोहफ़ा खरीदना है। हम दोनों ने यही फ़ैसला किया है। हालाँकि मैं अपनी सालगिरह मना सकता था।

दुकानदार : इसमें क्या शक है···मेरा अपना खयाल है—

[हमीदा हँसती है।]

दुकानदार : यह कौन हँसा ?

सईद : लड़कियाँ हैं, हँस रही हैं।

हामिद : हाँ, लड़कियाँ हैं, उन्हें हँसना ही चाहिए।

दुकानदार : मेरा अपना खयाल है कि अब आपको जल्दी कोई तोहफ़ा खरीद लेना चाहिए, क्योंकि···

हामिद : मैं अपना तोहफ़ा चुन चुका हूँ।

दुकानदार : फ़रमाइए ?

हामिद : (शो-केस में से दो चूड़ियाँ निकालता है जिन पर मीनाकारी का काम है) ये दो चूड़ियाँ जो इस ख़ूबसूरत बक्स में दो हसीन कलाइयों को दावत दे रही हैं।

दुकानदार : (बक्स लेकर) वाह वा, क्या तोहफ़ा चुना है आपने। मेरा अपना खयाल है कि···

[तेज़ कदमों से हमीदा आती है।]

हमीदा : (दुकानदार से) इस ताश के बारे में आपका क्या खयाल है ?

हामिद : बहुत खूबसूरत है—खासकर···

हमीदा : मैंने आपकी राय नहीं माँगी।

सईद : मैं कुछ अर्ज़ करूँ ?

हमीदा : जी नहीं। (दुकानदार से) फ़रमाइए, इसके बारे में आपकी राय क्या है ?

दुकानदार : बड़ा खूबसूरत है। सचमुच एक तोहफ़ा चीज़ है—वह खुशनसीब होगा जिसे आप तोहफ़ा देंगी।

हामिद : यानी अगर वह फ़्लश खेलेगा तो खूब जीतेगा !

हमीदा : आपने कैसे जाना कि यह ताश किसी को तोहफ़ा देने ही के लिए खरीद रही हूँ ? आपको मालूम होना चाहिए कि यह ताश मैंने सिर्फ़ अपने लिए खरीदा है। (दुकानदार से) पैक करा दीजिए इसे। (फिर बटुआ खोलकर) यह लीजिए इसकी कीमत।

हामिद : (चूड़ियों का बक्स दुकानदार को देते हुए) पैक करा दीजिए इसे। (जेब से दाम निकालकर देते हुए) यह लीजिए कीमत।

[दुकानदार दोनों चीज़ें लेकर चला जाता है।]

हमीदा : (अपनी सहेली को आवाज़ देती है) सईदा !

सईद : इरशाद—

हमीदा : आपका नाम सईदा है ?

सईद : जी नहीं—सिर्फ़ सईद—'अ' की मात्रा के बग़ैर।

[सईदा आती है।]

हमीदा : (हामिद की तरफ़ देखकर सईदा से) क्यों सईदा, मैंने यह ताश अपने लिए खरीदा है या किसी और के लिए ?

सईदा : अपने लिए।

हामिद : यह और भी अच्छा है।

हमीदा : क्यों ?

हामिद : इसलिए कि चूड़ियाँ भी मैंने अपने लिए खरीदी हैं।

हमीदा : (मुस्कराकर) आप खुद पहनिएगा ?

हामिद : जी हाँ। इस समय तो खुद ही पहनूंगा जब तक···आप ताश भी तो फ़िलहाल अकेले ही खेलेंगी ?

हमीदा : फ़िलहाल मैंने कोई फ़ैसला नहीं किया और मैं समझती हूँ कि फ़िलहाल हमें यह गुफ़्तगू बन्द कर देनी चाहिए।

[दुकानदार आता है।]

दुकानदार : मेरा अपना खयाल है कि···

हामिद : फ़िलहाल अपने निजी खयाल को अलग रखिए—लाइए मेरी चूड़ियाँ।

हमीदा : लाइए मेरा ताश।

[दुकानदार दोनों के पैकेट दोनों के हवाले कर देता है—सब बाहर निकलते हैं।]

तीसरा दृश्य

[होस्टल का वही कमरा जो हम पहले दृश्य में दिखा चुके हैं—हामिद कुर्सी पर बैठा है। सामने तिपाई रखी है जिस पर ताश के पत्ते बिखरे हुए हैं। हामिद उन्हें इकट्ठा करता है—फेंटता है—उठ खड़ा होता है और सामने दीवार पर चुगताई की पेंटिंग की तरफ़ देखकर गाना शुरू कर देता है—]

गीत

नींदों से लबरेज़ हैं आँखें जैसे ख्वाब रसीले
तिरछी नज़रें यूं पड़ती हैं जैसे बाण कटीले।

चाल में ऐसा दम-खम जैसे रुक जाने के हीले
ज़हर सही पर कौन है जो यह ज़हर न बढ़कर पी ले

होंठों पर अनसुने तराने झील में जैसे तारे
बाँकी चितवन में वह छल-बल जो खेले सो हारे
चेहरे पर लाली-सी जैसे कलियाँ नदी किनारे
हुस्न के इस उमड़े धारे में ढूंढ़े कौन सहारे

हामिद : (फिर कुर्सी पर बैठ जाता है और थोड़ी देर गीत की धुन गुनगुनाने के बाद ताश के पत्ते एक-एक करके फेंकता है) बादशाह—बेगम—और यह इक्का—राउण्ड बन गई (गुनगुनाता है)···हुस्न के इस उमड़े धारे में ढूंढ़े कौन सहारे ? (फिर पत्ते फेंकता है) सत्ता—अट्ठा—और···यह नहला—यह भी राउण्ड बन गई।

[सईद अन्दर दाखिल होता है।]

सईद : आप राउण्ड क्या बना रहे हैं—अरे···यह तो उसी किस्म का ताश है।

हामिद : जी नहीं। उसी किस्म का ताश नहीं बल्कि वही ताश है।

सईद : (हैरत से) आपका मतलब ?

हामिद : (उठकर ताश फेंटते हुए) बिलकुल ठीक है।

सईद : (कुर्सी पर बैठ जाता है) यानी ?

हामिद : देखिए, मैं आपको बताता हूं। (ताश के पत्ते तिपाई पर फेंकता है) यह दहला—यह बेगम—और यह गुलाम—देखा आपने—अब आप खुद ही सोच लीजिए, यह क्या मामला है ?

सईद : आप खुद ही बयान फ़रमाइए।

हामिद : (गाता है) 'होंठों पर अनसुने तराने झील में जैसे तारे'—ये अनसुने तराने आप नहीं सुन सकते।

सईद : यह आप पहेलियाँ क्यों बुझा रहे हैं मुझसे ? मैं पूछता हूँ यह ताश आपके पास कैसे आ गया ?

हामिद : आ गया—हक-ब-हकदार रसीद—मैंने आज नोटबुक खोलकर देखी तो मालूम हुआ कि आज ही अपनी सालगिरह है। सो मेरी सालगिरह का तोहफ़ा मुझे मिल गया और वे दो चूड़ियाँ उधर चली गईं।

सईद : किधर ?

हामिद : उधर ही, मेरी होने वाली बीवी के पास।

सईद : (उठ खड़ा होता है) मेरा अपना खयाल है कि दुकानदार की गलती से पैकेट बदल गए, आपकी चूड़ियाँ उधर चली गईं, उसका ताश इधर आ गया।

हामिद : आपका निजी खयाल दुकानदार के निजी खयाल से बहुत ज्यादा दुरुस्त है।

सईद : अब आप क्या कीजिएगा ?

हामिद : कुछ भी नहीं, ताश खेला करूंगा।

सईद : और वह चूड़ियाँ पहना करेगी ?
हामिद : क्या हर्ज है ?

[दरवाज़े पर दस्तक होती है।]

हामिद : कौन है ?
तारवाला : (बाहर से) तारवाला, हुज़ूर।

[हामिद ताश तिपाई पर रखकर बाहर निकलता है। कुछ लमहों तक सईद अकेला ताश के पत्ते एक-एक करके तिपाई पर फेंकता है।]

सईद : राउण्ड—हद हो गई है।

[हामिद तार लिए अन्दर आता है।]

हामिद : क्या हुआ ?
सईद : एक राउण्ड बन गई थी। आप सुनाइए, खैरियत तो है ?
हामिद : किबला, वालिद साहब का तार है।
सईद : क्या फ़रमाते हैं ?
हामिद : फ़रमाते हैं, फ़ौरन चले आओ। एक ज़रूरी काम है।
सईद : यह ज़रूरी काम क्या हो सकता है ?
हामिद : डिप्टी साहब ही जानें। सवाल तो यह है कि अब जाना पड़ेगा। (सईद के हाथ से ताश ले लेता है) देखिए, अगर इत्तफ़ाक से मेरी गैरहाज़िरी में उनसे मुलाकात हो जाए और वह ताश के बारे में पूछताछ करें तो···
सईद : मैं अपने अनजान होने का इज़हार करूँ। लेकिन अगर वह उसी किस्म का दूसरा सौदा करना चाहें ?
हामिद : तो मेरी तरफ़ से आपको उसकी खुली इजाज़त है।
सईद : तो चलिए, अपना असबाब बन्द कीजिए।

चौथा दृश्य

[डिप्टी साहब का घर—हॉल कमरा—औपचारिक ढंग से सजा हुआ—डिप्टी साहब दुहरे बदन के बुज़ुर्ग हैं। आरामकुर्सी पर बैठे एक मोटा सिगार पी रहे हैं—उनके पास हामिद खड़ा है जैसे वह अभी स्टेशन से आ रहा है।]

हामिद : मैं आपका तार मिलते ही चल पड़ा।
डिप्टी साहब : तुमने बहुत अच्छा किया क्योंकि वक्त बहुत थोड़ा रह गया है।
हामिद : किसमें ?

डिप्टी साहब : तुम्हारी शादी में।

हामिद : (हैरत से) मेरी शादी में ? यानी मेरी शादी हो रही है ?

डिप्टी साहब : कतई तौर पर हो रही है।

हामिद : किसके साथ ?

डिप्टी साहब : एक लड़की के साथ।

हामिद : जिसको मैं बिलकुल नहीं जानता।

डिप्टी साहब : हाँ, जिसको तुम बिलकुल नहीं जानते।

हामिद : और शादी मेरी हो रही है।

डिप्टी साहब : तुम कहना क्या चाहते हो ?

हामिद : मैं कहना चाहता हूँ कि मुझे यह शादी मंज़ूर नहीं है।

डिप्टी साहब : (गुस्से में उठ खड़े होते हैं) क्या कहा ?

हामिद : अब्बाजी, यह सरासर ज़ुल्म है। मैं कैसे ऐसी शादी पर रज़ामंद हो सकता हूँ। मैं लड़की को जानता नहीं। उसकी शक्ल तक से अनजान हूँ। जाने किस मिज़ाज की है। कैसे खयालात रखती है। मेरी गैरमौजूदगी में मुझसे सलाह किए बगैर आपने इतना बड़ा फ़ैसला कर दिया।

डिप्टी साहब : मैं तुम्हारा बाप हूँ।

हामिद : ठीक है, लेकिन ··लेकिन ··अब्बाजी—आप खुदा के लिए इतना तो सोचें। पढ़ा-लिखा आदमी हूँ। रौशन-खयाल हूँ—दिल में जाने क्या-क्या उमंगें हैं और फिर—और फिर—अब मैं आपसे क्या कहूँ ? मुझे मालूम होता कि आप मुझे यहाँ बुलाकर यह फ़ैसला सुनाने वाले हैं तो मैं कभी न आता—कहीं भाग जाता—खुदकुशी कर लेता।

डिप्टी साहब : मैं तुम्हारी बकवास सुनने के लिए तैयार नहीं।

हामिद : मैं शादी करने के लिए भी तैयार नहीं।

डिप्टी साहब : देखूंगा तुम कैसे नहीं करते—(गुस्से में भरे कमरे से बाहर चले जाते हैं।)

हामिद : अजब मुसीबत में फँस गया हूँ—कुछ समझ में नहीं आता क्या करूँ—शादी न हुई खेल हो गया। क्या करूँ, क्या न करूँ ? मेरी जान अजब मुसीबत में फँस गयी है। (बाप के शब्द दोहराता है) देखूंगा, तुम कैसे शादी नहीं करते—चलिए फ़ैसला हो गया—अब चाहे मेरी सारी ज़िन्दगी तबाह हो जाए। (जेब में से ताश का पैकेट निकालता है—सोफ़े पर बैठ जाता है और पत्ते फेंटते हुए कहता है) यह ताश ही अब मेरी किस्मत का फ़ैसला करेगी। अगर तीन पत्तों ने राइण्ड न बनायी तो मैं कभी शादी न करूँगा और अगर राउण्ड बन गयी तो—कहरे दरवेश बरजाने दरवेश कर लूंगा। जब शादी को खेल ही समझा गया है तो यूं ही सही। मैं भी इसका फ़ैसला पत्तों से ही करूँगा। (एक-एक करके तीन पत्ते फेंकता है) दुक्की··· तिग्गी—और···और···यह चौका—लानत ! (ताश की गड्डी ज़मीन पर पटक देता है) आखिरी सहारा भी धोखा दे गया।

[हामिद की माँ जल्दी-जल्दी कमरे में दाखिल होती है।]

माँ : यहाँ बैठे ताश खेल रहे हो। माँ से नहीं मिलना था ?

हामिद : (**माँ की तरफ़ बढ़ते हुए**) अम्मीजान—अम्मीजान—मैं शादी नहीं करूंगा।

माँ : यह क्या बेहूदा बक रहे हो ?

हामिद : नहीं अम्मीजान—मुझे ऐसी शादी मंज़ूर नहीं—यानी मुझसे पूछे बगैर मेरी शादी का फ़ैसला कर दिया गया है।

माँ : इसमें पूछने की बात ही क्या थी ? माँ-बाप अन्धे तो नहीं होते।

हामिद : मुझे तो आप लोगों ने अंधा ही समझा।

माँ : हमने जो कुछ किया है, ठीक किया है।

हामिद : मैं मर जाऊँगा, लेकिन इस तरह शादी कभी नहीं करूंगा।

माँ : कुछ होश की दवा करो। जो मुँह में आता है बक देते हो।

हामिद : आप तो चाहती हैं, बस गला ही घोंट दें. आदमी उफ़ तक न करे।

माँ : बड़ा ज़ुल्म हुआ है तुम पर ?

हामिद : इससे बढ़कर और ज़ुल्म क्या होगा ? यानी मेरी सारी ज़िन्दगी पर काजल का लेप किया जा रहा है। मुझे हमेशा-हमेशा के लिए एक अन्धेरे गार में धकेला जा रहा है—और अभी कुछ ज़ुल्म नहीं हुआ। अम्मीजान, सच कहता हूँ, इसे धमकी न समझिएगा। ज़हर खा लूंगा, गाड़ी के नीचे जा मरूंगा, पर ऐसी शादी कभी न करूंगा।

माँ : तुम पैदा ही न होते तो कितना अच्छा था। आज मुझे यह दिन देखना तो नसीब न होता—(**गले में आवाज़ रुँध जाती है**) मैंने किस चाव से तुम्हारा रिश्ता ठहराया था। (**रोना शुरू कर देती है।**)

[दूर से सुरैया की आवाज आती है—"अम्मीजान—अम्मीजान"—इसके बाद वह खुद तेज़ कदमों से अन्दर आती है।]

सुरैया : अम्मीजान, आप इधर हैं—आप भाईजान—आप तशरीफ़ ले आए—अम्मीजान, मैं आपको उधर देख रही थी।

माँ : क्या है ?

सुरैया : नाप ले आयी हूँ अम्मीजान, लेकिन किन मुश्किलों से मिला है। पर आप खामोश क्यों हैं ? रो क्यों रही हैं ? भाईजान, क्या बात है ?

माँ : सुनार बाहर बैठा है ?

सुरैया : हाँ, बैठा है।

माँ : उससे कह दे कि चला जाए, हमें कंगनियाँ नहीं बनवानी हैं।

सुरैया : यह आप क्या कह रही हैं अम्मीजान ?—नाप ले आयी हूँ।

माँ : सुरैया, तू इस वक्त जा—मेरी तबीयत ठीक नहीं। सुनार से कह दे, कल आए।

सुरैया : इसका मतलब क्या है ? नाप मौजूद है तो फिर कल क्यों आए ? आज ही क्यों न काम शुरू कर दे ताकि वक्त पर मिल जाए।

माँ : जो दिल में आए कर। मुझ नसीबों जली को न सता।

सुरैया : जाने आप किस बात पर भरी बैठी हैं—सतायें आपको हामिद भाईजान और कोमा मुझे जाए—वह तो खैर अब नखरे करेंगे ही। बात-बात पर बिगड़ेंगे। शादी जो हो रही है—अच्छा खैर, इस किस्से को छोड़िए। मुझे उसके लिए तोहफ़ा खरीदना है। अभी वहाँ गयी तो मालूम हुआ कि कल उसकी सालगिरह है—कुछ रुपये दीजिए मुझे।

माँ : मैं कहती हूँ दफ़ा हो यहाँ से—मगज़ न चाट मेरा। **(चली जाती है।)**

सुरैया : **(गुस्से में हामिद की तरफ़ बढ़ती है)** हामिद भाईजान—आप क्यों मुँह में घुघनियाँ डाले बैठे हैं ?—जैसे आपके मुँह में ज़बान ही नहीं—एक तो मैं आपके काम करती फिरूँ और फिर उलटा झिड़कियाँ खाऊँ।

हामिद : मैं इस वक्त कोई बात करना नहीं चाहता।

सुरैया : तो लीजिए, यह नाप की चूड़ी आप सँभालिए। बाहर सुनार बैठा है। उससे जो कहना हो कह दीजिए। **(हामिद के हाथ में गुस्से से चूड़ी रख देती है।)**

हामिद : **(चूड़ी देखकर)** सुरैया—सुरैया—बात सुनो—यह चूड़ी तुमने कहाँ से ली ?

सुरैया : कहीं से भी ली हो। आपको इससे क्या ?

हामिद : मैं समझ गया—मैं समझ गया—लेकिन यह वाकई उसकी है न—उसी की ?

सुरैया : नहीं बताती।

हामिद : मेरी अच्छी बहन जो हुई—बताओ, किसकी है ?

सुरैया : समझ गए हैं लेकिन बार-बार पूछेंगे—मज़ा आता है न—आपकी होने वाली बीवी की है जिसकी कलाई से ज़बरदस्ती उतारकर लाई हूँ।

हामिद : ज़बरदस्ती—क्यों, वह उतारने नहीं देती थी ?

सुरैया : हाँ। कहती थी—नहीं, मैं यह चूड़ी कभी नहीं दूंगी। किसी का तोहफ़ा है। तुम कोई और ले जाओ।

हामिद : अच्छा ?

सुरैया : पर मैं एक और बहाने से ले आयी। कहा, मुझे भी ऐसा ही जोड़ा मँगवाना है।

हामिद : **(खुश होकर)** वह मारा ! **(बहन को गले लगा लेता है।)**

सुरैया : यह क्या हो गया है आपको ?

हामिद : चुप—अब मैं ज़रूर शादी करूँगा—अब मैं ज़रूर शादी करूँगा। अम्मीजान कहाँ हैं ?

सुरैया : यह क्या दीवानापन है ?

हामिद : अब मैं ज़रूर शादी करूँगा। अब मैं ज़रूर शादी करूँगा।

सुरैया : बहुत अच्छा।

हामिद : आज उसकी सालगिरह है न ? **(ताश के पत्ते उठाना शुरू करता है।)**

सुरैया : है तो सही—पर यह आप ताश के पत्ते क्यों इकट्ठा कर रहे हैं ?

हामिद : ठहरो, अभी बताता हूँ। **(ताश के पत्ते इकट्ठे करके बक्स में डालता है)** सुरैया, तुम उसे कोई तोहफ़ा देना चाहती हो न ?

सुरैया : जी हाँ।

हामिद : तो ऐसा करो—यह ताश ले जाओ।

सुरैया : ताश ?

हामिद : हाँ, तुम उसे यह पैकेट तोहफ़े के तौर पर दे दो और फिर देखो क्या होता है—मेरे मुँह की तरफ़ क्या देखती हो ?—कह जो दिया इससे बेहतर कोई और तोहफ़ा हो नहीं सकता··· (गाता है—)

होंठों पर अनसुने तराने, झील में जैसे तारे,
बाँकी चितवन में वह छल-बल, जो खेले वो हारे।
चेहरे पर लाली-सी जैसे कलियाँ नदी किनारे,
हुस्न के इस उमड़े धारे में, ढूँढ़े कौन सहारे।

(परदा गिरता है।)

रूह का नाटक

पात्र

नम्बर एक	:	रूह का बौद्धिक अस्तित्व (नातिक वजूद)
नम्बर दो	:	रूह का भावनात्मक अस्तित्व (जज़्बाती वजूद)
नम्बर तीन	:	रूह का अनश्वर अस्तित्व (सरमदी वजूद)
बीवी नम्बर एक	:	बीवी के बारे में नम्बर एक का विचार
बीवी नम्बर दो	:	बीवी के बारे में नम्बर दो का विचार
रक्कासा (नर्तकी) नम्बर एक	:	रक्कासा के बारे में नम्बर एक का विचार
रक्कासा (नर्तकी) नम्बर दो	:	रक्कासा के बारे में नम्बर दो का विचार
और एक पोर्टर	:	

[हज़रात ! यह ड्रामा जो थोड़ी देर के बाद आपकी खिदमत में पेश किया जाएगा, मामूली ड्रामा नहीं है। इसका एक-एक लफ़्ज़ आपको गौर से सुनना होगा ताकि आप इसका मतलब अच्छी तरह समझ सकें। ड्रामे का नाम है, 'रूह का नाटक' और यह ड्रामा रूह के अन्दर आधे सैकण्ड के अरसे में खेला गया है। यूं तो हर रोज़ आपकी-हमारी रूह के अन्दर कई ड्रामे खेले जाते हैं मगर आज तक किसी ने इनको पेश नहीं किया और न किसी ने समझने की कोशिश की है कि ये ड्रामे क्यों होते हैं।

साइंसदानों ने साबित किया है कि हमारी रूह तीनों वजूदों का इकट्ठा मौजूद होना है जिनकी नेचर जुदा-जुदा है। मिसाल के तौर पर अगर अलफ़ को एक आदमी मान लिया जाए तो उसके तीन हिस्से ये होंगे—अलफ़ नम्बर एक, अलफ़ नम्बर दो और अलफ़ नम्बर तीन···

नम्बर एक रूह का वह हिस्सा है जो अच्छाई और बुराई में अन्तर करता है, उसे हम ज़मीर कहते हैं।

नम्बर दो भावनात्मक अस्तित्व है जो राग-रंग और ऐश चाहता है।

नम्बर तीन रूह का वह हिस्सा है जो कभी फ़ना नहीं होता और दुनियावी झगड़ों में खुद को नहीं फँसाता···यह मुसाफ़िर है जो सदा सफ़र में रहता है। अब आप मुझसे पूछेंगे कि रूह के ये तीन हिस्सेदार कहाँ रहते हैं···? मैं बताता हूँ। पुराने ज़माने में लोगों का खयाल था कि रूह यानी आत्मा जिगर में रहती है। इस

ड्रामे के लिखने वाला कहता है कि रूह हमारे सीने के उस हिस्से में रहती है जिस पर हाथ मारकर हम अकसर कहा करते हैं, "मेरी रूह को बड़ा दुःख होता है" या "मेरी आत्मा को सुख और चैन मिल गया है"— सो हम भी फ़र्ज़ कर लेते हैं कि हमारी रूह या आत्मा दिल के पास रहती है। चुनांचे जब आप ड्रामा देखें तो इस बात का खयाल रखें कि 'नम्बर एक' और 'नम्बर दो' आपको कई बार दिल से बातें करते दिखाई देंगे। 'नम्बर तीन' ड्रामे के आखिर में बोलेगा क्योंकि वह तो नम्बर एक और नम्बर दो के झगड़ों में दखल ही नहीं दिया करता। लीजिए, अब ड्रामा शुरू होता है।]

दृश्य

[परदा उठता है। स्टेज पर एक कद के तीन आदमी नज़र आते हैं। भावनात्मक अस्तित्व ने सुर्ख रंग के कपड़े पहन रखे हैं। उसके चेहरे के नैन-नक्श से ही मनुष्य होने का पता चलता है···चेतन अस्तित्व के लिबास में गम्भीरता है। शक्ल और सूरत से दार्शनिक मालूम होता है···अनश्वर अस्तित्व पृष्ठभूमि में सफ़री लिबास पहने खड़ा है जैसे प्लेटफ़ार्म पर अपनी गाड़ी का इन्तज़ार कर रहा है। उसे 'बौद्धिक' और 'भावनात्मक' अस्तित्व से कोई दिलचस्पी नहीं। स्टेज के एक कोने में बहुत बड़ा दिल बना है जो धड़क रहा है। दिल के साथ कई तार लटके हैं। इन तारों में से एक के साथ टेलीफ़ोन लगा है···भावनात्मक अस्तित्व नशे में चूर इस टेलीफ़ोन के पास आता है और चोंगा उठाकर बात करता है—]

नम्बर दो : हलो···हलो···हलो···अरे भई, सुनते हो कि नहीं? इतने ऊँचे सुरों में चिल्ला रहा हूँ और तुम्हें कुछ सुनाई नहीं देता? क्या तुम्हारे कानों में गूंज पैदा हो रही है? होनी चाहिए। इसलिए कि तुम्हारी रगें बिलकुल ढीली पड़ गयी हैं ···लो, अब सुनो! ब्रांडी पीओ···समझे?···

नम्बर एक : पर याद रहे कि इसके हलक में यह तीसरी बोतल तुम ही उँडेल रहे हो। तुम्हारा वक्त तो यूं कट ही जाता है पर शामत इस बेचारे दिल की आती है। देखो तो किस कदर ज़ोर से धड़क रहा है···।

नम्बर दो : धड़कने दो···इसका धड़कना ही तो ज़िन्दगी की निशानी है। तुम तो चाहते हो कि इस पर गशी की हालत बनी रहे और हमारे तीसरे साथी (अनश्वर की तरफ़ इशारा करके) की तरह बिलकुल गूंगा हो जाए···वाह, क्या कहने हैं इस ज़िन्दगी के···

नम्बर एक : मैं कहता हूँ कि अगर यह इसी रफ़्तार से धड़कता रहा तो यूं चुटकियों में बन्द हो जाएगा। फिर कभी नहीं धड़केगा।

नम्बर दो : न धड़के। फिर क्या हुआ ? आखिर उसे एक रोज़ खामोश होना ही है।

नम्बर एक : मैं भी तो यही कहता हूँ। तुमने तो मेरे ही लफ़्ज़ दोहराए हैं।

नम्बर दो : कभी-कभी तुम अक्ल की बात भी कह दिया करते हो।

नम्बर एक : देखो, जो कहना हो, ज़ुबानी कहो···रगों को हाथ लगाया तो बहुत बुरा होगा। मैं तुमसे पहले भी कह चुका हूँ कि···

[भावनात्मक अस्तित्व जब भी तारों को हाथ लगाता है उनमें झंकार पैदा होती है।]

नम्बर दो : (गुस्से में) कह चुके हो ! कौन कह चुका है ? और किस हक की बिना पर ? कौन होता है जो नौकरों की तरह मुझ पर हुक्म चलाए···मैं शायर हूँ··· इश्क-व-मुहब्बत की आवाज़···मेरे बगैर यह दुनिया मिट्टी का एक ढेर होती··· एक मरघट···इश्क-ए-मुहब्बत न हो तो हूर चीज़ बेजान है। मुर्दा है···

नम्बर एक : तुम बकवास करते हो।

नम्बर दो : जो कुछ मैं कहता हूँ बिलकुल सही है···हाँ, यह तो बताओ, अगर हम शराब पीते हैं तो इसमें कसूर किसका है ?

नम्बर एक : (व्यंग्यपूर्ण लहजे में) तुम्हारा तो होने से रहा जो हर वक्त शराब-शराब की रट लगाये रहता है।

नम्बर दो : और इस रट को लगाने की बिना पर भी जनाब ने कभी गौर फ़रमाया ? क्या यह आपकी सोहबत का नतीजा नहीं जिसमें हरदम गला घोंट लेने को जी चाहता है ?

नम्बर एक : भई देखो ! ज़रा इन्साफ़ से काम लो···ईमान से कहो। इस बेचारे दिल की बद्बख्तगियों का सबब मैं हूँ···या तुम···यकीनन तुम हो···तुम भावुक इन्सान ···कभी सोचा भी है कि तुम क्या हो···लो, मुझसे सुनो···तुम खुद गर्ज़मंद हो··· एक तबाहशुदा इन्सान हो···न तुमने कभी पढ़ने में दिलचस्पी ली है, न कभी अक्ल का काम करने की कोशिश की। खुद्दारी और तहज़ीब के पीछे तुम लट्ठ लिए फिरते हो।

नम्बर दो : तुम दूसरों की खींची हुई लकीरों पर चलने वाले हो, एक खुश्क किताबी कीड़े···

नम्बर एक : मैं तुमसे नफ़रत करता हूँ।

नम्बर दो : मैं भी तुमको नफ़रत की निगाहों से देखता हूँ।

[भावनात्मक अस्तित्व ज़ोर से दिल के तारों को छेड़ता है। ज़ोर की झंकार पैदा होती है।]

नम्बर एक : परे हट जाओ। खबरदार जो मेरी रगों को फिर छेड़ा।

नम्बर दो : तुम बीच में टर्राना क्या शुरू कर देते हो। ये रगें जैसे तुम्हारी हैं, मेरी भी हैं। इनको छेड़ने से तुम्हें तकलीफ़ होती है तो क्या मुझे नहीं होती ? और जब

तुम्हारी मेहरबानी से मेरी रगें बेहिस हो जाती हैं तो क्या मैं गधे की तरह बेवकूफ़ नहीं हो जाता ? उस वक्त तुममें और मुझमें फ़र्क ही क्या रहता है ? मैं इन्हें छेड़ूँगा, जब जी चाहे छेड़ूँगा, हर वक्त छेड़ूँगा। रगें तनी रहें तो मज़ा है। इस तरह वे एक तम्बूरा बन जाती हैं जिस पर मैं आज़ादी और मुहब्बत के नगमे अलाप सकता हूँ।

[दिल के तारों को छेड़ता है। दिल ज़्यादा तेज़ी से धड़कना शुरू करता है।]

नम्बर दो : (दिल को सम्बोधित करते हुए) पी, पी और खूब पी, जी भरकर पी—

नम्बर एक : ऐसा शर्बत जो मेरे सीने की आग ठण्डी करे।

नम्बर दो : ऐसी शराब जो पिघली हुई अग्नि हो। जो मेरे लहू के हर कतरे को एक लपकता हुआ शोला बना दे।

नम्बर एक : नहीं, नहीं, हर्गिज़ नहीं। शराब नहीं शर्बत। क्या कहा···शर्बत नहीं रहा ···खत्म हो गया···तो सोचता क्या है···जा, भागकर अत्तार की दुकान से ले आ···बस, सिर्फ़ एक गिलास···

[दोनों वजूद कुछ देर तक स्टेज पर इधर-उधर टहलते रहते हैं।]

नम्बर एक : अब जोश ठण्डा हुआ ?

नम्बर दो : तुम हो कौन पूछने वाले ?

नम्बर एक : क्या नज़र नहीं आता ?

[दोनों अस्तित्व फिर इधर-उधर टहलने लग जाते हैं। अनश्वर अस्तित्व के पास जाकर दोनों एकदम रुकते हैं।]

नम्बर दो : यह कौन है ?

नम्बर एक : नम्बर तीन···सहारा। खामोश भाई, हमेशा की तरह चुपचाप सो रहा है। अगर इसे तंग किया या सताया तो याद रखना, तुम्हारे हक में अच्छा साबित न होगा···इसको छोड़ो। तुम यह बताओ कि उस औरत में तुमने क्या देखा जो यूं बुरी तरह लट्टू हो गए ? उसकी होशियारी या चालाकी को तुमने पसन्द किया ? यही है न···पर इतनी-सी बात के लिए अपनी बीवी और बच्चों को ठुकरा देना कहाँ की अक्लमंदी है···माफ़ करना दोस्त, तुम्हारा यह काम अच्छा नहीं। यह अलग बात है कि हम जंगली और वहशी आदमी बन जाएँ और हर रोज़ एक नयी औरत अपने घर में बसाएँ और चले जाएँ। जिस्म पर गौर करें और एक खूबसूरत और अनश्वर मन्दिर की खूबसूरत इमारत पर गौर ही न करें··· मेरा मतलब रूह से है, समझे ?

नम्बर दो : हूँ, तुम्हारे विश्वासों और तुम्हारे खयालात की किसे परवाह है ? जब कि वह हसीन है···वह हसीन है और हुस्न के सामने ऐसी बेहूदा दलीलें नहीं चल सकतीं।···

नम्बर एक : तुम जैसे वहशी इन्सान के आगे दलील देना और भैंस के आगे बीन बजाना

एक ही बात है···लेकिन आदमी···

नम्बर दो : तो यह कहिए, अहमक और पागल से पाला पड़ा है···तुम ऐसे खुश्कमिज़ाज साथी की सोहबत में मुझे किस कदर कोफ़्त उठानी पड़ती है।

नम्बर एक : तुम्हें क्या हो गया है ? पहले तुम ऐसी बातें नहीं करते थे।

नम्बर दो : ठीक कहते हो। जब हम दोनों एक साथ मिलकर काम करते थे तो मुझे तुमसे कोई शिकायत न थी। बल्कि मैं तुमको अच्छा समझता था। मैं तुम्हारी पुरानी खिदमतें हर्गिज़ नहीं भूल सकता। मुझे याद है कि जब मैं एण्टे की मुहब्बत में घुला जा रहा था तो तुमने मेरी काफ़ी मदद की थी। उस समझदार और होशियार लड़की को फाँसने और उसके माँ-बाप को रज़ामंद करने में तुमने वाकई बहुत काम किया। पर अब कुछ अर्से से तुम कमअक्ल हो गए हो। ज़ंग लगे उस्तरे की तरह कुन्द हो गए हो।

नम्बर एक : इस कृपा का शुक्रिया···मेरा अहसास अगर्चे तेज़ नहीं लेकिन मैं इतना ज़रूर जानता हूँ कि यह राय बनाने में तुम्हें शराब ने काफ़ी मदद की है।

नम्बर दो : बकवास बन्द करो और उसके हुस्न का ज़िक्र छेड़ो। वह कितनी सुन्दर है, कितनी खूबसूरत है। तुम हमेशा उसके हुस्न को भूल जाते हो, उसकी नज़ाकत पर हमेशा तुम्हारी आँखें बन्द रही हैं। मैं खूब जानता हूँ कि वह एक मामूली नाचने-वाली है। मगर इस छोटी-सी बात से उसके हुस्न में तो फ़र्क नहीं आता। उसकी सुन्दरता कम तो नहीं होती। इधर आओ, मैं तुम्हें यह परी दिखाऊँ···आ, मेरी जान, आ और उसी अन्दाज़ से गा जैसे तू कल, परसों और पहले कई बार गा चुकी है। गा···इतना गा कि मेरा हर ज़र्रा एक गूंजता हुआ सुर बन जाये।

[रक्कासा नम्बर दो छम-छम करती स्टेज पर आती है और दिल की धड़कनों की ताल पर नाचना और गाना शुरू कर देती है—]

बाँके गुरु, कौन हो तुम ? कौन हो तुम ? कौन हो तुम ?
बाँके गुरु, कौन हो तुम ?

तुम थे ?—क्या यह ? तुम थे कल शब मेरे प्रेम द्वारे में
क्या जानूं कौन आया था, मेरे दिल के अँधियारे में
शब की डरावनी साँय-साँय और वह एक टेढ़ी परछाइं,
कौन हो तुम ?

बाँके गुरु, कौन हो तुम, कौन हो तुम, कौन हो तुम—
बाँके गुरु, कौन हो तुम ?

उसके गर्म लबों पर मेरे शीरीं बोसों की बौछाड
उसके धड़कते दिल पर मेरी महकी ज़ुल्फ़ों के अम्बार
हर जानिब कलियाँ हैं कलियाँ, काली रात अन्धेरी गलियाँ—कौन हो तुम
बाँके गुरु, कौन हो तुम, कौन हो तुम, कौन हो तुम, बाँके गुरु, कौन हो तुम

कौन गिरा था गोद में मेरी, बेसुध, बेपरवाह, बेजान
किसको लगाकर सीने से मैंने पाया दो जग का ज्ञान

क्या तुम हो ओ जाने वाले मेरे हृदय के उजियाले, कौन हो तुम बाँके गुरु,
कौन हो तुम, कौन हो तुम, कौन हो तुम, बाँके गुरु, कौन हो तुम ?

नम्बर दो : (**मुग्ध होकर**) मज़ा आ गया । तबीयत प्रसन्न हो गयी। इस सरूर, इस मस्ती के आगे दुनिया हेच है । ये तेरी गोल-गोल बाँहें, ये तेरे नाज़ुक-नाज़ुक पैर, इस भरी दुनिया में है कोई ऐसा नर्म कालीन, जो इन नाज़ुक पैरों के लिए अपना सीना पेश कर सके···आ मेरी जान, मेरे पास आ । मुझ पर नाच, मेरे अन्दर नाच और सदा नाचती रह कि तेरे सफ़ेद-सफ़ेद टखनों में बंधे हुए घुंघरुओं की झन-झनाहट में दुनिया के सारे हंगामे गुम हो जायें । झूला झूल, मेरे प्रेम का झूला झूल और सदा झूलती रह । आ, मेरे पास आ कि मैं तेरे इन मखमली पैरों पर अपना सिर रखकर सुख की नींद सो जाऊँ ।

नम्बर एक : यह दीवानगी है, सरासर ज़हालत है । इसे छोड़ दो, दूर, दफ़ा होने दो । यह तुम्हारी नज़र का धोखा है, फ़रेब है । वह ऐसी नहीं है जैसी कि तुम समझ रहे हो । तुम लाली लगे गालों और बनावटी बालों से प्यार करते हो···खुदा झूठ न बुलवाये तो तुम्हारी इस परी की उम्र चालीस वर्ष से एक दिन भी कम नहीं। लात मारकर इसे अपने से अलग कर दो। तुम्हारी आँखें धोखा खा रही हैं । आओ, अगर हकीकत देखनी हो तो इधर आओ, मैं तुम्हें इस परी की असली शक्ल दिखाऊँ ।

[रक्कासा नम्बर एक, एक बदसूरत औरत स्टेज पर प्रकट होती है ।]

नम्बर एक : देख लिया, कहाँ गए इसके वे नाज़ुक-नाज़ुक पैर, कहाँ गए इसके काली-काली ज़ुल्फ़ों के वे पेच-व-खम, कहाँ गयी इसकी वह तेज़ी व तर्रारी, कहाँ गए इसके गले के वे मीठे-मीठे बोल··· (**रक्कासा से**) अय-अय, दाँतों की यह तारों ऐसी बनावटी लड़ियाँ निकाल दे । हाँ, अब गा···अब गा···

[नम्बर एक, रक्कासा नम्बर एक के मुँह से दाँत निकाल देता है। सिर के बाल उतार देता है। वह गाना शुरू करती है। वही गीत, मगर उखड़े हुए सुरों में। नाचती है, मगर बेताल ।]

नम्बर दो : नहीं, नहीं, यह हकीकत नहीं हो सकती । हरगिज़ नहीं हो सकती। भाग जा चुड़ैल, मेरी नज़रों से दूर हो जा···

[रक्कासा नम्बर एक को धक्का देकर बाहर निकालना चाहता है ।]

नम्बर एक : बस, भन्ना गए ? तो यूं कहो न कि तुम्हें अपनी गलती का अहसास हो गया ।

नम्बर दो : बकवास मत करो। तुमने ज़रूर कोई चालाकी की है।

नम्बर एक : नहीं, तुम अच्छी तरह जानते हो कि यह औरत, जिसकी मैली झोली में तुम अपना दिल फेंक रहे हो, इस औरत की जूतियाँ साफ़ करने के भी काबिल नहीं जिसे तुम धोखा देकर ठुकराना चाहते हो। तुम्हें क्या हो गया है ? आखिर इसकी कोई वजह भी तो हो। देखो, इस बेचारी का क्या हाल हो गया है ? यह दुःख-दर्द क्या वह सिर्फ़ इसलिए झेल रही है कि वह नेक है ? पाक है ? तुमसे उसका सलूक हमेशा अच्छा रहा है। तुम्हारे बच्चे को पाल-पोसकर उसने इतना बड़ा किया है। शर्म करो, कुछ तो शर्म करो। माना कि उसके गले में वे सुर नहीं जो तुम्हारी इस नाचनेवाली के गले में उछलते हैं। पर सुनो, अगर तुम्हारे कान पाक और साफ़ आवाज़ सुनने के लिए बन्द नहीं हुए तो यह मीठी-मीठी लोरी सुनो। वह तुम्हारे बच्चे को सुलाने की खातिर दे रही है। बेचारी ने तीन लम्बी रातें यह गीत गाते आँखों में काटी हैं। तुम्हारे इन्तज़ार में वह तड़पती, बिलखती और रोती रही है··· लो सुनो।

[बीवी नम्बर एक प्रकट होती है। गोद में बच्चा है। उसे लोरी दे रही है।]

लोरी

सो जा मेरे नन्हे सो जा
यह तेरे अश्कों की लड़ियाँ बीत रही हैं दुःख की घड़ियाँ
सो जा मेरे नन्हे सो जा
तेरे बापू आ जाएँगे लकड़ी का घोड़ा लाएँगे
सो जा सो जा, सो जा मेरे नन्हे सो जा

[बीवी नम्बर एक और रक्कासा नम्बर दो आपस में झपट पड़ती हैं। दोनों वहशी बिल्लियों की तरह एक-दूसरे से लड़ती हैं। थोड़ी देर के बाद भावनात्मक और बौद्धिक अस्तित्व भी शामिल हो जाते हैं। दोनों में लड़ाई शुरू हो जाती है। इतना शोर बुलन्द होता है कि कान पड़ी आवाज़ सुनाई नहीं देती। 'भावनात्मक अस्तित्व' रक्कासा की तरफ़दारी करता है और 'बौद्धिक अस्तित्व' बीवी का साथ देता है। दिल बेचारा ज़ोर-ज़ोर से धड़कता रहता है···लड़ाई के दौरान जब दिल के तारों पर किसी का हाथ ज़ोर से पड़ता है तो वह एक लमहे के लिए खामोश हो जाता है···]

नम्बर दो : बस, बस ! अब मज़ाक हद से गुज़र चुका। यह सब झूठ है। बेहूदा बकवास है। **(बीवी नम्बर एक को धक्का देकर स्टेज के एक तरफ़ कर देता है।)** जा, जा। यहाँ से दूर हो जा। तू किसी घटिया नाटक की भोंडी हीरोइन है। मेरी बीवी ऐसी नहीं जैसा कि तुम ज़ाहिर करते हो। मैं इसको अच्छी तरह जानता हूँ। मेरी ज़िन्दगी के प्याले में वह ज़हर की एक मोटी बूंद है। वह शायरी से खाली है। खुशी और जज़्बात उसमें ज़रा भी मौजूद नहीं। वह खुरदरी है, बेलुत्फ़, बिलकुल

बेलुत्फ़ । आओ, मैं तुम्हें उसका असली रूप दिखाऊँ। लो, सुनो उसकी बातें।

[स्टेज पर बीवी नम्बर दो, एक चिड़चिड़े मिज़ाज की औरत प्रकट होती है।]

बीवी नम्बर दो : (**चिड़चिड़ेपन की हालत में**) ऐसी ज़िन्दगी पर···अगर मेरे माँ-बाप को मालूम होता कि यह वहशी मेरे साथ ऐसा सलूक करेगा तो कभी इसके पल्ले न बाँधते। मैं कहती हूँ कि ऐसे शराबी को दफ़्तर वाले धक्के मारकर बाहर क्यों नहीं निकाल देते, दारू पिए बिना जिसकी औंधी खोपड़ी में हरकत ही पैदा नहीं होती। ऐसे खसम को क्या कहूँ जो मेरी झोली बच्चों से भरकर निगोड़ी इन औरतों के पीछे मारा-मारा फिरता है जिनको औलाद एक आँख नहीं भाती। यहाँ घर में एक पल ठहरना मियाँ साहब को मुश्किल होता है और अपनी अनहोनी सौतनों के कोठों पर रतजगे होते हैं। मुजरे सुने जाते हैं। निगोड़ी बलायें, चुड़ैलें, न रहें इस दुनिया के तख्ते पर···किसी दिन ये बाहर से किसी मुई वेश्या से लड़-भिड़कर आएगा और मुझे ज़हर दे देगा। बच्चों का गला घोंट देगा। न खुदा का खौफ़, न बन्दों का डर···यूं तो अल्लाह के फ़ज़ल से भुस भरा है, फ़लसफ़ा बघारेंगे। मियाँ साहब आज़ादी के बड़े हिमायती हैं। हर वक्त आज़ादी-आज़ादी की रट लगती रहती है कि उनके ज़ुल्म-व-सितम की छुरी इस सान पर और तेज़ हो जाए। तो ऐसा क्यों न करूँ कि उन्हें आज ही बिलकुल आज़ाद कर दूं।

नम्बर दो : ठीक, बिलकुल ठीक।···यही है ड्रामे की असली हीरोइन। इसके कारण मेरा और इस रक्कासा का रिश्ता मज़बूत हुआ है, जिसने मेरी ज़िन्दगी में जादू फूंक दिया है। आ प्यारी, इधर आ। एक बार फिर फ़िज़ाँ पर सुरों का छिड़काव कर दे। एक बार फिर तरन्नुम तारे बिखेर दे···एक बार फिर···।

[भावनात्मक अस्तित्व रक्कासा नम्बर दो को बुलाता है। वह पहले की तरह नाचना और गाना शुरू करती है।]

बीवी नम्बर एक : (**ज़मीन पर ज़ोर-ज़ोर से पाँव मारकर**) बन्द करो इस नाच को। जाओ, यहाँ से चली जाओ। देखो, मैं तुमसे विनती करती हूँ। यहां से चली जाओ। तुम्हारा यहाँ कोई हक नहीं है।

नम्बर एक : ठीक कहती हो, इसका कोई हक नहीं।

बीवी नम्बर एक : जब तुम मुहब्बत नहीं करतीं, जब तुम छोटी से छोटी कुर्बानी नहीं कर सकतीं, जब तुम अपनी ज़िन्दगी में ऐसे कई आदमियों की आशना रही हो तो बताओ, तुम मेरा हक कैसे छीन सकती हो ? अगर तुम्हारे पहलू में दिल अभी मुर्दा नहीं हुआ तो उसे छोड़ दो। मुझे उसकी ज़रूरत है। मुझे उसकी मुहब्बत, उसकी मदद की तुमसे कहीं ज्यादा ज़रूरत है।

रक्कासा नम्बर दो : (**बात काटते हुए**) ये तमाम बातें मैं इतनी बार लोगों से सुन चुकी हूँ कि इनका अब दिल पर असर नहीं होता। चलो हटो, मेरे रास्ते से।

बीवी नम्बर एक : धक्के क्यों देती है ! जा, यहाँ से दफ़ा हो जा।

रक्कासा नम्बर दो : अच्छा, अब तुम मुझे धमकाने भी लगीं ! मैं तुम्हारी दबेल थोड़ी हूँ जो इन गीदड़भभकियों में आ जाऊँ। तुम मुझसे जलती हो। इसलिए कि मैं खूबसूरत हूँ। लोग मेरी तरफ़ ललचाई नज़रों से देखते हैं। मेरे मुँह से बोल यूं उड़ते हैं जैसे शैम्पेन बोतलों के डॉट।

नम्बर दो : शाबाश, मेरी जान, शाबाश !

बीवी नम्बर एक : शरीफ़ बहू-बेटियों के मुँह लगते तुम्हें शर्म नहीं आती, बाज़ार में बिकने वाली लौंडी !

रक्कासा नम्बर दो : बाज़ार में बिकने वाली लौंडी की भी एक ही कही···और बानो साहिबा, आप कौन हैं ? जब सरकार ने इनसे शादी की थी तो बताइए, क्या अपने-आपको बेचा नहीं था ? अपने शब्द फ़ौरन वापस लो। लेती हो या नहीं, वरना—

बीवी नम्बर दो : वरना क्या···आँखें तो यूं दिखा रही है जैसे खा ही जाएगी···जा, सीधे तन चली जा, वरना चुटिया पकड़कर बाहर निकाल दूंगी···

[बीवी नम्बर एक और रक्कासा नम्बर दो आपस में झपट पड़ती हैं। बिल्लियों की तरह एक-दूसरे से लड़ती हैं। इस लड़ाई में थोड़ी देर के बाद 'भावनात्मक' और 'बौद्धिक अस्तित्व' भी शामिल हो जाते हैं। दोनों में लड़ाई शुरू हो जाती है। इतना शोर बुलन्द होता है कि कान पड़ी आवाज़ सुनाई नहीं देती। भावनात्मक अस्तित्व रक्कासा की तरफ़दारी करता है और बौद्धिक अस्तित्व बीवी का साथ देता है। दिल बेचारा ज़ोर-ज़ोर से धड़कता रहता है। लड़ाई के दौरान जब दिल के तारों पर किसी का हाथ ज़ोर से पड़ता है तो वह क्षण-भर के लिए खामोश-सा हो जाता है। लड़ाई के दौरान कुछ इस तरह की गुफ़्तगू जारी रहती है।]

रक्कासा नम्बर दो : बेगम साहिबा, तशरीफ़ ले जाइए।

बीवी नम्बर दो : चल हट, मुई गिरहकट। मेरे बच्चों का सब्र पड़े तुझ चड्डू पर··· खड़ी की खड़ी ज़मीन में समा जाए···तुझ पर कड़कती बिजली गिरे···न रहे तू इस दुनिया के तख्ते पर।

रक्कासा नम्बर दो : देख, मुंह संभालकर बोल। तेरे सिर का एक-एक बाल नोच डालूंगी। ज़रा चूं की तो गुद्दी से ज़बान खिचवा लूंगी। तकले से दीदे निकलवा दूंगी।

नम्बर दो : शाबाश, शाबाश !

बीवी नम्बर एक : है शर्त कि तेरी सारी अकड़ अभी निकाल दूं। पर तुझे तो हाथ लगाते मुझे घिन आती है। चल हट, मुई गन्दी कीचड़ की मेंढकी।

[रक्कासा गुस्से में आकर बीवी के मूंह पर ज़ोर से चाँटा मारती है। बीवी चीखती है।]

नम्बर दो : अय औरत ! खबरदार, जो तूने उसे हाथ लगाया।

नम्बर एक : तुम्हें शर्म नहीं आती ? अपनी नेक बीवी की इस बाज़ारी औरत के सामने तौहीन कर रहे हो। तुम यकीनन पागल हो गए हो।

नम्बर दो : तुम बीच में दखल देने वाले कौन हो ?

[रक्कासा कहकहा लगाती है।]

नम्बर एक : मैं जो नेक-व-बद को अच्छी तरह समझता हूँ। तुम्हारा दिमाग चल गया है। यह ज़लील औरत तुम्हारी नेक बीवी पर हाथ उठा रही है और तुम तमाशा देख रहे हो। लानत है तुम पर···

नम्बर दो : बकवास मत करो !

[यह कहकर भावनात्मक अस्तित्व बौद्धिक अस्तित्व के मुँह पर थप्पड़ मारता है। पृष्ठभूमि में संगीत वेग हो जाता है। रक्कासा और बीवी एक-दूसरे के बाल नोचती, चीखती रहती हैं। भावनात्मक और बौद्धिक अस्तित्व अब एक-दूसरे से बहुत बुरी तरह गुथ जाते हैं। आखिर में भावनात्मक अस्तित्व बौद्धिक अस्तित्व का गला पकड़ लेता है और उसे मार डालता है। बौद्धिक अस्तित्व के गले से खरखराहट की भयानक आवाज़ निकलती है।]

नम्बर दो : मर गया। नाक में दम कर रखा था नाबकार ने। चलो अच्छा हुआ। किस्सा पाक हुआ। रोज़-रोज़ का झगड़ा खत्म हुआ। अब मैं आज़ाद हूँ। अपनी महबूबा से मुहब्बत करने के लिए आज़ाद हूँ। आ, मेरी मलिका, मेरे मन-मन्दिर की देवी, आ। प्यारी, अब तो सारी की सारी मेरी है। हमेशा के लिए मेरी है। आ मेरी ज़िन्दगी, मेरी खुशी ! मेरी मुहब्बत, आ···मेरे पास आ।

रक्कासा नम्बर दो : नहीं, मेरे बेवकूफ़ आशिक, नहीं। मैं तेरे पास नहीं आ सकती। यह तो सब मज़ाक था। पहले दाम फिर कलाम···तुम मेरे बाज़ार में इश्क का खोटा सिक्का चलाना चाहते हो। मुझे मुहब्बत की तराजू में तौलना चाहते हो। तुम बेवकूफ़ हो। तुम्हारे पास दौलत नहीं रही। मेरे पास अदाएँ नहीं रहीं···नहीं··· नहीं···नहीं ! मैं तुम्हारी नहीं हो सकती। मेरे भोलेभाले आशिक, यह सब मज़ाक था।

[रक्कासा चली जाती है। उसके पैरों में बँधे हुए घुंघरुओं की झनझनाहट कुछ लमहों तक सुनाई देती है।]

नम्बर दो : मेरे अल्लाह ! मैं यह क्या देख रहा हूँ !

[दूर से ऐसे संगीत के सुर सुनाई देते हैं जो बड़े परेशान करने वाले हैं। बीवी नम्बर एक प्रकट होती है। वह लोरी गाती है।]

नम्बर दो : सब राग-रंग गम की दास्तान बन गए। तेरे इश्क का सामान अफ़साना बन गया। बाकी क्या रहा ? राख का एक ढेर। तू अब तबाही के किनारे पहुँच चुका है। जल्दी कर। जल्दी कर। इस दुःख से निजात पाने के लिए सिर्फ़ एक ही रास्ता

बाकी है।···खुदकुशी···खुदकुशी···उठ, पिस्तौल दाहिने हाथ की जेब में है। मान ले, कोई तकलीफ़ न होगी। बस, चौथी और पाँचवीं पसली के बीच रखकर लिबलिबी दबा दे। सब ठीक हो जाएगा। ये तेरे दुःख-दर्द सब ठीक हो जाएँगे··· तू डरता है। बेवकूफ़, अब डर किसका है···बस, एक लमहे की बात है। उठ, पिस्तौल हाथ में ले और लिबलिबी दबा दे···

[भावनात्मक अस्तित्व पिस्तौल निकालता है और अपनी पसलियों के पास रखकर उसकी लिबलिबी दबा देता है। ज़ोर का धमाका होता है। दिल एक क्षण-भर के लिए उछलता है और खामोश हो जाता है। उसके तारों पर लहू बहने लगता है। भावनात्मक अस्तित्व ठण्डा हो जाता है। कुछ लमहों के लिए कब्र की-सी खामोशी छायी रहती है। पृष्ठभूमि में अनश्वर अस्तित्व जो कि बैग पर सिर रखे सो रहा है, जमुहाई लेकर उठता है और एक पोर्टर हाथ में लालटेन लिए आता है।]

नम्बर तीन : (**जमुहाई लेता है**) कौन है भई ! क्यों बेआराम कर रहे हो ?

पोर्टर : मैं पोर्टर हूँ हुज़ूर···आत्मनगर आ गया। आपको गाड़ी इसी स्टेशन से बदलनी है।

नम्बर तीन : अरे, 'आत्मनगर' आ गया ? चलो, जल्दी करो। मेरा असबाब उठाओ। मुझे गाड़ी इसी स्टेशन से बदलनी थी···।

(परदा गिरता है।)

माचिस की डिबिया

पात्र

वेदी

पाल

लाजो

लाजो की माँ

पहला दृश्य

वेदी : (गहरा साँस लेकर) तो अब मुझे इस कमरे में रहना होगा···क्या कहते हैं वम्बई की ज़बान में ऐसे कमरों को ?

पाल : खोली ।

वेदी : कितना वाहियात नाम है···गरीबी की तौहीन ऐसे बदनुमाँ नामों से ही तो होती है।···खोली यानी जिसने चाहा खोल ली···मुझे गरीबी से इतनी दहशत नहीं होती जितनी गुरबत ज़ाहिर करने वाली चीज़ों से होती है···

पाल : जनाब, यह फ़लसफ़ा बघारने का वक्त नहीं। पहले आप अपना सामान ठिकाने से रख लीजिए। रात आ रही है और मैं समझता हूँ कि आपके पास अन्धेरा दूर करने के लिए कोई भी चीज़ नहीं है।

वेदी : छोड़ो यार, इस सामान से मुझे कौन-सा महल सजाना है ? जो चीज़ जहाँ रख दी गयी है, ठीक है। तुम अन्धेरे और रोशनी की बातें करते हो। मैं तो इन दोनों में अन्तर करना ही भूल गया हूँ। मुझे तो दिन में उजाला अन्धेरा नज़र आता है और रात का अँधियारा रोशन। दिन को शहर के हंगामे में मुझे कुछ सुनाई नहीं देता, लेकिन रात को मैं अपने दिल की हर बात पढ़ लेता हूँ।

पाल : किस्सा क्या है, आज बहुत शायरी कर रहे हो ?

वेदी : शायरी ? (हँसता है) अगर जो कुछ मैंने कहा है, शायरी है तो मेरा खयाल है कि शायर बड़े बदनसीब इन्सान होते होंगे। पाल, तुमने कभी मुहब्बत की है ?

पाल : यह मुहब्बत का सवाल तुम बीच में क्या ले आए।

वेदी : पाल, मैं तुमसे बड़ी गम्भीरता से पूछ रहा हूँ—

पाल : अमाँ, हटाओ इस गम्भीरता को। मैं क्या जानूं मुहब्बत क्या बला है ?

वेदी : तो मेरी तरह तुम्हारा दिल भी मुहब्बत का प्यासा है ? पाल, मैंने लोगों से सुना है और किताबों में भी पढ़ा है कि एक चीज़ जिसे मुहब्बत के नाम से पुकारते हैं दिल की सबसे मज़ेदार गिज़ा है। क्या यह सच है ?

पाल : मेरे दिल का हाज़मा ठीक है। मुझे कभी इस मज़ेदार गिज़ा की ज़रूरत महसूस नहीं हुई···तुम्हारा तो दिमाग खराब हो गया है। न जाने तुम्हारे दिल में मुहब्बत का खयाल कब और किस वक्त अन्दर चला गया। मुझे तो कामधन्धों से इतनी फ़ुरसत नहीं मिलती कि इस बारे में कुछ सोचूं। तुम खुद गौर करो, मिल के अन्दर मशीनों की देखभाल करूँ, उनके पुर्ज़ों में तेल दूं या तुम्हारी इस मुहब्बत को दिमाग में लेकर बैठ जाऊँ ?

वेदी : पाल, तुम्हें फ़ौरन किसी डॉक्टर के पास इलाज कराना चाहिए। तुम बातें यूं करते हो जैसे तुम्हारे पहलू में दिल की बजाय बर्फ़ का ढेला है जिस पर कोई नक्श बैठ नहीं सकता : औरत को देखकर जिस मर्द का दिल अपने लिए एक रफ़ीक ढूंढ़ने का खयाल पैदा न करे, उसे सीने से बाहर फेंक देना चाहिए।

पाल : अब मैं आपसे यह पूछना चाहता हूं कि आप मेरा दिल सीने से बाहर निकालना चाहते हैं या उसके अन्दर किसी रफ़ीक को ढूंढ़ने का खयाल पैदा करना चाहते हैं ?

वेदी : पाल, तुम नहीं समझते, मैं क्या चाहता हूँ। मैं यह चाहता हूँ, मैं यह चाहता हूँ···

पाल : हाँ, हाँ, बोलो···तुम क्या चाहते हो···पानी का गिलास, दूं पीने के लिए ?

वेदी : मैं चाहता हूँ कि तुम मुहब्बत करो, मैं मुहब्बत करूँ, सब मुहब्बत करें···दुनिया में सब मुहब्बत करने वाले बसें···हरेक दिल में मुहब्बत हो···आह, पाल, तुम नहीं समझते कि इस नन्हे से शब्द में कितनी मिठास है, कितनी राहत है···मुहब्बत··· मुहब्बत···ऐसा मालूम होता है कि मेरी आत्मा शबनम से लदी हुई घास पर सुबह की हवा से खेल रही है···तुम ज़रूर मुहब्बत करने की कोशिश करो पाल···बगैर मुहब्बत किए कोई आदमी मुकम्मल होने का दावा नहीं कर सकता।

पाल : जनाबेमन, खाकसार बहुत कोशिश कर चुका है मगर सन्तोषजनक नतीजा अभी तक नहीं निकला···हर रोज़ रात को आपका यह खादिम एक खयाली औरत बनाकर उससे मुहब्बत करता है और सुबह होते ही अपने दिल के बाहर यह बोर्ड लटका देता है—किराये के लिए खाली है—कमरा हवादार है, मगर उसकी तरफ़ कोई रुख ही नहीं करता। कमरा ज़रूर हवादार है, मगर हवा के सिवाय उसमें धरा ही क्या है। आजकल की औरतें सिर्फ़ हवा पर तो ज़िन्दा रह नहीं सकतीं—कमरा सजा हुआ हो तो बहुत-से किरायेदार मिल सकते हैं।

वेदी : मुहब्बत महलों से अधिक झोंपड़ियों में रहती है पाल···उसे ज़ाहिरी सजावट से क्या काम ? ···और फिर मुहब्बत तो खुद एक सजावट है। दिल के लिए इससे खूबसूरत ज़ेवर और क्या हो सकता है ?

पाल : यह शायरी अब किसी और वक्त पर उठा रखो। मुझे नाइट ड्यूटी पर जाना है। अगर मेरे दिल ने यह ज़ेवर इस वक्त पहन लिया तो मिल की मशीनें आज रात

बन्द रहेंगी। अच्छा, तो मैं चला।

वेदी : जाओ, भई जाओ, आज की रात जैसे कटेगी, ज़ाहिर है।

[अन्तराल]

दूसरा दृश्य

[सिलाई मशीन चलने की आवाज़ सुनाई देती है।]

लाजो : आज यह हवा भी कितने ज़ोरों से चल रही है···उफ़, तोबा···लैम्प की बत्ती किस तरह फड़फड़ा रही है।

लाजो की माँ : तमाशा क्या देखती है ! ज़रा उठकर चिमनी के इस तरफ़ लकड़ी का टुकड़ा उठाकर रख दे···अगर यह बुझ गया तो तुझे ही नीचे दियासलाई लेने के लिए जाना होगा···मेरी बला से, नहीं सुनती तो न सुन !

लाजो : माताजी, मुझे इसकी फड़फड़ाहट अच्छी मालूम होती है—ऐसा लगता है जैसे मेरा अपना दिल इस चिमनी के अन्दर धड़क रहा है।

लाजो की माँ : जाने क्या वाही-तबाही बक रही है। यह लो—हुआ न वही जिसका मुझे खटका था।

लाजो : हाय राम, यह तो सचमुच बुझ गया—कितना अन्धेरा हो गया है।

लाजो की माँ : अब यहाँ बैठकर बातें न बना···जा, बाज़ार से एक पैसे की माचिस ले आ।

लाजो : माँ, मुझसे तो यह न हो सकेगा। पाँच सीढ़ियाँ नीचे उतरूँ और पाँच सीढ़ियाँ ऊपर चढ़ूँ। मेरे घुटने तो अभी से जवाब दे रहे हैं।

लाजो की माँ : तुझे तो किसी नवाब के घर पैदा होना चाहिए था, जहाँ बैठे-बिठाए तुझे हर चीज़ मिल जाती। मेरी लाडो के पाँवों की मेहंदी घिसती है सीढ़ियाँ उतरते··· ओफ़्फ़ोह बाबा, कैसा ज़माना आया है···इस जवानी में तो घुटने जवाब दे रहे हैं तो मेरी उम्र को पहुँचकर तेरा क्या हाल होगा ! जा, साथ वाली खोली में पड़ोसिन से दियासलाई माँग ला। तुझसे उठा जाएगा या मैं ही जाऊँ ?

लाजो : जाती हूँ माँ। ये निगोड़े कपड़े भी तो सीने हैं मुझे। अगर सुबह तक तैयार न हुए तो चूल्हे में आग कैसे जलेगी—जाती हूँ—इस ठहरे पानी जैसी ज़िन्दगी से जाने कब मुक्ति मिलेगी···

[थोड़ा अन्तराल—दरवाज़े पर दस्तक सुनाई देती है।]

लाजो : दीनू की माँ, दीनू की माँ !

[फिर दस्तक की आवाज़ सुनाई देती है।]

लाजो : दीनू की माँ···दीनू की माँ···अरे, सो गई हो क्या ?···नहीं, दरवाज़ा तो खुला है। (**दरवाज़ा खुलने की आवाज़**)···दीनू की माँ···अरे, तुमने कमरे में यह धूनी कैसी रमा रखी है···उफ़, मेरा तो दम घुटने लगा है···दीनू की माँ···! मैं पूछती हूँ, तुमने ये बीड़ियाँ कब से पीनी शुरू की हैं ?

वेदी : कौन है ?

लाजो : अरे, यह कौन बोल रहा है ?

वेदी : अरे, यह कौन बोल रहा है ?

लाजो : दीनू की माँ कहाँ है ?

वेदी : दीनू की माँ···यहाँ दीनू की माँ नहीं रहती, और मेरी माँ को मरे इतने ही वर्ष हो गए हैं जितने कि मुझे ज़िन्दा रहते हो गए हैं। कमरे में यह धआँ मैंने इसलिए बन्द कर रखा है कि इससे कमरे की गलाज़त दब जाती है।

लाजो : तुम तो कोई और हो। मैं···मैं गलती से यहाँ चली आयी। मुझे दीनू की माँ से मिलना है।

वेदी : दीनू की माँ से ?···जब मैंने अपनी माँ की शक्ल नहीं देखी तो दीनू की माँ को मैं कैसे जान सकता हूँ ? यह कमरा···नहीं, यह खोली मैंने आज ही किराये पर ली है।

लाजो : तो दीनू की माँ हमें इत्तला दिए बगैर यहाँ से चली गयी ?···मैं उससे दियासलाई की डिबिया माँगने आयी थी। हमारा लैम्प बुझ गया है।

वेदी : तुम्हारा लैम्प बुझ गया है···पर यहाँ तो एक लैम्प रोशन हो गया है।

लाजो : क्या कहा आपने ?

वेदी : समझने की कोई ज़रूरत नहीं···तुम्हें माचिस चाहिए न ?

लाजो : जी हाँ।

वेदी : माचिस···और माचिस लेकर तुम फ़ौरन ही यहाँ से चली जाओगी ?

लाजो : हाँ, हाँ···मुझे लैम्प भी तो रोशन करना है···मेरी माँ अँधेरे में बैठी है।

वेदी : बिलकुल ठीक है, मैं सोच क्या रहा हूँ···तुम्हें फ़ौरन ही जेब से माचिस निकालकर क्यों नहीं दे रहा हूँ···कुछ समझ में नहीं आता, यह क्या किस्सा है ?···क्या तुम इस मामले में कुछ रोशनी डाल सकती हो ?

लाजो : माचिस लाइए।

वेदी : तुम बड़ी···वो हो···

[दोनों हँसते हैं।]

लाजो : मुझे देर हो रही है। लाइए माचिस।

वेदी : हाँ, हाँ। वाकई तुम्हें देर हो रही है। यह लो माचिस···

[माचिस की डिबिया में तीलियों की खड़खड़ाहट]

लाजो : लाइए—अरे···आपका लैम्प भी बुझ गया···(**दियासलाई की डिबिया गिरने की आवाज़**) और माचिस भी गिर गयी···

वेदी : अच्छा हुआ।

लाजो : क्या कहा ?

वेदी : मैंने कहा, कितना बुरा हुआ···अब क्या सचमुच उसे ढूंढ़ना ही पड़ेगा ?

लाजो : वाह जनाब, वाह !···ढूंढ़ना क्यों न पड़ेगा···दो लैम्प बुझे पड़े हैं। उन्हें रौशन नहीं करना क्या ?

वेदी : रोशनी ज़्यादा हो जाएगी।

लाजो : क्या कहा ?

वेदी : मैंने यह कहा कि मुझे अब रोशनी की क्या ज़रूरत है ?

लाजो : पर मुझे तो है।

वेदी : तो माचिस ख़ुद ही ढूंढ़ लो···मेरा दिल भी उसी में पड़ा है।

लाजो : (**हँसती है**) आपका दिल माचिस में पड़ा है···और मेरा दिल अपने बुझे हुए लैम्प में।

वेदी : तो फिर माचिस को फ़ौरन ही ढूंढ़ना चाहिए···अरे, मैं सोच क्या रहा हूँ···ठहरो ···(**ज़मीन पर हाथ मारने की आवाज़**) यहीं गिरी थी और यहीं होनी चाहिए··· (**माचिस पर हाथ पड़ने की आवाज़**) यह लो···लेकिन ठहरो···मैं लैम्प जलाकर तुम्हें तो अच्छी तरह देख लूं—शायद कल तुम्हारी खोली में कोई और आ जाए।

लाजो : नहीं, हमने इस महीने का किराया पेशगी दे दिया था।

वेदी : एक महीने तक मैं भी इसी खोली में रहूँगा क्योंकि किराया मैंने भी पेशगी ही दिया है।

[लैम्प की चिमनी और दियासलाई जलाने की आवाज़]

लाजो : एक तो रौशन हो गया।

वेदी : क्या दूसरा रौशन नहीं हुआ ?

लाजो : अब जाकर रौशन करूँगी। लाइए माचिस, आपका दिल है न अभी तक इसमें ?

वेदी : (**हँसता है**) हाँ, हाँ, इसी में है···(**माचिस की आवाज़**) यह लो।

लाजो : मेहरबानी, तो मैं अब चलती हूँ।

वेदी : हाँ, हाँ, जाओ, लेकिन ज़रा ठहरो···नहीं, नहीं, जाओ···तुम्हें अपना लैम्प भी रौशन करना है। तुम्हारी माँ अंधेरे में बैठी तुम्हारी राह देख रही होगी···जाओ ···लेकिन ज़रा ठहरो तो···हाँ, ठहरो तो।

लाजो : कुछ कहना है क्या ?

वेदी : कुछ कहना ही तो है···कुछ कहना ही तो है···पर क्या कहना है···हाँ, तो अब तुम जा रही हो क्या ?

लाजो : जी हाँ। जा रही हूँ।

वेदी : तुम बड़ी अच्छी लड़की हो···अच्छा तो मैं भी हूँ, पर बेकारी बुरी बला है···

लेकिन अब मैं कोई न कोई काम ज़रूर ढूंढ़ लूंगा···मुझमें आज बड़ी हिम्मत पैदा हो गयी है···दुनिया में अगर औरत न होती तो मर्दों में वीरता कभी पैदा न होती··· अगर तुम मुझसे कहो तो मैं इस खिड़की में से अभी नीचे बाज़ार में कूद जाऊं··· पर मैं यह क्या बात कर रहा हूँ !

लाजो : मैं अब जाती हूँ।

वेदी : हाँ, अब जाओ···पर अपना नाम तो बताती जाओ।

लाजो : मेरा नाम लाजवंती है···माँ मुझे लाजो कहती है।

वेदी : लाजवंती···लाजो···बड़ा प्यारा नाम है···तुम यहाँ क्या करती हो ?

लाजो : सिलाई का काम करती हूँ···अगर आप कपड़ा दें तो मैं आपकी कमीज़ सी दूंगी।

वेदी : शुक्रिया। मेरा कोट कुहनियों पर से फट रहा है···अगर कभी उसको रफू कर दो तो बड़ी मेहरबानी होगी।

लाजो : मैं कल आकर यहीं रफू कर दूंगी। अच्छा, मैं अब जाती हूँ।

[थोड़ा अन्तराल—फिर दरवाज़ा बन्द करने की आवाज़]

वेदी : (खुशी के कारण ऊँची आवाज़ में) वेदी !···वेदी !···ठीक तुम्हारा नसीब जाग उठा। (सीटी बजाता है।)

तीसरा दृश्य

[दरवाज़ा खटखटाने की आवाज़]

वेदी : आ जाओ—

पाल : (दरवाज़ा खोलने की आवाज़) सुनाओ भई, क्या हाल है ? नया कमरा कैसा रहा ?···अरे, तुम अपने कोट को बीड़ी से जला क्यों रहे हो ?

वेदी : इसलिए कि इसमें बहुत-से सुराख हो जाएँ।

पाल : सुराख हो जाएँ ?···सुराख तो हो ही जाएँगे। पर मैं पूछता हूँ कि इसमें तुक क्या है ?

वेदी : एक सुराख रफू करने में अगर पाँच मिनट लगेंगे तो तीन सुराख रफू करने में पन्द्रह न लगेंगे !

पाल : हाँ, हाँ। पन्द्रह मिनट ही लगेंगे। पर तुम्हारी बात समझने में मुझे कितने घण्टे लगेंगे !

[वेदी हँसता है।]

पाल : तुम तो आज हँस भी रहे हो । यह क्या किस्सा है ?

बेदी : किस्सा यह है···दरवाज़े पर दस्तक हुई···और एक मधुर आवाज़ आई··· दीनू की माँ, दीनू की माँ, यह तुमने बीड़ियाँ कब से पीना शुरू कर दी हैं···और वह अन्दर चली आई । सुन रहे हो पाल, मेरे सपनों की परी अन्दर चली आई । परमात्मा की कृपा हो उस दीनू की माँ पर । तुम जानते हो उस दीनू की माँ को ? लेकिन तुम मेरी तरफ़ यूँ आँखें फाड़-फाड़कर क्यूँ देख रहे हो ?···हँसो पाल···आज खूब हँसो···क्या तुम देख नहीं रहे कि आज हरेक चीज़ हँस रही है···वह अभी आएगी···मेरा कोट रफू करने···मैंने उसमें तीन बड़े-बड़े सुराख बना दिए हैं··· इसलिए मैं उसे देर तक सामने बिठाकर देख सकूंगा···क्या मैं शरारती नहीं ?··· लेकिन तुम खामोश क्यों हो ?

पाल : मैं सोच रहा हूँ कि मुझे अब किसी बिल्डिंग में नया कमरा किराये पर लेना चाहिए ।

हतक

पात्र

सुगन्धी

बाहरवाला

माधो

पड़ोसिन

दारोगा

रामलाल

[फ़ेड इन—प्याली और पिर्च बजाने की आवाज़ आए जो आहिस्ता-आहिस्ता करीब आती जाए। साथ ही साथ होटल के छोकरे की सीटी की आवाज़ भी आए जो किसी फ़िल्मी धुन में हो—बम्बई में होटल के छोकरे जो होटल से बाहर चाय वगैरह लेकर जाते हैं, 'बाहरवाले' कहलाते हैं। ये प्रायः चाय की खाली प्याली और पिर्च आपस में बजाया करते हैं कि बिल्डिंग में रहने वालों को उनकी मौजूदगी का पता हो जाए और वे आर्डर दे सकें।]

सुगन्धी : ऐ बाहरवाला !

बाहरवाला : आया—(**कुछ सैकण्डों के बाद**) क्या लाऊँ सुगन्धी !

सुगन्धी : दो चाय ला। एक में पानी कम, एक में पानी ज्यादती—और देख, दो पान—एक पूना सादा—एक देसी काला तम्बाकू।

बाहरवाला : बस ?

सुगन्धी : बस—जल्दी ला। (**चुटकी बजाती है।**)

[बाहरवाला पिर्च-प्याली बजाता चला जाता है। कुछ क्षणों तक यह आवाज़ आती रहे।]

माधो : क्या नाम है तेरा ?

सुगन्धी : (**अदा के साथ**) सुगन्धी।

माधो : सुगन्धी, तेरी इस खोली में तो बुरी-बुरी बास आती है। छीः-छीः-छीः ! कैसे रहती हो तुम यहाँ ?

सुगन्धी : ले दो न कोई अच्छा-सा फ़्लैट।

माधो : पर तेरा धन्धा तो यही रहेगा—इसकी बुरी बास तो आती ही रहेगी। सुगन्धी, तेरा नाम इतना अच्छा है। तू आप भी इतनी अच्छी है। पर तू यह क्या धन्धा कर रही है—क्या भाड़ा है इस खोली का ?

सुगन्धी : अठारह रुपये और मेरा भाड़ा है दस रुपये, जिसमें से ढाई दलाली के चले जाते हैं।

माधो : लाज नहीं आती तुझे अपना भाव बताते—जानती है तू मेरे साथ किस चीज़ का सौदा कर रही है और मैं तेरे पास क्यों आया हूँ—छी:-छी:-छी:—तेरा भाड़ा दस रुपये—और जैसा तू कहती है, ढाई रुपये दलाली के—बाकी रहे साढ़े सात—रहे न साढ़े सात ?

सुगन्धी : हाँ, साढ़े सात।

माधो : इन साढ़े सात रुपयों में तू मुझे ऐसी चीज़ देने का वचन देती है जो तू दे ही नहीं सकती—(**हँसता है**) और मैं ऐसी चीज़ तुझसे लेने आया हूँ जो मैं ले ही नहीं सकता।

सुगन्धी : फिर तू आया किसलिए है ?

माधो : आया किसलिए हूँ—(**अन्तराल के बाद जैसे जवाब सोच रहा है**) यह तू ही सोच कि आया किसलिए हूँ—बात तो यह है कि तूने आज तक कभी सोचा ही नहीं है—मुझे तो कोई औरत भी चलेगी पर क्या मैं तुझे जँचता हूँ, क्या यह सोचने की बात नहीं ?—सुगन्धी, तू बहुत ही भोली है। पगली, तेरा-मेरा नाता ही क्या है ? कुछ भी नहीं—बस, ये दस रुपये हैं जिनमें से ढाई दलाल ले जाएगा और बाकी इधर-उधर बिखर जाएँगे। ये दस रुपये जो तेरे और मेरे बीच में बज रहे हैं। तेरा मन कुछ और सोचता है और मेरा मन कुछ और।

सुगन्धी : यह तो खरी बात कही है तूने।

माधो : क्यों न कोई ऐसी बात करें कि तुझे मेरी ज़रूरत हो और मुझे तेरी। पगली, दुनिया में रुपया ही सबकुछ नहीं है। प्रेम के दो सच्चे बोल अगर तुझसे कोई बोल जाए तो देख क्या होता है ! तेरे जीवन का सब अँधियारा दूर हो जाएगा—क्या भाड़ा है इस खोली का ?

सुगन्धी : (**एकदम चौंककर जैसे खयालात की दुनिया में खो गई थी**) क···क···क्या कहा ?

माधो : मैं कहता हूँ, यह धन्धा छोड़। पूना में हवलदार हूँ। परमेश्वर का दिया बहुत कुछ है। महीने में एक बार आया करूँगा तीन-चार दिन के लिए···यह···यह तेरी नाक को क्या हो गया है ? इतनी लाल क्यों है ?

सुगन्धी : लाल है क्या ?

माधो : तुझे क्या पता ही नहीं—सच है, तुझे बताने वाला कौन है ? तेरी माँ होती, तेरा बाप होता—तेरा···कहीं ज़ुकाम न हो जाए तुझे। ठहर, मैं तेरे लिए दवा लाता हूँ। कोई डाक्टर है आजू-बाजू···

सुगन्धी : तुम चिन्ता न करो माधो। यह कुछ भी नहीं। अपने-आप ठीक हो जाऊँगी।

माधो : क्या कहा··· (**अन्तराल के बाद**) अरे···ये नंगी तस्वीरें तूने अपने सिरहाने क्यों लटका रखी हैं···छी:-छी:-छी: ! भई मेरे होते ये बिलकुल यहाँ नहीं रहेंगी ···(**तस्वीरें फाड़ने की आवाज़**)···मैं तुझे और तस्वीरें ला दूंगा··· (**अन्तराल के बाद**) और यह घड़ा—कितना मैला है ! कब का पानी भरा है इसमें—और ये चिथड़े—ये चिन्दियाँ—कितनी बुरी बास आती है इनसे। उठाकर बाहर फेंक इनको। तेरा जी नहीं घबराता ?

सुगन्धी : रहने भी दो।

माधो : अरे क्या रहने दूं—साला हर जगह कचरा पड़ा है। तुझे घिन नहीं आती ? क्या भाड़ा है इस खोली का ?

सुगन्धी : अठारह रुपये।

माधो : पूना पहुँचते ही मनीआर्डर कर दूंगा—(**अन्तराल के बाद**) कोई नौकर नहीं तेरे पास—तेरी कंघी भी टूटी हुई है। तभी तो तेरे बालों का सत्यानाश हो रहा है। कितना दुःख होता है मुझे—यही घर जिसका तू···क्या भाड़ा देती है तू इस घर का ? यह घर जिसमें हर जगह कचरा पड़ा है, बड़ा सुन्दर हो सकता है—हो क्या सकता है—अब होगा।—तू देखती रह क्या होता है। पूने में हवलदार हूँ। महीने में एक बार आया करूंगा तीन-चार दिन के लिए—यह धंधा छोड़ और इज्ज़त-आबरू के साथ रह—और यह साला कुत्ता ?

[कुत्ता भौंकता है।]

सुगन्धी : चुप रह, देखता नहीं अपना आदमी है।

माधो : फांसी दे साले को। खुजला-खुजलाकर साले ने एक बाल नहीं रखा अंग पर। बीमार है, तुझे भी बीमार करेगा।

सुगन्धी : पड़ा रहने दो यहीं—अच्छा हो जाएगा।

माधो : अच्छा क्या होगा—तू कहती है तो रहे साला यहीं, और भी तो कई हैं—कई—तेरी रोटियाँ तोड़ने वाले। सच तो यह है कि तेरा दिल बड़ा ही अच्छा है। तू किसी जनावर को भी दुःख नहीं दे सकती, पर मुझे बड़ा दुःख होता है जब सोचता हूँ कि आज तलक किसी ने भी तेरे इस गुण को नहीं पहचाना—सुगन्धी (**बड़े प्यार के साथ**)···सुगन्धी···

[**नोट :** 'सच तो यह है' के साथ ही पृष्ठभूमि में बहुत सॉफ़्ट संगीत शुरू हो।]

माधो : (**इश्क-भरे लहजे में**) क्या भाड़ा है इस खोली का ?

सुगन्धी : अठारह रुपये।

माधो : पूना पहुँचते ही मनीआर्डर कर दूंगा मेरी जान···

सुगन्धी : माधो !

माधो : मैं अब जाता हूँ। फिर आऊंगा मेरी जान !···

[**नोट :** सॉफ़्ट संगीत जारी रहे—कुछ क्षणों के बाद धीरे से दरवाज़ा भेड़ने की

आवाज़ आये। खयाल रहे कि यह आवाज़ ऊँची न हो—संगीत फिर भी जारी रहे—कुछ क्षणों के बाद सुगन्धी के नीचे दिए शब्द इस संगीत पर सुपर इम्पोज़ किए जाएं।]

सुगन्धी : ऐसा लगता है कि मैं इस हवलदार को वर्षों से जानती हूँ। आज तक किसी ने मुझे नहीं बताया था कि मेरा भी एक घर है जो स्वर्ग बन सकता है। (**'स्वर्ग' कहकर उसके यकीन में कमी आ जाती है।**) स्वर्ग—(**फ़ौरन ही अपने-आपको यकीन दिलाकर**)···हाँ, हाँ, स्वर्ग···बास मारने वाले चिथड़ों और चिन्दियों, नंगी तस्वीरों, मैले घड़े और मेरे उलझे हुए बालों का आज तक किसी ने खयाल किया था—(**अपने-आप को सम्बोधित करके—स्वगत**) सुगन्धी, तुझसे क्या कभी किसी ने यह कहा था—"देख तो आज तेरी नाक कितनी लाल हो रही है—ठहर, मैं तेरे वास्ते दवा लाता हूँ"—माधो ज़रूर मुझसे प्रेम करता है—प्रेम··· प्रेम···

[एकदम दरवाज़ा खुलता है—सुगन्धी की पड़ोसिन वैसी ही जैसी खुद सुगन्धी है, अन्दर प्रवेश करती है।]

पड़ोसिन : प्रेम—प्रेम—साला जो कोई भी आता है वह यही कहता है—"मैं तुझसे प्रेम करता हूँ"···सब जानती हूँ यह प्रेम क्या बला है।

सुगन्धी : हमारे बाबा का क्या जाता है—बोलने दो झूठ उनको। हम कब उनसे सच बोलती हैं—यह धंधा ही ऐसा है। उनको भी झूठ बोलना पड़ता है, हमको भी झूठ बोलना पड़ता है—पर कान्ता, इस झूठे जीवन में अगर कोई सच्चा बोल सुनाई दे तो कितना आनन्द आता है।

पड़ोसिन : सच्चा बोल भी तो सच्चा बोल नहीं होता।

सुगन्धी : न हो, पर थोड़ी देर के लिए आनन्द तो आ जाता है—कागज़ के फूल में अगर बास हो तो मैं उठाकर उसे अपने जूड़े में लगा लूं—जिन्हें सच्चे गहने पहनने को नहीं मिलते वे झोल चढ़े झूठे गहनों ही से अपना मन परचा लेती हैं—कान्ता, दुनिया में अगर झूठी और सच्ची चीज़ों के साथ ऐसी चीज़ें न होतीं जो थोड़ी देर के लिए सच्ची मालूम होती हैं तो यह जीवन बहुत ही कठिन हो जाता।

पड़ोसिन : ये तू आज कैसी बातें कर रही है !

सुगन्धी : कोई छेड़ गया है मेरे हृदय के तार—रोम-रोम में नींद-सी रच गयी है—आ—मेरी गोद में आ जा—तुझे लोरी देकर सुलाऊँ···

कान्ता : दिमाग तो नहीं फिर गया तेरा ?

सुगन्धी : (**और ज्यादा प्यार के साथ**) आ कान्ता—आ—मेरी गोद में आ जा—मैं तेरे कान को हौले-हौले थपथपाऊँगी—धीरे-धीरे लोरी दूंगी—तू भी सो जाएगी और मैं भी सो जाऊँगी—आ।

लोरी

साफ़ कटोरी की सी आँखें चश्मे गंगाजल के
क्यों दुःख देती है .निंदिया को नैन रसीले मल के
सो जा—सो जा ।
सो जा मेरी नन्ही - मुन्नी भोली - भाली कान्ता
निंदिया नगरी में देखेगी सुन्दर सपने कल के
अब सो जा—सो जा ।
वह आकाश पै काली बदली डोल रही है कब से
तारे छम-छम नाच रहे हैं चाँद उभरा है जब से
सो जा—सो जा
सो जा मेरी नन्ही - मुन्नी भोली - भाली कान्ता

[नोट : लोरी खत्म हो तो साज़ थोड़ी देर हौले-हौले बजते रहें, फिर खो जाएँ ।]

दूसरा दृश्य

[म्युनिसिपल कमेटी के दारोगा-सफ़ाई ने शराब पी रखी है । अपने काम निपटा चुका है और घर जाने का इरादा कर रहा है । सुगन्धी भी नशे में है, मगर उसकी ज़बान में लड़खड़ाहट नहीं । कहने का मतलब यह कि वह अपने नशे को अपनी बोलचाल से ज़ाहिर करने की कोशिश न करे । दारोगा की ज़बान में लड़खड़ाहट हो मगर प्रोड्यूसर इस बात का खयाल रखे कि वह उस लड़खड़ाहट को बहुत कम प्रयोग करे ।]

सुगन्धी : सेठ, बहुत पिला दी तुमने—सिर दर्द के मारे फटा जा रहा है ।

दारोगा : (हँसता है) बाम लगाओ बाम—मेरे सिर में जब ज़्यादा पीने से दर्द हुआ करता है तो मेरी बीवी मुझे बाम ही लगाया करती है ।—सारे माथे पर यह तेज़ बास वाली बाम चुपड़ दिया करती है और मैं सो जाया करता हूँ । मेरी बीवी बड़ी अच्छी है सुगन्धी—बड़ी अच्छी है—मुझे उससे बहुत मुहब्बत है—हाँ, तो बाम लगाओ, बाम—बाम—सुना—बड़ी अच्छी है मेरी बीवी···यह साला कुत्ता क्या कर रहा है तेरे पलंग के नीचे !

[कुत्ता भौंकता है ।]

सुगन्धी : चुप कर बे···मेरे सिर में दर्द होता है ।

दारोगा : मैं मंसीपाल्टी का दारोगा हूँ—ऐसा कुत्ता गोली से मार देना चाहिए—गोली

से—मेरे पास दोनाली बन्दूक है—किसी दिन साले को ढेर कर दूंगा—अच्छा, अब मैं जाता हूँ—मेरी बीवी मेरी राह देख रही होगी। (उठता है और लड़खड़ाकर गिरने लगता है। कुर्सी से उसकी टक्कर लगती है।)

[कुत्ता भौंकता है।]

दारोगा : (कुत्ते को डाँटता है) अय···चुप···बाम लगा बाम—और बाम लगाकर सो जा···खबरदार जो भौंका—सो जा··· (हँसता है) मेरी बीवी बड़ी अच्छी है—जब···जब मैं ज्यादा पी जाता हूँ तो वह मेरे माथे पर भी बाम लगाया करती है···पर आज तो मैंने ज्यादा नहीं पी···क्यों सुगन्धी···क्या ज्यादा पी है··· अरे···यह साला तेरा तोता कैसा है—(तोते को मुखातिब करके) अय···गर्दन कहाँ है तेरी··· (हँसता है) सुगन्धी, ये कैसे जानवर पाल रखे हैं तूने··· (हँसता है) साला कुत्ता है तो उसके बदन पर एक बाल नहीं। साला यह तोता है तो इसके पर ही नहीं··· (हँसता है) इसकी गर्दन कहाँ है ?

सुगन्धी : सो गया है··· (आवाज से यह मालूम हो जैसे वह अपने-आप से और दारोगा से तंग आ गयी है। अपने-आप से इसलिए कि उसके सिर में दर्द है और दारोगा से इसलिए कि वह जाने का नाम नहीं लेता।)

दारोगा : (हँसता है) दोनों सो रहे हैं··· (कुत्ते को सीटी बजाकर बुलाता है)···सचमुच सो गया है···अच्छा···अच्छा, तो मैं अब जाता हूँ···मैं तेरे पास और ठहरता सुगन्धी, पर मुझे अपनी बीवी का खयाल है···मेरा इन्तज़ार कर रही होगी···बाम लगा बाम, और सो जा···सो जा मेरी जान !

सुगन्धी : सो जाऊँगी सेठ।

दारोगा : बाम लगा बाम···बड़ी अच्छी चीज है। (हँसता है) माथे पर लगती है तो ऐसा मालूम होता है, टीन का पतरा जड़ दिया है किसी ने···टीन ठण्डा होता है न··· (कुत्ते से) अय, खबरदार, जो अब तू भौंका—गोली से उड़ा दूंगा। मैं कहीं ज्यादा तो नहीं पी गया···दोनाली बन्दूक है मेरे पास···इस साले तोते की गर्दन कहाँ है···सुगन्धी···सुगन्धी···तोते की गर्दन कहाँ है ?

सुगन्धी : (नशे की हालत में) गर्दन···गर्दन···

दारोगा : साली गर्दन गायब है—सुगन्धी, मैं जाता हूँ—भई मुझे देर हो रही है। मेरी बीवी इन्तज़ार कर रही होगी।

सुगन्धी : अच्छा।

दारोगा : साली गर्दन ही गायब है···कहाँ गयी ?—इधर भी नहीं, उधर भी नहीं··· हद हो गयी है···सुगन्धी, तू बाम मल बाम···तेरा सिर दुख रहा है···मेरी बीवी मेरे माथे पर यही दवा मला करती है···रुपये ले लिए हैं न तूने···सुगन्धी··· सुगन्धी !

सुगन्धी : (दर्द की तकलीफ़ के साथ) क्या है सेठ ?

दारोगा : रुपये ले लिए हैं न तूने ?

सुगन्धी : रुपये···रुपये···हाँ, ले लिए···मुझे···मुझे नींद आ रही है।

दारोगा : सो जा···बाम मल और सो जा···मैं जाता हूँ···मेरी बीवी मेरी राह देख रही होगी···बड़ी अच्छी है···साली गर्दन ही गायब है···अय···अय···अच्छा, मैं जाता हूँ···तू सो जा···पर दरवाज़ा बन्द कर लीजो अन्दर से···

सुगन्धी : अच्छा।

दारोगा : दरवाज़ा बन्द कर लीजो अन्दर से—हैं ?

सुगन्धी : अच्छा।

दारोगा : साली गर्दन ही गायब है···हद हो गयी है··· **(यह कहता हुआ वह माइक्रोफ़ोन से दूर होता जाता है—आखिर में दरवाज़ा खोलने की आवाज़)** दरवाज़ा बन्द कर लीजो अन्दर से सुगन्धी !

[दरवाज़ा अन्दर से बन्द कर दिया जाता है।]

सुगन्धी : **(थके हुए लहजे में)** मुआ जाने का नाम ही नहीं लेता था···और···और··· मेरा सिर दर्द के मारे फटा जा रहा है—बाम···बाम मल ही लूं··· **(शीशी पर से टीन का ढकना उतारने की आवाज़)**···माथे पर सचमुच टीन का पतरा जड़ दिया गया है···दो बज गए··· **(हौले-हौले सॉफ़्ट संगीत शुरू होता है)** उफ़···उफ़··· सिर में कितना दर्द है···पर आँखें फिर भी नींद से बोझिल हो रही हैं···

[नोट : कुछ क्षणों तक बैक ग्राउण्ड संगीत जारी रहे। फिर धीरे-धीरे समाप्त हो जाए—इसके बाद कुछ सैकण्डों तक बिलकुल खामोशी छायी रहे। सिर्फ़ सुगन्धी के ऊपर-नीचे साँसों की आवाज़ आए—इसके बाद बहुत दूर से दस्तक की आवाज़ सुनाई दे···अन्तराल···फिर दस्तक की आवाज़ आए···अब की बार कुछ ऊँची ···सुगन्धी सपने में कुछ बुड़बुड़ाए···अब की बार दस्तक की आवाज़ ऊँची हो जाए···सुगन्धी एकदम हड़बड़ाकर उठ बैठे।]

सुगन्धी : कौन है··· **(अन्तराल)** कोई भी नहीं···

[दरवाज़े पर दस्तक होती है।]

सुगन्धी : **(अपने-आप से)** कौन है··· **(उठती है। कदमों की चाप—फिर दरवाज़ा खोलने की आवाज़)**···कौन, रामलाल ?

रामलाल : **(भिची-भिची आवाज़ में)** तुझे साँप सूंघ गया था या क्या था ? एक क्लाक से बाहर खड़ा दरवाज़ा ठोक रहा हूँ। तू कहाँ मर गयी थी ? **(आवाज़ और ज़्यादा दबाकर)** अन्दर कोई और तो नहीं ?

सुगन्धी : **(अलसाई और नशे की हालत में)** नहीं।

रामलाल : **(आवाज़ ऊँची करके)** फिर तूने दरवाज़ा क्यों नहीं खोला ? भई यूं धंधा हो चुका। घोड़े बेचकर सो जाती हो। कोई बाहर खड़ा-खड़ा सूख जाए साला। अब तू मेरा मुंह क्या देखती है ? **(दरवाज़ा भेड़ने की आवाज़)** झटपट यह धोती उतार और वह फूलों वाली साड़ी पहन, पोडर-वोडर लगा और मेरे साथ चल। बाहर

मोटर में बैठे एक सेठ तेरा इन्तज़ार कर रहे हैं—चल-चल, एकदम जल्दी कर।

सुगन्धी : (**बीमार आवाज़ में**) रामलाल, मेरा जी अच्छा नहीं।

रामलाल : बीड़ी है कोई तेरे पास··· (**एकदम चौंककर**) क्या कहा···जी अच्छा नहीं···

माला जी अच्छा नहीं था तो पहले ही कह दिया होता।

सुगन्धी : वह बात नहीं रामलाल—ऐसे ही मेरा जी अच्छा नहीं···बहुत पी गयी।

रामलाल : ऐश करती हो ऐश···थोड़ी बची हो तो ला, हम भी गला तर कर लें।

सुगन्धी : बचाई होती तो यह मुआ सिर में दर्द ही क्यों होता·· (**विनती के साथ**) देख रामलाल, वह सेठ जो बाहर मोटर में बैठा है, उसे यहीं ले आ।

रामलाल : भई वाह, जन्टलमैन आदमी है। यहाँ आने से घबराता है—तू आदमी-आदमी को पहचान लिया कर—भई वाह—

सुगन्धी : कह दे घर में नहीं है···नहीं, नहीं···

रामलाल : मैं सब जानता हूँ, तू ये नखरे क्यूं कर रही है···वह साला पूने का हवलदार जब से तेरे पास आने लगा है तेरा मिज़ाज ही बिगड़ गया है···सात साल से यह धंधा कर रहा हूँ···तुम छोकरियों की सारी बातों की मुझे खबर रहती है··· साली, अपना धन बर्बाद न कर—तेरे अंग के कपड़े भी उतार ले जाएगा यह तेरा पूने का हवलदार···क्या देता है तुझे ? साला फ़ोकट में ऐश कर रहा है···

सुगन्धी : तू उसकी बात छोड़—मैं चलती हूँ तेरे साथ।

रामलाल : तुझे उस साले ने मना किया हो तो मत जा।

सुगन्धी : मनाही किसी बात की नहीं···मुझे कुछ रुपयों की ज़रूरत है—साथ वाली मदरासिन अपने मुल्क में जा रही है। बेचारी के पास एक डेढ़िया भी नहीं। बहुत दुखी है। अपने खर्च के लिए तो मेरे पास रुपये हैं, पर उसके लिए भी तो कुछ करना है।···चल···

रामलाल : यूं सिर झाड़ मुँह फाड़ साथ चल पड़ेगी—ज़रा मुँह पर छींटा मार, पोडर-वोडर लगा। अपनी फूलों वाली साड़ी पहन···

सुगन्धी : अच्छा।

[कुछ क्षणों का अन्तराल। रामलाल फ़िल्मी धुन में सीटी बजाता है।]

रामलाल : पहले तीन तस्वीरें थीं, अब चार हो गयीं। पर साला ज़रूर वह तेरा पूने का हवलदार होगा···वाह रे मेरे हवलदार···ऐसा लगता है तोप के मुँह के सामने बैठा है। (हँसता है) चल, जल्दी कर अब···यह तो तेरा वह मंसीपाल्टी का दारोगा है—और यह बीड़ीवाला सेठ···साले ने आज तक एक बीड़ी नहीं पिलायी —और यह···जल्दी कर सुगन्धी···अरे वाह···यह फूलोंवाली साड़ी तुझ पर खूब फबती है···लोट-पोट ही हो जाए हमारा सेठ तुझे देखकर···चल, अब चल···

सुगन्धी : ठहर, मैं एक डोंगा पानी का पी लूं—प्यास लगी है।

[घड़े में डोंगा डालने और पानी पीने की आवाज़]

सुगन्धी : आग-सी लग रही है सीने में ।
रामलाल : कमती पिया कर···चल अब···
सुगन्धी : चल ।

[दोनों चलते हैं—दरवाज़ा खुलने की आवाज़—फिर कदमों की चाप—कदमों की चाप कुछ क्षणों तक आती रहे। उस पर नीचे की वार्ता का कुछ हिस्सा सुपर इम्पोज़ किया जाए ।]

सुगन्धी : पिछला पहर है रात का ।
रामलाल : कोई पहर हो, अपना काम है जाना···क्यों ?
सुगन्धी : ठीक है ।
रामलाल : वह मोटर खड़ी है नुक्कड़ पर ।
सुगन्धी : मेरा जी अच्छा नहीं । हवा में भी ब्रांडी की बास आ रही है ।
रामलाल : मोटर की सैर करेगी तो सब ठीक हो जाएगा—ले, तू अब यहाँ खड़ी हो जा । मैं बात कर लूं ।

[सिर्फ़ रामलाल के कदमों की चाप]

रामलाल : सेठ, आ गयी । एकदम अच्छी छोकरी है । हँसने-खेलने वाली । तंग करे तो मेरा ज़िम्मा है···बुलाऊं ··(ज़रा आवाज़ ऊँची करके) सुगन्धी, इधर आ, सेठ बुलाते हैं ।

[सिर्फ़ सुगन्धी के कदमों की चाप]

रामलाल : बैटरी जलाकर देख लो सेठ ।

[बैटरी जलाने की आवाज़]

सेठ : यह छोकरी लाया है तू··· (अत्यन्त नफ़रत के साथ) ऊँह ! ड्राइवर, चलो ।

[एकदम इंजन स्टार्ट होता है । मोटर एक लम्बा-सा साँस लेती है और यह जा, वह जा । कुछ क्षणों तक मोटर के चलने की आवाज़ आती रहे ।]

सुगन्धी : यह क्या हुआ ?
रामलाल : पसन्द नहीं किया तुझे ।
सुगन्धी : पसन्द नहीं किया मुझे ?
रामलाल : हाँ ।
सुगन्धी : (एकदम दौड़ती है—पागलों की तरह चिल्लाती हुई) सेठ···ओ सेठ···सेठ ···ज़रा मोटर रोक अपनी···मोटर रोक अपनी···सेठ···ओ सेठ···मोटर रोक अपनी··· (गले में आवाज़ रुँध जाती है) सेठ···ज़रा मोटर रोक अपनी···
रामलाल : क्या हो गया है तुझे सुगन्धी !

सुगन्धी : (अपने खयाल में)···चला गया···मेरे मुँह पर थूककर चला गया···मुझे फटकारकर, दुतकारकर चला गया।

रामलाल : मेरा वक्त भी खराब किया साले ने।

सुगन्धी : (अपने खयाल में) ऊँह···यह छोकरी लाया है तू···यह चुड़ैल···यह छछून्दर ···ऊँह···

रामलाल : चल, अब घर चल ।

सुगन्धी : ऊँ···दस रुपये और यह छोकरी···खच्चर क्या बुरी है···

रामलाल : चल, अब हटा इस किस्से को।

सुगन्धी : रामलाल, एक बार तू उस सेठ को पकड़कर मेरे सामने ले आ···एक बार फिर वह बैटरी की रोशनी मेरे मुँह पर मारे और 'ऊँह' करे। मैं उसका मुँह नोच लूं···उसके सिर का एक-एक बाल उखाड़ डालूं···टाँगों से पकड़कर मोटर से बाहर घसीट लूं और धड़ाधड़ मुक्के मारना शुरू कर दूं और जब थक जाऊँ— (हाँफना शुरू कर देती है) जब थक जाऊँ तो···तो रोने लग जाऊँ···

रामलाल : क्या हो गया है तुझे ?

सुगन्धी : (रोनी आवाज में) यह सच है कि अब मेरा वह पहला-सा रंग-रूप नहीं रहा, जब मुझे कोई चिन्ता नहीं थी और मैं अपने माँ-बाप के साथ रहती थी पर···पर मेरी जवानी बिलकुल तो नहीं ढल गयी···मैं ऐसी बुरी तो नहीं हो गयी कि लोग मेरे मुँह पर थूक दें···

रामलाल : तुझे बुरा किसने कहा है ?

सुगन्धी : (गुस्से के साथ) तेरे उस मोटर वाले सेठ ने। (एकदम गाली देते-देते रुक जाती है) जी चाहता है ऐसी गाली दूं, ऐसी गाली दूं, पर गाली देने से क्या होगा ? मेरे सामने हो तो मैं उससे सिर्फ़ एक बात कहूँ—कपड़े फाड़कर उसके सामने खड़ी हो जाऊँ और कहूँ—क्या कहूँ, क्या न कहूँ—कुछ समझ में नहीं आता— मेरे सारे शरीर में उसकी 'ऊँह' ने हलचल मचा दी है—(अन्तराल) मैंने उसका क्या बिगाड़ा था जो उसने मेरा अपमान किया—

[मोटर का इंजन फड़फड़ाता है एक पल के लिए]

सुगन्धी : मोटर आ गयी—

रामलाल : यह तो सामने वाली दुकान का बोर्ड खड़का है···तेरे कान बज रहे हैं।

सुगन्धी : (हौले-हौले) मेरे कान बज रहे हैं···सचमुच मेरे कान बज रहे हैं···मुझमें क्या बुराई है रामलाल···बता···मैंने आज तक किसी बुरी शक्ल वाले को अपने घर से दुत्कारा है ? मेरे बिस्तर पर, मेरे हाथों पर—मेरे मुँह पर ये लोग उल्टियाँ करते रहे हैं—मुझे घिन आती थी पर मैंने कभी उनको मालूम नहीं होने दिया।

रामलाल : भई, मैं चला··· (कदमों की चाप)

सुगन्धी : मोटर एक बार फिर आ जाए···सिर्फ़ एक बार···सेठ मेरे मुँह पर बैटरी की रोशनी मारे···मुझे दुत्कारे···पर थोड़ा-सा मौका दे कि मैं उसे जवाब तो दे सकूं।

सुगन्धी : (खुद ही बोले मगर बिलकुल दूसरे लहजे में। ऐसा मालूम हो कि उसका दूसरा वजूद बोल रहा है) क्या जवाब देगी तू—एक बार फिर आए—यह क्या रट लगा रखी है तूने ? चल, घर चल। ठण्डे पानी का एक डोंगा पी और बाम मलकर सो जा—सेठ और उसकी मोटर की ऐसी-तैसी।

सुगन्धी : (खुद) सेठ और उसकी मोटर की ऐसी-तैसी···पर···पर···

[मोटर का इंजन फड़फड़ाता है।]

सुगन्धी : यह क्या ?

सुगन्धी : (उसका दूसरा वजूद) कुछ भी नहीं···तेरे कान बज रहे हैं—चल, घर चल—पगली—किसी के कहने से आदमी बुरा थोड़े हो जाता है।

सुगन्धी : (खुद) बात तो सच्ची है—किसी के कहने से आदमी बुरा थोड़े हो जाता है—

सुगन्धी : (दूसरा वजूद) याद है, पिछले क्रिसमस में अहमदाबाद का एक लौंडा तेरे पास आकर ठहरा था—उसका बटुआ कहीं गुम हो गया था—तूने उसके दस रुपये वापस दे दिए थे।

सुगन्धी : (असीम बेचारगी के साथ) इस समय कोई मुझसे कह दे—"सुगन्धी, तू तो बहुत अच्छी है।"

सुगन्धी : (दूसरा वजूद) किसी के कहने न कहने से कुछ नहीं होता सुगन्धी—तू है ही अच्छी—चल, अब घर चल—

सुगन्धी : (खुद) चल, अब घर चल—

[कुछ क्षणों तक कदमों की चाप—दरवाज़े की कुण्डी खड़खड़ाती है।]

सुगन्धी : (हैरत से) यह ताला किसने खोला ? (दरवाज़ा खोलती है।)

सुगन्धी : कौन···माधो ?

माधो : (हँसता है) आज तूने मेरा कहा मान ही लिया। सुबह की सैर तन्दुरुस्ती के लिए बड़ी अच्छी होती है। (हँसता है) हर रोज़ इसी तरह सैर को जाया करे तो तेरी सारी सुस्ती यूं दूर हो जाए, यूं। (चुटकी बजाता है) विक्टोरिया गार्डन तक तो हो आयी होगी तू···क्यों ? (हँसता है।)

सुगन्धी : आज मैं तेरी राह ही देख रही थी।

माधो : (हँसता है—हँसते-हँसते थोड़ा चौंककर) मेरी राह देख रही थी तू···तुझे मालूम था कि मैं आज आने वाला हूँ ?

सुगन्धी : (मुस्कराकर) मैंने रात तुझे सपने में देखा था···उठी तो कोई भी नहीं था। सो जी ने कहा, चलो कहीं बाहर घूम आएँ और···

माधो : (खिसियानी हँसी के साथ) और मैं आ गया···भई वह जो किसी ने कहा है कि दिल को दिल से राह है—एकदम ठीक है···यह सपना तूने कब देखा था ?

सुगन्धी : चार बजे होंगे।

माधो : और मैंने···मैंने कितने बजे देखा था···हाँ, दो बजे···जैसे तू फूलों वाली साड़ी ···अरे, बिलकुल यही साड़ी पहने मेरे बाज़ू में खड़ी है···तेरे हाथों में···क्या था, तेरे हाथों में ··हाँ, तेरे हाथों में रुपयों से भरी हुई थैली थी।

सुगन्धी : थैली ?

माधो : हाँ, थैली···तूने वह थैली मेरी झोली में रख दी और कहा, "माधो, तू चिन्ता क्यों करता है···अरे लेता क्यों नहीं। तेरे-मेरे पैसे कोई दो हैं !" यह सुनकर सुगन्धी, तेरी जान की कसम, एकदम टिकट कटाकर इधर चला आया।···क्या सुनाऊँ ! बड़ा लफ़ड़ा हो गया है। बैठे-बिठाए एक केस में फँस गया हूँ।

सुगन्धी : केस ?···(घबराकर) जेल-वेल का तो डर नहीं ?

माधो : बीस-तीस रुपये हों तो इन्स्पेक्टर की मुट्ठी गर्म करके छुटकारा मिल सकता है···लेट जा आराम से···तेरे पैर दबा दूं···सैर की आदत न हो तो थकन हो ही जाया करती है···इधर मेरी तरफ़ पैर करके लेट जा।

सुगन्धी : तू मुट्ठी-चापी छोड़ माधो—मेरा तो दिल धक-धक करने लगा है। सारी बात सुना मुझे। बीस-तीस क्या सौ-पचास भी खर्च हो जाएँ तो कोई बात नहीं—वापस कब जाएगा तू ?

माधो : दोपहर की गाड़ी से···ज्यादा देने की ज़रूरत नहीं···पचास में काम चल जाएगा।

सुगन्धी : सौ ले जा···

माधो : सौ ?

सुगन्धी : हाँ, हाँ···इधर हट, मुझे उठने दे।

[अन्तराल]

सुगन्धी : पचास कहे थे न तूने ?

माधो : (हँसता है) तस्वीरों के पीछे छुपाकर रखा है माल-पानी ? (हँसता है।)

[सुगन्धी खिलखिलाकर हँसती है—तेज़ और नुकीली हँसी]

माधो : (घबराहट के साथ) किसका फ़ोटो देखकर तू हँसी है इस ज़ोर से ?

सुगन्धी : इसकी···मुंसीपाल्टी के इस दारोगा की·· माधो, ज़रा थोबड़ा तो देख इसका ···कहता था एक रानी मुझ पर आशिक हो गयी थी···(अत्यन्त नफ़रत के साथ) ···ऊँह···(फ्रेम कील समेत उखाड़ लेती है—फिर फ़र्श पर दे मारती है—शीशा टूटने की आवाज़) रानी भंगिन कचरा उठाने आएगी तो मेरे इस राजा को भी ले जाएगी, अपने टोकरे में। (तीखी हँसी)

माधो : (खिसियानी हँसी) ही ही ही···

सुगन्धी : (दूसरा फ्रेम कील समेत उखाड़ती है) इस साले का यहाँ क्या काम है··· भोंडी शक्ल का कोई आदमी यहाँ नहीं रहेगा···क्यों माधो ! (फ्रेम ज़मीन पर पटक देती है।)

माधो : (खिसियानी हँसी) ही ही ही···

सुगन्धी : और यह घनचक्कर···और···

माधो : (खिसियानी हँसी)···मेरा···फ़ोटो···

[सुगन्धी एक फ्रेम उखाड़ती है, फिर दूसरा]

माधो : हाय !

[सुगन्धी दोनों फ्रेम फ़र्श पर दे मारती है ।]

माधो : अच्छा किया···मुझे भी यह फ़ोटो पसन्द नहीं था। (**हँसने की कोशिश करता है ।**)

सुगन्धी : (**बिलकुल बदले हुए लहजे में**) तुझे अपना फ़ोटो पसन्द नहीं था···यह अपनी सूरत तो बहुत पसन्द होगी ?

[माधो हँसने की कोशिश करता है ।]

सुगन्धी : यह तेरी पकौड़ा जैसी नाक···यह तेरा बालों-भरा माथा···ये तेरे सूजे हुए नथुने···ये तेरे मुड़े हुए कान···यह तेरे मुँह की बास···यह तेरे अंग का मैल··· बड़ा सुन्दर जवान है न तू···पूने में हवलदार है···महीने में दो-तीन दिन मेरे घर आता है···

माधो : (भड़ककर) सुगन्धी···मुझे ऐसा लगता है कि तूने फिर अपना धंधा शुरू कर दिया है···देख, अब के तुझे आखिरी बार कहता हूँ—मान जा मेरा कहना, नहीं तो पछताएगी—इज्ज़त-आबरू के साथ रह—इस महीने का खर्च पूना पहुँचते ही तुझे मनीआर्डर कर दूंगा···क्या भाड़ा है इस खोली का ?

सुगन्धी : अठारह रुपये भाड़ा है इस खोली का और दस रुपये भाड़ा है मेरा। (**माधो के अन्दाज़ में**)···और जैसा तुझे मालूम है ढाई रुपये दलाली के, बाकी रहे साढ़े सात···रहे न साढ़े सात···पगले, तेरा-मेरा नाता ही क्या है। कुछ भी नहीं···बस, ये दस रुपये हैं जो तेरे और मेरे बीच में बज रहे हैं—आ, दोनों मिलकर कोई ऐसी बात करें कि तुझे मेरी ज़रूरत हो और मुझे तेरी···क्या भाड़ा है यहाँ से पूने का ···यह तेरी नाक इतनी लाल क्यों हो रही है और यह तूने अपने बालों का क्या सत्यानाश कर रखा है ।

माधो : सुगन्धी, मेरी टोपी !···

सुगन्धी : तू टोपी कहता है इसे, यह तो चिथड़ा है···कितनी बास मारती है। उठाकर बाहर फेंक इसको ।

[टोपी के गिरने की आवाज़]

माधो : सुगन्धी !

सुगन्धी : क्या भाड़ा है यहाँ से पूने का—परमेश्वर का दिया बहुत है। पूने में हवलदारी छोड़—क्या तुझे यह धंधा करते लाज नहीं आती—यहाँ मेरे साथ इज्ज़त·

आबरू के साथ रह···क्या भाड़ा है यहाँ से पूने का ?

माधो : सुगन्धी !

सुगन्धी : सुगन्धी के बच्चे, तू आया किसलिए है यहाँ ? माँ रहती है तेरी इस खोली में जो तुझे पचास रुपये चुपके से दे देगी ? या तू कोई ऐसा गबरू जवान है जो मैं तुझ पर आशिक हो गयी हूँ ? कमीने, कुत्ते, मुझ पर रोब गाँठता है···भिखमंगे, तू अपने-आपको समझ क्या बैठा है—चोर, उचक्के, लफंगे, शोहदे, बदमाश···

माधो : (दबकर) सुगन्धी, क्या हो गया है तुझे ?

सुगन्धी : तेरी माँ का सिर···उल्लू के पट्ठे, तू होता कौन है मुझसे यह पूछने वाला ? निकल यहाँ से···दूर हो जा मेरी नज़रों से···

[कुत्ता भौंकना शुरू करता है।]

माधो : म···म···मेरी टोपी···

सुगन्धी : पड़ी रहने दे यहीं। खबरदार, जो तूने उठायी···तू पूना पहुंच, मैं इसे मनी-आर्डर कर दूंगी।

[हँसना शुरू करती है—बहुत ज़्यादा—कुत्ता उस हँसी का साथ देता है और ज़ोर-ज़ोर से भौंकता है—कुछ क्षणों के बाद भौंकता-भौंकता वह माइक्रोफ़ोन से दूर हो जाता है, जैसे वह माधो के पीछे-पीछे बाहर चला गया है—सुगन्धी की दबी हुई हँसी की आवाज़ आती है जो फ़ौरन ही सिसकियों में बदल जाती है। सुगन्धी फूट-फूटकर रोना शुरू कर देती है।]

सुगन्धी : (सुबकियों के साथ अपने कुत्ते को पुचकारती है) चच चच चच···मोती··· आ···मेरी जानी, आ जा···आ जा···आ, सो जाएँ···

[लोरी का संगीत शुरू होता है। सुगन्धी कुत्ते को लोरी देती है—लफ़्ज़ अदा नहीं करती। सिर्फ़ हूँ-हूँ करके लोरी का अन्तरा और टेक गाती है—आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड आउट]

रासपुतिन की मौत

पात्र

रासपुतिन
युसोपोफ
पालसेतापानोफ
मित्री
संतपानोफ

[रासपुतिन दुनिया का सबसे ज़्यादा पापी और बदमाश इन्सान, जो रूस में पैदा हुआ वली यकीन किया जाता था, मगर असल में वह एक शैतान था जिसके हाथों रूस के ज़ार की आलीशान सल्तनत बरबाद हो गयी। उसकी पापोंभरी ज़िन्दगी इतनी आश्चर्यजनक है कि उस पर किसी काल्पनिक कहानी की आशंका होती है।

छः फुट दो इंच लम्बा यह ग्राण्डील राहब, जिसका सिर गुम्बद जैसा था, कई साल रूस पर अपने शैतानी गुणों के कारण शासक बना रहा। उसकी हैरतअंगेज़ शक्ति का राज़ इस चीज़ में छुपा है कि हिप्नोटिज़्म में उसे कमाल हासिल था। इस शक्ति के द्वारा वह मज़बूत से मज़बूत आदमी को भी अपना हिमायती बना लेता था। हिप्नोटिज़्म जानने के अलावा रूहानी इल्म में भी महारत हासिल थी। चुनाँचे उस इल्म की वजह से ज़ारीना मे उसका परिचय हुआ।

वाकयात बताते हैं कि बहुत जल्द रासपुतिन ने ज़ारीना को वशीभूत कर लिया। इसके अलावा उसने शाही महल के तमाम नौकरों, ज़ारीना की तमाम खूबसूरत सहेलियों और शाही खानदान की करीब-करीब तमाम बेगमों को अपना मुरीद बना लिया। ये तमाम औरतें जाने-अनजाने उसकी इच्छाओं के सामने झुक गयीं।

यह बात बहुत ही शर्मनाक है मगर असलियत से किसी को इन्कार नहीं हो सकता कि खुद ज़ारीना को भी आहिस्ता-आहिस्ता उसका यकीन हो गया था कि जब तक रासपुतिन के साथ शारीरिक सम्बन्ध न स्थापित किया जाए खुदा के घर मुक्ति मुमकिन ही नहीं। औरतें छुप-छुपकर और वेश बदलकर उस शैतान के पास जाती थीं। नहीं मालूम कि उसमें ऐसी कौन-सी ताकत थी कि औरत सामने आते ही बिलकुल वशीभूत और बेबस होकर रह जाती थी।

बड़ी जंग शुरू हो चुकी थी। ज़ार और ज़ारीना को यकीन था कि रासपुतिन खुदा की तरफ़ से इसलिए आया है कि रूस को फ़तह तथा धन-दौलत और मान व शान से भरपूर कर दे। लेकिन रासपुतिन असल में जर्मन जासूस था—और उसकी कोशिश यही थी कि रूस अपने मित्रराष्ट्रों से अलग होकर जर्मनी से सुलह कर ले।

यह बात बताने काबिल है कि हद दर्जे का गलीज़ होने के बावजूद रासपुतिन से न ज़ारीना को घिन आती थी, न किसी अन्य स्त्री को। वह बिलकुल स्नान नहीं करता था। उसने कभी मुँह-हाथ भी नहीं धोया था। उसके शरीर से सख्त बदबू आती थी। उसके लम्बे-लम्बे नाखूनों में हर वक्त मैल भरा रहता था। दाढ़ी उसकी बेहद गन्दी थी, जिसके बाल मैल और चिकनाहट के कारण आपस में जुड़े रहते थे। बहुत ही बदतमीज़ था। यूरोपीय रीति के खिलाफ़ हाथ से खाना खाता था और अपनी भरी हुई अँगुलियाँ शाहज़ादियों की तरफ़ बढ़ा देता था जो उन्हें चूसकर साफ़ कर देती थीं।

1916 के अन्त में रूस की खस्ता हालत थी। ढाई साल से मुल्क में अफ़रा-तफ़री और अकाल का दौरदौरा था। फ़ौजों के सिपाही अपने वतन की मुहब्बत की भावना दिल में रखते थे लेकिन वह एक लक्ष्यहीन लड़ाई लड़ते-लड़ते उकता गए थे जिसमें उन्हें पेट-भर खाना भी नसीब नहीं होता था। उनको हुकूमत की तरफ़ से पूरे हथियार भी नहीं दिए जाते थे कि वे जर्मनों का तरीके से मुकाबला कर सकें। चुनाँचे फ़ौजों में बद-दिली फैल गयी और 1916 में दस लाख रूसी सिपाही अपना बोरिया-बिस्तर बाँधकर अपने-अपने घर चल दिए।

जब हालात इतने बिगड़ गए तो शाही खानदान के मर्दों के कान खड़े हुए। चुनाँचे ग्राण्ड ड्यूक, तिकोस और मेकाइल की रहनुमाई में एक प्रतिनिधि मण्डल ज़ार के पास गया और ज़ारीना के चरित्र पर शक की आशंका व्यक्त की और प्रार्थना की कि मुल्क की बद-हाली और बद-इन्तज़ामी दूर करने के लिए तुरन्त कुछ किया जाए। ज़ार ने उस प्रतिनिधि मण्डल की कोई बात न सुनी। चुनाँचे उसके रिश्तेदारों ने सोचा कि रूस को बचाने के लिए अब एक ही रास्ता बचा है। वह यह कि खुद कुछ किया जाए। चुनाँचे सेंट पीट्सबर्ग के अमीरों ने शाही महल में अंतिम साज़िश का इन्तज़ाम किया। प्रोग्राम में सबसे पहले रासपुतिन का कत्ल था।

19 दिसम्बर की रात को शाहज़ादा युसोपोफ ने रंगारंग महफ़िल का आयोजन किया और रासपुतिन को उसमें बुलाया। चूंकि रासपुतिन संगीत का प्रेमी था, इसलिए षड्यंत्रकारियों को यकीन था कि वह ज़रूर आयेगा।]

युसोपोफ : शैतान आज हमारे जाल से बचकर नहीं जाएगा—पाल, तुमने ज़हर की तरफ़ से तसल्ली कर ली ?

पालसेतापानोफ : कर चुका हूँ। चुनाँचे कुछ बूंदें एक कुत्ते के हलक में डालीं जो फ़ौरन

मर गया। उसकी लाश बाहर सहन में पड़ी है।

युसोपोफ : आज रात इस कुत्ते रासपुतिन की लाश भी इस सहन में पड़ी होनी चाहिए। तुम्हारा खयाल क्या है ? कहीं दावत में आने से इंकार न कर दे ?

पालसेतापानोफ : मेरा खयाल है कि इंकार नहीं करेगा। इसलिए कि हम उसे एक माशूका का लालच भी तो दे चुके हैं।

युसोपोफ : मैं भूल ही गया था। जब उसने उस माशूका की खूबसूरती की तारीफ़ सुनी होगी तो पानी भर आया होगा गन्दे शैतान के मुँह में।

पालसेतापानोफ : बाकी लोग कहाँ हैं ?

युसोपोफ : सब अपनी-अपनी जगह पर होशियार हैं—तुम बेफ़िक्र रहो।

पालसेतापानोफ : ऐसा न हो, मुझे देखकर बिदक जाए। उससे मेरी कभी मुलाकात नहीं हुई।

युसोपोफ : तुम बेफ़िक्र रहो। मैं सब ठीक कर लूंगा। उससे कह दूंगा कि पाल···

सेतपानोफ : अपना आदमी है, कोई गैर नहीं।

पालसेतापानोफ : अच्छा यूं ही सही। मेरा तो दिल धड़क रहा है। कमबख्त के इतने अफ़साने सुन चुका हूं कि वह अब मुझे भूत मालूम होता है।

युसोपोफ : दोस्त, आज यह भूत नहीं रहेगा। रूस की पवित्र भूमि पर आज उस नापाक का वजूद नहीं रहेगा। क्या हम सब इसका हलफ़ नहीं उठा चुके हैं कि इस गद्दार, फ़रेबी और पापी इन्सान को मारना बड़ा पुण्य-कार्य है ?

पालसेतापानोफ : इसमें क्या शक है !

युसोपोफ : दस बजने वाले हैं। आओ, अब शराब में ज़हर मिला दें।

पालसेतापानोफ : ये दोनों बोतलें हैं। इनमें से एक में यह ज़हर घोल दो। दूसरी बोतल में कुछ न डालो। मगर ज़हर वाली बोतल पर निशान ज़रूर लगा देना चाहिए। ऐसा न हो कि ऐन वक्त पर गड़बड़ हो जाए।

युसोपोफ : मैं निशान लगाए देता हूँ—अव्वल तो इसकी भी ज़रूरत नहीं क्योंकि शराब की तरह दोनों बोतलें अलग-अलग हैं।

पालसेतापानोफ : डाल दो—और अच्छी तरह से मिला दो।

[शराब में ज़हर मिला दिया गया। सब तैयारियाँ पूरी हो गयीं। प्रिंस युसोपोफ के घर में कई आदमी छुपे हुए थे। उनमें से एक का नाम प्रिंस मित्री था और दूसरा पालसेतापानोफ। उनके अलावा एक मशहूर नर्तकी भी थी, जिसका लालच रास-पुतिन को दिया गया था।

सब इन्तज़ाम पूरे थे मगर डर इस बात का था कि रासपुतिन कहीं प्रिंस युसोपोफ की दावत में आने से इन्कार न कर दे। वायदाखिलाफ़ी न कर जाए। रात के ग्यारह बज गए और रासपुतिन नहीं आया। अब प्रिंस और उसके साथियों को सख्त अफ़सोस हुआ।]

मित्री : कहीं जासूसों ने उसको हमारी साज़िश से होशियार तो नहीं कर दिया ?

युसोपोफ : नहीं, ऐसा नहीं हो सकता । हमारे सिवाय इस साज़िश को और कौन जानता है । अगर उसको पता चल गया तो इसका यह मतलब है कि हम खुद उस शैतान के जासूस हैं ।

पालसेतापानोफ : सवाल यह है कि वह अभी तक आया क्यों नहीं है ?

युसोपोफ : किसी माशूका के घर रह गया होगा ।

पालसेतापानोफ : हो सकता है कि ऐसा ही हो ।

मित्री : हरामज़ादे पर औरतें ऐसे टूटती हैं जैसे शहद पर मक्खियां ।

युसोपोफ : आज आ जाए तो यहीं सारा छत्ता निचोड़ दूं ।

पालसेतापानोफ : युसोपोफ, तुम टेलीफ़ोन करो और उसके घर से पता लो कि वह कहाँ है ।

युसोपोफ : ठीक—लो, मैं अभी करता हूँ । **(नम्बर मिलाता है)**—हलो—हलो—मुकद्दस बाप कहाँ हैं—क्या कहा, चले गए ? कब ? कहाँ ? **(टेलीफ़ोन का चोंगा रख देता है ।)**

पालसेतापानोफ : कहाँ गया ?

मित्री : क्या घर में नहीं है ?

युसोपोफ : नौकर बताता है कि मुकद्दस बाप ठीक ग्यारह बजे घर से निकल गए हैं ।

मित्री : मुकद्दस बाप—शैतान का बच्चा ! मुकद्दस बाप !

युसोपोफ : ऐसा न हो कि हमारी साज़िश धरी की धरी रह जाए ।

मित्री : रूस की मुक्ति उस वक्त तक नामुमकिन है जब तक यह शैतान ज़िन्दा है । अगर वह आज न आए तो उसे कल बुलाया जाए, वरना किसी न किसी बहाने उसका काम ज़रूर तमाम कर दिया जाए ।

पालसेतापानोफ : तमाम इन्तज़ाम मुकम्मल हैं । ऐसा मौका शायद ही फिर कभी हाथ आए ।

युसोपोफ : कुछ देर इन्तज़ार कर लेते हैं । शायद आ जाए ।

पालसेतापानोफ : अगर उसे आना होता तो अब तक आ गया होता । जहाँ खूबसूरत नाच व सरूर और शराब का सवाल हो वहाँ वह कभी देर नहीं करता । ठीक वक्त पर पहुँचा करता है ।

मित्री : हो सकता है, हमारी दावत में उसे कोई दिल-फ़रेब बात नज़र न आयी हो ।

युसोपोफ : दावत को दिल-फ़रेब बनाने में हमने कोई कसर नहीं छोड़ी है । खूबसूरत औरत, नाच और शराब और तन्हाई । ये सब चीज़ें हम उसे दावत में पेश कर चुके हैं । उसके यहाँ न आने की कोई और ही वजह होगी ।

मित्री : ठहरो—तुमने आवाज़ सुनी ?

युसोपोफ : वह आ गया—यह आवाज़ उसी की मोटर की है—अब तुम सब तैयार हो जाओ । देखो, ऐसी बात न हो कि वह ताड़ जाए ।

[ठीक ग्यारह बजकर बीस मिनट पर रासपुतिन की मोटर दरवाज़े पर आकर

रुकी। वह उसमें से उतरा। मोटर खुफ़िया दरवाज़े पर आकर रोकी गयी थी। उसे बड़ी होशियारी के साथ अन्दर दाखिल किया गया कि कोई देख न पाए।

रासपुतिन काला लबादा पहने था। जवाहरात जड़ी बहुत शानदार तलाई सलीब उसके सीने पर लटक रही थी। अन्दर दाखिल होकर उसने मूल्यवान ओवरकोट उतार दिया—बाहर बहुत तेज़ बर्फ़ गिर रही थी।]

युसोपोफ : तशरीफ़ लाइए—बेखटके अन्दर तशरीफ़ ले आइए।

रासपुतिन : मुझे देर हो गयी।

युसोपोफ : खास देर तो नहीं हुई—जहेनसीब, आप तशरीफ़ तो ले आए हैं।

रासपुतिन : जब तुमने बुलाया तो मुझे आना ही पड़ा। तुम्हारी दावत से इन्कार भी नहीं हो सकता था जब कि तुमने···यह कौन है ?

युसोपोफ : मुकद्दस बाप, आप तसल्ली रखें। खिलतरा का यहाँ पूरा-पूरा बन्दोबस्त है। यह पालसेतापानोफ हैं। मेरे पुराने दोस्त हैं। हमप्याला, हमनिवाला। आओ पाल ! मुकद्दस बाप के आने का पुण्य हासिल करो।

रासपुतिन : (**पाल की तरफ़ सम्मानपूर्ण दृष्टि से देखते हुए**) तुमसे मिलकर खुशी हुई।

पालसेतापानोफ : यह मेरी बहुत खुशनसीबी है।

रासपुतिन : बैठ जाओ, इस कुर्सी पर बैठ जाओ।

पालसेतापानोफ : (**कुर्सी पर बैठकर**) आज पहली बार आपके दीदार हुए हैं। यह इज्ज़त मुझे हमेशा याद रहेगी। आपकी बड़ाई और बुज़ुर्गी का छोटा-सा सबूत है।

रासपुतिन : अगर निकोलस दोअम रूस का ज़ार है तो मैं ईसामसीह हूँ। मैं रूस को और तमाम दुनिया को मुक्ति दिलाने आया हूँ। ज़ार और ज़ारीना मेरे सामने अदब से झुकते हैं और मेरा हाथ चूमते हैं। उनके बच्चे मुझे सज़दा करते हैं। मेरा बहुत बड़ा रुतबा है।

पालसेतापानोफ : (**बनावटी रूप से प्रभावित होकर**) इसमें क्या शक है मुकद्दस बाप !

रासपुतिन : युसोपोफ, वह औरत कहाँ है जिसका तुमने ज़िक्र किया था ? वह चीज़ जो अपना नाम प्रकट करना नहीं चाहती मगर मुझसे परिचय करने की इच्छुक है।

युसोपोफ : अभी तक नहीं आई मुकद्दस बाप !

रासपुतिन : क्या वजह है उसके न आने की—तुम्हारे बयान के मुताबिक उसे मेरी मुलाकात का शौक था।

युसोपोफ : जी हाँ। बहुत ज्यादा शौक था और मेरा खयाल है कि बस आती ही होगी —मित्री बाहर उसका इन्तज़ार कर रहा है। मैं जाकर देखता हूँ।

रासपुतिन : जाओ, प्रिंस मित्री को यहाँ भेज दो और तुम उस खातून का इन्तज़ार करो।

युसोपोफ : बहुत अच्छा, मुकद्दस बाप। (**चला जाता है।**)

रासपुतिन : पाल ! उस औरत को, जिसका ज़िक्र अभी हो रहा था, क्या तुम जानते हो ?

पालसेतापानोफ : जानता हूँ। बहुत अच्छी तरह जानता हूँ।

रासपुतिन : कैसी है ?

पालसेतापानोफ : बहुत हसीन औरत है और नाचती भी खूब है। मैंने ऐसी नर्तकी आज तक नहीं देखी।

रासपुतिन : खूब, बहुत खूब !

पालसेतापानोफ : मुकद्दस बाप के हिप्नोटिज़्म के विषय में बहुत कुछ सुन चुका हूँ। कहते हैं कि ऐसी विद्या मौजूद है जिससे आदमी दूसरों को वशीभूत कर लेता है। लेकिन मुझे यकीन नहीं आता।

रासपुतिन : (हँसता है) मेरी राय पूछना चाहते हो ?

पालसेतापानोफ : जी हाँ।

रासपुतिन : तुमने सुना होगा कि मैं हिप्नोटिज़्म का जानकार हूँ।

पालसेतापानोफ : जी हाँ। आपके बारे में यह बात आमतौर पर मशहूर है।

रासपुतिन : जो बिलकुल गलत है। खुदा ने मुझे जो ताकत दी है, उसको लोग ज़हालत और बेवकूफ़ी की वजह से हिप्नोटिज़्म समझते हैं। उसने मुझे बरकत बख्शी है। उसने मुझे रहनुमा बनाया है। अमन और निजात की कुंजी मेरे हाथ में दी है। लोक-परलोक में मेरा मुकाम बुलन्द है। लोग इन बुलन्दियों को दूसरे ही रंग में देखते हैं। वे मुझे जादूगर समझते हैं। इसलिए कि वे कमअक्ल और ज़ाहिल हैं। लेकिन जो समझने की काबलियत रखते हैं, अच्छी तरह जानते हैं कि मैं खुदा का भेजा हुआ पैगम्बर हूँ।

[प्रिंस मित्री अन्दर आता है।]

रासपुतिन : आओ प्रिंस मित्री, मैं तुम्हारा ही इन्तज़ार कर रहा हूँ।

मित्री : मैं उस खातून की राह देख रहा था।

रासपुतिन : अभी तक नहीं आई ?

मित्री : जी नहीं, लेकिन बस आया ही चाहती है।

रासपुतिन : तो बैठ जाओ मेरे पास—बोतल खोलो—पीओ और पिलाओ।

मित्री : (**पास बैठ जाता है और ज़हर वाली बोतल खोलकर रासपुतिन के गिलास में उँडेलता है**) फ़रमाइए, कितनी पिएँगे ? (**बोतल मेज़ पर रख देता है**) लो पाल, तुम भी लो—क्या सोच रहे हो ?

पालसेतापानोफ : मैं सामने तस्वीर की तरफ़ देख रहा हूँ। तस्वीरनिगारी का आला नमूना है। मुकद्दस बाप, आपने देखी यह तस्वीर ?

रासपुतिन : (**तस्वीर की तरफ़ देखता है**) मंजरनिगारी खूब है। मुझे इसका फ्रेम भी बहुत पसन्द आया है।

[इस दौरान पालसेतापानोफ दूसरी बोतल से अपने गिलास में शराब उँडेल लेता है।]

मित्री : मैं आर्टिस्ट का नाम भूल गया हूँ । मुझे युसोपोफ ने बताया था। भला-सा नाम है···

पालसेतापानोफ : (गिलास उठाकर) मुकद्दस बाप की सेहत के लिए ।

रासपुतिन : (अपना गिलास उठाकर होंठों से लगाता है)मित्री, तुम भी पीओ। (गिलास गटागट पी जाता है।)

मित्री : हैरत है कि वह खातून अभी तक नहीं आई । युसोपोफ शायद अभी तक उसका इन्तज़ार कर रहा है।

रासपुतिन : आ जाएगी—आज बर्फ़बारी भी तो बहुत हो रही है।

[पालसेतापानोफ और मित्री बहुत इन्तज़ार कर रहे थे कि रासपुतिन इतना ज़हर पी चुका है जो बारह आदमियों को मारने के लिए काफ़ी है। मगर उसे कुछ भी नहीं हुआ। वह बिलकुल तन्दुरुस्त था—जैसे उसने कभी ज़हर पीया ही नहीं ।

शराब पीने के बाद उसने मेज़ पर से बिस्कुट उठाकर खाए और बातें करता रहा। कुछ लोगों का कहना है कि उसने नज़र बचाकर अपना गिलास काँच के उस उगालदान में उँडेल दिया था जो उसके पास रखा था । मगर कुछ लोग कहते हैं कि नहीं, उसने सचमुच ज़हर पिया था । जो भी है, इसके बारे में राय भिन्न है।

प्रिंस युसोपोफ और उसके साथी ऊपर की मंज़िल में थे और देर होने से सख्त परेशान हो रहे थे। उन्हें यकीन था कि रासपुतिन ज़हर पीते ही मर जाएगा ।

जब बहुत देर हो गयी और पाल उसकी मौत की खुशखबरी सुनाने के लिए नहीं आया तो ये लोग दबे पाँव नीचे उतरे और कमरे के पास जाकर ताज्जुब से रासपुतिन की बातें सुनने लगे ।]

रासपुतिन : एक गिलास और है ?

पाल : लीजिए (गिलास में ज़हरीली शराब उँडेलता है।)

रासपुतिन : आज सर्दी गज़ब की है। खून जमा जा रहा है। तीन गिलास खत्म कर चुका हूँ । अभी तक बदन में गर्मी पैदा नहीं हुई—लेकिन तुम लोग यूं आँखें फाड़-फाड़कर मेरी तरफ़ क्यों देख रहे हो ?

पाल : कुछ नहीं । कुछ नहीं—

मित्री : (घबराकर) यह साफ़ जादूगरी है।

रासपुतिन : (मुस्कराकर) क्या जादूगरी है ? जादूगरी सब बकवास है। तुम बहक रहे हो। तुम्हें हो क्या गया है ?

पाल : (उठ खड़ा होता है) खुदा की कसम, यह आदमी जादूगर है ।

मित्री : पाल, पिस्तौल निकाल लो और दुष्ट को खत्म कर दो । यह ज़हर इसे नहीं मारेगा।

रासपुतिन : (हँसता है) तो मुझे ज़हर दिया गया है ! दोस्तो ! ज़हर मुझे मार नहीं सकता। जिस शख्स को परमात्मा ने भेजा है, जिसको खुदा ने अनगिनत शक्तियाँ

प्रदान कर रखी हैं, उसकी तरफ़ कोई आँख उठाकर भी नहीं देख सकता। (हँसता है) जाओ, युसोपोफ के पास जाओ और देखो कि वह हसीन औरत आयी है या नहीं। उसके बाद फिर मुझे मारने की तरकीब सोचना। खुदा तुम पर अपनी बरकत दे।

मित्री : पाल, इस शैतान की बात मत सुनो। अपना काम करो। इसके रोब में न आओ।

[पाल अपने होश ठीक करता है और जेब से पिस्तौल निकालकर फ़ायर करता है। एक—दो—तीन···

रासपुतिन के सीने में गोलियाँ उतारकर पाल कमरे से बाहर निकला, जहाँ प्रिंस युसोपोफ वगैरा मिले। पाल ने उनसे कहा—"शैतान अन्ततः ज़हन्नुम रसीद हो गया। अब रूस उसके पाप से आज़ाद हो गया है।"

चुनाँचे ये लोग ऊपर की मंज़िल में शराब पीने लगे—मगर थोड़ी ही देर में उन्हें निचली मंज़िल में कुछ गड़बड़ मालूम हुई। इतने में दरवाज़ा खुला और रासपुतिन अन्दर दाखिल हुआ। उन सबको यकीन था कि फेफड़ों पर गोलियाँ खाकर वह मर-खप चुका होगा। जब उसे ज़िन्दा देखा तो उनके होश उड़ गए।

रासपुतिन खून में नहाया हुआ था। लड़खड़ाता हुआ वह महल के फाटक तक पहुँच गया और उसे खोलने की कोशिश करने लगा।]

युसोपोफ : मित्री, कहीं सचमुच यह दुष्ट खुदा-रसीद ही तो नहीं !

मित्री : हो सकता है कि खुदा इसकी हिफ़ाज़त कर रहा हो।

युसोपोफ : ज़हर पीकर और गोलियाँ खाकर भी यह कमबख्त नहीं मरा।

मित्री : बड़ा सख्तजान है।

पाल : कुछ समझ में नहीं आता।

रासपुतिन : (**एक हाथ से अपना ज़ख्म पकड़कर, जिसमें से खून बह रहा था**) तुमने मुझे मारने के लिए पूरी-पूरी कोशिश की है—लेकिन यह देखो—मैं ज़िन्दा हूँ—मैं ज़िन्दा हूँ। और इसी तरह ज़िन्दा रहूँगा—कोई इन्सानी ताकत मुझे मार नहीं सकती—ज़हर और ये सब गोलियाँ मुझ पर क्या असर कर सकती हैं—(**हँसता है**) तुम लोग मूर्ख हो क्या ? अब भी तुम्हें मेरी महानता पर शक है ? क्या अब भी तुम मुझे मारने की नाकाम कोशिश करते रहोगे ? फाटक खोल दो—मैं बाहर जाना चाहता हूँ—जल्दी ही खुदा मुझे तुमसे बदला लेने का मौका देगा।

पाल : मित्री, दौड़ो ! इस दुष्ट की पीठ में अपना खंजर दस्ते तक उतार दो। इसकी बातों में न आओ। यह खुदा का भेजा बुज़ुर्ग नहीं, शैतान है, जो हमें वशीभूत करना चाहता है।

रासपुतिन : तुम बेवकूफ़ हो—तुम्हारा ज़हर और तुम्हारी गोलियाँ मुझे खत्म नहीं कर सकीं—यह खंजर मेरा क्या बिगाड़ेगा। आओ, इसको भी आज़मा लो।

पाल : मित्री, खुदा के लिए इसकी बातें न सुनो। यह हम पर जादू करना चाहता है—

दौड़ो ! जाने न पाए। लाओ, खंजर मुझे दो।

[रासपुतिन ने जब दरवाज़े का हत्था घुमाया तो पाल को जोश आ गया। वह खुराफ़ात से डरने वाला न था। खंजर लेकर तीर की तरह दौड़ा और रासपुतिन की पीठ में दस्ते तक उतार दिया। अब रूस का यह दानव आखिरी बार लड़खड़ाया और फ़र्श पर औंधे मुंह गिर पड़ा।

कहते हैं, जब उसकी लाश उठाकर उन लोगों ने दरिया में फेंकनी चाही तो उस वक्त भी रासपुतिन के शरीर में जान की रमक थी। जब उसको दरिया के सुपुर्द किया गया तो उन लोगों ने सन्तोष का साँस लिया क्योंकि अब वाकई रासपुतिन, रूस का महान् भूत, मर चुका था।]

नेपोलियन की मौत

पात्र

नेपोलियन
मारशान
अंतोमारशे
मोन्थोलोन
आरंट
बरट्रीन
शार्ट
मचल

[सन् 1821, अप्रैल की उन्नीस तारीख। रात के दो बजे हैं। लांगवुड के सारे आदमी जाग रहे हैं। सब बारी-बारी उस आदमी की तीमारदारी कर रहे हैं, जो बिस्तर पर अपने आखिरी साँस ले रहा था—शाहंशाह नेपोलियन, जिसने एक बार कहा था, "मैं वह चट्टान हूं, जिसे फ़िज़ां में फेंक दिया गया हो"—ओक्यास महा-सागर के एक छोटे से टापू सेंट हेलेना में मृत्युशैया पर पड़ा है। मौत के सबसे बड़े व्यापारी के सिरहाने उसकी अपनी मौत खड़ी है। यूरोप का यह महान् शासक सन्निपात की हालत में है।]

नेपोलियन : (अचेतनता की स्थिति में) डाक्टर बेकस्टर—डाक्टर बेकस्टर—कहाँ हैं डाक्टर बेकस्टर—तुम आ गए—कहाँ हो तुम—इधर आओ डाक्टर—इधर आओ—

मारशान : आलीजाह—डाक्टर बेकस्टर यहाँ नहीं हैं···आलीजाह !

नेपोलियन : डाक्टर, तुम मेरी बात क्यों नहीं मानते ? हम बीमार हैं, सख्त बीमार हैं। कितने ताज्जुब की बात है। हम बीमार हैं। हम बीमार हैं—ये देखो, हमारी बीमारी के बारे में छपे बुलेटिन। क्या अब भी यकीन नहीं आया—क्या तुम्हें कैदखाने के दारोगा ने हमारी निगरानी के लिए नहीं भेजा—हमें तुम्हारी बात सुनाई नहीं देती—ज़रा ऊँचा बोलो···डाक्टर बेकस्टर—

मारशान : आलीजाह ज्यादा गुफ़्तगू न करें। डाक्टर बेकस्टर इंग्लिस्तान चले गए हैं।

नेपोलियन : तुम ठीक कहते हो—तुम—ठीक—कहते —हो—(**आवाज़ धीमी हो जाती है ।**)

[मारशान और अंतोमारशे आपस में आहिस्ता-आहिस्ता बातें करते हैं ।]

मारशान : रात-भर डाक्टर बेकस्टर को बुलाते रहे हैं ।

अंतोमारशे : ताज्जुब की कोई बात नहीं। शाहंशाह को डाक्टर बेकस्टर से नफ़रत है और नब्ज़ की रफ़्तार एक सौ आठ है ।

[नेपोलियन बुड़बुड़ाता है ।]

नेपोलियन : अंतोमारशे, तुम ही डाक्टर बेकस्टर से कहो कि हम बहुत बीमार हैं—हम सख्त बीमार हैं—हम बहुत तकलीफ़ बरदाश्त कर रहे हैं—कोई डाक्टर बेकस्टर तकहमारा पैगाम क्यों नहीं पहुँचाता। ओमेरा, तुम सुन रहे हो, हम क्या कहते हैं ? हम यूरोप में हैं—यूरोप—सारा यूरोप सिमटकर हमारे अन्दर समा गया है। फ्रांस की हार नामुमकिन है—हमारे जांबाज़ सिपाही आखिरी दम तक लड़ेंगे और फ़तह उनकी होगी। (**पागलों की तरह हँसता है**) हार नामुमकिन है—नामुमकिन है—(**सहमकर**) पर ये लोग क्यों आगे बढ़ रहे हैं? ये कौन हैं जो गधों की मानिंद मँडला रहे हैं ? (**बुलन्द आवाज़ में**) डाक्टर बेकस्टर, तुम हमारा इलाज क्यों नहीं करते—आह ! लेकिन डाक्टरों और जरनैलों में कोई फ़र्क नहीं। दोनों की गलतियों से कब्रिस्तान आबाद होते हैं—और बेकस्टर जैसे कई डाक्टर मैंने मोलियर के मज़ाकिया ड्रामों में देखे हैं। डाक्टर ओमेरा कहाँ है ? इधर आओ। (**नेपोलियन जवाब के इन्तज़ार में खामोश हो जाता है ।**)

मारशान : (**दबे लहजे में**) आलीजाह, खामोश रहें। यहाँ न डाक्टर बेकस्टर है और न डाक्टर ओमेरा। आप आराम फ़रमाएँ ।

नेपोलियन : बताओ, अब हमें क्या करना चाहिए ? यूरोप की राजनीति की बिसात हम कभी उलटने नहीं देंगे। डाक्टर बेकस्टर, तुम बताओ, अब हमें क्या करना चाहिए ? (**हँसता है**) ऊपर खामोश क्यों खड़े हो ? हमारी बात का जवाब क्यों नहीं देते ? हम पूछते हैं रूस के मैदानी इलाकों में हमारी फ़ौजों का गुज़र क्यों मुमकिन नहीं—नेपोलियन ठोस चट्टानों में इसरार कर सकता है—क्या यह झूठ है ?

मारशान : आलीजाह !!! अन्तोमारशे, अब मुझसे बरदाश्त नहीं हो सकता—मुझसे शाहंशाह की यह हालत नहीं देखी जाती—आलीजाह, खामोश रहें। ज्यादा न बोलें—आपको तकलीफ़ होगी ।

[नेपोलियन बड़बड़ाता है ।]

नेपोलियन : तकलीफ़—तकलीफ़—मुकाबला करना है—हमें बहुत-से मुकाबले क रने हैं ।

दूसरे दिन

मारशान : आलीजाह ! रात बहुत देर तक आपके दुश्मनों की तबीयत खराब रही।

नेपोलियन : (हँसते हुए) दुश्मनों की—मारशान, अब हम बिलकुल ठीक हैं। सिर्फ़ थकावट महसूस होती है। बदन दुख रहा है। मारशान, ये बीमारियाँ जंग से ज्यादा बड़ी होती हैं।

मारशान : आलीजाह ! आपकी पसंद शराब का एक जाम हाज़िर है। पीजिएगा ?

नेपोलियन : ज़रूर—ज़रूर—

[मारशान शराब का जाम पेश करता है।]

नेपोलियन : (पीने के बाद) कितनी आनन्ददायक है—कितनी अच्छी है !

मारशान : आलीजाह ! डाक्टर अन्तोमारशे तशरीफ़ लाए हैं आपकी खैरियत जानने के लिए।

नेपोलियन : हम सब जानते हैं, वह किसलिए आया है ! मारशान, इससे कह दो हम दवा हरगिज़ नहीं पीएँगे। ये चीज़ें हमारी मनःस्थिति के अनुकूल नहीं हैं।

अन्तोमारशे : तसलीम बजा लाता हूँ आलीजाह।

नेपोलियन : आह—तुम आ गए—आओ—आओ—लेकिन हम दवा वगैरा की कोई नहीं सुनेंगे।

अन्तोमारशे : पलस्तर कोई दवा नहीं है आलीजाह !

नेपोलियन : पलस्तर—पलस्तर—यह अब नयी बला क्या आई है ?

अन्तोमारशे : कुछ नहीं आलीजाह ! सिर्फ़ हुज़ूर के पेट और पिंडलियों पर मुझे दो पलस्तर लगाने हैं। इनसे आपको फ़ायदा होगा। तकलीफ़ बहुत कम हो जाएगी।

नेपोलियन : ये सब वाहियात चीज़ें हैं। हमें इन पर कोई भरोसा नहीं है। यह तुम्हारा तिब्ब-विब्ब सब बकवास है।

अन्तोमारशे : मगर आलीजाह ! इन पलस्तरों का लगाना बहुत ज़रूरी है

नेपोलियन : (तंग आकर) बहुत ज़रूरी है तो लगाओ—ऐसे ही सही। मगर हमें यकीन है कि इनसे हमें कोई फ़ायदा नहीं होगा। हमारा आखिरी वक्त करीब आ गया है। इसलिए हम ज़िद नहीं करना चाहते।—चलो, लगाओ पलस्तर। यह काम भी करके देख लो।

अन्तोमारशे : और दवा की छोटी-सी खुराक···

नेपोलियन : (बिगड़कर) छोटी हो या बड़ी—हम हरगिज़ नहीं पीएँगे। तुम्हें सिर्फ़ पलस्तर लगाने की इजाज़त है। दवा हम नहीं पीएँगे।

अन्तोमारशे : आलीजाह !

नेपोलियन : मारशान—

मारशान : जहाँपनाह !

नेपोलियन : हम चश्मे का पानी पीना चाहते हैं।

[मारशान पानी का गिलास देता है।]

नेपोलियन : (**पीकर**) इस पानी ने कितनी तसल्ली दी है हमें। हम तुम्हारा शुक्रिया अदा करते हैं। मारशान, देखो, अगर हमें वहाँ मरने की इजाज़त दे दी गयी जहाँ कि हम पैदा हुए थे तो हमें उस चश्मे के पास दफ़न करना जहाँ से यह पानी लाया गया है—लिखो-लिखो, जो कुछ हम कहते हैं, लिखो—जो कुछ हम कहते हैं, लिखो—फ़ौरन लिखो—(**स्वर धमकी-भरा हो जाता है**)—हम कहते हैं, लिखो—सुनते हो मोन्थोलोन !

मोन्थोलोन : आलीजाह ! (**काँपती हुई आवाज़ में**) आलीजाह !

नेपोलियन : हम कहते हैं, लिखो। हम बोलते जाएँगे, तुम लिखते जाओ। (**ज़ोरदार आवाज़ में**) लिखते हो या नहीं ?

[मोन्थोलोन काँपते हुए हाथों से कागज़ और कलम पकड़ता है।]

मोन्थोलोन : (**घबराहट में**) लिखता हूँ आलीजाह !—मेरा कलम कहां है—ठहरिये, मैं शमाँ रौशन कर दूं।

[अन्तराल]

नेपोलियन : दुश्मन फ्रांस पर हमलावर हो रहा है। मोन्थोलोन, (**सख्त लहजे में**) सुनते हैं, एक आँधी-सी उठती हुई दिखाई दे रही है हमें—एक तूफ़ान-सा उमड़ा चला आ रहा है हमारे वतन की ओर—उठो, उठो, रोको उसे। फ्रांस के बहादुर सपूतो ! सीसा पिलाई दीवार बन जाओ। देखो, तुम्हारी आज़ादी खत्म न होने पाए—दुश्मन को अपने पाँवों तले रौंद डालो—हलफ़ उठाओ। हुस्न-व-इश्क से परहेज़—आराम की ज़िन्दगी से परहेज़—रहम और दया से दूरी—रात की स्याही और दिन के उजाले में तलवारों और बन्दूकों का निडर इस्तेमाल—उम्मीद ? खौफ़ और आने वाले कल से बेपरवाही। कत्ल-व-गारत ! बदला ! ! फलतः तुम्हारा वतन दुश्मन के वजूद से पाक हो जाए। लिख रहे हो मोन्थोलोन ?

मोन्थोलोन : लिख रहा हूँ आलीजाह···मगर···मगर···

नेपोलियन : याद रहे कोई कौम ज़िन्दा नहीं रह सकती जो कि ज़िन्दा रहने का ढंग न जानती हो। जीने का ढंग मौत से सीखो—मैदाने-जंग की खून से भरपूर घाटियों से प्राप्त करो—लहू—लहू—रगों से लहू बहने दो। इसलिए कि यह पैदा ही इसलिए हुआ है कि बहे।—और—और—खून के दो कतरे जो वतन की इज़्ज़त और आबरू को बचाने के लिए तुम्हारी रगों से निकलेंगे—फ़तह और विजय की दुल्हन उन्हें अपना सबसे कीमती आभूषण बनाकर रखेगी—फ्रांस—फ्रांस—नेपोलियन महान् की जवानी का सबसे हसीन सपना—दुनिया की अँगूठी का सबसे अनमोल नगीना—ख बरदार, जो किसी ने इसकी तरफ़ आँख उठाकर देखा—उठो और सारे फ्रांस में फ़ौजों का जाल बिछा दो। और—और—डाक्टर बेकस्टर, तुम कहाँ हो— मारशान, मारशान—देखो, लोग हम पर हमला करने आ रहे हैं। वे हमें

मौत के घाट उतारना चाहते हैं—इन्कलाब को नष्ट करना चाहते हैं—हम अपनी रक्षा करेंगे इसलिए कि इन्कलाब हम हैं। नेपोलिय महान् ही इन्कलाब है—नेपोलियन का दरबार—नेपोलियन का दबदबा—लिखो, लिखो मोन्थोलोन ! तुम्हारा कलम हमारे विचारों का साथ नहीं देता।

मोन्थोलोन : आलीजाह ! लिख रहा हूँ।

नेपोलियन : रुको नहीं मोन्थोलोन ! लिखते जाओ—तुम जानते नहीं, यूरोप की तकदीर हैं हम—आह—आज़ादी—कितना ऊँचा है वह इन्सान जो आज़ाद हो और कितना नीचे गिर जाता है जब वह गुलाम हो जाए—फ्रांस कभी गुलाम हो जाए—फ्रांस कभी गुलामी कबूल नहीं करेगा—लेकिन **(नेपोलियन के विचारों का सिलसिला टूट जाता है)** ···नहीं, नहीं ! हम चश्मे का पानी नहीं पीएंगे—तुम लोग मैदान-ए-जंग में क्यों नहीं जाते—लिखो—लिखो—

मोन्थोलोन : आलीजाह ! अब मुझसे नहीं लिखा जाता।

मारशान : आप आराम फ़रमाइए आलीजाह !

नेपोलियन : (थके हुए लहजे में) आराम—आराम—कैसा आराम—**(बड़बड़ाता हुआ खामोश हो जाता है।)**

मोन्थोलोन : (मारशान से) खुदा करे अब इनकी आँख लग जाए।

मारशान : मालूम होता है—तकलीफ़ बहुत ज्यादा है। अभी सुबह होने में कितने घण्टे बाकी हैं ?

[नेपोलियन बड़बड़ाता है। शब्द समझ नहीं आते।]

मोन्थोलोन : आहिस्ता बोलो मारशान। हुज़ूर सो रहे हैं।

[कुछ लमहों के लिए खामोशी छा जाती है।]

मारशान : मोन्थोलोन—मोन्थोलोन—**(बेकरार होकर)** देखो, शाहंशाह तकिये के नीचे क्या ढूंढ़ रहे हैं ?

नेपोलियन : मेरा बेटा कहाँ है—मेरा बेटा कहाँ है—तुम लोगों ने उसके साथ क्या सलूक किया है ? मेरा बेटा—मेरा बेटा—मारशान—तस्वीर लाओ—मेरे बेटे की तस्वीर कहाँ है ?

मारशान : आलीजाह ! तस्वीर वह सामने लटकी है। आप लेट जाइए, आराम फ़रमाइये।

नेपोलियन : हाँ-हाँ—यह मेरा बेटा है। यह मेरा बेटा है।

तीसरे दिन

मोन्थोलोन : मारशान ! आज आलीजाह की तबीयत में कुछ सकून है।

मारशान : यह सकून ही तो किसी ज़बरदस्त तूफ़ान के खतरे की निशानी है—मुझे डर है।

[नेपोलियन उठकर ज़ोर से गरजता है।]

नेपोलियन : अगर रूसो न होता तो फ्रांस में इन्कलाब न आता—नेपोलियन न होता तो पुराने ढर्रे को मिटाने का खयाल पैदा न होता। मारशान ! मारशान—

मारशान : आलीजाह !

नेपोलियन : तोलोन का घेरा डाला जा रहा है—उफ़—मेरी टाँग पर गहरा ज़ख्म आया है—यह डाक्टर क्या बकवास करता है कि हमें बिस्तर में आराम करना चाहिए। ज़ख्मी टाँग के लिए हम अपना वकार ज़ख्मी करा लें, हरगिज़ नहीं—

सुनो डाक्टर—हमारी टाँग को कुछ नहीं होगा। बिलकुल कुछ नहीं होगा। कुछ हो ही नहीं सकता। कल या परसों तोलोन पर हमारा झण्डा लहराएगा—ताकत—ताकत—और ताकत—हम ताकत चाहते हैं—वह ताकत जिसे हमने इतने वर्षों से अपनी दासता बना रखा है। हमें ताकत से मुहब्बत है। जिस तरह संगीतकार साज़ से मुहब्बत करता है, उसी तरह हम ताकत से मुहब्बत करते हैं। इसलिए कि हम इस साज़ से जैसा सुर चाहें निकाल सकते हैं। यह पोप हमारा हुक्म क्यों नहीं मानता ? हमारी इच्छा है कि वह हमारा हुक्म माने। इसलिए कि हम राजनीतिक दुनिया के अलावा मज़हबी दुनिया पर भी हुकूमत करना चाहते हैं। हमारी ताकत, हमारी प्रतिष्ठा, हमारे वकार से कोई इन्कार नहीं हो सकता। किसी को इन्कार करने का दुस्साहस नहीं हो सकता। इसलिए कि ये सब चीज़ें हमें खुदा की तरफ़ से दी गयी हैं। पाँच वर्ष में सारी दुनिया पर नेपोलियन अपने पदचिह्न छोड़ जाएगा। (**रोबदार आवाज़ में**) यह किसने कहा कि यह सरासर पागलपन है ? (**बिस्तर पर से कूद पड़ता है।**)

मारशान : मोन्थोलोन —बरट्रीन—दौड़ो—आलीजाह को कुछ हो गया है।

[नेपोलियन मारशान को गले से पकड़ लेता है और दबाता है।]

मारशान : (**भिची आवाज़ में**) आलीजाह—आलीजाह—मोन्थोलोन, मुझे बचाओ—

[दो-तीन आदमी मिलकर मारशान को नेपोलियन की पकड़ से छुड़ाते हैं और बिस्तर पर लिटा देते हैं।]

मारशान : (**खाँसता है**) उफ़—कितनी ज़बरदस्त पकड़ थी।

नेपोलियन : मारशान !

मारशान : आलीजाह !

नेपोलियन : फ्रांस के बहादुर जरनैलो, वैसे अस्तंगेल और मीनिया की फ़तह करीब है—

दौड़ो, भागो—ब्रिगेड नम्बर 36—चलो फ़तह तुम्हारी है—खबरदार, जो किसी के कदम पीछे हटे—हमें—हमें एक लाख आदमियों की ज़रूरत है—एक लाख बहादुरों की जो हमारी रहनुमाई में आँधी बनकर दुनिया पर छा जाएँ। एक बार फिर जंग के शोले लपकें—एक बार फिर दुनिया की कौमों की राजनीति हमारे हुज़ूर में काँपे—एक बार फिर जीत हमारे कदम चूमे—(**जोश में आकर**) पूरे ज़ोर से हमला करो—सारी दुनिया हमारी है—बढ़ो—बढ़ो—बढ़ो···

मारशान : आलीजाह—देखो मोन्थोलोन, कहीं गिर न जाएँ। कहीं चोट न आ जाए।

मोन्थोलोन : ज़ोर से पकड़कर रखो—ज़ोर से मारशान !

नेपोलियन : (थककर) बढ़ो—बढ़ो—ब्रिगेड नम्बर 36—बढ़ो—बढ़ो। (**आवाज़ कमज़ोर हो जाती है।**)

मोन्थोलोन : बस, अब छोड़ दो—आराम करने दो।

[कुछ लमहे खामोशी छायी रहती है।]

नेपोलियन :(**बड़े दयनीय लहजे में**) माँ—माँ—तुम कहाँ हो ?

[जब शाहंशाह की हालत नाजुक बताई गई तो सेंट हेलेना के गवर्नर हडसन को बहुत चिन्ता हुई। वह नहीं चाहता था कि उसका शाही कैदी मर जाए। वह नेपोलियन की जान बचाने के लिए बहुत कुछ कर गुज़रने के लिए तैयार था। चुनाँचे फ़ौरन उसने चार डाक्टरों की एक मजलिस बनायी ताकि वे रोगी की जान बचाएँ।]

आरण्ट : मेरी राय है कि उन्हें थोड़ा दूध दिया जाए। आपका क्या खयाल है डाक्टर बरट्रीन ?

बरट्रीन : डाक्टर अन्तोमारशे से पूछिए।

अन्तोमारशे : जहाँ तक मुझे पता है शाहंशाह कभी दूध नहीं पी सकते। ऐसी हालतमें···

आरण्ट : लेकिन हज़रत, दूध तो पोषण से भरपूर है। क्यों न परीक्षण के तौर पर पिलाकर देखें !

अन्तोमारशे : मैं इसके खिलाफ़ हूँ। शिकमी रोग में दूध की मनाही है, क्योंकि यह जल्द हज़म नहीं होता।

शार्ट : यह वाद-विवाद बेकार है। जब तक रोगी का परीक्षण न किया जाए, कोई राय नहीं दी जा सकती।

बरट्रीन : मैं अन्दर जाकर शाहंशाह से दरयाफ़्त करता हूँ कि शायद वे आप लोगों को परीक्षण की इजाज़त दे दें।

[बरट्रीन अन्दर बादशाह के पास जाता है।]

बरट्रीन : आलीजाह ! डाक्टर हाज़िर हुए हैं—आपसे मुलाकात करना चाहते हैं।

नेपोलियन : डाक्टर—मुलाकात—(**सतर्क होकर**) तो हमारा आखिरी वक्त करीब आ गया ?

बरट्रीन : नहीं आलीजाह! हुज़ूर की हालत नाज़ुक है—मगर खतरनाक नहीं। हम सिर्फ़ सावधानी के तौर पर कुछ करना चाहते हैं।

नेपोलियन : नहीं, हम उनसे मुलाकात नहीं करेंगे।

बरट्रीन : आलीजाह !

नेपोलियन : (**धमकी-भरे स्वर में**) बरट्रीन !

बरट्रीन : बहुत अच्छा आलीजाह।

[बरट्रीन वापस जाता है।]

मोन्थोलोन : क्या खबर लाए ?

बरट्रीन : शाहंशाह ने मुलाकात से इन्कार कर दिया है।

आरण्ट : उनकी हालत बहुत नाज़ुक है साहेबान ! बेहद खतरनाक है। लेकिन हमें निराश नहीं होना चाहिए। कोई और तदबीर सोचनी चाहिए।

अन्तोमारशे : मेरा खयाल है कि शाहंशाह के मेदे में रसौली नहीं है, सिर्फ़ सूजन है। मर्ज़ का असली केन्द्र जिगर है।

बरट्रीन : साहेबान, आपसे मेरी दरख्वास्त है कि जल्दी किसी नतीजे पर पहुँचकर इलाज शुरू कर दिया जाए। एक-एक लमहा इस वक्त बहुत मूल्यवान है।

आरण्ट : लेकिन मुसीबत यह है कि वह किसी को अपने पास आने की इजाज़त नहीं देते। जब रोगी अपने डाक्टर को पास तक न फटकने दे तो इलाज क्या खाक होगा ?

अन्तोमारशे : मेरी हिदायतों पर उन्होंने कभी अमल नहीं किया।

मचल : साहेबान, मेरी राय है कि तगड़ा जुलाब दिया जाए। उससे ज़रूर लाभ होगा।

आरण्ट : आपका खयाल सही है डाक्टर मचल। दस ग्रेन केलोमल ठीक रहेगा।

अन्तोमारशे : लेकिन मेरा खयाल है साहेबान कि पारा किसी शक्ल में भी शाहंशाह को माफ़िक नहीं आएगा।

मोन्थोलोन : लेकिन सवाल फिर वही पैदा होता है कि उन्हें दवा कैसे पिलाई जाए ? सिर्फ़ एक ही रास्ता है कि मारशान पानी में दवा मिलाकर उन्हें पिला दें। (**मारशान से**) आलीजाह को बचाने के लिए अब यह आखिरी तरीका है।

चौथे दिन

नेपोलियन : मोन्थोलोन—तुम हमारी पीठ पर यूडिक्लोन की मालिश करना चाहते हो, तुम्हें इजाज़त है। (**व्यंग्यात्मक स्वर में**) साइंस ने इलाज वगैरा के तरीकों में कितनी तरक्की पैदा कर दी है। तुम कहते हो इससे गुर्दों को ताकत पहुंचेगी। लो, पहुंचाओ ताकत गुर्दों को मारशान—

मारशान : आलीजाह !

नेपोलियन : पीने के लिए पानी—

मारशान : (पानी उँडेलता है) हाज़िर है आलीजाह !

नेपोलियन : (पीकर) कितना अच्छा है—कितना अच्छा है—शायद यह हमारा आखिरी गिलास हो—मोन्थोलोन, हम बस अब कुछ दिनों के मेहमान हैं—सेंट हेलेना का मेहमान बहुत जल्द मौत का मेहमान होगा—तुम लोगों ने इस देश-निकाले में हमारा साथ दिया है। हम तुम्हारे आभारी हैं कि हमारी याद तुम्हारे दिलों में देर तक कायम रहे। देखो, कोई ऐसी बात न करना कि जिससे हमारी याद को ठेस पहुँचे।

[मोन्थोलोन और मारशान की आँखों में आँसू आ जाते हैं।]

नेपोलियन : बुज़दिल न बनो—बुज़दिल न बनो—

पाँचवें दिन

[सेंट हेलेना में ज़बरदस्त तूफ़ान आ रहा था।]

नेपोलियन : सेंट हेलेना में तूफ़ान आ रहा है। नेपोलियन खुद एक तूफ़ान था जो सारे यूरोप पर छाया रहा। (**सन्निपात की कैफ़ियत पकड़ती जाती है**) यूरोप में शराब-पसन्द हुक्मरानों का दबदबा मिट चुका है। एक नया ज़माना करवट बदल रहा है। नेपोलियन की ताकत के सामने सिर झुका लो—वह इलाही का नूर है। शक्ति और हुकूमत की बुनियाद है। ज़िन्दाबाद ! ज़िन्दाबाद नेपोलियन बोनापार्ट ! इन्कलाब ज़िन्दाबाद ! ब्रनादत, तुम्हारे कारण पूरा दिन नष्ट हो गया। तुम्हें जानना चाहिए कि सारी दुनिया की किस्मत सिर्फ़ एक दिन से जुड़ी हुई है। तेलीरिन, रूस के साथ सन्धि का मसौदा तैयार करो। क्या कहा—इतनी जल्दी क्या है तेलीरिन। मुझे सिर्फ़ एक रूस से नहीं बल्कि और बहुत-से मुल्कों से निपटना है।

मोन्थोलोन : (दबे लहजे में) मुझे आसार अच्छे नज़र नहीं आते मारशान।

[मारशान आह भरता है।]

नेपोलियन : जोज़फाइन—जोज़ेफाइन—मेरे पास आओ। जब से तुम अलग हुई हो मैं शोकाकुल रहता हूँ। मेरी याद में तुम्हारे बोसे, तुम्हारे आँसू चमक रहे हैं। सिर्फ़ तुम्हारी खातिर मैंने इटली पर विजय प्राप्त की। सिर्फ़ तुम्हारी खातिर मैंने दुश्मनों के इक्कीस झण्डे छीने। जोज़ेफाइन—जोज़ेफाइन—तुम बेवफ़ा निकलीं। तुमने अपने आशिक से दगा किया। तुम्हारी बेवफ़ाई ने कई बार यूरोप के महान विजेता

की आँखें अश्रुपूर्ण की हैं। आह, मेरी वेल्यूस्का, तुम औरत नहीं फ़रिश्ता हो। तुम्हारी वफ़ा ने हमें बहुत प्रभावित किया है। खुदा की कसम, हम उस औरत को प्रियतम समझते हैं जो हमारे तेज से नहीं, हमसे मुहब्बत करती थी।

[अन्तराल]

नेपोलियन : तमाम ताकतें इकट्ठी हो जाएं—मैदान हमारे ही हाथ रहेगा। फ्रांस का झण्डा हमेशा ऊंचा रहेगा। आस्ट्रिया की फ़ौजों को हमने शिकस्त दी। सीरिया और मिस्र का मैदान हमारी बहादुर फ़ौजों ने जीता। इटली को हमने हराया। उठो—उठो—और अपने वतन पर कुर्बान हो जाओ। अपने वतन की रक्षा करो। हिम्मत न हारो। फ्रांस को बचाओ। किस्मत—किस्मत कुछ नहीं, महज़ ढकोसला है। सिर्फ़ मौका दुनिया पर हुकूमत करता है। मौके से फ़ायदा उठाओ। दुनिया तुम्हारी है। सीधी लकीर हमेशा टेढ़ी लकीर से छोटी होती है। नेपोलियन सीधी लकीर है।

[तूफ़ान तेज़ी से आता है। उसकी तेज़ी बढ़ जाती है।]

मोन्थोलोन : मारशान, मदद—मदद—आलीजाह !

नेपोलियन : सिपाहियो, आगे बढ़ो—फ्रांस—फ्रांसिसी फ़ौज—सेनापति—

[आहिस्ता-आहिस्ता नेपोलियन की आवाज़ डूब जाती है। तूफ़ान का ज़ोर हल्का होकर गायब हो जाता है। मरते वक्त उसकी ज़बान पर अपने प्यारे वतन का नाम था। उसे फ्रांस से मुहब्बत थी। उसके हर लमहे से प्यार था—उसने फ्रांस की मुर्दा कौम में ज़िन्दगी की रूह फूंकी। उसको ठोस बनाया। यूरोप में उसके हर कदम से आँधियाँ उठीं। तूफ़ान आए। उसके भाग्य के सूरज से राजनीति की आँखें चुँधिया गयीं। वह यूरोप में एक अर्से तक दहशत बनकर छाया रहा।

4 मई, 1821 को नेपोलियन बोनापार्ट महान् विजेता छः बजने में इक्कीस मिनट पर इस संसार से विदा हो जाता है।]

बाबर की मौत

पात्र

बाबर

मीरमुंशी

नौकर

बरलास

नाज़िम

माहम (गुलबदन)

हुमायूं

[स्टेज पर प्रतिदिन ड्रामे खेले जाते हैं, मगर उनमें से कितने कला की दृष्टि से पूर्ण होते हैं ? वास्तव में त्रुटि स्टेज का एक कानून है। अगर किसी ड्रामे का पहला एक्ट शानदार है तो उसके अन्तिम एक्ट पहले एक्ट की शान के कदमों में दम तोड़ते नज़र आएँगे। अगर किसी ड्रामे का अन्त अच्छा है तो आरम्भ बुरा है।

'क्लाइमेक्स' है तो 'सस्पेंस' नहीं होता। अगर सस्पेंस है तो क्लाइमेक्स नज़र नहीं आयेगा। ऐसे पात्र नज़र आएँगे जो बड़ी-बड़ी मुश्किलें आसानी के साथ तय करेंगे मगर छोटी-छोटी मुश्किलों का सामना करते वक्त उनकी पेशानी पसीने से भर जाएगी। दलीलें तितलियों की मानिंद उन ड्रामों में उड़ती नज़र आएँगी।

नाटककारों में शायद सबसे ज़्यादा कमी उन ड्रामों में पायी जाती है जो तारीख ने लिखे हैं—तारीख ड्रामे के तमाम पहलुओं पर बहुत कम गौर करती है। अपने ड्रामों के अंकों पर भी इतिहास अलग-अलग नहीं सोचता। लेकिन अगर उसकी कलम से कोई अच्छा ड्रामा निकल जाए तो सदियों तक उसकी धूम मची रहेगी।

यह ड्रामा जो अब आप पढ़ेंगे, इतिहास का एक पूर्ण ड्रामा है—दृश्य हिन्दुस्तान का है—प्लाट है दुनिया को फ़तह करने का खयाल। हीरो है बाबर शेर फ़रगाना—एक बहुत बड़ी सल्तनत का मालिक—मुगलिया खानदान का पहला बादशाह।]

[परदा उठता है।]

बाबर : (खत लिखवाता है) ख्वाज़ा केलान को लिखो, अगर माबदौलत की हिदायत पर अमल न किया गया, अगर हमारे हुक्म का मुनासिब नतीजा न निकला, अगर खज़ाने की हालत ठीक न हुई, अगर किसानों की तदहाली दूर न हुई तो उसकी सारी ज़िम्मेदारी उसके सिर होगी। काबुल में अगर बदहाली फैली हुई है तो उसकी सबसे बड़ी वजह यह है कि पाँच-छः आदमी एक ही वक्त हुकूमत करना चाहते हैं।

मीरमुंशी : लिख लिया जहाँपनाह।

बाबर : उसको यह भी लिखो कि वह शहर को बेहतर बनाने की कोशिश करे। किले की चारदीवारी में ही महल की इमारत समा जानी चाहिए—जो राजमिस्तरी उस महल को बना रहा है वह आगरे से हमारे भेजे हुए आदमी के साथ महल के नक्शों के बारे में विस्तार से बातचीत करे और उसकी राय ले—शाही बागों में पानी का इन्तज़ाम और अच्छे पैमाने पर होना चाहिए···रोशों में एकरूपता हो··· क्यारियों में फूल ऐसे लगाए जाएँ, जिनमें खुशबू हो।

मीरमुंशी : लिख लिया ज़िल्ले-इलाही !

बाबर : (टहलता है) आह ! काबुल—हमें उस सरज़मीं से कितना प्यार है। काबुल के सरदे—उनकी मिठास—उनका रस—मीरमुंशी !

मीरमुंशी : इरशाद आलीजाह !

बाबर : ख्वाज़ा केलान हमारा दोस्त है—उसको कभी-कभी हम अपने दिल की बातें भी सुनाया करते हैं—उसको लिखो, बाबर बादशाह की रूह अपने वतन को देखने के लिए बेताब है। यह हिन्दुस्तान का काम हम करीब-करीब खत्म कर चुके हैं। जब पूरी तरह खत्म हो जाएगा तो हम फ़ौरन ही अपने प्यारे वतन काबुल का रुख करेंगे। आह ! हमें काबुल से कितनी मुहब्बत है—काबुल—काबुल—(टहलता है और फिर आह भरता है) काबुल—पिछले दिनों हमें सरदे पेश किए गए थे—खुदा गवाह है, ये सरदे देखकर हमारी आँखों में आँसू भर आए। तबीयत उदास हो गयी। यह भी सही है कि जब से हमने शराब छोड़ी है, हमारी तबीयत अकसर उदास रहती है। लेकिन खुदा की मेहरबानी है कि उसकी तलब दिन-ब-दिन कम होती जा रही है। ख्वाज़ा केलान से कहो कि हमारे नक्श-ए-कदम पर चले। शराब छोड़ दे। इस हराम चीज़ को हाथ तक न लगाए—(टहलता है) लिख चुके ?

मीरमुंशी : हाँ आलीजाह !

बाबर : तो आखिर में उसको ताकीदन लिख दो कि वह हमारे हरम की तमाम औरतों को और हमारी बहनों को सुरक्षापूर्वक यहाँ भिजवा दे। वे रिआया के हालात से बहुत ज़्यादा दिलचस्पी लेना चाहती हैं जो कि हम औरतों के लिए गैरज़रूरी समझते हैं।

[यह खत लिखवाने के फ़ौरन बाद ज़हीरुद्दीन बाबर बादशाह को मैदान-ए-जंग में

जाना पड़ा। गंगा के उस पार की सल्तनत में जो कुछ हो रहा था, उसके बारे में बाबर अच्छी तरह जानकारी रखता था। धौलपुर में एक दिन संग-ए-मरमर के एक अधूरे महल का निरीक्षण कर रहा था कि दूत आया। उसने शाहंशाह को खबर दी कि महमूद लोधी ने पूर्व की तरफ़ से हमला कर दिया है और तमाम अफ़गान उसकी मदद कर रहे हैं।

बाबर ने एकदम फ़ैसला किया और अपने तमाम पुराने इरादे बदलकर उस तरफ़ का रुख किया जहाँ फ़तना खड़ा किया जा रहा था—2 फरवरी, सन् 1529 को वह अपनी कमज़ोर सेहत के बावजूद महमूद लोधी के कान ऐंठने के लिए चल पड़ा—कभी घोड़े पर, कभी किश्ती में। पानी और खुश्की का फ़ासला तय किया और अपने जरनैल असकरी से जा मिला जो दुश्मन से मुकाबले में पीछे हटता चला आ रहा था। लेकिन बाबर का भय इतना था कि वह इलाहाबाद तक भी न पहुंचा था कि अफ़गानों के हौसले पस्त हो गए और वे बनारस से उठ भागे। महमूद लोधी बंगालियों की शरण में चला गया। बाबर के प्रतिहिंसा के इरादों और उनको पूरा करने के बीच दो दरिया बह रहे थे—गंगा और घाघरा—ज़ाहिर है कि बाबर की फ़ौजों के लिए दुश्मन पर हमला करना बहुत कठिन था। मगर एक बार फिर तैमूर और चंगेज़खाँ का लहू बाबर की रगों में अग्नि-कणों की तरह दौड़ा और महमूद लोधी अपने बंगाली हिमायतियों समेत बाबर की असकरी ताकतों के सामने झक गया।

इस असम्भव विजय को सम्भव बनाकर थका-हारा बाबर वापस आगरा आया। 24 जून, बृहस्पतिवार को सुबह नौ बजे वह अपनी राजधानी में दाखिल हुआ—बारिशों में 50 मील रोज़ाना का सफ़र तय करके।]

नौकर : जहाँपनाह—रोज़ा-ए-हश्त-बहिश्त के नाज़िम आला हुज़ूर की खिदमत में अंगूर और सरदे पेश करना चाहते हैं।

बाबर : सरदे—अंगूर—(**एकदम चौंककर**) तो फल ले आए! वे बेलें जो हमने खुद अपने हाथों से अपने बाग में उगायी थीं—कहाँ हैं रोज़ा-ए-हश्त-बहिश्त के नाज़िम आला? उनको हमारे हुज़ूर में पेश करो।

नौकर : बहुत अच्छा आलीजाह!

बाबर : (**खुश होकर**) हिन्दुस्तानी ज़मीन के पेट से पहली बार काबुल के दो फल पैदा हो रहे हैं। (**फ़ौरन ही यह सोचकर कि उसने अच्छा और दो-मानी वाक्य कहा है**) हिन्दुस्तान की ज़मीन के पेट से पहली बार काबुल के दो फल पैदा हो रहे हैं। शायद और भी हों—हिन्दुस्तान का वह तमाम विस्तार, जो कभी लोधी अपने दामन में लिए फिरता था, आज बाबर के नक्श-ए-कदम उस पर फैले हुए हैं। हिमालय से ग्वालियर और पन्देरी तक, जेहोन से बंगाल तक उसकी सल्तनत एक विशाल चाँदनी की तरह फैली हुई है, लेकिन हमारा मन अभी तक सन्तुष्ट नहीं हुआ। बरलास!

बरलास : आलीजाह !

बाबर : बरलास, तुम यहाँ कितनी देर से खड़े हो ?

बरलास : जब से आलीजाह मन की किताब के पन्ने उलटने में लगे हैं।

बाबर : तुम किस नतीजे पर पहुँचे ?

बरलास : हिन्दुस्तान के शाहंशाह का दिल इस सल्तनत से कहीं ज्यादा विशाल है।

बाबर : बरलास, तुम्हारी इस तारीफ़ के फ़िकरे ने हमारी बात का जवाब नहीं दिया। तुम हमारे लायक वज़ीर और एक अच्छे दोस्त हो।···हमें यह बताओ कि इतनी विजय प्राप्त करने पर भी हमारे दिल को चैन क्यों नहीं मिल पाया ? हम उदास क्यों रहते हैं ?

बरलास : तैमूर का खून जब हर वक्त जहाँपनाह के कानों में गूँजता रहे तो उदास होना ज़रूरी है। समरकन्द का सुनहरा खयाल···

बाबर : बरलास, तुमने हमारी दुखती रग पर हाथ रख दिया। आह ! समरकन्द—हिन्दुस्तान ! बाबर बादशाह की अनथक कोशिशों का शानदार इनाम है—लेकिन हमारी कितनी ख्वाहिश है कि वतन की ऊँची-ऊँची घाटियाँ एक बार फिर हमारे अधीन हों—समरकन्द हमारी जवानी का सुनहरा सपना है।

नौकर : जहाँपनाह···रोज़ा-ए-हश्त-बहिश्त के नाज़िम आला हाज़िर हैं।

बाबर : (**खुश होकर**) माबदौलत उसके आने से खुश हुए बरलास ! शाहंशाह बाबर की एक कमज़ोरी आज तुमको मालूम हो जाएगी। काबुल के सरदों पर वह बुरी तरह मरता है। (**हँसता है।**)

नाज़िम : गुलाम कोर्निश बजा लाता है जहाँपनाह।

बाबर : रोज़ा-ए-हश्त-बहिश्त का नाज़िम आला मुकर्रर करके माबदौलत ने गलत चुनाव नहीं किया था—बरलास—काबुल के सरदे और अंगूर आगरे की मिट्टी भी पाल सकती है। हमारे मुँह में पानी भर आया—सरदे का एक टुकड़ा नमूने के तौर पर हम अभी चखना पसन्द करेंगे और अंगूर के कुछ दाने भी।

नाज़िम . अभी हाज़िर करता हूँ जहाँपनाह।

बाबर : बरलास, हमने काबुल पैगाम भेजा था कि हमारी बहन खातून ज़ादा और हमारी चहेती बेगम माहम काबुल से फ़ौरन यहाँ चली आएँ—वहाँ से कोई इत्तिला आयी ?

बरलास : अभी तक कोई इत्तिला नहीं आई आलीजाह—बारिशें बहुत ज़ोरों पर हो रही हैं—इसलिए पैगाम पहुँचाने में बड़ी कठिनाइयाँ पैदा हो गयी हैं। यूँ भी आगरे से काबुल पहुँचने में पाँच महीने लग जाते हैं।

बाबर : हमने तय किया था कि जब माहम के आने की खबर हमें मिलेगी तो हम आगरे से साठ मील दूर अलीगढ़ में उसका स्वागत करने के लिए जाएँगे।

[27 जून, सन् 1529 को मूसलाधार बारिश हो रही थी। मनों पानी बरस रहा था।]

नौकर : जहाँपनाह, काबुल से दूत आया है।

बाबर : (चौंककर) काबुल से···उसे फ़ौरन हमारी खिदमत में हाज़िर करो।

नौकर : बहुत अच्छा जहाँपनाह।

बाबर : ठहरो। हम खुद उसे मिलते हैं—वह ज़रूर हमारी चहेती बेगम माहम की खबर लाया है।

नौकर : जी हां आलीजाह—वह हुज़ूर की कदमबोसी के लिए इतनी बेताब थीं कि अलीगढ़ में हुज़ूर का इन्तज़ार किए बगैर तशरीफ़ ले आयी हैं। उनकी सवारी यहाँ से सिर्फ़ चन्द मील दूर होगी।

बाबर : (बेकरार होकर) उसका मुलाकात का शौक हमारे देखने के शौक से ज़्यादा तेज़ साबित हुआ—हमें मालूम न था कि वह इतनी जल्दी पहुँच जाएगी। अफ़सोस कि हम वायदे के मुताबिक अलीगढ़ जाकर उसका स्वागत नहीं कर सके—हमारी नन्ही गुलबदन भी उसके साथ होगी—नन्ही गुलो—देखो, हमारी सवारी तैयार करो। नहीं—हम इतनी देर नहीं कर सकेंगे। उफ़—एक ज़माना हो गया है हमें माहम को देखे हुए—लेकिन अब—लेकिन अब तो सिर्फ़ कुछ घड़ियों का सवाल है—हम पैदल जाएँगे।

नौकर : जहाँपनाह ! बाहर बारिश हो रही है—पानी की नहरें बह रही हैं।

बाबर : कोई हर्ज नहीं— हमारा फ़रगल—हमारा फ़रगल हाज़िर करो।

नौकर : जहाँपनाह ! बारिश मामूली नहीं—तूफ़ान है।

बाबर : (हँसता है) तुम्हारा बादशाह बूढ़ा हो गया है, लेकिन कमज़ोर नहीं हुआ—अभी पिछले दिनों उसने गंगा इन्हीं हाथों से पार की है—तूफ़ान ? हमने अपनी ज़िन्दगी में कई तूफ़ान देखे हैं—बारिश और कीचड़—(हँसता है) माहम हमारा रास्ता देख रही होगी—हम जाते हैं।

[बारिश के तूफ़ान में बाहर कीचड़ में अटी हुई सड़क पर दौड़ता चला गया—अन्ततः वह अपनी महबूबा के पास पहुँच गया जो घोड़े पर सवार उस तूफ़ान में अपने मालिक से मिलने आ रही थी।]

माहम : (हैरान होकर) जहाँपनाह—आप—मेरी आँखें मुझे धोखा तो नहीं दे रहीं ?

बाबर : ओह—माहम—तुमसे मिलकर हमें कितनी खुशी हुई। यह क्या कर रही हो—बैठी रहो। घोड़े पर से उतरने की तकलीफ़ न करो।

माहम : जहाँपनाह ! मैं आदाब कैसे बजा लाऊँ !

बाबर : खुदा के लिए ऐसे मौके पर तकल्लुफ़ न बरतो—तुम्हारा बादशाह इन्सान भी है और···मुहब्बत तो हर तकल्लुफ़ से परे होती है।

माहम : (खुश होकर) जहाँपनाह ! मैं कैसे—मैं कैसे—

बाबर : छोड़ो इन बातों को—यह बताओ, रास्ते में तुम्हें कोई तकलीफ़ तो नहीं हुई—सफ़र कैसे कटा—आह, माहम, तुम्हें देखने के लिए हम कितने बेताब थे—खुदा के लिए घोड़े पर बैठी रहो—बाग हमें दे दो—यह झिझक कैसी ?

माहम : (झिझक के साथ) जहाँपनाह—

बाबर : (हँसकर) इतनी बड़ी सल्तनत की बागडोर हमने थाम रखी है। क्या एक घोड़े की बाग नहीं थाम सकते ? (हँसता है) और फिर इस घोड़े पर तो हमारी महबूबा सवार है।

माहम : जहाँपनाह ! मैं इस इज्ज़त-अफ़जाई का शुक्रिया कैसे अदा करूँ ?

बाबर : बाग हमारे हाथ में दो—हम तुम्हें बताएँगे।

[बाबर की सेहत दिन-ब-दिन गिरने लगी। सन् 1530 में पानीपत की लड़ाई के बाद उसको ज़हर देने की नाकाम कोशिश की गयी थी। यह ज़हर उसको मार न सका मगर उसका असर बाबर के जिस्म में आखिरी वक्त तक मौजूद रहा। कहते हैं, सुल्तान इब्राहीम की मौत के बाद उसकी माँ ने शाही महल के बावर्ची को ज़हरीला चूर्ण दिया और कहा कि उसे बाबर के भोजन पर छिड़क दे। भोजन के बाद जैसा कि बताया जाता है, बाबर बहुत दिन तक बीमार रहा।

शेर फ़रगाना अब थककर चूर-चूर हो गया था। वह शक्ति जिसने हिन्दुस्तान पर उसका सिक्का बिठा दिया था, अब उसमें नहीं रही थी।]

बाबर : माहम—जहाँपनाह न कहो—यह जहाँ हमारी पनाह में नहीं। हम खुद इसकी पनाह के इच्छुक हैं—अब जी चाहता है कि ऐसी जगह जाकर रहें जहाँ अमन, चैन और शान्ति हो—शाहंशाही दर्द-ए-सिर है—खुदा की कसम, दर्द-ए-सिर है—हम अब दरदेशों की ज़िन्दगी बिताना चाहते हैं—तमाम हंगामों से मुक्त होकर हम किसी ऐसी जगह की तलाश में हैं जहाँ हम अपने कन्धों पर से शाहंशाहयत का बोझ उतारकर एक तरफ़ रख दें और आराम कर सकें। (**स्वर में अधिक गम्भीरता आ जाती है**) माहम, जी चाहता है 'ज़राफ़शाँ' चला जाऊँ और वहाँ के बागों में एक छोटा-सा झोंपड़ा बनवा लूं—अब यह महल काटने को दौड़ता है, जहाँ कदम-कदम पर कोर्निश बजाई जाती है—जहाँ हज़ारों नौकरों का जमघट लगा रहता है—ज़राफ़शाँ के बाग हों—एक छोटा-सा झोंपड़ा हो और सिर्फ़ एक नौकर हो।

माहम : जहाँपनाह को अगर यही कुछ करना था तो मुझे यहाँ बुलवाने की क्या ज़रूरत थी ?

बाबर : ओह ! तुम नहीं समझ सकतीं माहम, तुम औरत हो—तुम्हारी मुहब्बत बाबर से है। लेकिन बाबर बादशाह से ज्यादा है। यह औरत की कमज़ोरी है—बाबर बादशाह को अपनी प्रतिष्ठा और अपने जलाल का इतना खुमार नहीं होगा जितना तुम्हें। गुलबदन, यह तुम रो क्यों रही हो ?

गुलबदन : मैं—मैं—मैं झोंपड़े में नहीं रहूँगी।

बाबर : (हँसता है) गुलू—तू झोंपड़े में नहीं रहेगी ? अच्छा बता, कहाँ रहेगी ?

गुलबदन : (**सुबकियों के साथ**) इस महल में—इस महल में जहाँपनाह !

बाबर : यह महल तुम्हें पसन्द आ गया ?

गुलबदन : (**सुबकियों के साथ**) हाँ।

बाबर : (हँसता है) अच्छा, तो हमने सिर्फ़ तुम्हारे लिए अपना इरादा छोड़ दिया। लो, अब मुस्करा दो।

[बाबर असल में सल्तनत के काम से अलग हो जाना चाहता था, मगर वह बहुत होशियार, स्वाभिमानी और सच्चा सिपाही था। वह उस वक्त तक तख्त छोड़ने के लिए तैयार नहीं था जब तक कि उसका बदल न मिल जाए।

बाबर की जगह कौन ले सकता था—उसका बेटा हुमायूं बहादुर था और बाबर को उससे मुहब्बत भी थी। मगर वह लापरवाह और गैर-ज़िम्मेदार था। बेचैन तबीयत का होने की वजह से वह इतनी बड़ी सल्तनत का इन्तज़ाम करने के काबिल नहीं था। इसके अलावा उसने ताज़ा-ताज़ा समरकंद के मामले में अपने को नकारा साबित किया था—बाबर का हुक्म था कि वह फ़ौरन बदखशाँ और उज़बेकों को दबा दे जो दिन-ब-दिन ताकत पकड़ रहे थे।

हुमायूं ने उसके हुक्म के मुताबिक समरकंद पर चढ़ाई और हसार पर कब्ज़ा भी कर लिया मगर जब उसको अपनी माँ का यह पैगाम मिला कि बाबर हिंदुस्तान का तख्त अपने दादा मुहम्मद मेहदी ख्वाज़ा को देने वाला है तो वह झटपट बदखशाँ से काबुल पहुँचा और अपने छोटे भाई हन्दवाल को, जिसकी उम्र सिर्फ़ दस वर्ष की थी, इस बात पर तैयार कर लिया कि वह उसकी जगह चला जाए। जल्दी-जल्दी यह काम करने के बाद हुमायूं अपने बाप की इजाज़त लिए बगैर आगरे चला आया। बाबर को जब उसके इस गलत काम का पता लगा तो उसे बहुत तैश आया। चुनाँचे सज़ा के तौर पर उसने हुमायूं को आगरे से सौ मील दूर सम्भल में नज़रबन्द कर दिया।

माहम ने अपने बेटे को माफ़ कराने की बहुत कोशिश की—मगर शाहंशाह बाबर के नज़दीक हुमायूं का वहाँ से चला आना बहुत बड़ी गलती थी क्योंकि काबुल उसकी गैरमौजूदगी में शासक के बिना रह गया था।

बाबर का डर सही साबित हुआ। हुमायं की गैरमौजूदगी में सईद खाँ नामक एक मंगोल सरदार ने बदखशाँ में गदर करने की ठान ली। मगर बाबर की दहशत एक बार फिर काम आयी। जब सईद खाँ को मालूम हुआ कि शेर फ़रगाना खुद उसको परास्त करने के लिए आ रहा है तो वह फ़ौरन शरण माँगने लगा।

इस सिलसिले में बाबर 4 मार्च, सन् 1530 तक लाहौर में रहा। वहाँ से जब वह दिल्ली में दो महीने शिकार के लिए आया तो उसकी सेहत और ज्यादा खराब हो गयी। चुनाँचे वह वापस आगरा चला आया।]

माहम : जहाँपनाह ! आपको मालूम है मीर अन्सारुद्दीन छः महीने से सम्भल में नज़र-बन्द है और···

बाबर : उसने जो हिमाकत की थी···

माहम : जहाँपनाह, वह सख्त बीमार है—नज़रबंदी की हालत में उसकी बीमारी दिन-ब-दिन बढ़ती चली जा रही है—और—और—अब मैं जहाँपनाह से क्या

अर्ज़ करूँ—मैं उसकी माँ हूँ ।

बाबर : और—और हम उसके बाप हैं ।

माहम : मेरा लड़का एक सिर्फ़ हुमायूं है—आपकी और भी औलाद हैं—और फिर जहाँपनाह की इतनी बड़ी रिआया है। वह दुःख जो मुझे हो सकता है, हिन्दुस्तान के बादशाह को नहीं हो सकता ।

बाबर : बाबर हिन्दुस्तान का बादशाह कम है, हुमायूं का बाप यादा है। तुम्हारी ममता का मुकाबला हम अपने प्यार से नहीं करना चाहते। मगर बात यह है कि हमारी सख्ती में हुमायूं का मुस्तकबिल छिपा है—हम उसका सुधार करना चाहते हैं—वह हद दर्जे का बेपरवाह और गैरज़िम्मेदार है। ऐसी तबीयत लेकर वह हिन्दुस्तान का तख्त नहीं सँभाल सकता। उसको मेहनत करनी चाहिए।

माहम : जहाँपनाह—वह छः महीने से नज़रबन्दी की परेशानी बरदाश्त कर रहा है। इतनी सज़ा क्या उसके लिए काफ़ी नहीं ? वह यकीनन शर्मिन्दा होगा—जहाँपनाह ! मैं इल्तज़ा करती हूँ कि उसे माफ़ कर दिया जाए। वह बीमार है। खतरनाक तौर पर बीमार है।

बाबर : खुदा उसको सेहत दे ।

माहम : तो उसे आगरा से बुलवा लीजिए। कनीज़ से जहाँपनाह को जो मुहब्बत है उसमें हुमायूं के प्यार को भी शामिल कर लीजिए ।

[अतः शाहज़ादा हुमायूं को आगरे से एक पालकी में लाया गया, क्योंकि वह सख्त बीमार था। बहुत इलाज हुआ मगर कोई फ़ायदा न हुआ—आखिर एक दिन बाबर उसके कमरे में दाखिल हुआ, जहाँ उसकी चहेती बेगम माहम का लड़का रोगशैया पर पड़ा था।]

बाबर : हुमायूं—हुमायूं बेटा—

[हुमायूं बिस्तर पर खामोश पड़ा रहता है ।]

बाबर : तुम्हारी माँ ने मुझे ताना दिया था कि मैं अपने निज के सिवाय और किसी से मुहब्बत नहीं करता—अपने निज के सिवाय शाहंशाह बाबर को और कोई प्यारा नहीं—तो सुनो ! मेरी दुआ सुनो ! (आवाज़ में दुआ माँगने की विनती पैदा हो जाती है) अय खुदा, मैं सच्चे दिल से दुआ करता हूँ कि मेरे बेटे हुमायूं की बीमारी मुझे लग जाए और वह तन्दुरुस्त हो जाए और उसके बदले मैं बीमार हो जाऊँ—अय खुदा, मेरी दुआ कबूल कर और मेरी चहेती बेगम के जिगर के टुकड़े को हर वक्त हर आफ़त से महफ़ूज़ रख ।

[खुदा ने बाबर की दुआ कबूल की—हुमायूं स्वस्थ हो गया और उसकी जगह बाबर खतरनाक रूप से बीमार हो गया ।

बाबर मृत्युशैया पर पड़ा था। उसकी हड्डियाँ उन तमाम जंगों के बोझ के नीचे कड़कड़ा रही थीं जो वह अपनी ज़िन्दगी में लड़ चुका था। आँखों में उदासी

थी। अचानक लाल रेशमी चादर में सरसराहट पैदा हुई जो शाहंशाह ने ओढ़ रखी थी। आँखें पानी से भर आयीं। बिस्तर के पास किसी को खड़ा देखकर बाबर के होंठ खुले।]

बाबर : (कमज़ोर आवाज़ में) तुम यहाँ कब से खड़े हो ?

हुमायूं : जब से जहाँपनाह ने मेरी हाज़िरी का हुक्म दिया था—एक घण्टे से—

बाबर : हमें याद नहीं कि हमने तुम्हें बुलाया था।

हुमायूं : जहाँपनाह क्या मुझसे डर गए थे ?

[कुछ लमहों के लिए बाबर बिलकुल खामोश रहता है, फिर एक लम्बा साँस लेता है।]

बाबर : अगर खुदा ने मेरे बाद तुम्हें तख्त बख्शा तो अपने भाइयों को मार न देना। उनकी देखभाल करना। बस, अब जाओ हुमायूं—जाओ मेरे बेटे, जाओ।

[26 दिसम्बर, 1530 को शाहंशाह बाबर अपनी अन्तिम सभा बुलाता है और हुमायूं के हक में तख्त से अपना हाथ खींच लेता है।

शेर फ़रगाना बिस्तर पर आखिरी करवट बदलता है और खिड़की में से आगरे की तरफ़ देखता है। जहाँ तक नज़र जाती है बाबर को अपने लगाए हुए बागों की हरियाली दिखाई देती है—उन पेड़ों के पीछे मस्जिद का मीनार आसमान की तरफ़ सिर उठाये नज़र आता है।]

बाबर : (एक लम्बा सांस लेता है) आगरा—आगरा—

[थोड़ी देर खामोशी छायी रहती है—फिर अज़ान की आवाज़ आती है—यह आवाज़ कभी उभरती है और कभी डूबती है।]

बाबर : (आखिरी बार जब अज़ान देने वाला अल्लाह-हो-अकबर कहता है तो बाबर भी उसका साथ देता है) अल्लाह-हो-अकबर—अल्लाह-हो-अकबर !

[बाबर बादशाह की रूह उड़ान भर जाती है—उसकी इच्छा के मुताबिक उसको काबुल में दफ़न किया जाता है, जिससे उसको असीम मुहब्बत थी। उसकी समाधि फ़व्वारों के पास है, जिनका साफ़-सुथरा पानी उसकी ज़िन्दगी का नक्शा पेश करता है।]

चंगेज़ खाँ की मौत

पात्र

चंगेज़ खाँ
बगोरची
योरोगोला
चुगताई
यसोई
चरनोदाई
बिलानोयाँ
खादिम
तोलई

[आज से सात सौ वर्ष पहले का ज़िक्र है कि एक शख्स आँधी की तरह उठा और करीब-करीब सारी दुनिया पर छा गया। उस शख्स का नाम चंगेज़ खाँ था जिसकी दहशत एक ज़माने तक लोगों के दिलों पर छायी रही। ज़िन्दगी में उसको बहुत-से खिताब मिले। किसी ने उसको 'इन्सानों को हलाक करने वाला देव' कहा, किसी ने 'शानदार लड़ाका' की संज्ञा दी।

यूं तो दुनिया के बहुत-से बादशाहों को खिताब मिले मगर उनके नाम के साथ सजे नहीं। लेकिन चंगेज़ खाँ को जैसे भी खिताब मिले, उस पर चिपक गए।

यूरोप के बड़े-बड़े योद्धाओं की सूची में सबसे पहला नाम सिकंदर मकदूनी का आता है। फिर रोमां के कुछ बादशाहों का। नेपोलियन महान् के नाम पर संक्षिप्त सूची खत्म हो जाती है। यूरोप के जंगी स्टेज पर यही सबसे ज़बरदस्त और शानदार एक्टर थे। मगर जब हम दूसरे मुल्कों की तारीख पर नज़र डालते हैं तो हमें उनके मुकाबले में चंगेज़ खाँ ज्यादा भयावह और बड़ा दिखाई देता है।

यूरोप में उस वक्त जिस तरह हिटलर तबाही फैला रहा था उसी तरह उस ज़माने के हथियारों के ज़रिए से चंगेज़ खाँ ने कत्ल-व-गारत का बाज़ार गर्म किया—उसकी बर्बर फ़ौजों के रास्ते में जो शहर आए, मलबे का ढेर बन गए। जहाँ से उसका लश्कर गुज़रता वहाँ के दरिया अपना रास्ता बदल देते। वहाँ की ज़मीन पर, जो कभी आदमियों सेअ ाबाद थी, सिवाय भेड़ियों और मुर्दा खाने वाले

परिन्दों के और कोई दूसरा जानवर नज़र न आता था ।

लड़ाई की कला में नेपोलियन बोनापोर्ट यूरोप में सबसे ऊपर नज़र आता है, मगर उससे कुछ ऐसी गलतियाँ हुईं जिनको हम कभी भूल नहीं सकते । एक बार मिस्र में अपनी फ़ौज दुश्मन की दया-कृपा पर छोड़ खुद भाग निकला । दूसरी बार उसने अपनी फ़ौज को रूस की बर्फ़ों में मरने के लिए पीछे छोड़ा और खुद वाटरलू के भँवर में जा फँसा ; ऐसी ज़बरदस्त गलतियाँ हमें चंगेज़खाँ की फ़ौजी ज़िंदगी में नज़र नहीं आईं । उसने आरमीनिया से लेकर कोरिया तक और तिब्बत से लेकर रूस के दरिया वोल्गा तक ऐसी सल्तनत की बुनियादें कायम कीं कि उसके मरने के बाद उसका बेटा ओकताई बिना किसी विरोध के उसका उत्तराधिकारी मान लिया गया और उसके पोते ने आधी दुनिया पर बादशाहत की ।

आज से सात सौ वर्ष पहले जब दरिया अदनान के किनारे दोलन बलदाक के मुकाम पर येसोकोई बहादुर के घर तमोचिन यानी चंगेज़ खाँ पैदा हुआ तो देखा गया कि उसकी मुट्ठी में जमा हुआ खून है—माँ के पेट से वह खून से रंगे हाथ लेकर आया ।

उस ज़माने में जब चंगेज़ खाँ पैदा हुआ, मुल्क की हालत बहुत खराब थी । अधिकतर हिस्सा बंजर और उजाड़ था जिसमें हरदम घोड़ों पर सवार शिकारपेशा आवारागर्द हिरनों और चिकारों के शिकार में खानाबदोशी का जीवन व्यतीत करते थे । उस मुल्क के लोगों का लिबास जानवरों की खालें होती थीं । दूध और गोश्त सबकी खुराक थी । सर्दी और बारिश से बचने के लिए जिस्म पर चर्बी मलते थे । जाड़े-पाले में ठिठुरकर मर जाना, भुखमरी से दम निकलना, दुश्मन की तलवार से कट मरना, इनमें से किसी बात की भी उनको परवाह न थी । ये खानाबदोशी बड़े वहशी आदमी थे । चंगेज़ खाँ यह नुक्ता समझ गया और इन वहशियों को एक-दूसरे का गला काटने से अलग रखने के लिए इसके सिवाय कोई और तदबीर नहीं थी कि उन्हें किसी गैर-मुल्क में भेज दिया जाए ।

कहने का मतलब यह है कि चंगेज़खाँ ने अपनी कौम के इन बगूलों पर चारजामे कसे और बाहर के मुल्कों पर आँधी की तरह जा चढ़ाया ।

खुदा के इस ताज़याने चंगेज़ खाँ की हंगामों-भरी ज़िन्दगी एक मज़मून में नहीं समा सकती—हम चंगेज़ खाँ के सिर्फ़ आखिरी दिनों को आपके सामने रखेंगे जब वह सत्तर साल का बूढ़ा और लगभग आधी दुनिया फ़तह कर चुका था ।

परदा उठता है—सन् 1225—कड़कता जाड़ा—तोला दरिया के किनारे चंगेज़ खाँ खेमा डाले पड़ा है ।]

चंगेज़ : बगोरची, तुमने और मकोली ने मेरी मदद की है । जो काम मैंने तुम्हारे सुपुर्द किया तुमने बड़ी दुरुस्ती से किया । तुमने मुझे बुरा भी कहा । मुझे ऐसे कामों से भी रोका जो गलत थे । तुम्हारी इन्हीं बातों से आज मैं आला रुतबे पर पहुँचा हूँ । इस वक्त आधी दुनिया मेरे कब्ज़े में है । आरमीना से लेकर कोरिया तक और तिब्बत

से लेकर वोल्गा दरिया तक मेरी सल्तनत फैली हुई है—मैं बहुत खुश हूं—मैं बहुत खुशनसीब हूं ।

बगोरची : खान-ए-आज़म को वह दिन याद होगा जब बगोरची से उसकी दोस्ती हुई । आपके आठ घोड़ों ने, जो चोरी चले गए थे, हमें दोस्ती के इस मज़बूत रिश्ते में जकड़ दिया । उस रास्ते में जिधर से तायजोत आपके आठ घोड़े चुराकर ले जा रहा था, मैं एक घोड़ी का दूध दुह रहा था । किसे पता था कि वह नौजवान, जो आठ घोड़ों के लिए इतना हैरान और परेशान है, एक दिन आधी दुनिया का मालिक होगा—खाकान को याद होगा कि अपनी घोड़ी ठहराकर···

चंगेज़ : मुझे अच्छी तरह याद है । मैंने तुमसे बड़ी परेशानी की हालत में पूछा था, "क्या तुमने इधर से आठ कोतल घोड़े और सवार जाते देखे हैं ?"

बगोरची : और मैंने जवाब दिया था, "हाँ, सूरज निकलने से पहले कई सवार आठ घोड़ों को, जिन पर कोई सवार नहीं था, साथ लिए इधर से गुज़रे थे । जिस रास्ते से वे गए हैं, वहां घोड़ों के खुरों के निशान हैं । वे तुम्हें दिखा सकता हूँ ।"

चंगेज़ : हम बड़ी तरकीब से उन घोड़ों तक पहुँचे और उन्हें हाँककर वापस ले आए । तायजोत को खबर हो गयी । उन्होंने हमारा पीछा किया । तुमने मुझसे कहा, "अपना तीरकमान मुझे दे दो, मैं पीछे रहकर उनका मुकाबला करूँगा ।"

बगोरची : मगर आपने मेरी दरख्वास्त मंजूर न की । अतः हम दोनों घोड़े दौड़ाते आगे बढ़ते रहे । यहाँ तक कि शाम हो गयी और रोशनी कम होने लगी । मगर वह सब्ज़े घोड़ेवाला तायजोत अब इतना करीब आ गया था कि अपनी कमंद आप पर और मुझ पर आसानी से फेंक सकता था ।

चंगेज़ : मैंने उस वक्त चिल्लाकर तुमसे कहा था, "बगोरची, देखो, कहीं वह दुश्मन तुम्हें अपनी कमंद से गिराकर ज़ख्मी न कर दे । ठहरो, मैं इस पर तीर चलाता हूँ ।"

बगोरची : तीर निशाने पर बैठा—वह तायजोत घोड़े की पीठ पर से गिरा और हम रात के अँधेरे में आठों घोड़े साथ ले भागे ।

चंगेज़ : (हँसता है) तुम जब वापस अपनी जगह पर पहुँचे तो डरे कि तुम्हारा बाप तुम्हारी गैरहाज़िरी पर गुस्सा होगा । पहले जल्दी से जाकर तुमने दूध का घड़ा घास में से निकाला और अपने बाप से कहा, "यह मेरे साथ वाले जब आए तो बहुत थके हुए थे और बेहद परेशान थे । मैं इनके साथ चला गया था ।"

बगोरची : मेरा बाप नाराज़ होने की बजाय बहुत खुश हुआ और कहने लगा, "तो तुम दोनों हमउम्र हो । मुनासिब है कि हमेशा दोस्त बने रहो—बड़े पक्के और वफ़ादार दोस्त ।"

चंगेज़ : (लम्बा साँस लेकर) जवानी के दिन भी क्या होते हैं—बगोरची, बुलन्द आसमानों की कसम है—खाकान तुम्हें अपना अज़ीज़ दोस्त यकीन करता है—कुदरत के रंग न्यारे हैं । मूसा आग लेने गया तो उसे पैगम्बरी मिल गयी । मैं अपने घोड़ों की खोज में निकला तो मुझे तुम मिल गए । (हँसता है ।)

[बगोरची भी हँसता है ।]

चंगेज़ : बगोरची ! अच्छा, भला यह तो बताओ, इन्सान अपनी सबसे बड़ी खुशी और सब्र किस बात में समझता है ? यह बात तुमसे पूछने के लिए कई दिन से इरादा कर रहा था। योरोगोला ! बगोरची के बाद हम तुमसे भी यह सवाल करेंगे। जवाब सोचकर रखो—

बगोरची : सबसे बड़ी खुशी और सब्र इन्सान के लिए इसमें है कि बहार का मौसम हो, उमदा घोड़े पर इन्सान सवार हो --हाथ में शक्राह हो और उससे शिकार मारता हो।

चंगेज़ : नहीं भाई, इससे मेरी तसल्ली नहीं हुई । बहार का मौसम—उमदा घोड़ा—शक्राह और शिकार—यह सब गलत है। इन चीज़ों में इन्सान की सबसे बड़ी खुशी नहीं हो सकती। योरोगोला, अब तुम हमारे सवाल का जवाब दो—बगोरची के जवाब से हम सन्तुष्ट नहीं हुए ।

योरोगोला : गोबी के सहरा से चलने वाली हवाओं की तरह इन्सान आज़ाद हो—ऐश का सामान पास हो—खूबसूरत औरत और रंगीन शराब हो और···

चंगेज़ : गलत—बिलकुल गलत—अच्छा, तुम बताओ चुगताई, तुम्हारा क्या खयाल है ?

चुगताई : खान-ए-आज़म, अपने बेटे को खुद ही बताइए कि इन्सान की सबसे बड़ी खुशी और सब्र किस बात में है ?

चंगेज़ : तो सुनो—इन्सान की सबसे बड़ी खुशी इसमें है कि वह अपने दुश्मनों को शिकस्त दे, उनको पीस डाले—अपने सामने से उन्हें भागता हुआ देखे । जो कुछ उनके पास हो उसे अपने कब्ज़े में ले आए। जिन लोगों से उसके दुश्मनों को मुहब्बत हो उनको रोता देखे—उनके घोड़ों पर सवार हो— उनकी ज़िन्दगी की हर खूबसूरत चीज़ को टाट की तरह इस्तेमाल करे।—आह, हमारी कितनी ख्वाहिश है कि उस बागी बादशाह तंगोत को उसके जुर्म की कड़ी से कड़ी सज़ा दें। बगोरची, तुम्हारा क्या ख़याल है ? क्या हमें उस सरकश बादशाह के मुल्क पर चढ़ाई नहीं कर देनी चाहिए ?

बगोरची : खाकान का जो खयाल है, वही हमारा खयाल है—क्यों योरोगोला !

योरोगोला : बिलकुल ठीक है।

चंगेज़ : केवल इन्तकाम लेने की खातिर हम उसके साथ जंग करना नहीं चाहते। तंगोत के मुल्क को फ़तह करने के और सबब भी हैं जिनको हम ठीक समझते हैं। बगोरची, तमाम सिपहसालारों को हुक्म दे दिया जाए कि सारा लश्कर फ़ौरन तैयार हो जाए। हम बहुत जल्द हमला करने का इरादा रखते हैं ।

बगोरची : बहुत बेहतर ।

चंगेज़ : जंग का नक्शा हम आज ही तैयार कर देंगे, जिसके मुताबिक हमारे सिपहसालारों को लड़ना होगा—तुम इस बीच में जासूस रवाना कर दो । लड़ाई का जो नक्शा तजवीज़ किया जाएगा, जो रास्ते तजवीज़ किए जाएँगे, उनसे तमाम सिपहसालारों को जानकार कर दिया जाएगा। बगोरची, अमीर से उस नाफ़रमाबरदार बेटे जौजी

की कोई ताज़ा खबर ? तुम लोग नहीं जानते कि हमारी फ़तहों से भरपूर ज़िन्दगी पर जौजी का वजूद काले बादल की तरह छा गया है । उसकी नाफ़रमाबरदारियों ने हमारी ज़िन्दगी तल्ख कर दी है। आखिर वह चाहता क्या है ?

बगोरची : वह आपसे और आपकी सल्तनत से अलग रहना चाहता है और खुद एक सल्तनत कायम करने का इरादा रखता है। इस सल्तनत में वह उन मुल्कों का कुछ हिस्सा शामिल करना चाहता है जो आपने हाल ही में फ़तह किए हैं···

चंगेज़ : मुझे मालूम है—मुझे सबकुछ मालूम है। जिस ज़माने में हमारी फ़ौज ख्वारजम शाह से लड़ रही थी, उस नालायक ने हमारी कार्रवाइयों की मुखालफ़त की—उसकी नाफ़रमाबरदारियों की सूची इतनी लम्बी है कि—योरोगोला !

योरोगोला : हुज़ूर···

चंगेज़ : लश्कर के सामने हमारे लफ़्ज़ एक बार फिर दोहरा दो···याद हैं तुम्हें वे लफ़्ज़ ? रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में ऐसे रहो जैसे दो साल का गाय का बच्चा, लेकिन लड़ाई में शक्के बन जाओ—दावतों और जलसों में इस तरह खाओ जैसे साँड खाते हैं। लड़ाई में उकाब बनकर शिकार पर झपटो। दिन की रोशनी में बुड्ढे भेड़िये की तरह चौकन्ने और रात के अँधेरे में काले कव्वे की तरह होशियार रहो ।

[चीन से जिस वक्त चंगेज़ खाँ आया था तो किन के मुल्क के उन हिस्सों पर, जिनको मुगलों ने जीता था, किन ने फिर अपना कब्ज़ा जमा लिया था । मकोल नोयां, जो चंगेज़ का नायब था, किन से बराबर लड़ता रहा । चंगेज़ ने सोचा कि भौगोलिक हालात कुछ ऐसे हैं कि किन का खात्मा उस वक्त तक न हो सकेगा जब तक तंगोत के मुल्क में उसकी हुकूमत कायम न हो जाए क्योंकि तंगोत के मुल्क से किन की राजधानी पर हमला करना आसान था। मतलब यह कि तंगोत से लड़ने को चंगेज़ खाँ ने ऐसा ज़रूरी समझा कि इकहत्तर साल की उम्र में भी लश्कर का सरदार बनकर वह उठा और उस मुल्क पर चढ़ाई कर दी।

सन् 1226 में तंगोत से लड़ाई शुरू हुई। चंगेज़ खाँ की बीवी यसोई और शाहज़ादे उसके साथ थे। शुरू-शुरू में लड़ाई में कामयाबी रही लेकिन जब जाड़ा आया तो चंगेज़ खाँ एक दिन घोड़े पर से गिरा और ऐसी चोट आयी कि उसके सदमे से बीमार हो गया ।]

यसोई : खान के दुश्मनों की तबीयत बहुत खराब है। घोड़े पर से गिरकर ऐसी चोट आई है कि कई जोड़ हिल गए हैं। कल से तेज़ बुखार है—मैंने आप लोगों को इसलिए बुलाया है कि इस जंग के बारे में बातचीत की जाए जो दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है—बगोरची, तुम बताओ, ऐसी हालत में क्या जंग जारी रहनी चाहिए ?

बगोरची : खाकान की हालत अगर्चे नाज़ुक नहीं कही जा सकती मगर इस बुढ़ापे में गहरी चोटें बहुत खतरनाक होती हैं। मेरी तो राय है कि कुछ देर के लिए जंग मुल्तवी कर दी जाए। खाकान का इलाज यहाँ नहीं किया जा सकता। जब वह तन्दुरुस्त हो जाएँ तो जंग दोबारा शुरू कर दी जाए ।

योरोगोला : इस राय से मुझे भी इत्तफ़ाक है ।

चरनोदाई : मैं समझता हूँ कि यह राय बिलकुल दुरुस्त है। हुज़ूर की तन्दुरुस्ती सबसे ज़रूरी चीज़ है।

यसोई : बिलानोयाँ, तुम इस बारे में क्या कहते हो ?

बिलानोयाँ : तंगोत खानाबदोश नहीं हैं। शहरों में रहते हैं। कहीं चले तो जाएँगे नहीं। फिर देखा जाएगा। अब हम अपने वतन को वापस चले जाते हैं। जब खाकान का मिज़ाज ठीक हो जाएगा तो फिर यहाँ आ जाएँगे।

यसोई : तो फिर यह तय है ।

[अचानक बैसाखियों की मदद से चंगेज़ अन्दर दाखिल होता है ।]

चंगेज़ : कुछ तय-वय नहीं—हमारा मिज़ाज खैरियत से है। हम यहीं रहेंगे। यसोई एक बीवी की हैसियत से अपनी हमदर्दी की कायल कर सकती है, मगर जंग के मैदान में तुम्हारी हमदर्दी हमारे ऊपर कभी असर नहीं कर सकती। योरोगोला—हमारे बैठने के लिए चौकी लाओ ।

[फ़ौरन चौकी रख दी जाती है।]

चंगेज़ : (चौकी पर बैठकर) बगोरची, यह चुपके-चुपके क्या साज़िश हो रही थी—बहुत अफ़सोस है कि तुम मैदाने-जंग छोड़ने पर रज़ामंद हो गए ।

बगोरची : खाकान, आपकी सेहत सब चीज़ों से ऊँची है ।

चंगेज़ : और हमारी खुशी इस पर टिकी है कि तुम यकीन करो कि हम बहुत जल्द तन्दुरुस्त हो जाएँगे—हमारा इलाज मैदान-ए-जंग में ही होगा। तुम लोग इतना भी नहीं समझते कि अगर इस वक्त हम यहाँ से चले गए तो वे बागी तंगोत यह समझेंगे कि हम डर गए। आज इकहत्तर वर्ष की उम्र में घोड़े से गिरकर हम अपना वकार ज़ख्मी करा लें ! नहीं। हम हरगिज़ यहाँ से नहीं जाएँगे। बगोरची, तुम एक दूत तैयार करके तंगोत के पास भेजो जो हमारा पैगाम ले जाए ।

बगोरची : पैगाम बताया जाए ।

चंगेज़ : लम्बे-चौड़े खिताब बिलकुल न लिखे जाएँ। बस, उससे सिर्फ़ इतना कहा जाए—तंगोत ने शुरू से हमसे वायदा किया था कि तुम हमारे सही मददगार बनोगे लेकिन जब हम मुसलमानों से लड़ने गए तो तुमने हमारे साथ चलने से इंकार कर दिया और इस नाफ़रमानी के साथ हमारी तौहीन की। अब मुसलमानों को हराने के बाद मैं तुमसे निपटना चाहता हूँ। हमारे कहर से डरो और हथियार डाल दो ।

बिलानोयाँ : आप ताकत और सल्तनत के खुदा हैं—मैं अकसर सोचता हूँ कि आपके हाथ पर कोई निशानी इस ताकत और सल्तनत की है भी या नहीं ।

चंगेज़ : (हँसता है) बिलानोयाँ, मैं तुम्हें एक दिलचस्प किस्सा सुनाता हूँ। गद्दी पर बैठने से पहले एक दिन हम घोड़े पर सवार जा रहे थे। एक पुल पर से गुज़रने लगे तो देखा हमारी ताक में छः आदमी बैठे हैं। हम तलवार सूतकर उनकी तरफ़ बढ़े।

उन्होंने दूर से ही हम पर तीर बरसाने शुरू किए। लेकिन जितने तीर उन्होंने फेंके सब-के-सब चूक गए। एक भी हमें नहीं लगा। आगे बढ़े और छहों दुश्मनों को मौत के घाट उतार दिया। वापसी में उसी जगह से, जहाँ हमने दुश्मनों को मारा था, गुज़रना हुआ तो देखा कि उनके घोड़े खाली पीठ फिर रहे हैं। हमने उन घोड़ों को पकड़ा और हाँककर अपने घर ले आए। बोलो, इसमें क्या नतीजा निकालते हो ?

बिलानोयाँ : गुलाम को इस सवाल का जवाब मिल गया—खाकान ताकत और सल्तनत के खुदा हैं।

चंगेज़ : (हँसता है) खुदा का ताज़याना है—कहर-ए-इलाही है।

[चंगेज़ का भेजा हुआ दूत तंगोत के पास गया और वहाँ से ऐसा नागवार और तकलीफ़देह जवाब लाया कि चंगेज़ का गुस्सा और ज्यादा बढ़ गया। उसने सरदारों से कहा, अब नामुमकिन है, हम यहाँ से चले जाएँ। हम मर जाएँगे मगर तंगोत को मज़ा दिए बगैर नहीं छोड़ेंगे।

चंगेज़ ने अपने दुश्मन बादशाह तंगोत से बदला लेने की हर मुमकिन कोशिश की मगर उसकी सेहत अब बिलकुल जवाब दे रही थी। वह अब सिर्फ़ कुछ दिनों का मेहमान था।]

बिलानोयाँ : हुज़ूर, खबर मिली है कि आपके लड़के जौजी ने फिर बगावत का झण्डा बुलन्द कर दिया है।

चंगेज़ : इस नालायक लड़के ने हमें बहुत तंग किया है। तुम ऐसा करो कि फ़ौरन एक लश्कर तैयार करके उसको दबाने के लिए रवाना कर दो।

बिलानोयाँ : बहुत अच्छा, हुज़ूर।

खादिम : जहाँपनाह—बगोरची कदमबोसी के लिए हाज़िर है।

चंगेज़ : उसको अन्दर भेज दो।—हाँ, तो हम तुमसे कह रहे थे कि जौजी को दबाने के लिए एक लश्कर रवाना कर दिया जाए। उस नालायक लड़के ने हमें बहुत सताया है। काश ! हम बीमार न होते।

बगोरची : यह लड़का अब कभी अपने बाप को न सताएगा।

चंगेज़ : इससे तुम्हारा मतलब ?

बगोरची : अभी-अभी खबर आयी है कि जौजी का इन्तकाल हो गया।

चंगेज़ : क्या कहा—जौजी, हमारा बेटा, मर गया ! (अन्तराल के बाद) हम थोड़ी देर के लिए दूसरे कमरे में जा रहे हैं। अभी आते हैं। (दूसरे कमरे में चला जाता है।)

बिलानोयाँ : तुमने देखा बगोरची, खान को अपने बेटे की मौत का सदमा हुआ है।

बगोरची : मैंने खान को आज पहली बार गम में देखा है।

बिलानोयाँ : इसीलिए दूसरे कमरे में चले गए।

[बेटे की मौत पर अकेले में चंगेज़ खाँ ने बहुत गम किया। मगर यह गम किसी पर ज़ाहिर नहीं होने दिया। फ़ौजें बराबर आगे बढ़ती रहीं। चलते-चलते सनोबर के जंगल से गुज़र हुआ जहाँ गर्मी के बावजूद पेड़ों तले बर्फ़ जमी हुई थी। यहाँ

पहुँचते ही चंगेज़ खाँ ने लश्कर को ठहरने का हुक्म दिया और कारिंदों को बुलाकर कहा कि बहुत जल्द घोड़े दौड़ाते हुए तोलई के पास जाओ और उससे कहो कि फ़ौरन मेरे पास आए। तोलई, उसका बीच की उम्र का बेटा, जब खान के खेमे के अन्दर दाखिल हुआ तो उसने देखा कि बाप आतिशदान के करीब एक कालीन पर बिस्तर में लेटा पड़ा है।]

चंगेज़ : आओ तोलई, मेरे बेटे, आओ। मैं तुम्हारा इन्तज़ार कर रहा था। आओ, इधर मेरे पास बैठो···मेरे वफ़ादार दोस्त और बहादुर जनरैल सब इस वक्त मौजूद हैं। मैं उनसे कह चुका हूँ कि मेरी मौत अब बिलकुल करीब आ गयी है···जब मैं उससे नहीं डरता तो तुम क्यों डरो।

तोलई : अब्बाजी, ऐसा न कहिए।

चंगेज़ : बेवकूफ़ न बनो तोलई। हम वसीयत करना चाहते हैं। फ़िज़ूल बातों में वक्त खराब नहीं करना चाहिए।···सुनो, हमारी वसीयत है कि किन से लड़ाई जारी रहे। जिस वक्त तंगोत की राजधानी फ़तह हो जाए तो तंगोत के बादशाह को, उसके तमाम साथियों को, जो उसके साथ रहते हैं, कत्ल कर दिया जाए। जब तक ऐसा न हो जाए, हमारी मौत को गुप्त रखा जाए।··· (अन्तराल के बाद) ओकताई, तुम्हारा भाई बुलन्द हिम्मत और रहमदिल है। उसका हुस्न-व-इखलाक बहुत अच्छा है। लोग उसे पसन्द करते हैं। इसलिए उसे हम अपना उत्तराधिकारी नियत करते हैं।

तोलई : आपका फ़ैसला हक के मुताबिक है।

चंगेज़ : तोलई, मशरिक में जितने मुल्क हैं, तुम उनके मालिक हो।

तोलई : शुक्रिया।

चंगेज़ : और तुम्हारे छोटे भाई चुगताई को हमने मगरबी मुल्क दिए···तुम सब लोग सुन लो, हमारे इस अल्फ़ाज़ में किसी किस्म की तब्दीली न होने पाए···लड़ाई जारी रहे और तंगोत के बादशाह को उसके साथियों समेत मौत के घाट उतारा जाए। यह भी याद रहे कि दुश्मन को हमारी मौत की इत्तला न पहुँचने पाए।

[वसीयत लिख देने के बाद चंगेज़ खाँ की आत्मा उसका शरीर छोड़ गयी। उसकी मृत्यु दक्षिणी चीन में 'संग' के अन्दर हुई। इस खयाल से कि दुश्मनों पर उसकी मौत ज़ाहिर न हो, ताबूत ले जाते वक्त राह में जो आदमी मिला उसे कत्ल कर दिया गया। वह इन्सान जो माँ के पेट से मुट्ठी में जमा हुआ खून लेकर पैदा हुआ, सारी उम्र खून की होली खेलता रहा। मौत के बाद भी खून-खराबे का कारण बना।

चंगेज़ खाँ का ताबूत गाड़ी में जा रहा था और लोग बैन कर रहे थे : इससे पहले तो वह शक्के की तरह शिकार पर गिरता था। आज भारी आवाज़ करती हुई गाड़ी तेरा ताबूत ले जा रही है। हाय मेरे चंगेज़ खाँ !

क्या यह सच है कि तू अपने बीवी-बच्चों को छोड़कर चला गया और अपनी कौम की मज़लिस से उठ गया ? हाय मेरे खान !

पहले तो उकाब की तरह चक्कर काटता हुआ हमारे आगे राह बनाता हुआ चलता था। आज तूने ठोकर खाई और गिर गया। हाय मेरे खान !

नक़्श-ए-फ़रियादी

पात्र

सुहेल : शायर

नज़्मा : मुहब्बतज़दा औरत

और तीन-चार मुहब्बत-फ़रोश औरतें

[नीचे की भूमिका शायराना अन्दाज़ में पढ़ी जाए। उसकी पृष्ठभूमि में कोई ऐसा साज़ बजता रहे जो अनुकूल हो।]

भूमिका

शायर शे'र लिखते आए हैं और लिखते रहेंगे।
जज़्बात के धारे बहते आए हैं बहते रहेंगे।
साज़ों के तार लरज़ते रहे हैं और लरज़ते रहेंगे,
पत्थर में सुन्दर मूर्तियाँ ढलती रही हैं ढलती रहेंगी
कागज़ों पर खयालात उलझते रहे हैं और उलझते रहेंगे,
दिलफ़रेब कहानियाँ बनती रही हैं और बनती रहेंगी।
इश्क की आग सुलगती रही है और सुलगती रहेगी,
हविस की बर्फ़ानी सिलें जमती रही हैं और जमती रहेंगी।

भड़कते हुए शोले !···पिघलाने वाली गर्मी !···बर्फ़ के तोंदे !···जमा देने वाली सर्दी !···आग और बर्फ़···! बर्फ़ और आग···

[नोट : आग के साथ ही फ़ौरन भीड़ का शोर मच जाए। ऐसा ज़ाहिर किया जाए कि कहीं आग लगी है। शोर के इस परदे पर नीचे के टुकड़े सुपर इम्पोज़ किए जाएँ।]

एक आदमी : आग—आग—आग···

बहुत-से आदमी : (एक आवाज़ में) आग—-आग—आग···

[आग बुझाने वाले इंज़न की आमद—कुछ क्षणों तक इंजन का शोर जारी रहे।]

दूसरा आदमी : सुहेल, मत जाओ। (ज़्यादा ऊँची आवाज़ में) सुहेल, मत जाओ। आग

के मुँह में मत जाओ ।

सुहेल : मुझे छोड़ दो—(पकड़ से निकलकर) मुझे छोड़ दो ।

[आवाज़ों का शोर—आग बुझाने वाले इंजन और लोगों की चीखों का मिला-जुला शोर—कुछ क्षणों के बाद यह शोर आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड कर दिया जाए। इसके बाद दूसरा दृश्य शुरू हो ।]

सुहेल : (हाँफते हुए) तुम ज़िन्दा हो—तुम ज़िन्दा हो—आँखें खोलो ।

नज़्मा : (घुटी आवाज़ में) आग—आग !

सुहेल : वह बुझ चुकी—अब आओ, उसमें से निकलकर दूसरी आग में कूद जाएँ ।

नज़्मा : (घबराकर) तुम—तुम कौन हो—मैं यहाँ कैसे आई ?

सुहेल : (इत्मीनान की साँस लेकर) आह ! तुम ज़िन्दा हो—मेरे तसव्वर से भी कहीं ज़्यादा ज़िन्दा हो ।

नज़्मा : मैं यहाँ कैसे आई ?

सुहेल : धुएँ के गुबारों में तुम्हारे इन बालों की स्याह लटें कितनी दिलफ़रेब दिखाई देती थीं । ऐसा मालूम होता था कि रात की तमाम पुरअसरार तारीकियाँ किसी आबनूसी डिबिया में बन्द कर दी हैं ।

नज़्मा : तुम कौन हो ?

सुहेल : वह सुर जो अपनी जगह से उखड़ गया है ।

नज़्मा : मैंने पहचान लिया—तुम सुहेल संगीतकार हो—क्या यह गलत है ?

सुहेल : मैं सुहेल संगीतकार ही हूँ ।

नज़्मा : मैंने दूर से तुम्हें कई बार देखा है—मैंने तुम्हारी नज़्में भी सुनी हैं ।

सुहेल : मैंने आज तुम्हें पहली बार देखा है—शोले भड़क रहे थे । धुएँ की चादरें तन रही थीं और तुम चीख रही थीं—तुम्हारी एक चीख मैंने सुनी जो मेरी बनायी हुई नज़्मों के दिल चीरती हुई निकल गयी—मैं भागा—धुएँ और आग के उलझाव में घुस गया और तुम्हें अपनी गोद में उठाकर यहाँ ले आया ।

नज़्मा : तुम जानते हो मैं कौन हूँ ?

सुहेल : तुम वही हो जो तुम हो—मैं तुम्हें अच्छी तरह जानता हूँ । जब आग के शोले चारों तरफ़ भड़क रहे थे तो मैं तुम्हारे तमतमाये चेहरे को देखता रहा था । जब धुएँ के बादल बिखर रहे थे तो मैं तुम्हारे परेशान बालों को सँवारता रहा था—मैं तुम्हें छूकर देख चुका हूँ ।

नज़्मा : (परेशान होकर) यह तुमने क्या किया ?

सुहेल : आग में कूदा और उससे एक शोला नोचकर ले आया ।

नज़्मा : भूलते हो—मैं तो बर्फ़ की एक डली हूँ ।

सुहेल : गलत है—शोले को अगर मालूम होता कि वह शोला है तो उसमें यह लपक और तपिश न होती । बर्फ़ को अगर मालूम होता कि वह बर्फ़ है तो उसमें ज़माने का नुक्ता न होता—अहसास शिद्दत को कम करता है, बढ़ाता नहीं, शऊर लाशऊर

के मुकाबले में क्या है ? कुछ भी नहीं है ।

नज्मा : तुम मुझे एक आग से बचाकर लाए हो···

सुहेल : दूसरी आग में झोंकने के लिए—

नज्मा : तुम कितने शरीर हो—लेकिन मुझे तुमसे कहीं ज्यादा शरारतें आती हैं—जाने दो इस खेल को—एक आग ठण्डी हो चुकी है, दूसरी भी ठण्डी कर दो ।

सुहेल : पहले मुझे बताओ, तुम्हारा नाम क्या है ?

नज्मा : नज्मा ।

सुहेल : नज्मा, सुनो—मुहब्बत की वह चिनगारी, जो भड़कते हुए शोलों के दरम्यान इस दिल में पैदा हुई है, कभी ठण्डी नहीं हो सकती ।

नज्मा : मुहब्बत के चकमक पत्थर से अब तक कितनी चिनगारियाँ फूट चुकी हैं—कहाँ हैं ये चिनगारियाँ ? —ये नन्ही-नन्ही चिनगारियाँ ?

सुहेल : मुहब्बत का नाम सुनकर तुम्हारे होंठ नफ़रत से सिकुड़ क्यों गए हैं ? तुम्हारे चेहरे पर हकारत के जज्बात क्यों बिखर गए हैं ? क्या मुहब्बत किसी मनघड़ंत चीज़ का नाम है ? क्या दिल का ज़ेवर महज़ एक खयाली चीज़ है ? क्या मैं इतनी देर से सुरों की भूल-भुलैया में किसी बेहौंद चीज़ को तलाश करता रहा हूँ—मेरी अँगुलियाँ क्या साज़ के परदों पर बेकार दौड़ती रही हैं ? क्या ज़िन्दगी महज़ एक हादसे का नाम है ?

नज्मा : आग का लगना एक हादसा ही था ।

सुहेल : तुम्हारा चीखना भी एक हादसा था । मेरा आग में कूदना भी एक हादसा था । तुम्हारी गर्म-गर्म साँसों के घूंट पीना भी एक हादसा था । तुम्हें यहाँ अपनी गोद में उठाकर लाना भी एक हादसा था । मेरी ज़िन्दगी की बुनियादों का काँप जाना भी एक हादसा था । अगर ये सब हादसे थे तो आओ, एक नये और बहुत बड़े हादसे की बुनियाद डालें ।

नज्मा : तुम्हारी इस गर्मजोशी से मुझे डर लगता है सुहेल !

सुहेल : डर और भय बेमानी चीजें हैं—अगर गर्मजोशी न होती तो दुनिया में हर चीज़ का रंग ज़र्द होता ।

नज्मा : अब मैं ज्यादा देर तुम्हारे पास नहीं ठहर सकती—मुझे घर जाना चाहिए ।

सुहेल : घर तुम्हारा जलकर राख हो चुका है ।

नज्मा : इसमें था ही क्या जो राख होता—और बन जाएगा ।

सुहेल : मेरा घर तुम्हारे आने से आबाद हो गया था ।

नज्मा : सुहेल, मुझे न रोको···

सुहेल : तुम नहीं जा सकतीं नज्मा—मैं तुम्हें नहीं जाने दूंगा—याद रखो, अगर तुमने जाने के लिए कदम उठाए तो मैं तुम्हें पकड़कर इस ज़ोर के साथ भींचूंगा कि तुम्हारी रूह निचुड़कर मेरे सीने में चली आएगी—तुम नहीं जाओगी ।

नज्मा : मुझे जाने दो सुहेल ! ···

सुहेल : (भावुक अन्दाज़ में) तुम नहीं जाओगी—मुहब्बत का वह आतिशी पौधा, जो

मैंने अपने हाथ से तुम्हारे दिल में गाड़ा था, जड़ें पकड़ चुका है—अब तुम मेरी हो—आह, मुझे तुम्हारी किस कदर ज़रूरत थी—वह मद्धम सुर, जिसे एक ज़माने से मेरी अँगुलियाँ टटोलती रही हैं, आज मुझे मिल चुका है—औरत ! औरत !! मर्द के लिए औरत बेहद ज़रूरी है और नज़मा, तुम्हारे बगैर सुहेल एक ऐसा साज़ था जिसमें सुर न हों···

नज़मा : (मजबूरी के अन्दाज़ में) सुहेल···सुहेल···

सुहेल : कहो, क्या कहना चाहती हो ?

नज़मा : तुमने मुझे उस आग में क्यों न जलने दिया···

[**नोट :** आहिस्ता-आहिस्ता नीचे की नज़्म शुरू हो—]

हाँ, हम उस आग से आए हैं नहीं जिसको सबात
शरर-व-शोला अयाँ लाख हुए
खस-व-खशाक जले राख हुए
आ कि अब कूद पड़ें इश्क की आग में हम
गैर फ़ानी हैं भड़कते हुए शोले जिसके
ता अब्द लौटें हम
आरज़ुओं के दहकते हुए अंगारों पर
आ कि हम रूह को सैकल धर लें
तेरा जोबन है जवांसाल अभी
तुझे क्या इससे कि दुनिया में शब-व-रोज़ है क्यों ?
रायगाँ जायेंगे ये लमहे देख
फिर न लौट आएंगे ये लमहे देख
आ कि अब कूद पड़ें
गैर-फ़ानी है मुहब्बत की भड़कती हुई आग।

[ऊपर की नज़्म के सुर आहिस्ता-आहिस्ता मद्धम हो जाएँ। फिर एक लमहे के लिए खामोशी छायी रहे और तीसरा दृश्य शुरू हो। इस दृश्य की पृष्ठभूमि में आहिस्ता-आहिस्ता कोई साज़ बजता रहे।]

नज़मा : (आहिस्ता-आहिस्ता मगर भावुकतापूर्ण स्वर में) सुहेल, ऐसी कितनी शामें गुज़र चुकी हैं ?

सुहेल : किस कमबख्त को याद है—जाने कितनी गुज़र चुकी हैं—मुहब्बत हिसाब की बहुत कच्ची होती है।

नज़मा : सुहेल, मुझे ऐसा क्यों महसूस होता है कि मैंने एक लमहा सफ़र तय करने के बाद थककर गर्म-गर्म कहवे की एक प्याली पी है और नर्म-नर्म लिहाफ़ ओढ़कर लेट गयी हूँ—मुझे ऐसा क्यों लगता है—यह मीठी-मीठी-सी थकन—यह थोड़ा गर्म-सा वातावरण जिसमें मैं लेटी हुई हूँ, मुझे क्यों अच्छा लगता है ?

सुहेल : यह थकन—यह थोड़ा गर्म वातावरण ही ज़िन्दगी का अर्क है—नज्मा, यह ज़िन्दगी कितनी खूबसूरत चीज़ है। हरी-हरी घास का यह बिस्तर, ऊपर नीला-नीला आसमान और इस पर हवा से इधर-उधर उड़ते हुए सफ़ेद बालों के टुकड़े—क्या ऐसा मालूम नहीं होता कि शाहजहाँ के अधूरे मरमरी ख्वाब हकीकत बनने के लिए बेताब हैं—ठंडी-ठंडी हवा चल रही है। इसके हर झोंके में दबे पाँव आने वाली शाम के रेशमी लिबास की कितनी सरसराहटें घुली हुई हैं—

नज्मा : सरसराहटें···।

सुहेल : फ़िज़ाँ एक बेआवाज़ संगीत से भरी है—रात की स्याह और घनी पलकों पर दिन अपने उजले पर तौल रहा है। आसमान की सुर्खीनुमा नीलाहटों पर कितने अनकहे शे'र लिपटे हुए हैं—(अन्तराल) इस वातावरण में दिमाग मेरा एक झाड़-सा बन गया है, जिसमें खयालात बिल्लौरी कलमों की तरह झिलमिला रहे हैं।

नज्मा : सुहेल, तुम शायर भी हो—

सुहेल : यह तुम्हारा ही एक छोटा चमत्कार है वरना सुहेल के दिल में इन खूबसूरतियों की आँखें मुँदी रहतीं।

[अन्तराल]

नज्मा : (परेशानी के साथ) मुझे छोड़ मत जाना।

सुहेल : कैसी बातें करती हो नज्मा !

नज्मा : (परेशानी के साथ) सुहेल, मुझे माफ़ कर दो। मगर यह दुनिया इस कदर हसीन नहीं जितनी कि अब नज़र आती है। सुर्खी का यह खूबसूरत गुबार जो इस वक्त माहौल पर छा रहा है, मुझे प्यारा लगता है लेकिन मैं इसे हाथ लगाते डरती हूँ—बचपन में जब मैं तितलियों को पकड़ा करती थी तो उनके परों के खूबसूरत रंग मेरी अँगुलियों के साथ लग जाया करते थे—मैं डरती हूँ—इसलिए मेरा जी चाहता है कि हम दोनों इस बाग में पत्थर की दो मूर्तियाँ बन जाएँ—जो कुछ इस वक्त नज़र आता है, पत्थर में ढलकर हमेशा कायम रहे। तुम्हारी तमाम बातें नन्हे-नन्हे संगरेज़े बनकर इस सामने वाली नदी में लुढ़क जाएँ—मुझे डर है कि ये दिलफ़रेब घड़ियाँ पिघल जाएँगी—यह बहती हुई खुशियाँ ऐसी ढलानों में बह जाएँगी कि इसका नाम-व-निशान तक नहीं मिलेगा···मुझे छोड़ मत जाना सुहेल···

सुहेल : तुम्हें छोड़कर सुहेल कहाँ जाएगा—प्यारी—जिस तरह राग से कोई सुर अलग नहीं किया जा सकता, उसी तरह सुहेल की ज़िन्दगी से तुम जुदा नहीं हो सकतीं।

नज्मा : एक बार फिर यही कहो।

सुहेल : सुनो···नहीं, तुम खुद कहो—

[पृष्ठभूमि में जो साज़ बजता रहा था, उभर आए। फिर आर्केस्ट्रा के दूसरे साज़ भी बजने लगें और यह गीत शुरू हो—]

चाँद से फूटा दर्द का धारा
डूब रहा है सुख का तारा
सूना-सूना है जग सारा
आ जा मेरे पास
मैं हूँ तेरे मन की आस

मैं हूँ एक सुहाना सपना
सपनों से कायम सुन्दरता
रस की बूंदें प्रेम की बरखा
सुख की झील पै जीवन नैया
आ जा मेरे पास
मैं हूँ तेरे मन की आस

शबनम फूल की प्यास बुझाये
चाँद चकोर को पास बुलाये
भँवरा फूलों पर मँडराये
तू क्यों अपना मन तरसाये

आ जा मेरे पास
मैं हूं तेरे मन की आस

[इस गीत के सुर आहिस्ता-आहिस्ता लुप्त हो जाएं—फिर तीसरा दृश्य नज़मा की सुबकियों से शुरू हो।]

तस्नीम : नज़मा, तुम रो रही हो ?

नज़मा : इसलिए कि हँसती बहुत रही हूँ।

बनीला : यह तुम्हें एकाएक क्या हो गया ?

नज़मा : एकाएक कहाँ हुआ है—अगर यह सब कुछ एकाएक हुआ होता तो दिल की हरकत एकदम बन्द हो जाती। रोना तो इस बात का है कि जो कुछ हुआ, बहुत हौले-हौले हुआ है। इस कदर हौले-हौले कि ये आँसू जो अब आँखों से निकल रहे हैं, जाने-पहचाने मालूम होते हैं। यह खुला हुआ सदमा मैं स्वयं अपनी ओक से पीती रही हूँ।

तस्नीम : नज़मा, आँसू पहेली नहीं होते।

नज़मा : दुनिया में कोई चीज भी पहेली नहीं तस्नीम। ज़िन्दगी का धागा बहुत साफ़ और सीधा होता है। उसमें उलझाव तो हम खुद पैदा करते हैं—आह ! ये उलझाव—कुछ दिन पहले दुनिया कितनी सुन्दर दिखाई देती थी। ऐसा लगता था कि वक्त का चक्कर एक सेहत-अफ़्ज़ा मुकाम पर रुक गया है। हवाएँ लतीफ़ और खुशबुओं में बसी हुई थीं। जी चाहता था कि बस यहीं रुका रहे—पर जब हौले-हौले आँखें खुलीं तो देखा कि वक्त का चक्कर उसी तरह चल रहा है मैं

बहुत आगे निकल चुकी हूँ। पीछे मुड़कर जब देखा तो बीते वक्त के रेगिस्तान में इस काँच के सपने के रेज़ चमकते नज़र आए—काँच कितना ही सुन्दर हो, काँच है।

बनीला : सुहेल···

नज्मा : उसका नाम न लो बनीला। खुदा के लिए उसका नाम न लो। मैं उसको भूल जाना चाहती हूँ।

बनीला : नहीं नज्मा—तुम उसे नहीं भूल सकतीं। वह भी तुम्हें नहीं भुला सकता। क्या दुनिया में जो कुछ होता है सिर्फ़ भूल जाने के लिए होता है ? तुम भूलती हो, ज़रूर तुम्हारे दिल में बेबुनियाद शक पैदा हो गए हैं। सुहेल तुम्हें धोखा नहीं दे सकता। क्यों तस्नीम, तुम्हारा क्या खयाल है ?

तस्नीम : सुहेल कभी धोखा नहीं दे सकता। अगर उसने तुम्हें धोखा दिया तो समझना पड़ेगा कि यह दुनिया खुद एक बहुत बड़ा फ़रेब है।

बनीला : गलत है। यह दुनिया फ़रेब नहीं है—यह फ़रेब नहीं हो सकता।

नज्मा : यह फ़रेब इतना बड़ा है कि फ़रेब दिखाई नहीं देता।

बनीला : तो इसे खत्म कर देना चाहिए।

नज्मा : मुझमें इतनी हिम्मत कहाँ ? अगर मुझमें इतनी हिम्मत होती भी तो मैं उसे खत्म न करती। मैं सिर्फ़ उसको भूलना चाहती हूँ। बाकी तमाम चीज़ें मैं याद रखना चाहती हूँ।

तस्नीम : आखिर हुआ क्या ?

नज्मा : सुहेल संगीतकार है। एक रागिनी उसने बनायी थी। उसको बनाकर वह कुछ दिन खुश रहा। अब वह नये सुरों की तलाश में है।

तस्नीम : तुमको पाकर वह सब रागिनियाँ भूल गया था।

नज्मा : मुझे ऐसा ही महसूस होता था। यही वजह है कि तमाम कड़वी हकीकतों को जानते हुए भी मेरे दिल के किसी कोने में यह ख्वाहिश पैदा होती है कि मैं सुहेल के चारों तरफ़ एक दीवार बन जाऊँ और उसे कैद कर लूँ, मगर ऐसा नहीं हो सकता। मैं अब उसे नहीं पा सकती।

तस्नीम : क्यों ?

नज्मा : वह जब मेरे नज़दीक आ रहा था तो दरअसल वह मुझसे बहुत दूर जा रहा था। मैं समझ न सकी। मैं उसको बिलकुल समझ न सकी।

बनीला : तुम्हें इसका अफ़सोस है ?

[अन्तराल]

नज्मा : मैं इसका क्या जवाब दूं—नहीं, मुझे अफ़सोस नहीं है।

तस्नीम : मुझे यकीन नहीं आता। अनहोनी-सी बात है। सुहेल कभी ऐसा नहीं हो सकता।

नज़मा : (लहजे से दुःख को दूर करके) छोड़ दो इस किस्से को—(अपने-आप को धोखा देती है) दुनिया उसी तरह दिलफ़रेब है। उसकी रंगीनियाँ उसी तरह कायम हैं—कोई चीज़ कम या ज़्यादा नहीं हुई—(**मेंढकों की आवाज़ आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड-इन की जाये—यह आवाज़ इस दृश्य के आखिर तक जारी रहे**) वह देखो, उस जोहड़ के ठहरे हुए पानी पर चाँदनी कैसा मंज़र पेश कर रही है। ऐसा मालूम होता है कि एक बहुत बड़ी कुठाली में चाँदी पिघल रही है। चारों तरफ़ खामोशी है। ये ऊँचे-ऊँचे पेड़ और ये नीची-नीची झाड़ियाँ यूं चुपचाप हैं जैसे एक निहायत दिलचस्प कहानी सुन रही हैं—दुनिया उसी तरह खूबसूरत है। उसकी खूबसूरती में कोई फ़र्क नहीं आया। वह देखो, जोहड़ के पास मिट्टी के उस ढेले पर एक मेंढक बोल रहा है···कितनी प्यारी आवाज है···(**आवाज़ भर्रा जाती है और एकदम फूट-फूटकर रोना शुरू कर देती है**) सुहेल—सुहेल !

[मेंढक की आवाज़ कुछ क्षणों के बाद खत्म कर दी जाए, फिर चौथा दृश्य शुरू हो।]

अख्तरी : सुहेल, मेरे पास बैठो। आओ, मीठी-मीठी बातें करें।

सुहेल : (अन्तराल) चलो शुरू करो—आज मेरी ज़िन्दगी में मिश्री घोल दो।

अख्तरी : सिर्फ़ आज ही क्यों ? हमेशा के लिए क्यों नहीं ?

सुहेल : और मैं पूछता हूँ कि सारी खुशियाँ हमेशा के लिए क्यों न जमा कर दें—जो कुछ कल या परसों होने वाला है, आज ही क्यों न हो ?

अख्तरी : सुहेल, हर रोज़ यही होता है। हम हमेशा वक्त से कुछ आगे नहीं रहते हैं—जब से तुम आए हो, आज आने वाली कल बनी रही है—तुम इतनी देर कहां छुपे हुए थे ?

सुहेल : आज और कल के इसी उलझाव में कहीं फँसा हुआ था।

अख्तरी : कि मैंने तुम्हें निकाल लिया।

सुहेल : और जब मैंने तुम्हें पहली बार देखा तो मुझे ताज्जुब न हुआ। तुमने मुझे अजनबी न पाया। इसलिए कि तुम मेरे लिए अजनबी नहीं थीं। तुम्हारा तसव्वुर मेरे दिमाग में बहुत देर से मौजूद था। (अन्तराल) अख्तरी !

अख्तरी : बोलो।

सुहेल : बस, कह दिया जो कहना था। दुनिया में अगर खामोशी न होती तो नाज़ुक जज़्बों का इज़हार किस कदर मुश्किल हो जाता।

अख्तरी : दुरुस्त है। पर इस वक्त मैं खामोशी नहीं चाहती—तुम पास होते हो तो जी चाहता है कि बोलते चले जाओ। बातों की यह सीढ़ी ऊपर को उठती चली जाए, यहाँ तक कि मैं तारों की दुनिया में पहुँच जाऊँ।

सुहेल : (ठठोली से) पर वहाँ तुम्हें सुहेल नहीं मिलेगा।

अख्तरी : तुम्हें साथ लेकर चलूंगी।

सुहेल : चलो, चलें।

अख्तरी : आओ, मेरे पास आ जाओ—और ज्यादा करीब आ जाओ।

[आहिस्ता-आहिस्ता संगीत शुरू हो और अख्तरी नीचे का एक बन्द गाए—]

मैं हूँ एक सुहाना सपना
सपनों से कायम सुन्दरता
रस की बूंदें प्रेम की बरखा
सुख की झील में जीवन नैया
आ जा मेरे पास—मैं हूँ तेरे मन की आस।

[गीत की धुन साज़ों पर बजती रहे। नीचे की वार्ता उस पर सुपर इम्पोज़ की जाए—]

सुहेल : (हैरान होकर) अख्तरी, यह कैसा गीत है ?

अख्तरी : तुम्हारा ही तो है।

सुहेल : मेरा—तुमने कहाँ से सीखा ?

अख्तरी : आजकल हरेक की ज़बान पर है।

सुहेल : हरेक की ज़बान पर कैसे हो सकता है ?

[गीत की धुन कुछ क्षणों के लिए साज़ों पर जारी रहे, फिर नीचे का बंद कोई और लड़की गाए—]

शबनम फूल की प्यास बुझाये
चाँद चकोर को पास बुलाये
भँवरा फूलों पर मँडराये
तू क्यों अपना मन तरसाये
आ जा मेरे पास—मैं हूँ तेरे मन की आस।

[गीत की धुन साज़ों पर बजती रहे। फिर नीचे की वार्ता उस पर सुपर इम्पोज़ की जाए।]

सुहेल : शबनम और फूल सब बकवास है। चाँद और चकोर की मुहब्बत एक मनगढ़न्त दास्तान है। यह गीत वाहियात है। इसका कोई मतलब नहीं—लोग पागल हैं जो इसे गाते हैं। इसका कोई मतलब नहीं।

[गीत की धुन कुछ लमहों तक साज़ों पर जारी रहे, फिर नीचे का बंद कोई दूसरी लड़की गाए—]

चाँद से फूटा दर्द का धारा
डूब रहा है सुख का तारा
सूना - सूना है जग सारा
तू फिरता है मारा - मारा
आ जा मेरे पास—मैं हूँ तेरे मन की आस।

[कुछ लमहों तक इस गीत की धुन साज़ों पर बजती रहे। फिर आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड आउट कर दी जाए। इसके बाद नीचे का दृश्य सुहेल के कहकहों से शुरू हो।]

सुहेल : खुदा जाने यह किस बेवकूफ़ का गीत है—आओ, हँसें—हँसी ही दुनिया का सबसे बड़ा गीत है—ज़ोहरा, तुम हँसती क्यों नहीं हो ?

ज़ोहरा : मुझे हँसी नहीं आती।

सुहेल : तो मेरे सामने से हट जाओ—अनवरी, तुम हँसो।

[अनवरी हँसने की कोशिश करती है।]

सुहेल : कुछ नहीं। खुलकर हँसो—यह फ़ीकी हँसी मुझे पसन्द नहीं—सेहतमंद हँसी का एक फ़व्वारा-सा छूटना चाहिए—दीवानावार हँसो—मुशतरी, इधर आओ।

मुशतरी : तुम्हें क्या हो गया है सुहेल ?

सुहेल : मुझे क्या हुआ है ? मुझे क्या हो सकता है ? मैं ऐश चाहता हूँ। दुनिया की तमाम खुशियों का मुँह चूमना चाहता हूँ। तुम्हें कुछ हो गया है—तुम अब औरतें नहीं रही हो।

ज़ोहरा : सुहेल—

सुहेल : (चौंककर) यह मुझे किसने पुकारा ? ओह—ज़ोहरा—ज़ोहरा—आओ, इधर आओ—तुम कहाँ छुपी हुई थीं—आओ, मेरी आँखों के सामने आओ—तुम औरत हो। तुम्हारा रोआँ-रोआँ औरत है—आओ, अपनी इन खूबसूरत अंगुलियों से मेरे बालों में कंघी करो कि मुझे नींद आ जाए। कई रतजगे मेरी आँखों में जमुहाइयाँ ले रहे हैं। मुझे सुला दो।

ज़ोहरा : सो जाओ।

सुहेल : नहीं। मैं नहीं सोऊँगा—नींद बेकार चीज़ है। मैं जागता रहूँगा—ओह; ज़ोहरा, तुम खूबसूरत हो—मुझे—मुझे लफ़्ज़ नहीं मिलते कि मैं तुम्हारी खूबसूरती बयान कर सकूँ।

ज़ोहरा : पहले तुम्हें लफ़्ज़ मिल जाया करते थे ?

सुहेल : यह क्या बकवास है—पहले—पहले—पहले क्या होता था जो अब नहीं होता—मेरे पास लफ़्ज़ों का ज़खीरा वैसे का वैसा मौजूद है।

ज़ोहरा : क्या तुम इसी तरह बकवास कहा करते थे ?

सुहेल : (अन्तराल) मुझे माफ़ कर दो ज़ोहरा—मेरे लहजे में क्या खुरदरापन आ गया था ? (अन्तराल—**मूड बदलकर**)···चलो, आओ किसी बाग में चलें—अनवरी, मुशतरी, तुम भी आओ। ज़रा तारों की छाँव में एक महफ़िल गर्म की जाए। आज मैं साज़ों के तमाम सुर निचोड़ दूँगा। सुहेल की अँगुलियाँ परदों पर यूँ दौड़ेंगी कि जैसे बादलों में बिजली की धारियाँ दौड़ती हैं—आज रात एक नयी ज़िन्दगी का दौर शुरू—उस दौर का ज़र्रा-ज़र्रा नया होगा—पुराने नक्श आज पैरों से मिटा दिए जाएँगे। उनके बदले नये बेल-बूटे बनेंगे—आओ, बाग में चलें। **(आग बुझाने वाले इंजन की आवाज़ फ़ेड इन की जाए। याद रहे कि यह आवाज़**

बहुत धीमे-धीमे आए)···यह कैसी आवाज़ है ? **(परेशान होकर)** यह क्या हुआ—ज़ोहरा, तुम सुनती हो ?

ज़ोहरा : घण्टा-सा बज रहा है ।

सुहेल : मुशतरी, तुमने भी यह आवाज़ सुनी ?

मुशतरी : सुन रही हूँ ।

सुहेल : क्या यह मेरा वहम तो नहीं ?

मुशतरी : कहीं आग लगी है ।

सुहेल : (दीवानावार)···आग—आग—कहाँ लगी है आग ?

ज़ोहरा : सुहेल, तुम्हें क्या हो गया है ? आग यहाँ थोड़े ही लगी है ।

सुहेल : मैं जानता हूँ, कहाँ लगी है—मैं जानता हूँ, यह आग किसने लगायी है । मुझे यह भी मालूम है कि इसमें कौन जल रहा है—क्या तुम्हें उसकी चीखें नहीं सुनाई देतीं ?

ज़ोहरा : किसकी ?

सुहेल : तुम उसे नहीं जानती हो—मैं जानता हूँ । मुझे जल्द भागना चाहिए—**(दरवाज़े पर ज़ोर-ज़ोर से मुक्कियाँ मारता है)** दरवाज़ा खोलो—दरवाज़ा खोलो—जल्दी खोलो—मुझे देर हो जाएगी ।

ज़ोहरा : खोलती हूँ । पर तुम जा कहाँ रहे हो ?

सुहेल : नज़्मा के पास—ऐसा न हो कि वह बेचारी जल जाए—तुम उसकी आवाज़ें नहीं सुनती हो ?

[दरवाज़ा खुलने की आवाज़, उसके साथ ही नीचे का बंद नज़्मा गाए—]

चाँद से फूटा दर्द का धारा
डूब रहा है सुख का तारा
सूना-सूना है जग सारा
तू फिरता है मारा-मारा
आ जा मेरे पास—मैं हूँ तेरे मन की आस ।

[नोट : 'आ जा मेरे पास—मैं हूँ तेरे मन की आस' बार-बार दोहराया जाए—यह बंद और अन्त की दो पंक्तियाँ कुछ इस तरह गायी जाएँ कि उनका एक-एक लफ़्ज़ सुनाई दे । मगर पृष्ठभूमि में आग बुझाने वाले इंजन का शोर बराबर जारी रहे—जब बंद पूरा गा लिया जाए तो सुहेल कहे—]

सुहेल : मैं आ रहा हूँ—मैं आ रहा हूँ ।

ज़ोहरा : कहाँ जा रहे हो सुहेल—यह क्या पागलपन है ?

सुहेल : मुझे छोड़ दो—मुझे छोड़ दो—तुम उस नक्श की फ़रियाद नहीं सुनती हो जिसको मैंने खुद बनाया था ।

[नोट : आग बुझाने वाले इंजन का शोर ज़्यादा ऊँचा हो जाए । इसके साथ ही नज़्मा के

गाए हुए ये बोल—'आ जा मेरे पास—मैं हूँ तेरे मन की आस'। आखिर में ये दोनों चीज़ें बहुत ऊँची हो जाएँ। फिर आहिस्ता-आहिस्ता उनको खत्म कर दिया जाए।]

[जब शोर खत्म हो जाए तो नीचे का टुकड़ा दर्दनाक सुरों पर सुपर इम्पोज़ किया जाए।]

एक आदमी : रूई के गोदाम में आग लगी थी—सुहेल इसमें क्यों घुस गया, कुछ समझ में नहीं आता।

[दर्दनाक सुर कुछ क्षणों तक थरथराकर खामोश हो जाये।]

(फ़ेड आउट)

जेबकतरा

जेबकतरा

पात्र

कांशी	:	जेबकतरा
बिमला	:	अध्यापिका (युवती)
गिरधारी	:	कांशी का साथी
पंडित	:	काला चोर (ब्लैकमेलर)

तीन-चार फ़ालतू आदमी

[नीचे की वार्ता शुरू हो तो उसकी पृष्ठभूमि में बाज़ार की ध्वनि का दृश्य पेश किया जाए। गाड़ियों, रिक्शाओं, मोटरों और पैदल चलने वालों का शोर पैदा किया जाए। ऐसा मालूम हो कि बड़ी भीड़-भाड़ है—कंधे से कंधा छिल रहा है।]

एक आदमी : अरे भई, ऊपर क्यों चढ़े आते हो—सुनाई नहीं देता क्या ?

दूसरा : अमाँ, कुछ होश की दवा करो।

तीसरा : अरे भाई, क्यों धक्के देते हो—कुछ इस औरत का तो लिहाज़ करो—बेचारी पिस गयी है।

चौथा : थोड़ी-सी जगह बना दो।

कांशी : हाँ, तुम ही ज़रा इधर हट जाओ—भई क्या हटे हो, बेचारी का बटुआ ही··· (औरत से) ठहरिए, मैं उठा देता हूँ—यह लीजिए।

बिमला : (घबराहट के साथ) शुक्रिया।

पहला : अब यह क्या हो रहा है—रास्ता साफ़ क्यों नहीं होता ?

दूसरा : कहते हैं, आगे एक छकड़ा उलट गया है।

तीसरा : इतने छोटे बाज़ारों में छकड़े आखिर चलने क्यों दिए जाते हैं ?

चौथा : या तो बाज़ार बड़े और चौड़े किए जाएँ या इन छकड़ों का साइज़ छोटा किया जाए।

[बाज़ार के आवागमन का शोर आहिस्ता-आहिस्ता बन्द हो जाए।]

कांशी : (कहकहा लगाते हुए) बाज़ार और छकड़े बड़े किए जाएँ या छोटे—हमारी गाड़ी तो चलती रहेगी—क्यों गिरधारी ?

गिरधारी : ठीक है। पर दाद इस बात की दो कि किस सफ़ाई से इस लौंडिया का बटुआ नीचे गिराया।

काँशी : और बन्दे ने किस सफ़ाई से उसका पेट चाक किया।

गिरधारी : भई, क्या कहने हैं तुम्हारे—बस, अब ज़रा इन सब्ज़ों की बहार दिखला दो।

काँशी : बड़े बेसब्र हो—(अन्तराल) और अगर सब्ज़े न हुए तो···

गिरधारी : तो तुम काँशी, जेबकतरे नहीं किसी दफ़्तर के मुंशी हो।

काँशी : अमाँ, ऐसा कभी हो सकता है कि काँशी कोई आदमी ताके और उसके पास माल न निकले—लो देखो—(**कागज़ों की खड़खड़ाहट**) ज़्यादा नहीं हैं—दो सौ के नोट होंगे—लो, तुम गिनो—यह कागज़ क्या है ?

गिरधारी : खत-वत होगा—नहीं, लिफ़ाफ़ा है—लो, तुम खोलो—लेकिन मैं तो कहता हूँ पाँच पैसे का स्टाम्प लगाकर डाक में डाल दो—क्या याद करेगी।

काँशी : खोलकर पढ़ लो तो क्या हर्ज है··· (**लिफ़ाफ़ा खोलने की आवाज़**)

गिरधारी : ये नोट तुम्हारी जेब में पसीने से गीले हुए हैं या बटुए ही से ऐसे निकले हैं—भई मुफ़लिसी में आटा गीला सुना था—नोटों का गीला होना नहीं सुना था—पूरे दो सौ हैं—मैंने कहा, तुमने पहले गिन तो नहीं लिए थे—अरे, तुम खत बड़ी दिलचस्पी से पढ़ रहे हो—हाँ, तो क्या लिखती हैं श्रीमतीजी—इश्क-विश्क का किस्सा तो नहीं—मैं जो तुमसे कहता हूँ, ये चश्मा पहनने वाली औरतें इश्कबाज़ होती हैं—हमारी गली में एक चश्मा लगाने वाली औरत थी—शक्ल व सूरत से बड़ी खामोश और सोच-विचार करने वाली दिखाई देती थी—लेकिन भई, कुछ हमें भी बताओ कि क्या लिखा है—

काँशी : गिरधारी, बहुत बुरा हुआ है।

गिरधारी : अच्छा कब हुआ है ?

काँशी : (सोचते हुए) मैं कहता हूँ, बहुत बुरा हुआ है—लो, तुम खुद पढ़ लो।

[कागज़ की खड़खड़ाहट]

गिरधारी : यह आज तुम्हें मज़ाक़ क्या सूझा है ? अच्छी तरह जानते हो कि मैं पढ़ नहीं सकता। अगर पढ़ा-लिखा होता तो आज क्या जेबें काटता ?

काँशी : क्या करते ?

गिरधारी : सर काटता। (हँसता है) लो, अब बताओ क्या लिखा है इस खत मे ?

काँशी : यह नोट भी मेरे हवाले करो—मैं इन्हें वापस करना चाहता हूँ।

गिरधारी : क्या करना चाहते हो—कहीं बहक तो नहीं गए ?

काँशी : उसको इन रुपयों की बहुत ज़्यादा ज़रूरत है—हमारा काम इनके बगैर भी चल सकता है, मगर उस पर तो मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ेगा।

गिरधारी : ज़रा खत फिर दिखाना मुझे—गीता का कोई श्लोक तो नहीं लिख दिया उसने—भई अजब बहुरुपिये हो।

काँशी : अब वह कहीं मिल जाए—कहाँ जाऊँ—किधर जाऊँ—कुछ समझ में नहीं आता—मैंने बहुत बुरा किया है गिरधारी—उसको रुपयों की सख्त ज़रूरत थी। मेरा पेशा बहुत बुरा है, पर मेरा दिल बुरा नहीं। मुझे सदमा हुआ है—भगवान् जानता है, मुझे बहुत दुःख हुआ है—वह औरत बहुत दुखी है—तुम नहीं जानते वह कितनी दुखी है—मैं—मैं बड़ा अत्याचारी हूं—अब मैं क्या करूँ ?

गिरधारी : यह नोट मेरे हवाले करो और चिमटा हाथ में लेकर साधु बन जाओ।

काँशी : नहीं, नहीं गिरधारी ! मैं एकदम बदल नहीं गया। मैं सिर्फ़ उस औरत के रुपये वापस करना चाहता हूँ। इसलिए कि वह बेहद दुखी है—अगर नोटों के साथ यह खत न होता तो—तो—मैं जाता हूँ उसकी तलाश में।

[**नोट :** 'मैं जाता हूँ उसकी तलाश में' कहने के साथ ही बाज़ार की चहल-पहल का शोर शुरू हो जाए। यह शोर इस तरह शुरू किया जाए कि पहले मद्धम हो, फिर आहिस्ता-आहिस्ता तेज़ हो जाए। इससे नाटककार का यह मतलब है कि आवाज़ों और संगीत के माध्यम से काँशी की तलाश की कैफ़ियत ज़ाहिर की जाए। ज्यों-ज्यों वक्त गुज़रता जाए तलाश की शिद्दत बढ़ती जाए। पर बात यों पैदा की जा सकती है कि पहले टुकड़े में सिर्फ़ आदमियों की चहल-पहल का ध्वनि-दृश्य पेश किया जाए, फिर इस दृश्य को दूसरे टुकड़े में दाखिल किया जाए जिसमें लोगों की चहल-पहल और रिक्शाओं के चलने की आवाज़ भी शामिल हो। तीसरे टुकड़े में लोगों की चहल-पहल और रिक्शाओं की आवाज़ के अलावा मोटरों की आवाज़ भी हो। हर टुकड़े में माहौल और ज़रूरत के अनुसार संगीत भी शामिल किया जाए। आखिरी टुकड़े को धीरे-धीरे समुन्दर की लहरों की आवाज़ में बदल दिया जाए। यह आवाज़ पहले मद्धम हो, फिर धीरे-धीरे उभर आए। इस आवाज़ पर पथरीले फ़र्श पर थके हुए कदमों की आवाज़ सुपर इम्पोज़ की जाए। कदमों की यह आवाज़ कुछ क्षणों तक जारी रहे, फिर बन्द हो जाए। एक क्षण तक समुन्दर या दरिया की आवाज़ सामने आ जाए। एक लहर की आवाज़ आए और कोई मोटी और घिनौनी आवाज़ में कहे, "तुम बड़े ज़ालिम हो"—एक और लहर आए और वही आवाज़ आए, "तुम उसे तलाश नहीं कर सकते"—एक और लहर आए, "जब उसने बटुआ खाली पाया होगा तो उसकी क्या हालत हुई होगी"—एक और लहर आए, "तुम राक्षस हो—तुमने एक बेकस औरत को बहुत दुःख पहुँचाया है।"

एकदम लहरों के शोर और संगीत के सुरों के उलझाव से एक तेज़ चक्कर-सा बन जाए।]

× × ×

काँशी (परेशान होकर) ल···ल···लेकिन इसमें मेरा क्या कसूर है—म—मुझे क्या मालूम था कि···

[लहरें गुनगुनाती हैं।]

काँशी (आत्मा की आवाज़ से प्रभावित होकर) मैं बड़ा ज़ालिम हूँ—मैं राक्षस हूँ। मैंने एक बेकस औरत को बहुत दुःख पहुँचाया है—(अन्तराल) उसको ढूंढ़ते-ढूंढ़ते मैं थक गया हूँ—जाने इस वक्त वह कहाँ होगी।

[एकदम पानी में किसी के गिरने की आवाज़ आती है—पानी में हाथ-पाँव मारने की आवाज़]

काँशी : (घबराकर) यह कौन गिरा ?

[पानी में हाथ-पाँव मारने की आवाज़—पथरीले फ़र्श पर परेशानी के साथ इधर-उधर दौड़ता है—फिर पानी में कूद जाता है—कूदने की आवाज़—चन्द क्षणों तक पानी में कशमकश जारी रहती है—हलक में पानी जाने की गरगराहट भी सुनाई दे। फिर कुछ देर के लिए खामोशी छा जाये। मगर पृष्ठभूमि में लहरों की गुनगुनाहट बदस्तूर जारी रहे।]

बिमला : (रोनी-सी आवाज़ में) तुमने मुझे क्यों बचाया—मुझे डूबने दिया होता।

काँशी : शुक्र है तुम बच गयीं। (फूले हुए साँस के साथ) मगर तुमने पानी में छलाँग क्यों लगायी···तुम···(हैरत से) त···त···तुम तो वही औरत हो—(खुश होकर) मैंने तुम्हें पा लिया—मैंने आखिर तुम्हें पा लिया—ये लो अपने रुपये—(नोटों की खड़खड़ाहट) मैं तुम्हें सुबह से ढूंढ़ रहा हूँ—आह, अगर तुम मुझे न मिलतीं तो बहुत मुमकिन है मैंने भी तुम्हारी तरह खुदकुशी का इरादा कर लिया होता—तुम—तुम—अब तुम ठीक हो न ? चलो, तुम्हें किसी डाक्टर के पास ले चलूं—

बिमला : तुम कौन हो ?

काँशी : मैं जेबकतरा हूँ—तुम्हारे बटुए से ये दो सौ के नोट मैंने उड़ाये थे।

बिमला : तुमने—तुमने मेरे बटुए से नोट निकाले थे ? पर अब तुम्हें क्या हो गया है—तुम मुझे ढूंढ़ते रहे—तुम मुझे क्यों ढूंढ़ते रहे—तुमने यह हाथ आया हुआ माल मुझे क्यों वापस देना चाहा ?

काँशी : नोटों के साथ एक खत भी तो था जो तुमने···

बिमला : तो—तो—तो वह खत तुमने पढ़ लिया—(चिन्ता के साथ) तुम भी मेरे राज़ से वाकिफ़ हो गए—अब एक की बजाय दो हो गए। मैं मर क्यों न गयी—(रोना शुरू कर देती है।)

काँशी : मुझे तुम्हारे राज़ से कोई वास्ता नहीं। खत पढ़कर मुझे अफ़सोस हुआ कि मैंने एक ऐसी औरत के रुपये निकाले हैं जो बेहद दुखी है—तुमने दो सौ रुपये किस मुश्किल से जमा किए होंगे—मैं अब तुमसे क्या कहूं कि मुझे कितनी शर्मिन्दगी है—मुझे बहुत दुःख हुआ है—शर्मसार हूं—लेकिन अब मेरा बोझ हलका हो गया है कि मैंने तुम्हें पा लिया है, बचा लिया है।

बिमला : (रोते हुए) नहीं। मैं समझती हूं कि जो कुछ मैंने किया ठीक था। मुझे मर

जाना चाहिए—जीकर भी तो मैं मरी रहती हूँ। फिर और जीने से क्या फ़ायदा —मैं डरती हूँ—मैं डरती हूँ···

काँशी : किससे ?···

बिमला : मैं डरती हूँ कि तुम भी मेरे जीवन पर काले भूत की तरह छा जाओगे। तुम भी मेरे राज़ का सौदा करना शुरू कर दोगे—तुम जेबें कतरना छोड़ दोगे। मेरा दिल कतरना शुरू कर दोगे—तुम जानते हो—खत पढ़ने के बाद तुम क्या कुछ नहीं जानते।

काँशी : देवी, मैं जेबकतरा ज़रूर हूँ, लेकिन इन्सान भी हूँ। मुझे तुमसे पूरी-पूरी हमदर्दी है—मुझे माफ़ कर दो—(अन्तराल) तुम बड़ी बहादुर औरत हो।

बिमला : लेकिन इस बात को कितने आदमी जानते हैं—किसे मालूम है कि गर्ल्स स्कूल की एक उस्तानी—एक कमज़ोर और बेबस औरत चार वर्ष से एक राक्षस को अपना खून पिला रही है। इस जुर्म की सज़ा में कि उसने मुहब्बत की और माँ बन गयी—मुहब्बत मिट गयी लेकिन उसकी थकावट बाकी है—बच्ची मर गयी मगर ममता अभी तक ज़िन्दा है—ये दो लाशें हैं जिनको अपने सीने से लगाये कुछ दिन जीना चाहती थी—लेकिन इसकी कीमत तलब की गयी इसलिए कि दुनिया व्यापार पर चलती है। यहाँ दुःख मुफ़्त नहीं मिलते। रोग लगाओ और उसके दाम दो। यह इस दुनिया का उसूल है—औरत की एक कमज़ोरी चौमंज़िला मकान के मुकाबले में ज़्यादा नफ़ा देने वाली है—यह अगर किसी व्यापारी मर्द के हाथ में आ जाए तो वह इससे माह-दर-माह किराया वसूल करता रहता है—तुम जानते ही हो कि मैं···

काँशी : मैं जानता हूँ···लेकिन मैं पूछता हूँ तुमने अपनी ज़िन्दगी में ख्वाहमख्वाह यह रोग क्यों लगा रखा है—तुम उससे डरती क्यों हो—तुमने किसी की चोरी नहीं की—तुमने डाका नहीं डाला—तुम्हें किस बात का डर है ?

बिमला : मैंने चोरी नहीं की—मैंने डाका नहीं डाला, तभी तो मैं डरती हूँ—तुम दूसरों की जेब काटते हो और नहीं डरते। मैं अपनी जेब कटवाती हूँ इसलिए डरती हूँ—

काँशी : तुम—तुम मुझे कोसे जा रही हो—परमात्मा के लिए अब जाने दो—मैं तुमसे सच कहता हूँ कि मैं सब-का-सब अच्छा हूँ—एक सिर्फ़ मेरी अँगुलियाँ बुरी हैं—मैं चाहता हूँ कि ये भी अच्छी बन जाएँ। मगर···

बिमला : तुमने कभी इनको अच्छा बनाने की कोशिश नहीं की—अगर तुम कोशिश करो तो हो सकता है—क्या तुम सचमुच अच्छा बनना चाहते हो ?

काँशी : हाँ। बशर्ते कि···

बिमला : मैं तुम्हें अच्छा बनाऊँगी—आज ही से मैं तुम्हें सुधारने का काम शुरू कर दूंगी—मगर तुम मुझसे वायदा करो कि जो कुछ मैं कहूँगी तुम मान लोगे।

काँशी : मैं वायदा करता हूँ।

[समुद्र की लहरों की आवाज़ पृष्ठभूमि से निकलकर सामने दिखाई दे जाए और कुछ क्षणों के बाद फ़ेड हो जाए।]

× × ×

[फ़र्श पर टहलने की आवाज़—कभी कदम रुक जायें, कभी चलना शुरू कर दें—यह सिलसिला कुछ क्षणों तक जारी रहे—इस दौरान एक-दो बार काँशी मुँह से सीटी बजाए।]

× × ×

बिमला : (हैरत के साथ) काँशी !

काँशी : (घबराकर) कौन ?

बिमला : तुम क्या कर रहे हो ?

काँशी : कुछ भी नहीं—(घबराहट के साथ) क···क···कुछ भी नहीं।

बिमला : मैं सबकुछ देख चुकी हूँ। पर मैं पूछती हूँ कि यह हरकत क्या थी ?

काँशी : मैं···मैंने क्या किया है—मैं सारा दिन इस कमरे में बैठा तुम्हारी दी हुई किताबें पढ़ता रहता हूँ—मैंने एक कदम बाहर नहीं निकाला—एक ··एक महीने से मैं कहीं बाहर नहीं गया—तुम्हारे सिवा किसी आदमी की शक्ल तक मैंने नहीं देखी —ये—ये किताबें जो तुमने मुझे दी थीं, सब-की-सब मैंने पढ़ डाली हैं—अब बताओ, मैं क्या करूँ ?

बिमला : जो कुछ मैंने पूछा है, पहले उसका जवाब दो—तुम अभी-अभी क्या कर रहे थे—तुमने अपना कोट यहाँ खूँटी पर क्यों लटकाया था ?

काँशी : तुम देख तो चुकी हो।

बिमला : तो यह ठीक है कि तुम···

काँशी : हाँ, यह ठीक है। मैंने अपने कोट की जेब से सिगरेट की डिबिया निकाली थी और फिर वहीं डाल दी थी—मैंने इसी तरह अपना बटुआ भी दोबारा निकाला था —मगर तुम मुझे मलामत-भरी नज़रों से क्यों देख रही हो—यह कोट मेरा अपना ही तो है और इसमें जो चीज़ें पड़ी हैं वे भी तो मेरी हैं—मैं अपनी जेबों में से अपनी ही चीज़ें निकाल रहा था—इसमें क्या हर्ज है।

बिमला : काँशी—तुम्हारी हालत काबिल-ए-रहम है। तुम इतने बिगड़ चुके हो कि तुम्हें सुधारना बहुत ही कठिन काम है—मैं तो निराश हो चली हूँ।

काँशी : लेकिन बिमला, तुम कुछ गौर तो करो—यूं चुटकियों में तो ऐसे काम हो नहीं सकते। यह भी तो सोचो कि मैं कितने वर्षों से जेबें काट रहा हूँ। एक महीने में तुम मेरी यह आदत कैसे दूर कर सकती हो ? मैं तो कहता हूँ कि जितनी जल्दी यह बात दूर हो जाए उतना ही अच्छा है। ये अँगुलियाँ आहिस्ता-आहिस्ता ही राह पर आएँगी—तुम निराश हो जाओगी तो मेरा क्या बनेगा ? मैं तो धोबी का कुत्ता बन जाऊँगा—घाट का रहूँगा न घर का—परमात्मा के लिए निराश न हो—मैं ज़रूर एक दिन इन अँगुलियों को ठीक कर लूंगा।

बिमला : तुम्हें, दरअसल, पराए माल पर हाथ साफ़ करने का चस्का पड़ा हुआ है। तुम

कभी दुरुस्त नहीं हो सकते—तुमने आज तक खुद कमाकर खाया हो तो तुम्हें उन बातों का पता हो। तुम क्या जानो कि मेहनत-मशक्कत क्या बला है—मेरी तरफ़ देखो, मैं दिन-रात मेहनत करती हूँ, सौ रुपये माहवार मिलते हैं।

काँशी : जिनमें से पचास—नहीं, पचास नहीं, सत्तर वह आदमी वसूल कर लेता है।

बिमला : (**गर्व के साथ**) चाहिए तो यह था कि मुझे हर तरह का आराम मयस्सर होता मगर···तुम देख चुके हो—तुम जानते हो कि मैं बहुत दुखी हूँ—एक पल मुझे चैन नहीं मिलता—मेरी अभाव की सीमा यह है कि एक निकम्मा फाउण्टेन पैन भी मैं खरीद नहीं सकती, हालाँकि दूसरों के पास अच्छे-अच्छे कलम देखकर रोज़ मेरा जी ललचाता है। मगर मजबूरी है···सीने पर पत्थर रखकर मैं काम किए चली जा रही हूं। इसलिए कि मुझे जीना है। एक तुम हो कि अपनी अँगुलियों को काबू में नहीं ला सकते। तुम्हारे सामने तो फिर कोई मंज़िल है, लेकिन मैं मंज़िल की तलाश में भटक रही हूँ। तुम बड़े बदकिस्मत हो।

काँशी : मुझे मुआफ़ कर दो। मैं—मैं अब ऐसी हरकत कभी नहीं करूँगा। मैं सच्चे दिल से वायदा करता हूँ कि फिर ऐसी हरकत नहीं करूँगा।

बिमला : बहुत अच्छा। लेकिन सुन लो, अगर फिर तुमने मुझे निराश किया तो मैं तुम्हें बिलकुल छोड़ दूंगी। तो अब मैं जाती हूँ। स्कूल का वक्त हो गया है।

[जाने की आवाज़, फिर दरवाज़ा बन्द करने की खड़खड़ाहट]

× × ×

[बाज़ार की चहल-पहल का शोर। मोटरों और रिक्शाओं की मिली-जुली आवाज़ें। आवाज़ों के इस परदे पर नीचे का टुकड़ा सुपर इम्पोज़ किया जाए।]

बिमला : चाहिए तो यह था कि मुझे हर तरह का आराम मिलता, मगर तुम जानते हो कि मैं बहुत दुखी हूँ। एक पल मुझे चैन नहीं मिलता। मेरी हालत तो यह है कि मैं एक निकम्मा-सा फाउण्टेन पैन भी खरीद नहीं सकती, हालाँकि दूसरों के पास अच्छे-अच्छे कलम देखकर रोज़ मेरा जी ललचाता है। मगर मजबूरी है।

[गाड़ियों का शोर]

बिमला : दूसरों के पास अच्छे-अच्छे कलम देखकर मेरा जी ललचाता है।

[गाड़ियों वगैरा का शोर आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड हो जाए।]

× × ×

बिमला : तो कल तुमने बाज़ार की खूब सैर की—सारा दिन घूमते रहे।

काँशी : (**आत्मिक परेशानी के साथ**) हाँ—सारा दिन घूमता रहा।

बिमला : आज मौसम कितना अच्छा है—आसमान का रंग मेरी चूड़ियों की तरह निखरा हुआ है।

काँशी : हाँ, चूड़ियों का रंग आसमान की तरह निखरा हुआ है।

बिमला : ये चूड़ियाँ तुम्हें पसन्द हैं ?

काँशी : जब ये दुकान पर थीं तो इतनी खूबसूरत नहीं थीं मगर अब तो···

बिमला : (हँसती है) तुम मुझे बनाओ नहीं—

काँशी : आज तुम्हारी सालगिरह है न···

बिमला : है तो सही—लेकिन···

काँशी : (आत्मिक परेशानी के साथ) सालगिरह अच्छी होती है।

बिमला : यह तुम क्या ऊटपटाँग बोल रहे हो ?

काँशी : (घबराकर) नहीं तो···मैं···मैं दरअसल कुछ और ही सोच रहा था। (अन्तराल) मैं सोचता हूँ। मैंने कई मर्तबा सोचा है कि अब दुनिया में मेरी हैसियत एक फ़ालतू आदमी की हो गयी है—छकड़े में अगर पाँचवाँ पहिया लगा दिया जाए तो मेरी हालत का अन्दाज़ा किया जा सकता है—लेकिन नहीं—मैं—मैं अपने-आपको कारआमद आदमी बना सकता हूँ—ऐसा हो सकता है—तुमसे—यानी तुम मुझ पर इतनी मेहरबान हो तो क्या कुछ नहीं हो सकता—मेरा मतलब है कि···कुछ नहीं···तुम कितनी अच्छी हो बिमला—मेरा जी चाहता है कि मैं तुम्हारी खिदमत करूँ—खिदमत—खिदमत--हाँ, मेरा जी चाहता है कि तुम्हें खुश करने के लिए कुछ न कुछ ज़रूर करूँ।

बिमला : काँशी, मुझे ऐसा लगता है कि तुम कोई बात मुझसे छुपा रहे हो।

काँशी : (और ज्यादा घबराकर) न···न···नहीं तो !

बिमला : देखो काँशी, लड़ाई हो जाएगी। तुम झूठ बोल रहे हो।

[अन्तराल]

बिमला : बोलो, सोच क्या रहे हो ?

[अन्तराल]

काँशी : मैं···मैं तुम्हारे लिए एक तोहफ़ा लाया हूँ···कबूल करोगी ?

बिमला : पहले मुझे तोहफ़ा दिखलाओ।

काँशी : फाउण्टेन पैन है—याद है, तुमने उस रोज़ कहा था—"मेरे अभावों की सीमा यह है कि मैं एक निकम्मा फाउण्टेन पैन नहीं खरीद सकती, हालाँकि दूसरों के अच्छे-अच्छे कलम देखकर रोज़ मेरा जी ललचाता है"—मैं कल बाज़ार गया तो यह कलम तुम्हारे लिए···

बिमला : दिखाओ तो···

काँशी : यह लो।

बिमला : बहुत अच्छा है—बढ़िया कलम है।

काँशी : तुम्हें पसन्द आ गया ?

बिमला : क्यों नहीं··· (अन्तराल) लेकिन तुमने यह लिया कहाँ से ?

काँशी : लिया कहाँ से—(हलक में जैसे कुछ फँस गया है) लिया कहाँ से—

बिमला : बोलो, कहाँ से लिया ?

काँशी : (शरम-भरे लहजे में) एक राह चलते आदमी की जेब से।

बिमला : (**कलम ज़मीन पर पटकने की आवाज़**) काँशी—तुम—तुम—काँशी—तुमने मुझे क्या समझ रखा है जो चोरी की यह चीज़ तुमने मुझे तोहफ़े के रूप में दी—मैंने तुमसे क्या पहले ही नहीं कहा था कि तुम कभी दुरुस्त नहीं हो सकते। चोरी-चकारी तुम्हारे रोम-रोम में धँस चुकी है—तुम—तुम बहुत ही ज़लील आदमी हो।

काँशी : मगर···मगर···

बिमला : मैं कुछ सुनने को तैयार नहीं—तुम बड़े ही ज़लील आदमी हो—क्या तुम यह समझ रहे थे कि चोरी का यह माल लेकर मैं खुश हो जाऊँगी ?

काँशी : मगर···मगर···बिमला, तुम मेरी बात तो सुन लो—मैं कसूरवार हूँ लेकिन ···लेकिन···

बिमला : लेकिन-लेकिन क्या ?

काँशी : तुम ज़रा सोचो तो—यानी जो कुछ मेरे दिल में है उसकी तो खोज लगाओ—मैंने—मैंने यह कलम इसलिए नहीं उड़ाया था कि तुम इसे लेकर खुश हो जाओगी—उस रोज़ जब तुमने कहा था, "मेरे अभावों की सीमा यह है कि मैं एक निकम्मा फाउण्टेन पैन भी नहीं खरीद सकती" तो यकीन मानो मेरी आँखों में आँसू आ गए थे—मैं आज तक कभी नहीं रोया, मगर उस रोज़ मैं रोया—मैं—मैं—मैं अब अपने दिल का हाल कैसे बयान करूँ—मैं जानता हूँ कि मैंने गलती की है। मैंने तुम्हें फिर निराश किया है। मगर मैं क्या करूँ ? राह चलते हुए आदमी की जेब में जब मैंने यह कलम देखा तो अपने-आप मेरी अँगुलियों में हरकत पैदा हुई—और—और कलम मेरे पास था। मुझे बहुत अफ़सोस है—मैं सख्त शर्मिन्दा हूँ···

बिमला : तुम कभी दुरुस्त नहीं हो सकते। जेबें कतरने की आदत पककर तुम्हारी तबीयत बन गयी है—

काँशी : (**अन्तराल—शोकपूर्ण आवाज़ में**) तुम ठीक कहती हो।

बिमला : मुझे अफ़सोस इस बात का है कि बावजूद पूरी कोशिश के मैं तुम्हें दुरुस्त न कर सकी—तुम बहुत ज़्यादा बिगड़ चुके हो।

काँशी : तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक है—लेकिन अब मैं क्या करूँ ?

बिमला : जाओ, जो जी में आए करो···(**भर्राई हुई आवाज़ में**) लोगों की जेबें काटो—चोरी करो—डाके डालो—तुम्हें इस बात की क्या खबर है कि मैं··· मैं···(**और ज़्यादा रोना शुरू कर देती है।**)

काँशी : परमात्मा के लिए तुम रोओ नहीं—मैं अच्छा हो जाऊँगा—मैं अच्छा बनने की पूरी कोशिश करूँगा—मैं जाता हूँ—अपने-आपको दुरुस्त कर लूँ, फिर अपना मुँह दिखलाऊँ—अच्छा, तो फिर मिलेंगे—(**आवाज़ भर्रा जाती है।**)

[बिमला की सिसकियाँ—आहिस्ता-आहिस्ता उनको फ़ेड कर दिया जाए।]

× × ×

पंडित : मैं इस मामले पर ज़्यादा गुफ़्तगू नहीं करना चाहता—बड़ी सीधी-सी बात है कि

मैं यकमुश्त तुमसे कुछ रुपये लेकर तुम्हारे खत तुम्हारे हवाले कर सकता हूँ।

बिमला : मेरा राज़ आप मेरे ही पास बेच रहे हैं—

पंडित : मुझे छानबीन पसन्द नहीं—तुम्हें इन खतों की ज़रूरत है और मुझे यकमुश्त कुछ रुपयों की—क्या तुम्हें यह सौदा कबूल है—खत हासिल करने के बाद तुम्हें किसी का खटका नहीं रहेगा—यह बात खासतौर पर काबिल-ए-गौर है।

बिमला : मैं अच्छी तरह गौर कर चुकी हूँ, पर मैं सोचती हूँ कि इसमें भी आपकी कोई ऐयारी छुपी हुई है।

पंडित : तुम्हारी आशंकाएं बिलकुल गलत हैं। मैं एक सौदा करना चाहता हूँ। अगर तुम्हें मंज़ूर हो तो ठीक है वरना···

बिमला : कितने में आप फ़ैसला करना चाहते हैं ?

पंडित : सिर्फ़ पाँच सौ रुपये में।

बिमला : ये बहुत हुए।

पंडित : इससे कम में सौदा नहीं हो सकता।

बिमला : सारे खत इस वक्त आपके पास हैं ?

पंडित : नहीं, जब सौदा पक्का हो जाएगा, मैं ले आऊँगा।

बिमला : तो···(अन्तराल) तो आप···तो आप ऐसा कीजिए···क्या आप बोरीबन्दर स्टेशन पर मिल सकते हैं—यानी क्या आप मेरा कल बोरीबन्दर स्टेशन पर एक और दो बजे के दरम्यान इन्तज़ार कर सकते हैं ?

पंडित : यह सब हो जाएगा, मगर सवाल यह है···

बिमला : आपका सौदा मुझे मंज़ूर है—मैं कल रुपये ले आऊँगी—आप सारे खत ले आइएगा—देखिए, कोई बाकी न रखिएगा—और—और—और मैं एक और दो बजे के दरम्यान बोरीबन्दर स्टेशन पर पहुँच जाऊँगी—आप खत डालने वाले लैटरबक्स के पास खड़े रहिएगा—मैं सीधी वहीं आ जाऊँगी—तो यह तय हो गया न ?

पंडित : हाँ, यह तय है—मैं वहाँ निश्चित समय पर पहुँच जाऊँगा—तो अब मैं जाता हूँ—कल शायद हमारी आखिरी मुलाकात होगी।

बिमला : परमात्मा करे कि ऐसा ही हो—तो आप एक और दो बजे के दरम्यान वहाँ पहुँच जाएँगे ?

पंडित : (हँसते हुए) हाँ, हाँ। पहुँच जाऊँगा।

[हँसी की आवाज़ आहिस्ता-आहिस्ता दूर होती जाए। फिर दरवाज़ा बन्द करने की आवाज़]

बिमला : (परेशानी के साथ) अब मुझे काँशी को तलाश करना है—वह मिल गया तो सब ठीक हो जाएगा।

× × ×

[बाज़ार की चहल-पहल की आवाज़ पर नीचे के टुकड़े सुपर इम्पोज़ किए जाएँ।]

× × ×

बिमला : काँशी कहाँ है ?

गिरधारी : तीन-चार दिन से मुलाकात नहीं हुई। घर होगा।

[झाँझ]

बिमला : आपको पता है, काँशी कहाँ है ?

अ : जी नहीं।

[झाँझ]

बिमला : काँशी कहाँ है ?

ब : अस्पताल में।

बिमला : अस्पताल में ?

ब : किसी ने मुझे बताया था कि वह तीन-चार दिन से अस्पताल में है—नहीं, तीन-चार दिन नहीं, दस-पन्द्रह दिन से, क्योंकि उसने मुझे यह भी बताया था कि बस अब वह अस्पताल से आने ही वाला है।

[झाँझ]

बिमला : काँशी !

काँशी : बिमला !

[अन्तराल]

काँशी : तुम यहाँ कैसे चली आयीं ?

बिमला : तुम मुझे यह बताओ कि अब तुम्हारी तबीयत कैसी है ?

काँशी : बिलकुल तन्दुरुस्त हूँ--मुझे हुआ क्या था—ऐसे ही···

बिमला : तुम बिलकुल ठीक हो न ?

काँशी : हाँ, हाँ।

बिमला : मुझे तुमसे एक ज़रूरी काम है—तुम चल-फिर सकते हो न—तुम्हें यहाँ से जाने की इजाज़त मिल जाएगी न ?

काँशी : हाँ, हाँ। क्यों नहीं—कहो तो अभी तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ—बताओ, क्या काम है ?

बिमला : (आहिस्ता से) मैं बताती हूँ—देखो, कल एक और दो बजे के दरम्यान बोरी-बन्दर स्टेशन पर एक आदमी आएगा—मैं तुम्हें उसका हुलिया बता दूंगी।

काँशी : बहुत अच्छा।

बिमला : उस आदमी की किसी जेब में खतों का एक पुलिंदा होगा। (अन्तराल) तुम

उसे उड़ा लेना।

[अन्तराल]

बिमला : वे खत मुझे मिल जाएँ तो···तुम उड़ा लोगे न ? ये खत मेरे लिए···

[अन्तराल]

बिमला : तुम चुप क्यों हो गए ? बोलते क्यूं नहीं ?

काँशी : (दुःखभरी आवाज़ में) बिमला—मैं अच्छा बन चुका हूं—मैं—मैं—अपने दोनों हाथों की अँगुलियाँ कटवा चुका हूँ—देखो—ये देखो—

[बिमला ज़ोर से चीखती है।]

(फ़ेड आउट)

सलीमा

पात्र

प्रिंसिपल
ज़किया
निर्मला
उषा
अनवर
सलीमा
अनवर का बाप
नौकर

[तालियों का शोर—कुछ क्षणों के बाद यह शोर बन्द हो जाए।]

प्रिंसिपल : यह रस्म, जब से मैं इस कालेज का प्रिंसिपल नियत हुआ हूँ, हर साल बाकायदा अदा की जाती है। हर साल इस अवसर पर तालियों के शोर के साथ मैं अपनी कुर्सी से उठता हूँ और लगभग वही भाषण करता हूँ जो मैंने आज से दस साल पहले दिया था। तुम्हें देखकर मेरे मन में वही भावनाएँ पैदा होती हैं जो इस विषय में आरम्भ में हुई थीं। आज जब मैंने इस पर गौर किया तो मुझे ऐसा महसूस होता है कि मैं पोस्टमास्टर हूँ और कालेज की यह बिल्डिग बहुत बड़ा डाकखाना। तुम सब ऐसे खत हो जो कुछ देर इस बिल्डिग में रहकर अपने-अपने ठिकाने पहुँचा दिए जाते हो। तुममें से कुछ बैरंग हो जाते हैं जिसके कारण तुम्हारे माता-पिता को जुर्माना अदा करना पड़ता है। कुछ गलत पतों की वजह से इधर-उधर भटकते रहते हैं—कुछ भी हो, यह खेल है बहुत दिलचस्प···हर साल इम्तहानों का एक चक्कर शुरू होता है। इसमें कुछ सफल होते हैं, कुछ नाकाम। खुशी और गम की मिली-जुली लहरें हर साल देखता हूँ। इस वक्त मेरे सामने ऐसे ही चेहरे हैं जो सफलता के परिणामस्वरूप तमतमा रहे हैं। इसके साथ ही साथ ऐसे चेहरे भी देख रहा हूँ जो असफलता के आघात से मुरझाये हुए हैं। वसन्त और पतझड़ का मिला-जुला मौसम हर साल आता है और कुछ दिनों के बाद गुज़र जाता है—वे लड़कियाँ और लड़के, जो बी० ए० का इम्तहान पास कर चुके हैं, या तो ऊँची शिक्षा पाने के लिए किसी बड़े कालेज में दाखिल हो जाएँगे या पढ़ाई

का सिलसिला खत्म करके सांसारिक कामों में लग जाएँगे। जो इस इम्तहान की दीवार नहीं फाँद सके वे दोबारा कोशिश करेंगे—जो यहाँ से जा रहे हैं, उनको मैं विदा करता हूँ और उनके सफल जीवन के लिए दुआ करता हूँ। जो नये आए हैं मैं उनका स्वागत करता हूँ और उनके फ़ायदे के लिए कहता हूँ कि इस विद्यालय में दाखिल होते वक्त उन लोगों को एक नज़र ज़रूर देख लें जो बाहर जा रहे हैं—जो इच्छा के बावजूद अपनी कमज़ोरियों के कारण या किसी और वजह से बाहर निकल जाने में कामयाब नहीं हो सके, उनसे मुझे पूरी-पूरी हमदर्दी है। खासतौर पर मुझे सलीमा से बहुत हमदर्दी है जो मेहनत करने के बावजूद इस साल भी इम्तहान में कामयाब न हो सकी। अब मैं अपना भाषण खत्म करता हूँ। खुदा करे अगले साल सलीमा कामयाब हो जाए।

[तालियों का शोर। इसके बाद लड़कों और लड़कियों की मिली-जुली आवाज़ें—आहिस्ता-आहिस्ता आवाज़ों को मद्धम कर दिया जाए और नीचे की वार्ता उन पर सुपर इम्पोज़ की जाए।]

ज़किया : निर्मला, क्या सलीमा हॉल में मौजूद थी ?

निर्मला : नहीं तो। क्यों उषा, क्या सलीमा मौजूद थी ?

उषा : नहीं।

ज़किया : मेरा खयाल है, वह आयी ही नहीं।

निर्मला : बेचारी को दुःख बहुत हुआ होगा।

ज़किया : एक बार फेल होने ही से आदमी की कमर टूट जाती है, वह तो दूसरी दफ़ा फ़ेल हुई है।

निर्मला : मेहनत तो बेहद करती थी।

ज़किया : असल में यह सब उसके मिज़ाज की खराबी का नतीजा है। किसी से मदद लेना कोई गुनाह तो नहीं। इम्तहान शुरू होने से पहले मैंने कई बार उससे कहा—सलीमा, तुम मेरे घर आ जाया करो, मैं तुम्हें सारी इक्नॉमिक्स याद करा दूंगी··· बस, यह सुनते ही जैसे उसके मिर्चें लग गयीं, "तुम अपने-आपको बहुत वो समझने लगी हो ज़किया ! तुम्हारे बगैर गोया इक्नॉमिक्स किसी को याद ही नहीं हो सकती। यानी एक सिर्फ़ तुम ही हो जिसे इक्नॉमिक्स आती है। मैं तो बिलकुल गधी हूँ, बेवकूफ़ हूँ।" अब निर्मला, तुम ही कहो मैंने क्या उसे छेड़ने के लिए अपनी मदद पेश की थी ? यह तो सब जानते हैं कि वह इक्नॉमिक्स में बिलकुल सिफ़र है। बस, दिमाग ही जो ऐसा पाया है। कोई अच्छी बात भी करे तो उसे बुरी लगती है।

निर्मला : मेरे साथ भी बिलकुल ऐसा ही हुआ। मैंने कहा, "ऐसा न हो कि तुम्हारा साइकोलॉजी का पेपर कमज़ोर रह जाए। कहो तो मैं तुम्हें अपने नोट्स ला दूँ ?" बस, यह सुनते ही बिगड़ गयी, "नोटों की तो उसको ज़रूरत होती है जो किताब से कुछ सीख न सके और अगर मुझे किसी नोट की ज़रूरत हुई तो मैं खुद खरीद

लूंगी। मैं इतनी गयी-गुज़री तो नहीं हूँ। ये नोट जो तुम मुझे देना चाहती हो, दो रुपये दस आने का आता है। कोई इतनी बड़ी रकम खर्च तो नहीं होती···" भई, वह दिन और यह दिन, मेरी ज़बान जले, जो मैंने फिर उससे ऐसी बात की हो।

उषा : किसी को क्या पड़ी है जो···

ज़किया : पड़ी-वड़ी की बात नहीं उषा। हमारे दिल पत्थर के तो हैं नहीं। उसको देखकर किसे दुःख नहीं होता और जब दुःख हो तो मुँह से हमदर्दी का कोई कलमा निकल ही जाता है—

निर्मला : पर उसे हमदर्दी की ज़रूरत भी हो—अगर उससे हमदर्दी का एक शब्द भी कह दिया जाए तो वह काटने को दौड़ती है।

ज़किया : जाने उसके मिज़ाज में यह तल्खी कहाँ से आ गयी !

उषा : ऐ, तल्खी को छोड़। सबको मालूम है कि बेहद गरीब है। लेकिन अगर उससे कहो, "सलीमा, तुम हर रोज़ यह सब्ज़ साड़ी पहनकर क्यों आती हो," तो फ़ौरन बिगड़कर जवाब देगी, "मेरे पास ऐसी एक नहीं, अनेक साड़ियाँ हैं। मुझे यह खास कपड़ा और खास रंग बहुत पसन्द है।" परमात्मा झूठ न बुलवाए जो उसके पास उस साड़ी के सिवाय एक चिन्दी भी नहीं है।

निर्मला : सिर में तेल लगाएगी, ऐसा बदबूदार कि नाक फट जाए। पर उससे पूछो तो यही कहेगी, "यह खास तेल है। इससे बाल लम्बे होते हैं। मुझे वैसे भी खुशबूदार तेल पसन्द नहीं। लगाऊं तो ज़ुकाम हो जाता है।"

उषा : बी मेंढकी को बात-बात पर ज़ुकाम होने का खतरा बना रहता है—तोबा है, भई।

ज़किया : और देखो, सब लोग आए पर वह ज़ुकाम की बच्ची नहीं आयी··· (अन्तराल) बेकार मैंने उसे गाली दी। अल्लाह की कसम, मुझे दुःख हुआ। निर्मला, सच कहती हूँ उसका वह सयानापन दूर हो जाए तो उस जैसी अच्छी सहेली तुम्हें चिराग लेकर ढूंढ़ने पर भी न मिलेगी। मगर मुसीबत तो यह है कि बात-बात पर बिगड़ जाती है। हर वक्त भरी बन्दूक बनी रहती है। इसका क्या इलाज किया जाए ?

[कदमों की चाप]

अनवर : किसका इलाज···

ज़किया : हम सलीमा का ज़िक्र कर रहे हैं। आप दोस्तों वगैरा से मिल चुके ?

अनवर : जी हाँ। तो आप सलीमा का ज़िक्र कर रही थीं। मगर इलाज का किस्सा क्या था ?

ज़किया : (हँसती है) कुछ नहीं···अच्छा, तो अब किस कालेज में दाखिल होइएगा ?

अनवर : जिसमें आप कहें ?

ज़किया : निर्मला, सुना तुमने ! यह आज एक नया फ्रॉड चला रहे हैं। हरेक से यही कहते फिरते हैं, "जिसमें आप कहें।"

[सब हँसते हैं।]

अनवर : आप सलीमा की बातें कर रहे थे ?

ज़किया : जी हाँ।

अनवर : आप ?

ज़किया : मैं भी उसकी बातें कर रही थी।

अनवर : और आप···?

ज़किया : उस गुफ़्तगू में मैं भी शामिल थी।

ज़किया : आप तो बिलकुल पुलिस इन्स्पेक्टर बन रहे हैं।

अनवर : जी नहीं। मेरे दखल देने की वजह यह है कि मैं अभी-अभी सलीमा से गुफ़्तगू करके आ रहा हूँ···

निर्मला : कहाँ से ?

अनवर : बाहर, बाग में।

उषा : चलो ज़किया, चलें।

अनवर : ठहरिये।

उषा : फ़रमाइये ?

अनवर : इस वक्त अगर आप उसके पास न जाएँ तो अच्छा है। उसकी तबीयत बहुत ही गम में है। सदमे ने उसके दिमाग को परेशान कर रखा है। वह आप लोगों से अच्छी तरह गुफ़्तगू न कर सकेगी और यह भी मुमकिन है कि वह कोई ऐसा चुभता हुआ फ़िकरा कह दे जिससे आपमें से किसी को रंज पहुँचे। वह इस वक्त बिलकुल भरी बैठी है। अगर किसी ने उसको छेड़ा तो आफ़त आ जाएगी।

ज़किया : यह बड़ी मुसीबत है। अगर अब कोई उससे हमदर्दी जताना चाहे तो क्या करे ?

अनवर : खामोश रहे।

ज़किया : कैसे ?

अनवर : बिलकुल मेरी तरह—बगीचे की तरफ़ से मेरा निकलना हुआ। मैंने देखा वह एक झाड़ी की छाँव तले बैठी है। उसकी आँखों में दो अधूरे आँसू देखकर ही मेरे कदम रुक गये। उसने मेरी तरफ़ देखा। मैं फ़ौरन समझ गया वह दिमागी बेचैनी की आखिरी हद तक पहुँच गयी है। उसकी आँखों में आँसू आना चाहते हैं मगर वह उन्हें रोक रही है। वह नहीं चाहती कि उसकी कमज़ोरी का पता किसी गैर-शख्स को हो जाये। मैंने उस वक्त यह अजीब व गरीब बात महसूस की। वह खुद को भी गैर समझ रही है। वह अपनी कमज़ोरी अपनी आंखों को भी नहीं बताना चाहती। उसके हौसले और उसके पक्के इरादे की मैं हमेशा तारीफ़ करता रहा हूँ। लेकिन अगर मैं उसके पास चला जाता तो वह पहाड़, जो उसने इतनी मेहनत से खड़ा किया था, यकीनन चूर-चूर हो जाता···इस डर के मारे मैं उसके पास न गया। उसने मेरी तरफ़ देखा और मैंने उसकी तरफ़। उसके अधूरे आँसू पूरे होने की आरज़ू में तड़प उठे और मैं यहाँ चला आया।

ज़किया : आपका क्या खयाल है, अगर मैं उसके पास जाऊँ तो वह मुझे मारेगी ?

अनवर : मैं कुछ नहीं कह सकता। मगर वह इस वक्त गज़बनाक हालत में है। नाकामी पर उन आदमियों की अकसर यही हालत हुआ करती है जिन्हें अपने ऊपर ज़रूरत से ज़्यादा भरोसा होता है। वह नाकामी को एक छोटी-सी गेंद समझते हैं और खयाल करते हैं कि उसे एक ही ठोकर से परे हटाकर अपना रास्ता साफ़ कर लेंगे मगर कभी-कभी ऐसा भी होता है कि यह गेंद ज़मीन में गड़ जाती है और ज़ोर-ज़ोर से ठोकरें मारने पर भी अपनी जगह से नहीं हिलती। लेकिन शायद मेरा खयाल गलत हो—मैं दरअसल कोशिश के बावजूद सलीमा को नहीं समझ सका।

ज़किया : हम सबके लिए एक गोरखधंधा बनी हुई है।

उषा : यह तो अनवर साहब ने ठीक कहा है कि उसे ज़रूरत से ज़्यादा अपने ऊपर भरोसा है। क्या पता सारी खराबी की जड़ यही हो।

ज़किया : हो सकता है।

अनवर : मेरे और उसके ताल्लुकात किसी हद तक अच्छे ही रहे हैं, मगर इसके बावजूद मैंने उस वक्त उससे हमदर्दी जताना ठीक नहीं समझा। आप लोगों से तो उसकी हमेशा चख-चख चलती रही है। मैं समझता हूँ, निर्मला बहन को तो एक आँख नहीं भाती। इस सूरत में सलीमा और आपके दरम्यान हमेशा एक खाई बनी रही है।

ज़किया : हमारा उसके पास जाना वाकई मुनासिब नहीं।

अनवर : और मेरी राय पर अगर आप अमल करें तो इस दरवाज़े से बाहर निकल जायें। मुमकिन है आपको देखकर उसे तकलीफ़ पहुँचे।

उषा : पहुँचती है तो पहुँचे। भई, मैं तो उस दरवाज़े से बाहर चली जाऊँगी। चिढ़ाने के लिए बिलकुल उसके पास से अकड़ती हुई चलूँगी।

अनवर : उषा, तुमने उसे क्लास में सबसे ज़्यादा तंग किया है। अब कालेज छोड़कर जाते-जाते उसके दुखते दिल को अपनी कामयाबी दिखाकर ठेस पहुँचाना क्या ठीक होगा? हो सकता है, इसमें तुझे मज़ा आये मगर उसको यकीनी तौर पर दुःख होगा। सलीमा बहुत हस्सास लड़की है।

उषा : तुम हमेशा उसका पक्ष लेते रहे हो। लेकिन याद है, उस दिन तुम्हारी उस भावुक लड़की ने तुम्हारे साथ क्या सलूक किया था?

अनवर : (हँसता है) मेरी भावुक लड़की?

[सब हँसते हैं।]

ज़किया : सच तो यह है, क्लास में सलीमा से आपका सलूक वैसा ही था जैसा एक बाप का अपनी बेटी से होता है।

अनवर : (हँसता है) लेकिन इसके बावजूद जैसा कि उषा ने अभी-अभी कहा है, मेरी शफ़कत को हमेशा ठुकराती और मेरी हमदर्दी को हमेशा रौंदती रही है।

ज़किया : ज़िद्दी और बदमिज़ाज लड़कियों से आप और किस किस्म के बर्ताव की उम्मीद कर सकते हैं?

अनवर : उसकी ज़िद्द और बदमिज़ाजी से आपकी तरह मैं भी वाकिफ़ हूँ। मगर यह ज़िद्द और बदमिज़ाजी कैसे पैदा हुई, इसके बारे में न आप जानती हैं और न मैं। अब हम यह कालेज छोड़कर जा रहे हैं। और वह अकेली रह गयी है, अजनबियों के बीच। ज़ाहिर है कि नये लोग उसे बहुत ज़्यादा परेशान करेंगे और इसका नतीजा होगा कि उसके मिज़ाज में और ज़्यादा चिड़चिड़ापन हो जाएगा। कुछ समझ में नहीं आता कि इस लड़की का अंजाम क्या होगा ? तुम लोगों ने गौर नहीं किया कि वह किस कदर दुबली हो गयी है। उसकी हड्डियाँ बाहर निकल आई हैं। ऐसा मालूम होता है कई वर्षों की बीमार है। कहीं ऐसा न हो कि—मेरे जिस्म में कँपकँपी छूटने लगती है जब मैं सोचता हूँ कि सलीमा अपनी ज़िन्दगी के एक नामालूम मोर्चे पर लड़ती-लड़ती अकेली मारी जायेगी।

ज़किया : वह अपने दिल का हाल किसी को बताये भी।

उषा : मैं तो उससे कई बार पूछ चुकी हूँ।

निर्मला : अपने मैले पेटीकोट की तरह वह हमेशा उसे छुपाये रहती है।

अनवर : लेकिन उसका दिल उसके पेटीकोट की तरह मैला नहीं—मुझे इसका यकीन है।

[दूर से बहुत-से लड़के-लड़कियों के आने की आवाज़]

अनवर : एक झुण्ड का झुण्ड इधर आ रहा है। आप चली जायें। मैं नहीं चाहता कि सलीमा के बारे में ये लोग भी बातें करें। आप चली जायें।

[झुण्ड का शोर करीब आ जाता है। निर्मला, उषा और ज़किया उसमें शामिल हो जाती हैं। सब मिलकर एक लहर की तरह आगे निकल जाते हैं। आहिस्ता-आहिस्ता इस शोर को फ़ेड आउट किया जाये। इसके बाद अनवर के कदमों की चाप। कुछ क्षणों तक उसे जारी रखा जाये।]

अनवर : (हिचकिचाते हुए) सलीमा, क्या मैं तुम्हारे पास आ सकता हूँ ?

सलीमा : (तल्ख लहजे में) तुम्हें किसने रोका है ? आना चाहते हो तो आ जाओ।

अनवर : (लम्बा अन्तराल) तुम यहाँ बहुत देर से बैठी हो।

सलीमा : हाँ, बहुत देर से बैठी हूँ। कहते हो तो उठकर चली जाती हूँ।

अनवर : नहीं, नहीं। मेरा मतलब यह नहीं कि तुम उठकर चली जाओ। मैं दरअसल तुमसे कुछ बातें करना चाहता था।

सलीमा : कैसी बातें ?

अनवर : तुम्हारा लहजा इस कदर सख्त है कि···

सलीमा : बदमिजाज जो ठहरी।

अनवर : नहीं सलीमा। (अन्तराल) मेरा यहाँ आना तुम्हें नागवार गुज़रा है तो मैं चला जाता हूँ।

सलीमा : तुम कहना क्या चाहते हो ?

अनवर : कोई खास बात नहीं—बस, यूं ही तुमसे बातें करने को दिल चाहा, इसलिये चला आया—इससे पहले भी मैं इधर से गुज़रा था मगर तुम—सलीमा, अकेले में तुम क्या बिलकुल नहीं घबराती हो ?

सलीमा : कैसा अकेलापन—मैं बिलकुल अकेली नहीं हूँ।

अनवर : (हँसता है) हाँ, अब तुम अकेली नहीं हो।

सलीमा : इससे पहले भी अकेली नहीं थी। तुम चले जाओगे फिर भी मैं तन्हा न हूँगी, न···

अनवर : मेरा मतलब है कि तुमने क्यों अपनी तबीयत पर इतना बोझ डाल रखा है ? इसमें कोई शक नहीं कि आदमी अकेला होने पर भी भीड़ में घिरा हो सकता है। पर तुम्हारे बारे में पक्के तौर पर यह कह सकता हूँ कि तुम खौफ़नाक तौर पर अकेली हो। तुम्हारा कोई दोस्त नहीं। तुम्हारा कोई हमदर्द नहीं।

सलीमा : यहाँ कालेज की चारदीवारी में अगर मेरा कोई दोस्त नहीं तो इसका मतलब यह नहीं समझना चाहिए कि मैं खौफ़नाक तौर पर अकेली हूं। मेरे दोस्त-हमदर्द मौजूद हैं। अगर मैं चाहती तो यहाँ भी अपने दोस्त पैदा कर लेती मगर मुझे उनकी ज़रूरत नहीं और हमदर्द उस वक्त पैदा होते हैं जब किसी की हालत काबिल-ए-रहम हो—मेरी हालत काबिल-ए-रहम नहीं—तुम मुझे हमेशा गलत समझते रहे हो। (हँसती है) अच्छी-भली हूं। चलती-फिरती हूं। बोलती-चालती हूं। मुझमें क्या नुक्स है ? मुझमें क्या खराबी है जो दूसरों के दिल में हमदर्दी का जज़्बा पैदा हो जाता है ? मैं समझती हूँ कि इन लोगों के अपने दिमाग की खराबी का नतीजा है।

अनवर : लेकिन···लेकिन···

सलीमा : मुझे किसी की हमदर्दी की ज़रूरत नहीं। मैं जानती हूँ कि तुम किस गर्ज़ से मेरे पास आए हो—हो सकता है कि तुम्हारी हमदर्दी में खलूस हो मगर मुझे इसकी ज़रूरत भी हो—मैं अगर दो बार फेल हो गयी तो इसका यह मतलब नहीं कि मेरा कोई अज़ीज़ मर गया है, मेरा बाज़ू टूट गया है, मैं लूली-लँगड़ी हो गयी हूँ। और जो इसका यह मतलब निकालते हैं कि मैं कुन्दज़हन हूँ, वह भी ठीक नहीं—मैं तुमसे कहीं ज्यादा ज़हीन हूँ—कौन-सी बात है जो मेरे दिमाग में नहीं आ सकती —तुम ही बताओ—क्लास में जब नए-नए आए थे तो क्या मैंने फ़लसफ़े के कई मुश्किल नुक्ते नहीं समझाए थे ? तुम क्लास में सबसे अधिक होशियार तालेबिलम माने जाते थे। लेकिन मैं कई बार तुम्हारी गलतियाँ निकाल चुकी हूँ। क्या वह दुरुस्त नहीं ?

अनवर : सलीमा, मैं तुम्हारी इस तस्वीर को तोड़ना नहीं चाहता था मगर अब मजबूरन मुझेयह कहना पड़ रहा है कि मैं हमेशा तुम्हारा हौसला बढ़ाता रहा हूँ—फ़लसफ़े के जो नुक्ते तुमने मुझे समझाए हैं, शुरू से आखिर तक गलत थे। एक लफ़्ज़ भी तुम्हारा सही नहीं था। क्लास में तुम मेरी गलतियाँ निकालती रही हो और मैं मंज़ूर करता रहा हूँ। सिर्फ़ इसलिए कि तुम्हारा शगल जारी रहे और तुम्हें नाउम्मीदी न हो।

आज मुझे महसूस हुआ है कि मेरा यह रवैया बिलकुल गलत था। तुम अपने आपको धोखा देती रहीं और मैं तुम्हारी मदद करता रहा हूँ। यह मेरी खतरनाक गलती थी न—यही वजह है कि अब मैंने उसे दूर करने के लिए तुमसे साफ़-साफ़ कह दिया है कि अपनी अक्ल और काबलियत के बारे में तुम्हारा दावा बिलकुल बेबुनियाद है।

सलीमा : मैं जानती थी। मुझे मालूम था कि तुम सबसे बड़े हासद हो। आज तुमने जो ज़हर उगला है, उससे यह बात साबित होती है कि तुम वाकई हासद हो। चूंकि मैं लायक हूँ, ज़हीन हूँ और तुम्हारे मुकाबले मेरी समझ-बूझ कहीं ज़्यादा है। इसलिए कि तुम दूसरों की तरह मुझसे खार खाते हो—क्लास में अगर मैंने तुम्हारी तरफ़ कुछ ध्यान दिया था तो इसका मतलब सिर्फ़ यह था कि तुम दूसरों के मुकाबले कुछ अच्छे थे। उनके मुकाबले तुम्हारे अन्दर हसद का माद्दा कुछ कम था। पर अब मालूम हुआ है कि तुम सबसे ज़्यादा ज़हरीले हो—(**आवाज़ भर्रा जाती है**) कई बार तुम्हारी चिकनी-चुपड़ी बातें सुनकर मुझे खयाल होने लगा था कि शायद तुम मेरे सच्चे दोस्त हो। पर अब तुमने अपनी असलियत···

अनवर : सलीमा···

सलीमा : (**आवाज़ ज़्यादा भर्रा जाती है**) तुमने इस वक्त जो बात कही है, उसका मुझ पर कोई असर नहीं हुआ—(**रोने लगती है**) बिलकुल असर नहीं हुआ। तुम्हारी कामयाबी ने मेरी नाकामी का जी भरकर मुँह चिढ़ा लिया है। अब जाओ, खुशी-खुशी अपने घर चले जाओ—आए थे वहाँ से हमदर्दी करने—हमदर्दी—जाओ, इस हमदर्दी को अपने साथ ले जाओ···मेरे बूट के तले अभी इतने कमज़ोर नहीं हुए जो मुझे तुम्हारी इस हमदर्दी की ज़रूरत हो। (**फूट-फूटकर रोना शुरू कर देती है**) मुझे किसी की भी परवाह नहीं। तुम सब समझते हो कि मैं तन्हा हूँ। बेसहारा हूँ। अपाहिज हूँ।(**रोते-रोते हँसती है**) इसीलिए तुम मुझे खैरात के तौर पर अपनी हमदर्दी के सूखे टुकड़े देते हो—मैं, मैं नहीं लेना चाहती। यह भीख है··· मैं नहीं लेना चाहती यह, यह खैरात···जाओ···जाओ···यहाँ से चले जाओ··· (**बहुत ज़ोर से रोना शुरू कर देती है।**)

अनवर : जाता हूँ···जाता हूँ··· लेकिन सलीमा, खुदा गवाह है कि मेरा यह मतलब हर्गिज़ नहीं था।

सलीमा : जाओ, जाओ—मैं कुछ सुनना नहीं चाहती।

अनवर : (**उदासी के साथ**) बहुत बेहतर, चला जाता हूँ।

[कदमों की चाप। इसके साथ-साथ सलीमा की हिचकियाँ। आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड आउट]

अनवर का बाप : तुमने यह बड़ी अजीब कहानी सुनाई—

अनवर : अब्बाजी, यह कहानी नहीं, हकीकत है—

अनवर का बाप : कहाँ रहती है यह लड़की ?

अनवर : मालूम नहीं, कहाँ रहती है। क्लास में किसी को भी उसके घर का पता नहीं था। मैंने कई बार उससे पूछा, मगर उसने बड़ी सफ़ाई से टाल दिया।

अनवर का बाप : क्या उसने कालेज छोड़ दिया है ?

अनवर : मालूम नहीं। आज करीब छः महीने के बाद बम्बई से यहाँ आया हूँ। लेकिन मेरा खयाल है, उसने पढ़ाई नहीं छोड़ी होगी। कुछ भी हो, आज किसी से पता निकालूंगा। मैं उसे एक बार फिर मिलना चाहता हूँ—मेरी बातों से उसे बहुत दुःख पहुंचा था अब्बाजी—मैं उससे माफ़ी माँगना चाहता हूँ।

[नौकर अन्दर दाखिल होता है।]

नौकर : छोटे साहब, एक लड़का आपके नाम खत लाया है।

अनवर : खत ?

अनवर का बाप : (**नौकर से खत लेकर**) लो। यह रहा।

अनवर : (**खत खोलता है—अन्तराल**) सलीमा···अब्बाजी, वही सलीमा—

अनवर का बाप : क्या लिखती है ?

अनवर : (**घबराहट में**) मिस्टर अनवर—मैं मरने के करीब हूँ। आपसे मिलना चाहती हूँ।

अनवर का बाप : मरने के करीब है—जाओ अनवर ! भागकर जाओ—

नौकर : जो लड़का यह खत लाया था, बाहर खड़ा है।

अनवर : उसे रोके रखो···

अनवर का बाप : जाओ, मेरी मोटर ले जाओ। बाहर खड़ी है।

अनवर : क्या हुआ उसे ?···मैं जाता हूँ—

[कदमों की तेज़ आवाज़—दरवाज़ा—मोटर स्टार्ट होती है, फिर चलती है—कुछ क्षणों बाद यह आवाज़ फ़ेड आउट कर दी जाए।]

× × ×

[दरवाज़ा खोलने की आवाज़]

अनवर : सलीमा, सलीमा ! कहाँ हो तुम ? अरे—सलीमा !

सलीमा : (**मंद आवाज में**) आ गए ? आ जाओ—इधर मेरे पास आ जाओ—

अनवर : मेरी समझ में नहीं आता—क्या हुआ तुम्हें—तुम—तुम—

सलीमा : मैं बेहद कमज़ोर हो गयी हूँ—है न ? मुझे मालूम था, तुम यही कहोगे। नहीं। मैं अभी कुछ देर ज़िन्दा रहूँगी। मुझे तुमसे कुछ बातें करनी हैं—बैठ जाओ—इधर ही बैठ जाओ।

अनवर : मैं···मैं···

सलीमा : तुम्हें हैरत हो रही है इस गन्दे कमरे को देखकर। इसे न देखो। यहाँ जिस चीज़ को भी देखोगे, तुम्हें हैरत होगी—सबसे बड़ी हैरत वाली चीज़ तो मैं हूँ। मुझे देखो, जितना हैरान होना चाहो, हो लो।

अनवर : मुझे ऐसा महसूस होता है कि मैं किसी कदर समझ रहा हूँ।

सलीमा : खुद समझने की कोशिश न करो। मुझे समझाने दो—मैं तुम्हें इस दफ़ा फ़लसफ़े के मुश्किल नुक्ते नहीं समझाऊँगी। ये किताबों की उलझी हुई बातें नहीं, मेरे दिल की तहरीर है जो बेहद शिकस्ता खत में लिखी गयी और किसी से न पढ़ी गयी। सच पूछो तो जानबूझकर मैंने इस बुरी लिखावट से काम लिया—मेरी आवाज़ ज्यादा कमज़ोर तो नहीं ? सुन रहे हो न ?

अनवर : सुन रहा हूँ।

सलीमा : अनवर, मेरी किश्ती टुकड़े-टुकड़े हो चुकी है—पेंदे और पतवारों के बगर उसे कई वर्षों मँझधार में खेती रही हूँ। पर अब यह किश्ती ही नहीं रही। इसको खेने की ताकत भी अब मेरे बाज़ुओं में मौजूद है, लेकिन मैं अब उसे अपने साथ कब्र में ले जाऊँगी। अनवर, क्या वहाँ भी ऐसी टूटे हुए पेंदे और पतवारों के बगैर किश्तियाँ मिलेंगी ?—(अन्तराल) तुम बोलते क्यों नहीं—तुम्हारी आँखों में आँसू क्यों तैर रहे हैं ? मेरी तरफ़ देखो, मेरी आँखें तो बिलकुल खुश्क हैं—हैं न ?

अनवर : हाँ, बिलकुल खुश्क हैं।

सलीमा : मैं अपनी इस टूटी हुई किश्ती के लिए इधर-उधर से चन्द चिथड़े इकट्ठे करके बादबान बनाती रही हूँ। लेकिन तूफ़ान ने बड़ी बेरहमी से इनको चीर-फाड़ दिया। अनवर, यह तूफ़ान इस कदर बेरहम क्यों होते हैं—उन्होंने क्यों इतना नहीं सोचा कि इस लड़की के पास मज़बूत कपड़ा हासिल करने के लिए दाम नहीं थे—अनवर, जब मैंने यह ताकत मान ली है फिर यह जुल्म क्यों ? मैं इस अन्धेरी कोठरी में बिलकुल अकेली मेहनत करती रही हूँ। मैंने किसी के आगे दामन नहीं फैलाया। क्या यह जुर्म था जो इसकी इतनी बड़ी सज़ा मुझे दी गयी ? मैंने अपने तमाम नाज़ुक जज़्बे निकालकर बाहर फेंक दिए हैं कि ये मेरे रास्ते में आएँगे। मैंने भूख और प्यास सही। मैंने और बहुत-सी तकलीफ़ें बरदाश्त कीं। सिर्फ़ इसलिए कि मैं एक बार इम्तहान पास कर लूं और खुद कमाने के काबिल हो जाऊं···लेकिन इन तमाम कुर्बानियों का अंजाम यह है—सूखे हुए होंठ, गालों की उभरी हुई हड्डियाँ और अन्दर धँसी हुई आँखें— इन तमाम कुर्बानियों का अंजाम यह डरावना भूत है जो तुम्हारे सामने लेटा है···(अन्तराल) मैं थोड़ी देर के बाद सो जाऊँगी। वह लोहा जो मैं इतनी देर अपनी ज़िन्दगी की भट्ठी में सुर्ख करके कूटती रही, अब खुद-ब-खुद मुड़कर कब्र के दहाने की तरफ़ जा रहा है। अनवर, क्या वहाँ भी मुझे यही भट्ठी सुलगानी पड़ेगी ? क्या वहाँ पहुँचकर यह लोहा खुद-ब-खुद मुड़कर किसी और दहाने की तरफ़ तो नहीं चला जाएगा—बोलो, मुझे जवाब दो ?

अनवर : बड़े-बड़े आलिम ही ऐसी बातों का जवाब दे सकते हैं।

सलीमा : काश ! तुम ऐसे आलिम होते !···अब मैं क्या करूँ ? कुछ समझ में नहीं आता। तुमने तो मेरी किसी बात का जवाब नहीं दिया।

अनवर : क्या चाहती हो तुम ?

सलीमा : मैं मर रही हूँ और तुमने मुझे कुछ नहीं बताया—अब ऐसा करना कि मेरी ये दो सब्ज़ साड़ियाँ और ये सारी किताबें, जो यहाँ बिखरी पड़ी हैं, उठाकर मेरे साथ ही दफ़न कर देना—मुमकिन है वहाँ ये चीज़ें और भी ज़्यादा महँगी मिलें। मैंने बड़ी मुसीबत से यहाँ खरीदी थीं। और देखो, किसी को मेरी मौत की खबर न हो—चुपके से कहीं दफ़ना देना। अब मुझसे ज़्यादा नहीं बोला जाता—मेरा खयाल है कि मुझे और भी कुछ कहना था।

अनवर : याद कर लो—(**एकदम परेशानी के साथ**) सलीमा !

सलीमा : हाँ···अनवर, मेरे दिमाग पर धुंध-सी छा रही है—सब्ज़ साड़ियाँ मेरे इर्दगिर्द लिपटी जा रही हैं—किताबों के पन्ने फड़फड़ा रहे हैं। ऐसा महसूस होता है कि एक खामोश-सी आँधी चल रही है। किश्ती का पेंदा टूटा हुआ है—पतवार नदारद—अनवर ! सो गए क्या ?

अनवर : नहीं सलीमा—तुम्हारी अपनी आँखें बन्द हो रही हैं।

सलीमा : हाँ, मेरी अपनी आँखें बन्द हो रही हैं—लो, अब मैं रुखसत चाहती हूँ—मुझे माफ़ कर देना—हाँ, मुझे वह बात याद आ गयी—अनवर, सुन रहे हो ?

अनवर : सुन रहा हूँ सलीमा।

सलीमा : तुम बहुत अच्छे हो—बस, मुझे यही कहना था कि तुम बहुत अच्छे हो। ···तुम बहुत ही अच्छे हो—(**आवाज़ धीमी हो जाती है।**)

(**फ़ेड आउट**)

उसका रामू

पात्र

गोपाल
बिन्दू
हामिद
सुशीला

[गोपाल का कमरा। दरवाज़े पर दस्तक होती है। दस्तक के बाद किताब बन्द करने की आवाज़ सुनाई देती है।]

गोपाल : कौन है ?—चले आओ, दरवाज़ा खुला है।

[दरवाज़ा खुलता है।]

बिन्दू : (एक जवान लड़की दरवाज़ा खोलकर अन्दर दाखिल होती है। वह हिचकिचाकर कहती है) अन्दर आ जाऊँ बाबूजी !

गोपाल : अन्दर आ भी गयी और पूछ भी रही है।—मगर तुम हो कौन ?

बिन्दू : मैं—मैं—बिन्दू हूँ···हम रेलवाई वाले जो बड़े साहब हैं, उनके हाँ आया का काम करती हूँ। रहती हूँ। यहाँ आपके पड़ोस में, यह जो चौदह नम्बर की कोठी है न, उसमें। इकली, मेरा कोई भी नहीं है···मैं···

गोपाल : अपनी दास्तां तो फिर कभी सुनाना। यह कहो, चाहती क्या हो···अगर कुछ माँगने आई हो तो अफ़सोस है कि तुम्हें कुछ न दे सकूंगा। मेरे घर से अभी तक खर्च नहीं आया। कालेज की फ़ीस भी अभी तक अदा नहीं की।

बिन्दू : बाबूजी, मैं भीख माँगने नहीं आयी। मैं क्या भिखारिन दिखती हूँ ? मैं तो एक पत्र लिखवाने आयी थी। लिख दोगे ?

गोपाल : लिख दूंगा। लिख दूंगा। लिखने और पढ़ने के अलावा और मुझे काम ही क्या है।

बिन्दू : आप बड़े अच्छे हो बाबूजी। आप बड़े अच्छे हो। आप पत्र लिख दो। टिकस मैं ले लूंगी।

गोपाल : हाँ, हाँ। टिकट तुम्हें ही लेना पड़ेगा। मैंने डाकखाना तो यहाँ खोल नहीं रखा। बैठ जाओ। बोलो, क्या लिखवाना है ?

[पैड खोलने की आवाज़ सुनाई देती है। एक कागज़ फाड़ा जाता है।]

गोपाल : हूँ···तो क्या लिखूं ?

बिन्दू : लिखिए।

गोपाल : हूँ।

बिन्दू : लिखिए··

गोपाल : हूँ···चलो, मुँह से तो कुछ बोलो या जो दिल में आए घसीट दूं !

बिन्दू : लिखिए।

गोपाल : लिखवाइए।

बिन्दू : लिखिए···अज़ तरफ़ खास शहर बम्बई···गली चौथी···पीर खान···सीमेण्ट की चाल। चौदह नम्बर की खोली···दूसरा माला···इसके आगे मेरा नाम लिख दो।

गोपाल : क्या है तुम्हारा नाम ?

बिन्दू : बिन्दू।

गोपाल : लिख दिया···अब ?

बिन्दू : लिखिए—मेरे प्यारे—मेरे प्यारे रामू—

गोपाल : (लिखते हुए) मेरे प्यारे, मेरे दिल से प्यारे रामू—लिख लिया। आगे—

बिन्दू : तूने इतने दिनों से अपनी बिन्दू की सुध क्यों नहीं ली ? वह बिरह की मारी तारे गिन-गिनकर रात काटती है। हर समय तेरा ही ध्यान है। वह सोती-जागती, उठती-बैठती तेरे ही नाम की माला जपती है। उसका तन-मन तेरी याद में पड़ा रहता है। तू कब आएगा रामू ? मेरे तपते हुए हृदय को अपने प्रेम से कब ठण्डक पहुँचाएगा—तू आए न आए, पर तेरी बिन्दू सदा तेरी ही बिन्दू रहेगी—वह तेरी है, सारी की सारी तेरी।

गोपाल : ठहरो तो···यह···

बिन्दू : बस, हो लिया। नीचे ये बोल लिख दीजिए—कब आओगे पीतम प्यारे !···बस ···पर आपने तो कुछ लिखा ही नहीं। ये बोल बुरे हैं क्या···मैंने कल ही याद किए हैं। छोटी मेम साहब गा रही थीं।

गोपाल : मैं पूछता हूँ, यह रामू कौन है ?

बिन्दू : रामू··· (शरम से भरी हँसी) रामू···आप क्यों पूछते हैं···मैंने सबकुछ तो अभी-अभी कह दिया है।

गोपाल : तो यह रामू तेरा 'वह'···तुझसे प्रेम-व्रेम करता होगा ?

बिन्दू : (शरमीली हँसी के साथ) आप तो हँसी करते हो बाबूजी।

गोपाल : प्रेम करना पाप नहीं। जुर्म नहीं। फिर शरमाती क्यों हो ? इस रामू से तुम्हारा प्रेम कब हुआ ?

बिन्दू : पिछले सावन में···जब बड़ी मेम साहब का ब्याह हुआ···लाओ मेरा पत्तर, मैंने आपको बहुत तकलीफ़ दी···अगर आप कहें तो मैं हर रोज़ इस कमरे में

झाड़ू दे जाया करूँ ?

गोपाल : नहीं, नहीं···इसकी कोई ज़रूरत नहीं···यह कोई तकलीफ़ नहीं है···लो अपना खत···जै राम जी की···इसका रामू ।

[कागज़ की खड़खड़ाहट सुनाई देती है ।]

दूसरे दिन

गोपाल : सारी बात मैं तुम्हें सुना चुका हूं कि किस तरह वह आई और किस तरह अपने आशिक के नाम खत लिखवाकर ले गई । अब तुम इससे क्या नतीजा निकालते हो ?

हामिद : यह कौन-सा गोरखधंधा है जो दिमाग पर ज़ोर दिया जाए । जी की बात है कि दो इन्सान एक-दूसरे से प्रेम करते हैं और बस···

गोपाल : यह प्रेम पैदा किस तरह हो जाता है ?

हामिद : किस तरह ? पकने पर फल मीठा क्यों हो जाता है ? आग पर दूध उबलने क्यों लगता है ? बतख के बच्चे पैदा होते ही तैरने क्यों लग जाते हैं ? तुम्हारी बिन्दू और उसके रामू में प्रेम पैदा होने की वजह इसके सिवाय और क्या हो सकती है कि दोनों के पहलू में दिल है, जो धड़कता है । बाकी सबकुछ जवानी सिखा देती है ।

गोपाल : ठीक है । सबकुछ जवानी ही सिखाती है और कोई चीज़ नहीं सिखा सकती । वह बिलकुल खूबसूरत नहीं—भद्दी-सी शक्ल, काला रंग, मैले दाँत, खुरदरे कम्बल जैसे गाल, मोटे-मोटे होंठ, ठिगनी-सी···मगर जवान ज़रूर है और मालूम होता है कि जवानी उस पर नयी-नयी आई है ।

हामिद : खुदा करे तुम्हारी बिन्दू का रामू कोई अच्छा आदमी हो और उसका प्रेम झूठा न हो । मुझे ऐसे मामलों में अपने भाइयों पर एतबार बिलकुल नहीं । ये लोग मुसाफ़िरों की तरह उस पेड़ को बिलकुल ही भूल जाते हैं जिसकी छाँव में उन्हें आराम मिलता है ।

[फ़ेड आउट]

[उस घर का एक कमरा, जहाँ बिन्दू आया का काम करती है ।]

बिन्दू : छोटी मेम साहब ! बड़े साहब कहाँ हैं ?

सुशीला : अपने कमरे में किसी दोस्त से बातें कर रहे हैं । तू अभी उस तरफ़ नहीं जा सकती ।

बिन्दू : नहीं, मुझे उस तरफ़ नहीं जाना है । एक काम आपसे था ।

सुशीला : कैसा काम ?

बिन्दू : आप हिन्दी पढ़ लेती हो न ?

सुशीला : स्कूल में क्या इतने वर्ष तक घास काटती रही हूँ—तू कहना क्या चाहती है ?

बिन्दू : नहीं, धीरे-धीरे सबकुछ कहती हूँ—यह एक पत्तर पढ़कर सुना दो···

[कागज़ खोलने की आवाज़ सुनाई देती है।]

सुशीला : क्या पढ़वाना चाहती है तू···कहाँ से उठा लाई यह कागज़ का टुकड़ा ?

बिन्दू : लिखा का है मेम साहब !

सुशीला : (पढ़ती हूँ) मेरे प्यारे, मेरे दिल से प्यारे रामू ! तूने इतने दिनों से अपनी बिन्दू की सुध क्यों नहीं ली···(ठहर जाती है) कौन है यह रामू ?

बिन्दू : आप सारा पत्र पढ़कर सुना दो···अपनी बिन्दू की सुध क्यों नहीं ली···आगे···

सुशीला : वह बिरह की मारी तारे गिन-गिनकर रात काटती है। हर समय उसका ध्यान तेरी तरफ़ है। वह सोती-जागती, उठती-बैठती तेरे ही नाम की माला जपती है। उसका तन-मन तेरी ही याद में पड़ा रहता है। तू कब आएगा रामू ! तू मेरे तपते हुए हृदय को अपने प्रेम से कब ठण्डक पहुँचाएगा ? तू आए न आए, तेरी बिन्दू सदा तेरी ही बिन्दू रहेगी। वह तेरी है। सारी की सारी।

बिन्दू : सारी की सारी तेरी। बाबू ने एक-एक बोल ठीक लिख दिया। यही मैंने लिखाया था।

सुशीला : बिन्दू, तूने यह इश्कबाज़ी कब से शुरू की ? साहब को पता लग गया तो चुटिया से पकड़कर कोठी से बाहर कर देंगे।

बिन्दू : मेम साहब, मुझसे का कसूर हुआ ?

सुशीला : कसूर ! तुझे ये बातें करते और दूसरों से ऐसे खत लिखवाते लाज नहीं आती ? ठहर तो सही। अभी सारी बात साहब से कहती हूँ।

बिन्दू : आप तो नाहक खफ़ा हो रही हैं। मैं आपके कई पत्तर उस टोप वाले बाबू के पास ले जाती रही हूं। वह जो सैकल पर आया करता है। पर मैंने बड़े साहब से कभी कुछ कहा ?

सुशीला : चुप रह···जा, अपना काम कर।

[गोपाल का कमरा— दरवाज़े पर दस्तक होती है।]

गोपाल : कौन है ? दरवाज़ा खुला है। चले आओ (बड़बड़ाता है) मेरा दरवाज़ा कभी बन्द नहीं होता। न जाने ये लोग जानबूझकर क्यों दस्तक देना शुरू कर देते हैं ? (हैरत से) अरे, यह तो बिन्दू है। आओ, आओ। चली आओ।

बिन्दू : (शरमीली हँसी) जी हां। मैं हूँ···बिन्दू।

गोपाल : तुमको उसके नाम खत लिखवाना होगा···है न ?

बिन्दू : (शरमीली हंसी) जी हाँ···नहीं···जी हाँ···जी हाँ···लिखवाना तो एक पत्तर ही है पर···

गोपाल : हाँ, हाँ, कह डालो···उसी के नाम लिखवाना है न···क्या नाम बताया था तुमने···हाँ, हाँ, रामू।

बिन्दू : जी नहीं। अब···अब उसकी तरफ़ से जवाब लिखवाना है।

गोपाल : (**हैरत से**) क्या ?

बिन्दू : (**घबराहट से**) कुछ नहीं बाबूजी। कुछ नहीं। मैं भूल गई। मैं यह कहती हूँ··· अब, अब मैं भूल ही गई कि क्या कहना था।

गोपाल : हद हो गई है।

बिन्दू : (**जल्दी से**) हाँ, हाँ। आ गया याद। आ गया याद। मैं यह कहती थी कि आप एक ऐसा पत्र लिख दें। रामू को नहीं। किसी को भी नहीं। किसी को भी मेरे नाम ···जो प्रेम से भरा हो। जिसको पढ़कर मेरी आँखों में आँसू आ जाएं···मगर मैं आपको ठीक नहीं बता सकती। मेरे मन की बात मन ही में रह जाती है···पगली हूँ मैं···अब मैं कैसे समझाऊँ ?

गोपाल : तुम पगली नहीं हो, बल्कि दूसरों को पागल बना रही हो।

बिन्दू : मैं मर जाऊँ जो आपसे झूठ कहूँ···एक बात है, एक बात है बाबूजी। मैं का बताऊँ का बात है···मेरी जीभ तो तालू से चिमट गई है।

गोपाल : सुनो बिन्दू। ये चालबाज़ियाँ मेरे साथ न चलेंगी। मैं शरीफ़ आदमी हूँ।··· जो कुछ तुमने अपने और अपने रामू के बारे में कहा है, सब झूठ है। एक फ़र्ज़ी कहानी है। तुम झूठ बोल रही थीं। यहाँ आकर खत लिखवाने का तुमने एक बहाना बनाया है···मुझे तुम्हारी हालत पर तरस आता है। अपनी जवानी यूं बर्बाद न करो। जाओ—और खयाल रहे कि फिर कभी इस कमरे में दाखिल होने की जुर्रत न करना।

बिन्दू : बाबूजी, बाबूजी···देखा, वही हुआ न जिसका मुझे खटका था। कह नहीं रही थी कि मुझे कोई बात करनी नहीं आती···(**रोनी आवाज़ में**) आपको पता है कि मेरे मन में का है ?···मैं कुछ न बताऊँगी। (**ज्यादा रोनी आवाज़ में**) आपको का पता कि मेरे मन में का है···मैं कुछ न बताऊँगी (**रोती है।**)

[जाने की आवाज···दरवाज़ा बन्द होता है।]

गोपाल : अरे···हद हो गई···कुछ समझ में नहीं आता कि बात क्या है···अजब समस्या है। बेचारी कैसी यकायक रो पड़ी। क्या पता कि बिलकुल बेगुनाह ही है। (**ज़ोर से**) बिन्दू, बिन्दू···इधर आ। मैं तुझे खत लिखे देता हूँ। (**आहिस्ता से**) चली गई !

[कुछ सैकण्ड खामोशी छाई रहती है। इस दौरान टाइमपीस की टिक-टिक सुनाई देती है।]

गोपाल : मैं वाकई उसके साथ बहुत तेज़ी से पेश आया। मुझे माफ़ी माँगनी चाहिए।

[जाने की आवाज़—दरवाज़ा खुलता है और बन्द होता है।

कदमों की आवाज़ (चाप), फिर दस्तक। फिर दरवाज़ा खुलने की आवाज़। फिर बन्द करने की आवाज़]

गोपाल : बिन्दू···बिन्दू···!

बिन्दू : (**रोनी आवाज़ में**) जी !

गोपाल : तुम रो रही हो ?

[बिन्दू ज़ोर से रोना शुरू कर देती है।]

गोपाल : बिन्दू, तुम्हें क्या हो गया है ?

बिन्दू : (**रोना बन्द कर देती है और हिचकियाँ लेती है**) मुझे कुछ नहीं हुआ।···मैं पगली हूँ···मूरख···पर इसमें आपका बिगड़ता ही क्या है। सब प्रेम करते हैं··· सब प्रेम करते हैं···कौन प्रेम नहीं करता ?

गोपाल : करते हैं।···

बिन्दू : तो मैं भी करती हूँ···अपने रामू से प्रेम करती हूँ···अपने रामू से प्रेम करती हूँ, जो बस मेरे मन ही मन में है···दूसरे उनसे प्रेम करते हैं, जो घरों में रहते हैं, चलते-फिरते हैं, बोलते हैं—पर मेरा रामू उन जैसा नहीं है···मैंने उसको अपना बनाया है···न कोई बिन्दू है, न कोई रामू···सबकुछ मैं हूँ···सिर्फ़ मैं।

गोपाल : (**हैरत से**) क्या कहा···यानी रामू-वामू कोई नहीं···और बिन्दू ?

बिन्दू : मैं हूँ।

गोपाल : बिन्दू तुम हो और रामू सिरे से कोई है ही नहीं···आखिर तुम कहना क्या चाहती हो ?

बिन्दू : कुछ नहीं। (**कागज़ की खड़खड़ाहट**) लो, अपना लिखा हुआ पत्तर। आप दूसरा पत्तर न लिखकर दो। मैं कहीं और से लिखवा लूंगी।

गोपाल : (**कागज़ खोलने की आवाज़**) अरे, यह तो वही खत है जो तुमने अपने रामू के नाम मुझसे लिखवाया था···आखिर यह किस्सा क्या है ? मेरी समझ में तो कुछ भी नहीं आता—तुम और खत क्यों लिखवाना चाहती हो ? और तुमने इसे अभी तक डाक में नहीं डाला !

बिन्दू : मैं इसे भिजवाऊँ कहाँ ?

गोपाल : किसे भेजो···रामू को और किसको ?

बिन्दू : अब मैं कित्ती बार कहूँ कि यह रामू कोई भी नहीं है···मैं जानती हूँ कि आप हँसोगे। दुनिया हँसेगी। पर इसमें किसी का बिगड़ता का है ! मैं उसको पत्तर लिखवाती हूँ।

गोपाल : किसको ?

बिन्दू : रामू को। और किसको ?

गोपाल : (**बात काटकर**) तुम अभी तो कह रही थीं कि रामू का कोई अस्तित्व नहीं है ?

बिन्दू : अब मैं कैसे समझाऊँ ? अगर कोई रामू नहीं तो मैं करूँ का ? इसमें मेरा का

कसूर है ? मैंने तो उसे अपने मन में बसा लिया है। वह हो या न हो इससे मुझे का ? मैं तो यही समझती हूँ कि वह है मेरे जैसा जीता-जागता। चलता-फिरता। जैसे मैं उससे प्रेम करती हूँ, वह मुझसे प्रेम करता है। मैं उसको पत्तर लिखवाती हूँ मानो वह सचमुच है और वह जवाब भी देता है।···आपने यह पत्तर उसके नाम लिखा था—मैंने इसे छोटी मेम साहब से पढ़वाया और सुना। और यह समझी कि वह मेरे सामने खड़ा है और मुझसे प्रेम-भरी बातें कर रहा है। फिर मैंने जी में कहा कि अब रामू की तरफ़ से उसकी बिन्दू के लिए जवाब भी आए और आपसे पत्तर लिखने को कहा।···बस, सारी बात यही है। यही आपकी समझ में नहीं आती··· अब अगर आप समझ गए हैं तो बताओ, इसमें किसी का बिगड़ता का है, जो मैं अपने रामू से प्रेम करती हूँ जो इस संसार में नहीं है, पर मेरे मन में रहता है।

(फ़ेड आउट)

ममता की चोरी

पात्र

मिस्टर भाटिया	:	
मिसेज़ भाटिया	:	
गोपाल (गोपू)	:	मिस्टर और मिसेज़ भाटिया का कमसिन लड़का
चपला	:	गोपाल की उस्तानी
डाक्टर	:	

[पानी में हाथ धोने की आवाज़]

डाक्टर : बच्चे को ज़बरदस्त इन्फ़ेक्शन हो गया है। अगर अच्छी तरह देखभाल नहीं की गयी तो मुझे अन्देशा है···

चपला : नहीं, नहीं ! किसी बात का अन्देशा नहीं। आप तसल्ली रखें डाक्टर साहब, उसकी अच्छी तरह देखभाल की जाएगी—यह लीजिए तौलिया।

[बच्चा बुखार में हूँ-हूँ करता है।]

चपला : गोपू—गोपू—मैं तेरी उस्तानी हूँ बेटा—क्या तू आज सबक नहीं पढ़ेगा मुझसे —और सैर के लिए भी तो जाना है हमें—नहीं, नहीं। कल चलेंगे। कल तू बिलकुल ठीक हो जाएगा।

डाक्टर : बातें करने से बच्चे को तकलीफ़ होगी।

चपला : बहुत अच्छा डाक्टर साहब। मैं बातें नहीं करूँगी। पर मैं इसके पास बैठ तो सकती हूँ ? यह खुद चाहता है कि मैं इसके पास बैठी रहूँ।

डाक्टर : तो भाटिया साहब, जो हिदायतें मैं दे चुका हूँ उन पर ज़रूर अमल किया जाए।

मिस्टर भाटिया : बहुत बेहतर डाक्टर साहब !

[चलने की आवाज़···फिर दरवाज़ा खुलता है।]

मिसेज़ भाटिया : डाक्टर साहब, बताइए मेरे बच्चे का क्या हाल है—बच जाएगा न—खतरे की तो कोई बात नहीं ?—और—और—और—और—लेकिन यह क्या ज़ुल्म है कि मुझे उसके पास जाने से मना किया जाता है। (**भावना की रौ में**

बहकर) क्यों ? मैं उसकी माँ नहीं ? वह मेरा बेटा नहीं ? वह औरत—क्या वह औरत कायदे के कुछ शब्द पढ़कर उसकी माँ बन गयी है ? कुछ दिन बाग में ले जाकर क्या उस औरत के दिल में ममता पैदा हो गयी है ? मेरी औलाद पर उसे क्या हक है ? कब तक वह मेरे ही घर में मेरी चीज़ों पर काबिज़ रहेगी ? मैं कब तक यह कष्ट बरदाश्त करती रहूँगी ?

डाक्टर : (गम्भीरता से) बच्चे की हालत नाज़ुक नहीं है, लेकिन वह खतरे के बाहर भी नहीं। बहुत सावधानी की ज़रूरत है—हाँ तो भाटिया साहब, मैं अब इजाज़त चाहता हूँ।

मिसेज़ भाटिया : और···और यह सब सावधानी सिर्फ़ वही औरत कर सकती है···मैं बिलकुल नकारा हूँ। केवल संयोग है कि मैं उसकी माँ हूं, वरना वही औरत उसकी सबकुछ है। (सुबकियाँ) मैं···मैं कितनी दुखी हूँ।

मिस्टर भाटिया : डाक्टर साहब, आपका बहुत-बहुत शुक्रिया। उम्मीद है शाम को आप ज़रूर तशरीफ़ लाएँगे।

डाक्टर : एक-एक घण्टे बाद दवा देना न भूलिएगा और वोह आप भी···

मिस्टर भाटिया : आप तसल्ली रखें। गोपाल की उस्तानी होशियार है। उसे सबकुछ याद रहेगा।

[दरवाज़ा खोलने और बन्द करने की आवाज़···डाक्टर चला जाता है।]

मिसेज़ भाटिया : तुम यह झगड़ा ही खत्म क्यों नहीं कर देते···यह नयी बला जो तुमने पाली है, उसी के हो रहो और मुझे ज़हर देकर हलाक कर दो—या रोज़-रोज़ की दाँता-किलकिल तो खत्म हो। मेरा तो इस घर में होना न होना बराबर है। यह चपला जब से आयी है, ऐसा जादू उसने तुम पर किया है कि मैं क्या कहूँ ? अब तो घर पर उसी का राज है। मैं कौन ? तीन में न तेरह में, सुतली की गिरह में—तुम तो खैर उसी के हो ही गए थे, पर उस मुई ने तो मेरे बच्चे पर भी कब्ज़ा जमा लिया है—अब बताओ, मैं कहाँ जाऊँ ?

मिस्टर भाटिया : (बड़े शांत और ठण्डे दिल से) मैं तुमसे बार-बार कह चुका हूँ और अब फिर कहता हूँ कि तुम्हें बहुत बड़ी गलतफ़हमी हुई है। यह घरबार सब तुम्हारा है। जिस औरत का तुम बार-बार ज़िक्र करती हो, वह तुम्हारी नौकर है—तुम्हारे बच्चे को उसने दिनों में सुधार दिया है—अब बीमारी में वह उसकी देखभाल कर रही है। इसके लिए तुम्हें उसका शुक्रगुज़ार होना चाहिए।

मिसेज़ भाटिया : तुम उसकी वकालत क्यों करते हो ? क्यों उसकी असली ख्वाहिशों पर परदा डालते हो ? क्या यह झूठ नहीं कि जब से वह इस घर में दाखिल हुई है तुम मुझसे बिलकुल बेपरवाह हो गए हो ? तुम अब मुझसे बात करने के भी रवादार नहीं और क्या यह झूठ है कि बच्चे को लेकर कई-कई घण्टे तुम उस हराफ़ा के साथ बाग में टहलते रहते हो ? जब वह बच्चे को सबक पढ़ाती है तो घण्टों तुम उसके पास बैठे रहते हो ? क्या यह गलत है ? क्या यह सब उस चुड़ैल की कारस्तानी

नहीं ? उस ज़लील औरत को, जो फ़ाहशा से भी बदतर है ?

मिस्टर भाटिया : पार्वती, बन्द करो यह बकवास । (**गुस्से को दबाकर**) तुम···तुम··· अब मैं तुमसे क्या कहूँ । मेरी ज़िन्दगी तुमने अजीर्ण कर दी है ।

मिसेज़ भाटिया : (**व्यंग्यपूर्ण लहजे में**) मैं तो बहुत सुखी हूँ—मेरी ज़िन्दगी तो बड़े आनन्द में गुज़र रही है।

मिस्टर भाटिया : भगवान् के लिए अब यह मुँहाठीठी बन्द करो।

मिसेज़ भाटिया : ज़ोर सिर्फ़ मुझ पर चलता है । लेकिन सुन लो । जब तक यह औरत घर में मौजूद है, मेरी ज़बान चलती रहेगी । मुझे दुःख देने के लिए जब तुम यह औरत यहाँ ले आए हो तो मैं भी तुम्हें एक क्षण के लिए चैन न लेने दूंगी और इस औरत—और इस औरत को परमात्मा सज़ा देगा जिसने मेरे बसे-बसाए घर को बर्बाद कर दिया है, जिसने मेरा पति दिन-दहाड़े मुझसे छीन लिया है ।

मिस्टर भाटिया : मैं अब दफ़्तर जा रहा हूँ । ज़्यादा बातें करने के लिए मेरे पास वक्त नहीं । तुम चाहो तो दूसरे कमरे में अपने लड़के के पास जा सकती हो ।

मिसेज़ भाटिया : मैं नहीं जाऊँगी ।

मिस्टर भाटिया : यह और भी अच्छा है ।

[दरवाज़ा खोलने की आवाज़]

चपला : मैंने आपकी आवाज़ सुन ली थी । नाहक आपने दूसरी बार ज़ोर से पुकारा — गोपू जाग पड़ा ।

मिसेज़ भाटिया : फिर सो जाएगा । कोई हर्ज नहीं ।

चपला : बड़ी मुश्किल से बेचारे की आँख लगी थी ।

मिसेज़ भाटिया : गोपू से तुम्हें बहुत प्यार है ?

चपला : जी हाँ ।

मिसेज़ भाटिया : क्यों ?

चपला : मुझे उससे प्यार है । मैं दिल से उसे चाहती हूँ ।—क्यों ? इसका मैं आपको क्या जवाब दूं ?

मिसेज़ भाटिया : क्या मुझे उससे मुहब्बत नहीं ?

चपला : आपको मुझसे ज़्यादा इसका पता होना चाहिए ।

मिसेज़ भाटिया : क्या मैं उसकी माँ नहीं ?

चपला : आप यकीनन उसकी माँ हैं ।

मिसेज़ भाटिया : तुम उसकी क्या होती हो ?

चपला : उस्तानी । जिसको आपने मुकर्रर किया है ।

मिसेज़ भाटिया : मैंने तुम्हें मुकर्रर नहीं किया । मेरे पति ने तुम्हें नौकर रखा है ।

चपला : मैं भाटिया साहब और आपमें कोई फ़र्क नहीं समझती । मैं आपकी, भाटिया साहब और गोपू तीनों की सेवक हूँ । मेरा काम सेवा करना है ।

मिसेज़ भाटिया : जैसी सेवा तुम मेरे पति की कर रही हो, उससे पता चलता है कि तुम

अपनी कला में ज़रूरत से ज्यादा महारत रखती हो।

चपला : मैं आपका मतलब नहीं समझी।

मिसेज़ भाटिया : मेरे मुँह में भाटिया साहब की ज़बान होती तो मेरा मतलब फ़ौरन तुम्हारी समझ में आ जाता—तुम—

चपला : फ़रमाइए।

मिसेज़ भाटिया : (**स्वर बदलकर**) देखो चपला, मैं औरत हूँ। तुम भी औरत हो। आओ, खुलकर बातें करें। वह परदा उठा दें जो हमारे दरम्यान है।

चपला : मालिक और नौकर के दरम्यान परदा ही क्या हो सकता है ?

मिसेज़ भाटिया : अनजान बनने की कोशिश न करो—मैं तुमसे एक विनती करना चाहती हूँ···मैं तुमसे कुछ माँगना चाहती हूँ। मुझे माँगने दो। विनती करने दो। देखो, जब से तुम इस घर में आयी हो, मेरी ज़िन्दगी बिलकुल अजीर्ण हो गयी है। मेरा पति मुझसे छिन गया। मेरा बच्चा भी मेरा बच्चा न रहा—यह सबकुछ तुमने ले लिया—वे तमाम चीज़ें जिनकी मिलकियत से औरत बीवी बनती है, एक-एक करके तुम मुझसे छीन चुकी हो। इस घर में, जो कभी मेरा था, मैं अजनबी मेहमानों की ज़िन्दगी बिता रही हूँ—देखो, तुम औरत हो। एक मज़लूम औरत तुमसे भीख माँगती है। उसको वे तमाम चीज़ें बख़्श दो जो संयोग से तुम्हारे हाथ आ गयी हैं।

चपला : (**भावनाओं पर काबू पाकर**) आप···आप···अब मैं आपसे क्या कहूँ ! आप एक शरीफ़ औरत को बेकार बदनाम कर रही हैं।

मिसेज़ भाटिया : (**चिढ़कर**) शरीफ़ औरत···ओह, तुम्हारी शराफ़त ! तुम औरत नहीं, डायन हो। लेकिन मैं पूछती हूँ, कब तक तुम इन चीज़ों को अपनी मिलकियत बनाए रखोगी, जिन पर तुम्हारा कोई हक नहीं ? कब तक तुम इस घर में झगड़ा बनाए रखोगी—कब तक ? कब तक तुम उन बिजलियों से बची रहोगी जो आकाश में तुम जैसी नापाक औरतों पर गिरने के लिए तड़पती रहती हैं ?

चपला : (**कोई फ़ैसला करने के अंदाज़ में**) आप क्या चाहती हैं ?

मिसेज़ भाटिया : मैं तुम्हारे मुँह पर थूकना चाहती हूँ—मैं चाहती हूँ कि यह दुनिया तुम्हारे वजूद से पाक हो जाए। मैं चाहती हूँ कि जो दुःख तुमने मुझे दिए हैं, तुम्हारे हलक में हिचकी बनकर अटक जाएँ—मैं बहुत कुछ चाहती हूँ—मैं चाहती हूँ कि गोपाल मुझे अपनी माँ कहे—मेरी बेचारगी देखो, मैं क्या चाहती हूँ ?

चपला : गोपाल की माँ आपके सिवाय और कौन हो सकती है ?

मिसेज़ भाटिया : तुम···तुम···जिसने मेरी ममता पर कब्ज़ा जमा लिया है।

चपला : (**अर्थपूर्ण स्वर में**) ममता चुरायी नहीं जा सकती। आपने खुद कहीं खो दी होगी।

मिसेज़ भाटिया : मैं तुमसे बहस करना नहीं चाहती। एक सौदा करना चाहती हूँ···मुझसे कुछ ज़ेवरात ले लो और यहाँ से चली जाओ। उनसे कह देना···मैं अपनी मर्ज़ी से जा रही हूँ।

चपला : क्या इससे आपकी तसल्ली हो जाएगी ?

मिसेज़ भाटिया : (**खुश होकर**) तो मैं तुझे ज़वरात और रुपये ला दूं ?

चपला : नहीं, नहीं, मुझे उनकी ज़रूरत नहीं। आपने मुझे नौकर रखा और अब निकाल दिया। इसमें सौदा करने की नौबत कहाँ आती है ? मैं आज ही चली जाऊँगी। और यह अफ़सोस साथ लेती जाऊँगी कि आपने मुझे शक की नज़रों से देखा। गोपाल आप ही का है। परमात्मा करे वह तन्दुरुस्त हो जाए और आपकी गोद हरी रहे।

[क्लाक छः बजाता है।]

मिस्टर भाटिया : (**अपनी पत्नी को आवाज़ देता है**) पारबती—पारबती !

मिसेज़ भाटिया : (**रूखेपन से**) क्या है ?

मिस्टर भाटिया : चपला कहाँ है—बच्चे को उसने दवा क्यों नहीं पिलाई ?

मिसेज़ भाटिया : मुझे क्या मालूम ! अपने कमरे में होगी।

मिस्टर भाटिया : क्या कर रही है ?

मिसेज़ भाटिया : अन्दर जाकर देख लो।

मिस्टर भाटिया : देखता हूँ।

[चलता है और दरवाज़ा खोलकर दूसरे कमरे में जाता है।]

मिस्टर भाटिया : चपला, यह तुम क्या कर रही हो ? यह असबाब वगैरा तुमने क्यों बाँधा है ?

चपला : मैं जा रही हूँ।

मिस्टर भाटिया : कहाँ ?

चपला : जहाँ से आयी थी।

मिस्टर भाटिया : कोयटा में भूकम्प के बाद तुम्हारा कौन बाकी रहा है ?

चपला : कहीं और चली जाऊँगी।

मिस्टर भाटिया : तुमने तो वायदा किया था कि गोपाल को छोड़कर कभी न जाऊँगी। जानती हो, वह तुम्हें कितना चाहता है ?

चपला : वह उसकी गलती है। उसको अपनी माँ से मुहब्बत करनी चाहिए।

मिस्टर भाटिया : (**थोड़ी देर खामोश रहकर**) मालूम होता है, उसकी माँ से तुम्हारी गुफ़्तगू हुई है। लेकिन उससे तुमने यह कहा होता कि माँ को भी अपने बच्चे से मुहब्बत करनी चाहिए—तुमने उससे यह तो पूछा होता कि माँ बनने का खयाल अब एकाएक उसके दिल में क्यों पैदा हो गया ?

चपला : मैं तैयार हूँ भाटिया साहब ! ऐसे गुस्ताखाना सवाल मेरी ज़बान पर कभी नहीं आ सकते।

मिस्टर भाटिया : लेकिन वह औरत···लेकिन वह औरत···लेकिन वह औरत···आह ! उस औरत ने मुझे कितना तंग किया है—जब तक तुम यहाँ नहीं थीं तो वह समझती

थी कि मैंने बाहर ही बाहर कई औरतों से ताल्लुकात कायम कर रखे हैं। अब तुम यहाँ हो तो—तो—अब मैं तुमसे क्या कहूँ कि वह क्या समझती है—मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ, चपला,कि मेरे घर में तुम्हें एक बेवकूफ़ औरत के हाथों दुःख पहुंचा है।

चपला : उन्हें शक है।

मिस्टर भाटिया : हर चीज़ को शक की नज़रों से देख-देखकर अब वह असहनीय सीमा तक शक्की हो गयी है। उसकी हालत शोचनीय है। वह मरीज़ है। वहम उसका मर्ज़ बनकर चिमट गया है। वह लाइलाज है। शादी के बाद दूसरे ही हफ़्ते उसने मेहंदी लगे साथों से मेरा मुंह नोचना शुरू कर दिया था। मैं एक व्यस्त आदमी हूँ। सारा दिन दफ़्तर में सिर खपाता रहता हूँ। यकीन मानो, तुम्हारे यहाँ आने से पहले मैं घर आते वक्त डरता था। बहुत खौफ़ खाता था। उसकी दीवानगी का असर अगर सिर्फ़ मेरे ऊपर ही खत्म हो जाता तो शायद मैं बरदाश्त कर लेता, मगर उसकी बेवकूफ़ियों ने मेरे बच्चे का भी सत्यानाश कर दिया। उसकी आदतें खराब हो गयी हैं। मैंने परमात्मा का लाख-लाख शुक्र अदा किया कि उसने तुम जैसी देवी को मेरे घर भेज दिया। तुम्हारे आने से मेरी बहुत-सी परेशानियाँ दूर हो गयीं। बच्चे को तुमने संभाल लिया। उसको प्यार-मुहब्बत की ज़रूरत थी, सो तुमने कुछ दिनों में ही उसे अपना चहेता बना लिया। मगर अब तुम जा रही हो···

चपला : जी हाँ, जा रही हूँ।

मिस्टर भाटिया : ठीक है। लेकिन मेरे बच्चे का क्या होगा? वह औरत तो मुझे और उसे दोनों को अपनी हिमाकतों से हलाक कर देगी। (**अन्तराल**) तुम नहीं जाओगी —तुम नहीं जाओगी और यहीं रहोगी। आखिर इस घर पर मेरा भी तो कुछ हक है। मेरे मुंह में भी तो ज़बान है। अब तक मैंने अपने अधिकारों से काम नहीं लिया, लेकिन अब मुझे लेना पड़ेगा।

चपला : भाटिया साहब, आप इस झगड़े को और न बढ़ाइए। मैं नहीं चाहती कि आपमें और उनमें मेरी वजह से कटुता पैदा हो।

मिस्टर भाटिया : यह कटुता अब पैदा नहीं हुई, तुम्हारे आने से पहले ही इस घर में मौजूद थी। मैं तुमसे दरख्वास्त करता हूँ कि अभी कुछ दिन और ठहर जाओ—गोपू अच्छा हो जाए तो क्या पता उसकी माँ भी समझ जाए। मैं जानता हूँ कि उसकी बातों से तुम्हें बहुत दुःख हुआ होगा और···और तुमको ज़बरदस्ती यहाँ ठहराने का मतलब यह है कि और अनादर बरदाश्त करने के लिए तुम्हें मजबूर किया जाए···मगर···मगर···नहीं चपला, तुम नहीं जाओगी। तुम्हारे इन्कार से मुझे सदमा होगा—खोल दो अपना असबाब।

[दरवाज़ा खोलकर दूसरे कमरे में चला जाता है।]

मिस्टर भाटिया : पारबती, तुम्हें यह सुनकर खुशी होगी कि चपला अब नहीं जाएगी। उसने अपना इरादा बदल दिया है।

मिसेज़ भाटिया : (**व्यंग्यपूर्वक**) मुझे बहुत खुशी हुई है।

मिस्टर भाटिया : और देखो, अगर तुमने उसकी तौहीन की या उसे अपनी वहमी तबीयत का निशाना बनाया···

मिसेज़ भाटिया : (तंजी से) तो ··तो क्या होगा ? तुम मुझे धमकाते क्या हो—क्या करोगे तुम ? —मुझे धक्के मारकर बाहर निकाल दोगे ? मुझे मार डालोगे ? क्या करोगे ?

मिस्टर भाटिया : मैं एक बार फिर तुम्हारे लिए दुआ करूँगा।

मिसेज़ भाटिया : मगर तुम उस औरत को नहीं छोड़ोगे। उसको हमेशा अपने साथ रखोगे जो तुम्हारा दिल न जाने किन अदाओं से मोह चुकी है। जो कोयटा में भूकम्प लाकर अब इस घर में ज़लज़ला मचा रही है—मगर याद रखो···

मिस्टर भाटिया : (ऊँची आवाज़ में गुस्से के साथ) पारबती, इस बे···बेहूदा बकवास को बन्द करो—मैं—मैं—कुछ नहीं। परमात्मा तुम्हारी हालत पर रहम करे।

[फ़र्श पर बेचैनी के साथ टहलने की आवाज़]

मिस्टर भाटिया : अब खुश हो गयीं ! कलेजा ठण्डा हो गया ! वह औरत जिसने तुम्हारे खयाल के मुताबिक न जाने किन अदाओं से मेरा मन मोह लिया था, तुम्हारे बच्चे पर अपनी जान करीब-करीब मिटा चुकी है—उसकी ज़िन्दगी और मौत में इतना वक्त भी बाकी नहीं कि वह तुम्हारे ज़ुल्म व सितम के खिलाफ़ आवाज़ बुलन्द कर सके—तुम्हें कोई बद्दुआ दे सके।

मिसेज़ भाटिया : मेरा क्या कसूर है ?

मिस्टर भाटिया : तुमने हर वक्त उसकी तौहीन की। उसकी हर नेकी, हर अच्छाई को तुमने अपनी लानती नज़रों से देखा—उफ़, जब मैं उसकी कल्पना करता हूँ कि तुमने एक पाक और मासूम औरत पर कीचड़ उछाली है तो मेरी आत्मा काँप-काँप उठती है—तुम्हें, मगर तुम्हारी आत्मा कहाँ है ? तुम्हारा ज़मीर कहाँ है ? जाओ, जाओ, मेरी आँखों से दूर हो जाओ—तुम कातिल हो। तुम्हारे हाथ मुझे इस बेगुनाह औरत के खून से सराबोर नज़र आते हैं।

मिसेज़ भाटिया : क्या पता है, बच जाए।

मिस्टर भाटिया : अब वह क्या बचेगी—डाक्टर जवाब दे चुका है—तुम्हारे बच्चे को मौत से बचाकर वह खुद उसके मुँह में चली गयी है—अब कुछ नहीं हो सकता—काश, मैंने उसे उसी दिन जाने दिया होता। मेरा उस पर कोई ज़ोर तो था ही नहीं, मगर वह मेरे कहने पर रज़ामंद हो गयी, इसलिए कि उसे गोपू से प्यार था। वह प्यार, जो तुम्हारे दिल में होना चाहिए, गोपू को उसके दिल में नज़र आया। वह बच गया और वह मौत, जो तुम्हें आनी चाहिए थी, उसे आ गयी।

गोपाल : (दौड़ता हुआ आता है) पिताजी···पिताजी···उस्तानीजी कहाँ हैं ?

मिस्टर भाटिया : गोपाल, जाओ, तुम बाहर खेलो। तुम्हारी उस्तानी बीमार हैं।

गोपाल : मैं बीमार था तो वह मेरे पास बैठी रहती थीं। अब मैं उनके पास बैठूंगा। पिताजी—

मिस्टर भाटिया : हाँ, हाँ—लेकिन तुम अब बाहर जाओ।

[गोपाल चला जाता है—कुछ देर के बाद]

मिसेज़ भाटिया : मुझे इजाज़त हो तो मैं चपला को देखना चाहती हूँ।

मिस्टर भाटिया : इस इजाज़त की ज़रूरत तुम्हें क्यों महसूस हुई ? जाओ, देख आओ —मगर तुम्हारे देख आने से क्या उसका दिल तुम्हारी तरफ़ से साफ़ हो जाएगा —वे खराशें जो तुम उसके मन-मस्तिष्क में पैदा कर चुकी हो, यूं एक बार देखने से मिट तो नहीं जाएँगी—जाओ। सम्भव है, वह तुम्हें माफ़ कर दे। तुमने उसे बहुत दुःख पहुँचाया है। मैं तो खैर तुम्हारी हिमाकतों का आदी हो चुका था मगर एक अजनबी और आफ़त उठाने वाली औरत के लिए, जो अच्छे दिन देख चुकी हो, तुम्हारे हिस्टीरिया के दौरे सहन करने योग्य नहीं थे।

[अन्तराल के बाद दरवाज़ा खोलने की आवाज़—मिसेज़ भाटिया दूसरे कमरे में जाती है।]

मिसेज़ भाटिया : चपला, चपला, मैं आई हूँ।

चपला : (**मुर्दा आवाज़ में**) आइए—आइए—मगर आप किस जगह बैठेंगी ?

मिसेज़ भाटिया : मैं यहाँ तुम्हारी चारपाई पर बैठ जाऊंगी—तुम उठने की कोशिश न करो—लेटी रहो।

चपला : मगर—मगर···नहीं, नहीं ! आपको मेरे पास नहीं बैठना चाहिए—यह बीमारी बड़ी छूत की है—नहीं, नहीं ! आप दूर ही खड़ी रहें और जल्दी बाहर चली जाएँ।

मिसेज़ भाटिया : मुझे कुछ नहीं होगा। अगर कुछ हो भी गया तो मुझे अफ़सोस न होगा। मैं तुमसे माफ़ी माँगने आयी हूँ।

चपला : माफ़ी—कैसी माफ़ी ? आप मुझे शरमिन्दा कर रही हैं।

मिसेज़ भाटिया : मैंने गलतफ़हमी में तुमसे कई बार ऐसी बातें की हैं जिनसे यकीनन तुम्हें बहुत दुःख पहुँचा है। अब सोचती हूँ, अगर मैं तुम्हारी जगह पर होती तो मेरे दिल की क्या हालत होती।

चपला : मेरी जगह पर आप होतीं तो···हालत यह न होती—लेकिन आप मेरी जगह पर क्यों होतीं ? हर आदमी के लिए एक जगह मुकर्रर है। मेरे लिए यही जगह मुकर्रर थी जहाँ आकर मुझे अपनी ज़िन्दगी के सबसे बड़े पाप का प्रायश्चित्त करना था।

मिसेज़ भाटिया : पाप—प्रायश्चित्त !

चपला : मैं अब सोचती हूँ। अगर यहाँ से मैं उस रोज़ चली जाती तो मेरे मन की मन में रह जाती। कोई ज़माना था कि मैं भी आप ही की तरह थी। मेरा पति जो आपके पति ही की तरह बड़ा शरीफ़ कारोबारी आदमी था; मगर मैं, ईर्ष्यालु और बात-बात पर शक करने वाली तबीयत का बुरा हो कि मैंने उसको हमेशा परेशान रखा—

वह मन-ही-मन में कुढ़ता था। मैं हर घड़ी उसको जली-कटी सुनाती, मगर वह चुप रहता—उसको खामोश देखकर मैं समझती—चूंकि वह दोषी है—इसलिए कोई बात इसकी ज़बान पर नहीं आती···

मिसेज़ भाटिया : यह तो मेरी ही कहानी है···

चपला : गोपाल जैसा मेरा भी बच्चा था और मेरी तरह उसकी एक उस्तानी थी जिस पर मैं शक करती थी—कई झगड़े हुए। मैंने अपनी और अपने पति दोनों की ज़िन्दगी को नरक बना दिया था—और—और उसका परिणाम यह हुआ कि उस मासूम औरत ने, जो मेरे बच्चे को मुझसे ज़्यादा अज़ीज़ समझती थी, कुछ खा लिया और मर गयी—इसके बाद भूकम्प आया और बच्चा और उसका बाप दोनों हमेशा के लिए मुझसे बिछुड़ गए—लेकिन अब—अब मैं भी उनके पास जा रही हूं।

मिसेज़ भाटिया : (**करुणापूर्ण आवाज़ में**) नहीं, नहीं ! तुम ज़िन्दा रहोगी—मैं तुम्हें अपनी बहन बनाकर अपने पास रखूंगी। ठीक उस वक्त, जबकि मेरी आँखें खुली हैं—तुम इनसे ओझल नहीं हो सकती हो।

चपला : मैं बहुत खुश हूं कि अपनी आत्मा का बोझ हलका करने के साथ मैंने एक अच्छा काम भी कर दिया—भाटिया साहब और आप—दोनों खुश रहें। आपका जीवन परमात्मा करे स्वर्ग बन जाए—लेकिन आप जाइए—ज़्यादा देर यहाँ न ठहरिए—ऐसा न हो—ऐसा न हो—(**आवाज़ डूब जाती है।**)

मिसेज़ भाटिया : चपला—चपला···

[दर्दनाक सुरों में साज़ बजता है—मिसेज़ भाटिया के रोने की आवाज़ आती है।]

(**फ़ेड आउट**)

साड़ी

पात्र

कवि : मालती का चाहनेवाला
मालती : जवान लड़की
मालती की माँ :
सेठ : मालती का दौलतमंद आशिक,
कवि का दोस्त

और तीन-चार फ़ालतू आदमी

[मशीन चलने की आवाज़—कभी हौले-हौले, कभी तेज़-तेज़]

मालती : (**मशीन चलाती है और साथ ही साथ गाती भी जाती है—**)···मैं बन की चिड़िया बन के बन-बन बोलूं रे—बोलूं रे—बोलूं रे—(**मशीन रुक जाती है**)··· ये कैंची भी किधर गयी—माँ, कैंची कहाँ है ? एक मिनट भी नहीं, हुआ मैंने यहाँ अपने पास रखी थी—मिल गयी। (**कैंची की आवाज़—फिर मशीन चलाने की आवाज़**)···बोलूं रे···मैं बन की चिड़िया बन के बन-बन बोलूं—बोलूं रे—माँ, काज बना लिए ?

माँ : यह तू क्या बार-बार पूछती है ! बना तो रही हूँ—मेरे हाथ मशीन तो नहीं !

मालती : ···मैं बन की चिड़िया बन के बन-बन बोलूं रे—बोलूं रे—बस, अब सुई नहीं मिलेगी—यह मेरी सुई किधर गयी—हाय राम ! यह क्या मुसीबत है ? एक चीज़ मिलती है, दूसरी गुम हो जाती है—सुई मिल जाएगी तो अगुश्ताना गायब हो जाएगा। अगुश्ताना मिल जाएगा तो निगोड़ी कैंची कहीं गायब-गुल्ला हो जाएगी—कैंची···और मुझे ये सात कमीज़ें ठीक बारह बजे सेठ साहब के घर पहुंचा देनी हैं—माँ, काज बना लिए ?

माँ : आग लगे काजों को—मेरे तो अँगुलियों के पोर छलनी हो गए—चूल्हे में जाए ऐसा अफरा-तफरी का काम।

मालती : देखना, कोई फ़ालतू सुई पिटारी में तो नहीं—ठहरो। मिल गयी—ये निगोड़ी सुइयाँ कहाँ-कहाँ चिमट जाती हैं—(**मशीन चलने की आवाज़**)

···मोरे अँगना में आए आली—
मैं चाल चलूं मतवाली—मैं···

माँ : मालती—

मालती : ···मैं चाल चलूं मतवाली···क्या है माँ ?

माँ : मैं कहती हूँ, यह गाना बन्द कर ।

मालती : क्यों ?

माँ : बस, मुझे अच्छा नहीं लगता ।

मालती : (हँसती है)···पर यह गाना मैं थोड़े गाती हूँ ।

माँ : तो और कौन गाता है ?

मालती : कोई एक्ट्रेस गाती होगी—मेरे अँगना में आए आली, मैं चाल चलूं मतवाली —(**मशीन की तेज़ गड़गड़ाहट**)माँ, मैं एक्ट्रेस बन जाऊँ ?

माँ : क्यों ?

मालती : सुनती हूँ एक्टरों के कपड़े दर्ज़ी सीते हैं—उनको मशीन चलानी नहीं पड़ती ।

माँ : तू दीवानी हो गयी है ।

मालती : माँ !

माँ : क्या है ?

मालती : कुछ नहीं । काज बना लिए ?

माँ : यह तू बात करते-करते रुक क्यों जाया करती है—जानती है, मुझे इससे कितनी उलझन होती है—मैं कहती हूँ, तेरे मन में ज़रूर कुछ है जो तू बताना नहीं चाहती । कई दिनों से तू खोई-खोई-सी रहती है । मुझे बता तो सही, तू किस सोच में पड़ी रहती है—तेरा अब सिलाई में भी जी नहीं लगता । ये सात कमीज़ें मर-पिटकर चार दिन में तैयार की हैं । अभी दो की पट्टियाँ बाकी हैं । क्या हो गया है तुझे ?

मालती : क्या हो गया है मुझे—अच्छी-भली तो हूँ(**मशीन ज्यादा तेज़ चलाती है**)—अच्छी-भली तो हूँ (**सुबकियों की आवाज़—मशीन की रफ़्तार ज्यादा तेज़ हो जाती है**)—क्या हुआ है मुझे—तुम तो मुझे नाहक कोसती रहती हो । (**सुबकियों की आवाज़ बुलन्द हो जाती है ।**)

माँ : तूने अब यह रोना क्यों शुरू कर दिया है ?

मालती : (**रोनी आवाज़ में**)···मैं कब रोती हूँ···मैं रो कैसे सकती हूँ !इतनी लोठा-सी हो गयी हूँ । क्या मुझे ऐसे शरम न आएगी ! (**रोती जाती है**)···और फिर कोई बात भी तो हो—ऐसे खाली-खूली क्या रोऊँ !

माँ : देख, कमीज़ का कपड़ा दागदार हो जाएगा—तेरे आँसू गिर रहे हैं ।

मालती : (**मशीन की रफ़्तार तेज़ कर देती है**) माँ, काज बना लिए ?

माँ : बना लिए ।

मालती : दोनों पट्टियाँ भी तैयार हो गयीं ?

× × ×

[मशीन की आवाज़ कुछ क्षणों तक जारी रहे, फिर यह आवाज़ आहिस्ता-आहिस्ता मोटर के स्टार्ट होने की फड़फड़ाहट में बदल जाए।]

× × ×

सेठ : आओ मालती ! मोटर में बैठ जाओ।

मालती : नहीं सेठ साहब ! मैं पैदल चली जाऊँगी। मेरा घर यहाँ से दूर नहीं। कमीज़ आपको पसन्द आ गयी है न ?

[मोटर की फड़फड़ाहट बन्द हो जाती है—मोटर का दरवाज़ा खुलता है।]

सेठ : मालती, क्या तुमने कभी इस बात पर गौर नहीं किया कि तुम्हारे हाथ लोहे की मशीन चलाने के लिए नहीं बने—तुम हर रोज़ दूसरों के लिए कपड़े तैयार करती हो लेकिन तुम्हारे बदन पर तो वही कपड़े हैं जो पिछली सर्दियों में तुमने पहने थे। यह ज़िन्दगी नहीं। मैं अगर शायर होता तो तुम्हें समझाता कि ज़िन्दगी क्या है और तुम जैसी हसीन लड़कियों की ज़िन्दगी कैसे बसर होनी चाहिए। लेकिन मैं इतना ज़रूर जानता हूँ कि तुम अपने-आप पर ज़ुल्म कर रही हो। मैं पूछता हूँ, तुम अपनी जवानी की तमाम खूबसूरतियाँ क्यों बरबाद कर रही हो ? मैं पूछता हूँ, आखिर तुम इतनी हसीन क्यों हो ? क्या इसलिए कि कैंची हाथ में लेकर कपड़े काटती रहो, मशीन चलाती रहो ? दरअसल, दरअसल तुमने आज तक कभी इस बात पर गौर नहीं किया कि तुम किस कदर खुश रह सकती हो। मोटर, बागों की सैर, अच्छे-अच्छे कपड़े—रेशमी साड़ियाँ—हँसी-कहकहे। क्या ये चीज़ें तुम्हारी नहीं हो सकतीं ? क्या तुम्हारा इन पर कोई हक नहीं ?

मालती : (**फूले हुए साँस के साथ**) सेठ साहब···

सेठ : इन मैले-कुचैले कपड़ों के बदले ज़र्क-बर्क साड़ियाँ—खिदमत के लिए नौकर—आज तुम दूसरों के लिए काम करती हो, कल दूसरे तुम्हारे लिए काम करेंगे—यह कोई सपना नहीं—एक तुम्हारी हाँ पर सबकुछ हो जाएगा।

मालती : मैं···मैं···

सेठ : बोलो-बोलो—एक सिर्फ़ तुम्हारी हाँ पर सबकुछ हो जाएगा।

मालती : (**संगीत का एक टुकड़ा शुरू हो। ऐसा, जिसमें सुर उलझे हुए-से हों**) नहीं-नहीं—(**संगीत बुलन्द हो जाए—मालती ज़ोर से कहे**) नहीं···अभी नहीं।

[संगीत के सुर मद्धम हो जाएँ—कदमों की चाप उन सुरों पर सुपर इम्पोज़ की जाए—कुछ क्षणों बाद सुर फिर बुलन्द हो जाएँ—इनमें मोटर की पों-पों कभी-कभी सुनाई दे—रुपयों की खनखनाहट भी आए—फिर सेठ के ये शब्द दोहराये जायें—"मोटर—बागों की सैर—अच्छे-अच्छे कपड़े—रेशमी साड़ियाँ—हँसी-कहकहे—क्या ये चीज़ें तुम्हारी नहीं हो सकतीं—क्या तुम्हारा इन पर कोई हक नहीं"? एकदम संगीत का यह टुकड़ा खत्म हो जाये—सिर्फ़ एक तार थोड़ी देर के लिए लरज़ता रहे—फिर हौले-हौले एक मद्धम-सी रागिनी बुलन्द हो—इन सुरों के बीच-बीच में मालती कहे—"मैं चलते-चलते एक दोराहे पर आ गयी हूँ—

एक तरफ़ दौलत है—दूसरी तरफ़ मुहब्बत"—संगीत का यह टुकड़ा एक गीत का रूप ले। नीचे का गीत उसी धुन में गाया जाये—]

गीत

यह कौन आया—यह कौन आया
यह मेरी दुनिया पर छाने
यह कुछ खोने या कुछ पाने
यह बल खाता यह शरमाता

यह कौन आया—यह कौन आया
आँखों में शरारत और शोखी
शोखी में है बर्फ़ की तरारी
जो देख के मुझ को इठलाया

यह कौन आया—यह कौन आया
क्या यह शाहज़ादी है तारों की
या आस है दर्द के मारों की
क्या ज़रा - ज़रा मुस्काया

यह कौन आया—यह कौन आया ?

मालती : (हौले से) मैं हूँ मालती।

कवि : (उसी धुन में गाता है—)

यह लोरी है क्या रातों की
या ठण्डी हवा बरसातों की
यह खुद है कोई या है साया
यह कौन आया—यह कौन आया ?

कवि : (गाना खत्म करके हँसता है)···वह तुम हो—मालती, मेरी अपनी मालती—(शायराना अन्दाज़ में) ओह मालती ! मुझे तुमसे कितनी मुहब्बत है।

मालती : (खोये हुए अन्दाज़ में)···कितनी ?

कवि : गुज़रे हुए कल से ज़्यादा—और—आने वाले कल से कम।

मालती : तुम मुझसे मुहब्बत क्यों करते हो ?

कवि : यह तुमने कैसा अजीब सवाल किया—मैं क्यों जीता हूँ—ये सितारे क्यों चमकते हैं—यह अन्धेरे और उजाले का उलट-फेर क्यों है—ये परिन्दे क्यों चहचहाते हैं—चाँद क्यों चमकता है—तुम क्यों खूबसूरत हो ? तुम्हें देखकर मेरा दिल क्यों धड़कता है ? तमाम सृष्टि का सिमटकर एक हस्ती में समा जाना और उस हस्ती का फैलकर असीम विस्तार बन जाना—यह है मुहब्बत—मुहब्बत आत्मा का गहना है।

मालती : क्या मैं खूबसूरत हूँ कवि ?

कवि : तुम खूबसूरती का चश्मा हो—तुमसे कई खूबसूरतियाँ पैदा होती हैं—एक खूबसूरती तो वह है जो तुमने मेरे दिल व दिमाग में पैदा की है—मेरी कविता सिर्फ़ इसलिए खूबसूरत है कि इस पर तुम्हारा साया है—तुम न होतीं तो कुछ भी न होता ।

मालती : मैं तो कुछ भी नहीं हूँ—भिखारिन के सिवा और क्या हो सकती हूँ ?

कवि : (हँसता है) तुम शाहज़ादी हो मालती—शाहज़ादी ।

मालती : शाहज़ादी ?

कवि : हाँ, शाहज़ादी—मेरे सपनों की शाहज़ादी—मेरे खयालों की मलिका ।

मालती : सपनों की शाहज़ादी—खयालों की मलिका—सपने—खयाल···

[अन्तराल]

कवि : किस सोच में पड़ गयीं ?

मालती : मेरी एक बात मानोगे ?

कवि : एक—सिर्फ़ एक—मैं तुम्हारी हज़ार—तुम मुझे कुछ कहो तो मैं आसमान के तमाम तारे नोचकर तुम्हारी इस मैली साड़ी में टाँक दूं—चाँद सिर्फ़ एक है। अगर दो होते तो मैं उन्हें उतारकर तुम्हारे कानों में बुन्दे बनाकर लटका देता—अगर तुम हुक्म दो तो मैं सातों समुन्दर खंगालकर···

मालती : मुझे एक अच्छी-सी साड़ी ला दो ।

कवि : (हँसता है) एक साड़ी—सिर्फ़ एक साड़ी—

मालती : हाँ । सिर्फ़ एक साड़ी, जिसका कपड़ा मेरे बदन के साथ लगकर सरसराये—सचमुच की साड़ी—मैं कल नहा-धोकर यह साड़ी पहनने के लिए तैयार रहूँगी ।

[अन्तराल—कदमों की चाप—दरवाज़ा खोलने और बन्द करने की आवाज़]

कवि : चली गयी—(अपने-आप से बातें करता है) एक साड़ी—सिर्फ़ एक साड़ी—दुनिया के अच्छे से अच्छे लिबास मैं उसके कदमों में ढेर कर दूंगा—नीले रंग की रेशमी साड़ी और उस पर सफ़ेद तिल्ले की धारियाँ—ऐसा मालूम होगा कि आसमान का एक टुकड़ा निकालकर उसे चांद की किरणों में लपेट दिया गया है—नहीं, काली साड़ी हो और उस पर मुकैश की बुंदियां हों, जैसे अँधियारी रातों में आसमान पर तारों का छिड़काव—एक नहीं, कई साड़ियाँ हों ।

[यहाँ मालती के शब्द दोहराए जाएँ—आवाज़ सरगोशी की तरह हो ।]

मालती : सिर्फ़ एक साड़ी जिसका कपड़ा मेरे बदन के साथ लगकर सरसराए—सचमुच की साड़ी ।

कवि : (चौंककर) सचमुच की साड़ी—(अन्तराल) तो इसमें कौन-सी मुश्किल है—मैं अभी ले आता हूँ—रुपये—रुपये—हासिल करना भी कोई मुश्किल काम है···

× × ×

[रुपयों की खनखनाहट शुरू हो—संगीत के साथ-साथ रुपये बजते रहें—कुछ क्षणों के बाद यह टुकड़ा खत्म हो जाए।]

× × ×

कवि : एडीटर साहब ! आपके पर्चे में दो वर्ष से मेरा कलाम छपता रहा है। इस दौरान आपने हमेशा उसकी तारीफ़ की है।

एडीटर : जी हाँ। आपका कलाम वाकई काबिल-ए-तारीफ़ है।

कवि : (**खुश होकर**) कद्र-अफ़ज़ाई का शुक्रिया···आज मैं आपकी खिदमत में अपनी छः ताज़ा गज़लें लेकर हाज़िर हुआ हूँ। ज़ाहिर है कि उनकी कीमत कोई अदा नहीं कर सकता। लेकिन इस वक्त चूंकि मुझे कुछ रुपयों की ज़रूरत है, इसलिए—

एडीटर : मुझे बेहद अफ़सोस है कि मैं आपकी खिदमत नहीं कर सकता। परचे की आमदनी इतनी कम है कि हर महीने मुझे नुकसान उठाना पड़ता है। यह तो ज़बान और अदब की खिदमत का शौक है कि मैं इस नुकसान को बर्दाश्त कर रहा हूँ, वरना···

[झाँझ की आवाज़]

कवि :···मुझे याद है कि एक बार आपने मेरे कलाम की ख्वाहिश की थी, जिसको मैं कुछ मजबूरियों के कारण पूरा नहीं कर सका था—अब मेरे पास छः अनछपी गज़लें मौजूद हैं—छहों की छहों नयी शायरी का खूबसूरत नमूना हैं।

एडीटर : मुझे अफ़सोस है कि इस बार मैं इनके लिए जगह नहीं निकाल सकता। इस-लिए कि आपकी शायरी के खिलाफ़ इसमें एक लम्बा मज़मून छप रहा है।

कवि : (**बिगड़कर**) मेरी शायरी के खिलाफ़—वह कौन—वह कौन—वह कौन शरारतपसन्द है जो मुझसे उलझना चाहता है? मुझे किसी की क्या परवाह है—मज़मून छोटा हो या बड़ा, उससे मेरी शायरी को क्या नुकसान पहुँच सकता है? तन्कीद का जो स्वर मुझे आपके परचे में नज़र आता है उसको मद्देनज़र···लेकिन छोड़िये इस किस्से को—क्या आपको मेरी गज़लों की ज़रूरत है? यानी मुआवज़ा अदा करके क्या आप मेरी गज़लें खरीदने के लिए तैयार हैं?

एडीटर : जी हाँ—मैंने आज तक बड़े से बड़े शायर को भी मुआवज़ा अदा नहीं किया—हज़रत नवाब अकबराबादी इस वक्त हिन्दुस्तान के सबसे बड़े शायर हैं—मैंने आज तक उनको भी मुआवज़ा अदा नहीं किया।

[झाँझ की झन झन झन···सिर्फ़ एक बार]

कवि : परसों आप मेरे पास सेहरा लिखवाने के लिए तशरीफ़ लाए थे और मैंने यह सेहरा लिखने से इन्कार कर दिया था···मैं···मैं···अब आपका सेहरा लिखने के लिए तैयार हूँ। बशर्ते कि आप मुआवज़ा कुछ बढ़ा दें।

सेहरावाला : अब मुआवज़ा बढ़ाने या घटाने का सवाल ही नहीं रहा, इसलिए कि मैं एक और शायर से आधे दामों पर सेहरा लिखवा चुका हूँ और यह शर्त साथ तय की है कि सेहरा वह खुद पढ़ेगा।

[झाँझ की आवाज़ें]

कवि : (गुस्से में) ···और उस नाबकार ने मुझे जवाब दिया कि चूंकि मैं अदब और शे'र की खिदमत करता हूँ, इसलिए आपको मुआवजा अदा नहीं कर सकता। शे'र और अदब की खिदमत—और दुनिया जानती है कि रिसाला निकालने से पहले वह नीलोफ़र और बनफ़शा का शर्बत बेचा करता था—और—और उस पाज़ी ने कहा कि आपकी गज़लें ताज़ा अंक में इसलिए नहीं छप सकतीं कि उसमें आपके खिलाफ़ लम्बा मज़मून छप रहा है—मेरे खिलाफ़—मेरी शायरी के खिलाफ़ ···क्या लिखेगा कोई मेरी शायरी के खिलाफ़? और इस खुराफ़ात के पुलिन्दे में—मैंने सख्त गलती की जो इस भाँड़ के पास अपनी गज़लें लेकर गया—और—और बहुत अच्छा हुआ जो इस चपटी नाक वाले ने अपना सेहरा किसी हज्जाम से लिखवा लिया वरना मुझे सख्त रूहानी तकलीफ़ होती—मैं शायर हूँ, भड़भूजा नहीं—मैं—मैं···

दोस्त : दोस्त, तुम किन उलझनों में गिरफ़्तार हो गए हो—लानत भेजो ऐसे बदज़ोक आदमियों पर और अपना काम किए जाओ—तुम्हारी जान से मुल्क और कौम को बहुत-सी उम्मीदें बँधी हुई हैं—तुम्हारी शायरी सिर्फ़ शायरी ही नहीं, इल्हाम है। आने वाली नस्लें तुम्हारे बुत तैयार करेंगी—तुम्हें पूजेंगी—वह नज़्म जो आजकल तुम लिख रहे हो, एक सिर्फ़ वही तुम्हें कयामत तक ज़िन्दा रखने के लिए काफ़ी है। दरअसल तुम खुद अपनी कद्र नहीं करते—तुम बहुत बड़े आदमी हो। तुम्हें छोटे-छोटे आदमियों की तुच्छ बातों पर गौर नहीं करना चाहिए।

कवि : तुम सच कहते हो दोस्त—तुम सच कहते हो—यह मेरी बेवकूफ़ी है जो मैं ऐसी तुच्छ बातों पर गौर करके अपना कीमती वक्त बर्बाद करता हूँ—मुझे अपनी नज़्म मुकम्मल करनी चाहिए, जो शायरी की दुनिया में एक इन्कलाब बरपा कर देगी—मैं इसके दो बन्द और लिख चुका हूँ—आज दो बन्द और लिखूंगा—उन्वान मैंने कायम कर लिया—'अँधियारा दर्पण'।

[झाँझ की आवाज़]

[कवि के गुनगुनाने की आवाज़—ऐसा मालूम हो कि वह शे'र सोच रहा है। दरवाज़ा खुलने की आवाज़—कवि गुनगुनाता रहता है—दरवाज़ा खुलने की आवाज़ फिर आती है।]

कवि : (चौंककर) कौन है?

मालती : मैं हूं—मालती।

कवि : (खुश होकर) ओह, तुम हो—तुम हो—मैं शे'र लिख रहा था और तुम्हारी तसवीर मेरी आँखों के सामने थी - यह अजीब बात है कि तुमसे तुम्हारा तसव्वुर ज्यादा खूबसूरत है—मगर—मगर—आज तो तुम बहुत निखरी हुई हो—तुम्हारे गुलाबी होंठ अभी-अभी खुले थे तो मुझे ऐसा महसूस हुआ था कि नदी के गँदले पानी में चमकीली मछलियाँ गोते लगा रही हैं—तुम्हारे दाँत इस वक्त मेरे खयालों से भी कहीं ज्यादा रौशन हैं—ओह, मालती, मैं आज किस कदर खुश हूँ।

मालती : आज तुम इतने ज़्यादा खुश क्यों हो—क्या मेरे लिए···

कवि : (**बात काटकर**)···मैं इसलिए खुश कि मेरी नज़्म आज मुकम्मल हो जाएगी। यह वह नज़्म है जिसके छपने पर मैं तमाम हिन्दुस्तान में मशहूर हो जाऊँगा। यह वह नज़्म है जो कयामत तक मेरा नाम ज़िन्दा रखेगी—अब वह वक़्त दूर नहीं जब लोग मुझे पूजा करेंगे—और—और मैं तुम्हारी पूजा करूँगा—क्या तुम्हें मेरी शोहरत से खुशी न होगी ?—मालती, तुम नहीं जानती हो कि मैं कितना बड़ा शायर हूँ—शायरी मेरी कनीज़ है, इसलिए कि मैं तुम्हारा गुलाम हूँ···

मालती : मैं नहा-धोकर आयी थी···

कवि : जब ही तुम निखरी हुई हो—गुसल खूबसूरती के लिए बहुत ज़रूरी होता है—सिर्फ़ तुम्हें देख लेने से मेरी आत्मा निखर जाती है—मैं सोचता हूँ—मैं सोचता हूँ, अगर तुम न होतीं तो—तो—लेकिन यह सोच-विचार बिलकुल फ़िज़ूल है इसलिए कि तुम हो—और चूंकि तुम हो, इसलिए दुनिया में मेरे लिए सबकुछ है।

मालती : तुम्हारी बातें बड़ी मीठी हैं—तुम्हारी कविता और भी मीठी है—तुम जब कहते हो कि मैं तारों की शाहज़ादी हूँ या तुम्हारे सपनों की मलिका हूँ तो मुझे बड़ी खुशी होती है—जी चाहता है कि कान खुले रहें। आँखों में नींद आ जाए और सारी उम्र यही कुछ सुनने में बीत जाए—मगर—मगर—सारा वक्त यूँ नहीं गुज़र सकता। जब तुम पास नहीं होते—जब तुम्हारी कविता मेरे कानों में सिर्फ़ एक भन्नाहट-सी बनकर रह जाती है तो मैं कुछ और सोचना शुरू कर देती हूँ — जी और चीज़ों के लिए ललचाता है—दौलत भी तो बुरी चीज़ नहीं।

कवि : (हँसता है) दौलत—इसके बारे में फिर कभी न सोचना मालती—यह बहुत बुरी चीज़ है—इससे दिल व दिमाग का हाज़मा खराब हो जाता है—और फिर दौलत इतनी अहम् चीज़ भी तो नहीं, जो उस पर गौर किया जाए। मैं हूँ, तुम हो, मेरी शायरी है। दौलत की हमें क्या ज़रूरत है ? दौलत की तो उन लोगों को ज़रूरत होती है जो बनावटी खुशियाँ खरीदना चाहते हैं और फिर मुहब्बत करने वाली रूहें तो बहुत ऊँची होती हैं—

मालती : तुम मेरे लिए साड़ी लाए ?

कवि : साड़ी—साड़ी—तुम्हें साड़ी की क्या ज़रूरत है ? ये कपड़े बड़े अच्छे हैं।—दरअसल—दरअसल—यहाँ फिर दौलत का सवाल पैदा हो जाता है—मैं तुम्हें एक नहीं, कई साड़ियाँ ला दूंगा—मैं दौलतमंद भी हो जाऊँगा तुम्हारे लिए—दौलत पैदा करना कोई मुश्किल काम नहीं।

मालती : तो फिर पैदा क्यों नहीं करते—मेरे हाथ लोहे की मशीन चलाने के लिए नहीं बने। तुम खुद कह चुके हो कि मेरी अँगुलियाँ नाज़ुक तारों में राग जगाने के लिए बनाई गई हैं—तुम खुद कई बार अपनी कविता में लिख चुके हो कि मैं शाहज़ादी हूँ—लेकिन मैं शाहज़ादी कहाँ हूँ—यह लिबास जो मैंने पहन रखा है, क्या शाहज़ादियों का है—यह सब झूठ है—

कवि : मालती, तुम ठीक समझी नहीं हो—तुम उस खूबसूरती को नहीं पहुँची हो जो

इस बात में है कि ऐसे लिबास में भी तुम शाहज़ादी हो—कुछ शाहज़ादियाँ शाहज़ादियों के लिबास में भी शाहज़ादियाँ मालूम नहीं होतीं—

मालती : यह बात उस वक्त तो बड़ी अच्छी मालूम होती है पर···मैं जाती हूँ।

कवि : कहाँ—अभी थोड़ी देर और ठहरो मालती !

[दरवाज़ा खोलने और बन्द करने की आवाज़]

कवि : (हँसता है)···चली गयी···(अन्तराल)···साड़ी···मुझे इसके लिए एक साड़ी किसी-न-किसी तरह ज़रूर हासिल करनी चाहिए—साड़ी में वह बहुत भली मालूम होगी—उसकी ख्वाहिश वेज़ा नहीं—यह नज़्म मुकम्मल कर लूं फिर इधर ध्यान दूंगा—(**कागज़ों की खड़खड़ाहट**) साड़ी···एक नहीं कई साड़ियाँ···

[रुपयों की खनखनाहट कुछ क्षणों तक जारी रहे—फिर दूसरे सीन की वार्ता शुरू हो।]

सेठ : यह तो कुछ भी नहीं—वे साड़ियाँ, जो मैंने तुम्हारे लिए बम्बई से मँगवाई हैं, देखने के काबिल होंगी—बनारसी साड़ियाँ भी तुम्हारे लिए आ रही हैं—बोलो, और क्या चाहिए—दुनिया की हर नियामत तुम्हें मिल सकती है।

मालती : बस···बस···(**हँसती है**) बस···इतना ही काफी है—अच्छा सेठ साहब, यह बताइए, मैं इस साड़ी में कैसी लगती हूँ ?

सेठ : कैसी लगती हो—बड़ी अच्छी लगती हो।

मालती : आपको तारीफ़ करना नहीं आता—कुछ रूखे-फ़ीके लफ़्जों से वह बात पैदा नहीं होती।

सेठ : कौन-सी ?

मालती : आप नहीं समझेंगे।

सेठ : भई, मैं तुमसे पहले भी कह चुका हूँ कि मैं शायर नहीं हूँ—अगर मैं शायर होता तो—

मालती : (**आवाज़ भर्रा जाती है**)···जाने दीजिए इन बातों को—मैं···मैं···कुछ नहीं—

सेठ : मालती, तुम कुछ दिनों से उदास-उदास क्यों रहती हो—क्या मुझसे कोई गलती हो गयी है—क्या मेरी तवज्जह में कोई कमी आ गयी है—तुम मुझसे साफ़-साफ़ कहो—मैं तुम्हारी हर खिदमत के लिए तैयार हूँ—बोलो, तुम्हें क्या चाहिए—कश्मीर चलोगी—

मालती : मुझे कोई तकलीफ़ नहीं—और सच पूछिए तो मुझे तकलीफ़ सिर्फ़ इस बात की है कि अब मुझे कोई तकलीफ़ नहीं है—आपने मेरी हर ख्वाहिश पूरी की है—इससे ज़्यादा मैं आपसे माँग नहीं सकती और न इससे ज़्यादा आप दे सकते हैं—लेकिन मैं खुश हूँ (**रोनी आवाज़ में—यह ज़ाहिर करती है कि उसे कोई दुःख नहीं**)···मैं बहुत खुश हूँ। (**एकाएक फूटकर रोना शुरू कर देती है।**)

[रोने की ये आवाज़ आहिस्ता-आहिस्ता नीचे के गीत में मिल जाए।]

कवि : खलश में मज़ा है न गम में मज़ा है
न अब इश्क के ज़ेर-ओ-बम में मज़ा है
तड़प में न अब केफ़ो कम में मज़ा है
—अजब ज़िन्दगी है।

जो आहें भरूँ भी तो तस्कीं नहीं है
दुआएँ करूँ भी तो तस्कीं नहीं है
यकीनन मरूँ भी तो तस्कीं नहीं है
—अजब ज़िन्दगी है।

ये रंगीन मंज़र भी बेकैफ़ से हैं
कसम है गुल-ए-तर भी बेकैफ़ से हैं
वह बाम और वह दर भी बेकैफ़ से हैं
—अजब ज़िन्दगी है।

ज़माने की रंगत से घबरा रहा हूँ
हर इक के रंज व राहत से घबरा रहा हूँ
किसी की मुहब्बत से घबरा रहा हूँ
—अजब ज़िन्दगी है।

[गीत खत्म होने के बाद ठण्डी साँस लेता है और कहता है—अजब ज़िन्दगी है।]

दोस्त : तुम्हारा दिल जल रहा है—इस गीत से जले हुए दिल की बू आती है।

कवि : मेरा कोट जल रहा होगा—मैं सिगरेट जो पी रहा था।

दोस्त : अपने-आपको धोखा क्यों देते हो—तुम्हें आज तक कभी कोट नसीब भी हुआ है—यह तुम्हारा दिल जल रहा है।

कवि : जलने दो—तुम मुझे यह बताओ कि यह रेशमी साड़ी कैसी है—ठहरो। मैं तुम्हें खोलकर दिखाता हूँ। (**कागज़ की खड़खड़ाहट**)···हाथ मत लगाना, मैली न हो जाए।

दोस्त : मैं पूछता हूँ, तुम्हारा दिमाग तो नहीं बहक गया ? यह हर दूसरे-तीसरे दिन तुम किसके लिए साड़ी खरीदकर लाते हो ? क्या अब किसी और से आँख लड़ायी है ?

कवि : नहीं तो।

दोस्त : तो फिर ये साड़ियाँ क्यों खरीदी जा रही हैं ?

कवि : मालती के लिए।

दोस्त : मालती के लिए ?

कवि : हाँ, मालती के लिए—दरअसल आजकल मैं एक बड़े दिलचस्प खेल में मशरूफ़ हूँ—शे'रों को साड़ियों में तब्दील कर रहा हूँ—शे'र बेचता हूँ, साड़ियाँ खरीदता हूँ—क्या यह दिलचस्प खेल नहीं—एक बड़ा अच्छा ग्राहक मुझे इत्तफ़ाक से मिल

गया है—उसके पास साड़ियाँ थीं मगर शे'र नहीं थे—मेरे पास शे'र थे मगर साड़ियाँ नहीं थीं—अब हम दोनों एक-दूसरे के ग्राहक बन गए हैं और दोस्त, मैं सच कहता हूँ कि सौदा बड़ी ईमानदारी से हो रहा है। वह न जाने मेरे शे'रों को कहाँ इस्तेमाल करता है। लेकिन मैं तो उसके दिए हुए पैसों से साड़ियाँ खरीद रहा हूँ और ऐश कर रहा हूं (**दीवानावार हँसता है जिसमें दुःख का इज़हार भी है**)—ऐश कर रहा हूँ—वह जो मेरे अन्दर शायर घुसा हुआ है, उसको हर रोज़ बाहर निकालता हूँ और उसकी बेइज़्ज़ती करता हूँ—उसको अपने सामने खड़ा करता हूँ और उससे कहता हूँ—"तू अपने-आपको अक्लमंद समझता है—यह तेरी गलत-फ़हमी है। तू परले दर्जे का बेवकूफ़ है---तू अपने-आपको कुदरत का राज़दां समझता है—तू समझता है कि तेरी कल्पना में दुनिया के तमाम फैलाव सिमटे हुए हैं—तू हर राज़ से परिचित है। मगर हाल यह है कि तुझे एक छोटा-सा राज़ भी मालूम नहीं हुआ कि औरत पहले औरत है, बाद में वह खयालों की मलिका और सपनों की शाहज़ादी बनती है—तू मसखरा है—भाँड़ है—समझा ? तू कुछ भी नहीं है—जा, मेरी आँखों से दूर हो जा।"···मैं अब इस शायर को सज़ा दे रहा हूँ—शे'र बेचता हूँ। साड़ियाँ खरीदता हूँ—शायद—शायद वह किसी रोज़ वापस आ जाए—तब तक मैं बहुत-सी साड़ियाँ जमा कर लूंगा—लेकिन मैं सोचता हूँ कि मेरे शे'र जमा करके वह क्या करेगा ?

× × ×

[संगीत का एक टुकड़ा शुरू हो—नीचे की वार्ता उस टुकड़े पर सुपर इम्पोज़ की जाए।]

× × ×

सेठ : मालती···

मालती : मुझसे कुछ कहा आपने ?

सेठ : हाँ—लो देखो, मैं आज तुम्हारे लिए कितनी अच्छी चीज़ लाया हूँ।

मालती : आप हमेशा मेरे लिए अच्छी चीज़ें ही लाते हैं।

सेठ : नहीं। खास करके यह चीज़ तो बहुत ही अच्छी है—तुम्हें कविता का शौक है न—

मालती : हाँ। कभी था—कभी सुना करती थी।

सेठ : मैं तुम्हें सुनाता हूँ—फिर तुम बाजे पर इसी चीज़ को गाना। (**नीचे के शे'र पढ़ता है—**)

यह कौन आया—यह कौन आया
यह मेरी दुनिया पर छाने
यह कुछ खोने या कुछ पाने
यह बल खाता यह शरमाता।

मालती : यह कौन आया—यह कौन आया
आँखों में शरारत और शोखी
शोखी में है बर्फ़ की तर्रारी
जो देख के मुझको इठलाया
यह कौन आया—यह कौन आया।

सेठ : तुम्हें तो गीत पहले ही से याद है—क्या पढ़ चुकी हो कहीं ?

मालती : (चौंककर)···सेठ साहब, यह कविता आप कहाँ से लाए हैं ? यह कविता आपको किसने दी है—मुझे यह सारा गीत ज़बानी याद है।

सेठ : मैंने यह गीत और ऐसे बहुत-से गीत तुम्हारे लिए खरीदे हैं। तुम्हें पसन्द हों तो और भी आ जाएँगे।

मालती : (उन्मुक्त-सी)···खरीदे हैं···खरीदे हैं—वह मुझे बेच रहा है—वह मुझे बेच रहा है—उसको रोकिए—सेठ साहब, उसको रोकिए—वह मुझे बेच रहा है। (रोना शुरू कर देती है)···वह मुझसे बदला ले रहा है—वह मुझे बेच रहा है।

(फ़ेड आउट)

जुर्म और सज़ा

पात्र

शंकर : पत्रकार

कमला : सेठ मगनलाल की नौकरानी

कुन्दन : सेठ मगनलाल का लड़का

सेठ मगनलाल : एक रईस

इन्स्पेक्टर अब्दुल हमीद : खुफ़िया पुलिस का आदमी

और कुछ अखबार बेचने वाले छोकरे

[सिसकियों की आवाज़—फिर भारी कदमों की आवाज़—ऐसा लगे कि कोई परेशानी की हालत में टहल रहा है।]

शंकर : तुम्हारा बयान है कि उसने तुम्हें अपने कमरे में बुलाया, यह कहकर कि वह तुम्हारी मदद करेगा—तुम्हारा बुखार दूर करने के लिए तुम्हें दवा देगा—और—और उसने तुम्हारा बुखार दूर करने की बजाय तुम्हें हमेशा के लिए रोगी बना दिया। क्यों ? इसलिए कि कानून का ताला सिर्फ़ सोने और चांदी से खुलता है जो तुम्हारे पास नहीं—इसलिए कि वह शहर के सबसे बड़े रईस का लड़का है और तुम गरीब भिखारिन हो। तुम्हारा कोई मददगार नहीं।

[औरत की सिसकियों की आवाज़—फिर भारी कदमों की आवाज़]

शंकर : तुम्हारा बयान है कि सेठ मगनलाल जौहरी के लड़के कुन्दन ने तुम्हें दान देने के लिए बुलाया और तुम्हारी ज़िन्दगी का सबसे बड़ा दान तुम्हारी झोली से छीन लिया—तुम्हारे जीवन का सबसे कीमती गहना उतारकर वह रखेगा कहाँ ? अपने बाप की जवाहरात की तिजोरी में ? अपनी माँ के सिंगारदान में ? अपने बटुए में ? कहाँ ? वह इस चोरी को कैसे छुपाएगा ? वह इस डाके पर कैसे परदा डालेगा ? तुम्हारी आगज़दा अस्मत का धुआँ, तुम्हारे ज़ख्मी दिल की जलन, तुम्हारी बेबसी और बेचारगी के आसमान को फाड़ देने वाली चीखें क्या उसे भस्म न कर देंगी ?

कमला : (सिसकियों के साथ) कितनी बेकस और बेबस औरतों की चीखों और आहों ने ऐसे ज़ालिम आदमियों को भस्म किया है—आकाश में कितनी बिजलियाँ ऐसी

हैं जो इन पापियों पर गिरी हैं ?

शंकर : तुम ठीक कहती हो—इसको सज़ा देना हमारा काम है—तुम शान्त हो जाओ। कमला, तुम्हारी ज़िन्दगी खराब करने वाला अपनी ज़िन्दगी कभी नहीं सँवार सकेगा। उसको मज़ा भुगतनी होगी। बहुत कड़ी सज़ा भुगतनी होगी। उसने कोई मामूली जुर्म नहीं किया। उसने तुम्हारी उजली ज़िन्दगी पर काजल का लेप कर दिया है। उसने तुम्हारी कुँवारी दुनिया के तमाम सुहाने सपने तुमसे छीन लिए हैं। उसने तुम्हारी गरीबी से नाजायज़ फ़ायदा उठाया है। क्या कहता था वह—"लो, यह पाँच रुपये का नोट ले जाओ—पिताजी से कहूँगा कि वह तुम्हारी तनख्वाह बढ़ा दें"—यह सुनकर तुम उसके मुँह पर इसलिए न थूक सकीं कि वह तुमसे बहुत ऊँचा था। यह सुनकर तुम बद्दुआ भी न दे सकीं, इस खौफ़ से कि उस पथरीले मकान के शानदार साज़ व सामान में उलझकर रह जाएगी, वह तुम्हारे परमात्मा तक न पहुँच सकेगी। लेकिन मैंने तुम्हारी दुःखभरी दास्तान सुनी है। यकीन रखो, दुनिया में हमदर्द इन्सान मौजूद हैं। इसका जवाब देना होगा—उसकी बहुत-सी बातों का जवाब देना होगा।

कमला : (**सिसकियां लेते हुए**) लेकिन बात वही रहेगी, जो हो चुकी है।

शंकर : मुझे बहुत सदमा हुआ है कमला—मुझे बहुत सदमा हुआ है तुम्हारी दुःखभरी दास्तान सुनकर—काश कि मैंने तुम्हें अपने ही पास रखा होता मगर—मगर अब मैं क्या कहूँ—यह गरीबी बहुत ही बुरी बला है···

[कदमों की भारी आवाज़—आहिस्ता-आहिस्ता यह आवाज़ गुम हो जाए।]

× × ×

[दरवाज़ा खोलने की चरमराहट—खामोशी—घड़ी की टिक्-टिक्—खर्राटों की आवाज़]

शंकर : कुन्दन—कुन्दन (**ऊँची आवाज़ में**)···कुन्दन !

कुन्दन : (**एकाएक जागकर**) क्या है—कौन है—त···त···तुम कौन हो ? तुम मेरे कमरे में कैसे दाखिल हुए ?

शंकर : (**हँसता है**) मैं शंकर हूँ—इस शहर का एक मामूली पत्रकार—मैं इस कमरे में कैसे दाखिल हुआ, तुम इस पर ताज्जुब क्यों करते हो ? अमीर आदमियों के घर भी उनके चाल-चलन की तरह सुराखदार होते हैं—कोई न कोई जगह अन्दर घुसने के लिए मिल ही जाती है।

कुन्दन : तुम चाहते क्या हो ?

शंकर : यह पूछो कि मैं क्या नहीं चाहता।

कुन्दन : तुम चोर हो।

शंकर : यह तुमने कैसे पहचाना ?

कुन्दन : मैं···(**एकदम रुककर**) दरवाज़े को ताला तुमने लगाया है ? क्यों ? क्यों ? कौन हो तुम ? मुझसे क्या चाहते हो ? तुम्हारी—तुम्हारी आँखें···

शंकर : (जहरीली हँसी) हाँ, हाँ, कहो—मेरी इन आँखों में तुम्हें क्या नज़र आता है ? कमला के आँसू ? अपने पाप की झलकियाँ ? मेरे इरादे ? बोलो, क्या नज़र आता है तुम्हें इन आँखों में ? क्या तुम्हें महसूस नहीं होता कि तुम किसी अदालत के कटघरे में खड़े हो और तुम्हारे सामने कुर्सी पर तुम्हारी किस्मत का फ़ैसला सुनाने वाला जज बैठा है।

कुन्दन : मेरी किस्मत···कमला हमारी नौकरानी है—कमला···

शंकर : (जहरीली हँसी)···मैं भी तुम्हारा नौकर हूँ—मैं इस वक्त तुम्हारी खिदमत ही के लिए आया हूँ—देखो, बिस्तर पर से उठने की कोशिश न करो और जो कुछ मुझे कहना है, गौर से सुनो। (**गम्भीरता के साथ**) अदालत में तुम्हारा मुकदमा पेश है और इस मुक़दमे का फ़ैसला करने का अख्तियार मैंने अपने हाथों में लिया है। जैसा कि तुम कहते हो, कमला जो तुम्हारी नौकरानी है, उसे कमरे में बुलाया और उसकी मर्ज़ी के खिलाफ़ उसकी बेबसी और गरीबी का नाजायज़ फ़ायदा उठाते हुए तुमने उसकी ज़िन्दगी खराब की—(**कड़े लहजे में**) क्या यह झूठ है ? तुम्हें इस बारे में कुछ कहना है तो कहो।

कुन्दन : मैं—मैं आपका मतलब नहीं समझा। क्या कमला ने आपसे कुछ कहा ?

शंकर : मैं पूछता हूँ, क्या तुम्हें इस बारे में कुछ कहना है ?

कुन्दन : मुझे— मुझे मालूम न था कि आप—यानी कमला का कोई रिश्तेदार है—वह तो कहती थी कि—कि—कि मेरा कोई भी नहीं—रुपया—क्या रुपये से यह मामला रफ़ा-दफ़ा हो सकता है ?

शंकर : तुमने जुर्म का इकबाल किया है। अब मुझे अपना फ़ैसला सुना देना चाहिए।

कुन्दन : फ़···फ़···फ़ैसला···फ़ैसला ?

शंकर : खामोश रहो—तुमने यानी कुन्दनलाल ने, जिसका बाप सेठ मगनलाल जौहरी है, दो दिसम्बर की रात को अपनी नौकरानी कमला, जिसका इस दुनिया में कोई वली-वारिस नहीं है, को अपने कमरे में बुलाया और उसे अपनी हवस का शिकार बनाया। ज़बरदस्ती तुमने एक मासूम औरत की ज़िन्दगी दागदार बनायी। उसने तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ा था, लेकिन तुमने उसके जीवन को हमेशा के लिए उजाड़ बना दिया। तुमने ऐसा जुर्म किया है जिसकी सज़ा मेरे विचार में मौत है—तुम खूनियों और कातिलों से कहीं ज़्यादा गुनाहगार हो। अगर मैं कानून होता तो तुम्हारी गर्दन में लगातार मौत बनकर लटक जाता। तुम्हारे गले में मौत की एक न खत्म होने वाली हिचकी बनकर अटक जाता—तुम्हारे चेहरे पर तुम्हारे गुनाह का न मिटने वाला इश्तहार बनकर चिपक जाता। (**ज्यादा गम्भीरता के साथ**) ···चूंकि यहाँ की कानूनी अदालतों की आँखों में तुम्हारे बाप के जवाहरात चकाचौंध पैदा कर सकते हैं, इसलिए तुम्हारे जुर्म को इन्सानियत की कसौटी पर मैंने खुद परखा है। तुम्हें सबसे बड़ा मुजरिम यकीन करते हुए मैं तुम्हें मौत की सज़ा देता हूँ—(**कुछ क्षणों कब्र की सी खामोशी छाई रहती है।**)

कुन्दन : यह···यह···यह क्या बेहूदगी है—तुम कौन होते हो मुझे सज़ा देने वाले ?

शंकर : एक इन्सान—एक ऐसा इन्सान, जो तुम्हारे मुकाबले हर लिहाज़ से बेहतर है।

कुन्दन : हुआ करे—ऐसे हज़ारों-हज़ारों इन्सान दर-दर की ठोकरें खाते फिरते हैं।

शंकर : मगर ऐसी ठोकरें नहीं खाते जो कि तुमने खाई हैं और जो तुमको मौत की गहराइयों में उतरने पर मजबूर करेंगी।

कुन्दन : तुम मुझ पर ज़बरदस्ती मौत आयद नहीं कर सकते।

शंकर : लेकिन तुम इस भोली-भाली औरत पर एक नहीं, कई मौतें ज़बरदस्ती आयद कर सकते हो; क्यों? मैं क्यों तुम पर मौत आयद नहीं कर सकता? क्या तुम उसके हकदार नहीं हो? खबरदार कुन्दन, अपनी जगह से हिलने की कोशिश न करो। इस चाकू ने कई हैवानों की गर्दनें काटी हैं।

कुन्दन : (**भयभीत लहजे में**) चाकू—-चाकू—

शंकर : हाँ, चाकू, जिसका फल हवस से भी बहुत ज़्यादा तेज़ है और इस बोतल में घुला हुआ ज़हर है—बोलो, तुम्हें लोहा पसन्द है या ज़हर? चाकू से मरना पसन्द है या इस ज़हर से? इस ज़हर का इतना ज़्यादा असर है कि मरने में तुम्हें कोई तकलीफ़ नहीं होगी।

कुन्दन : मैं—मैं मरना नहीं चाहता।

शंकर : मरना कोई भी नहीं चाहता। लेकिन मौत जब एक दफ़ा आ जाए तो कोई टाल भी नहीं सकता। अच्छे लड़के बनो और जो कुछ मैं कहता हूँ, उस पर अमल करो। लो, इस कागज़ पर लिखो। (**कागज़ की खड़खड़ाहट**) यह रहा कलम। लिखो—जो कुछ मैं लिखवाऊँ लिखते जाओ—इन्कार की सूरत में मुझे अपनी ताकत से काम लेना पड़ेगा। जानते हो मैं तुम जैसे चार आदमियों का लहू निचोड़ सकता हूँ।

कुन्दन : क्या—क्या लिखूं—क्या लिखूं? (**कागज़ की खड़खड़ाहट**)

शंकर : लिखो—मैंने अपनी ज़िन्दगी में एक बहुत बड़ा गुनाह किया है—लिख रहे हो?

कुन्दन : (**काँपती आवाज़ में**) मैं···मैं···

शंकर : (**रोबदार आवाज़ में**) लिखो···मैंने अपनी ज़िन्दगी में एक बहुत बड़ा गुनाह किया है जिसका बोझ मैं नहीं उठा सकता—इस गुनाह को तमाम उम्र अपने कंधों पर उठाए रहूँ, यह मुझसे नहीं हो सकता। इसलिए मैं खुदकुशी कर रहा हूँ।

कुन्दन : खुदकुशी···

शंकर : हाँ, खुदकुशी—लिखो वरना मुझे तुम्हारे खून से हाथ रंगने पड़ेंगे।

कुन्दन : मैं···मैं···मुझे माफ़ कर दीजिए।

शंकर : परमात्मा तुम्हें माफ़ करे···लिख लिया?

कुन्दन : जी हाँ।

शंकर : नीचे अपने दस्तखत करो।

[कागज़ की खड़खड़ाहट]

शंकर : लाओ, यह कागज़ मेरे हवाले करो। शाबाश ! (**हाथापाई की आवाज़—कुन्दन ज़ोर से चीखता है मगर शंकर उसके मुँह पर हाथ रख देता है**) बस-बस, यह एक कतरा ही काफ़ी है—अब जाओ जहन्नुम में।

[कुन्दन कुछ बोलता है मगर उसकी आवाज़ नहीं निकलती, इसलिए कि शंकर उसके मुँह पर हाथ रखे होता है। थोड़ी देर के लिए खामोशी छायी रहती है।]

शंकर : (**इत्मीनान का साँस लेकर**) चलो, एक गुनाहगार इस दुनिया से कम हुआ।

[थोड़ा अन्तराल—घड़ी की टिक्-टिक्—अन्तराल—फिर दरवाज़ा खुलने की आवाज़—फिर अन्तराल]

कमला : (**हैरत-भरे लहजे में**) शंकर साहब, आप ! आप !

शंकर : कौन···कमला ?

कमला : आप कैसे आए—मैं तो सब दरवाज़े बन्द करके सोई थी—इस वक्त···आप··· आप···

शंकर : मैं कुन्दन से मिलने आया था—लो अब दरवाज़ा बन्द कर लो और जाकर सो जाओ।

[कदमों की चाप—दरवाज़ा बन्द करने की आवाज़]

कमला : (**कानाफूसी में**) कुन्दन से मिलने आए थे···

× × ×

[अखबार बेचने वाले छोकरों की आवाज़ें—]

···सेठ मगनलाल जौहरी के लड़के ने खुदकुशी कर ली, रात को ज़हर खा लिया।

···सेठ मगनलाल जौहरी के लड़के की रहस्यमय मौत, ज़हर बड़ा घातक था

···एक जौहरी का लड़का रात को अपने कमरे में मुर्दा पाया गया। वह अपने गुनाह का बोझ बरदाश्त न कर सका।

[शंकर भयानक कहकहा बुलन्द करता है।]

शंकर : क्यों इन्स्पेक्टर साहब, आपने यह कैसे मालूम कर लिया कि सेठ मगनलाल के बदनसीब लड़के कुन्दनलाल ने अपने ही हाथों अपने-आपको मारा है ?

इन्स्पेक्टर : भई, मामला बिलकुल साफ़ है। तुमने ख्वाहमख्वाह एक लम्बा-चौड़ा मज़मून लिख मारा है—तुम्हारा खयाल गलत है। उसने एक ऐसी तहरीर छोड़ी है जिसमें वह साफ़-साफ़ लिखता है कि मैं इसलिए खुदकुशी कर रहा हूं कि मैं अपने गुनाह को बरदाश्त नहीं कर सकता। उसने कोई ऐसा गुनाह किया होगा जो उसके ज़मीर पर एक भारी बोझ बनकर रह गया—भई, गुनाह करने और फिर उसको हज़म करने के लिए भी तो काफ़ी ताकत होनी चाहिए।

शंकर : मान लिया— लेकिन इससे यह साबित तो नहीं होता कि उसने खुदकुशी की है।

इन्स्पेक्टर : तो और क्या साबित होता है ?

शंकर : साबित कुछ भी नहीं होता—तुम सतही चीज़ों से एक राय कायम कर लेते हो और उसी को सबूत के तौर पर पेश कर देते हो। तुम्हारा कानून अंधा है जो सिर्फ़ टटोलकर देखता है। वाकयात का असल रंग उसको नज़र नहीं आता। (**गम्भीरता के साथ**) क्या पता कि सेठ मगनलाल के लड़के को किसी ने कत्ल कर दिया हो। क्या ऐसा नहीं हो सकता ?

इन्स्पेक्टर : ऐसा नहीं हो सकता—क्या उसकी लिखी हुई तहरीर हमारे पास मौजूद नहीं है ?

शंकर : (**बड़ी सख्ती के साथ**) खामोश रहो इन्स्पेक्टर अब्दुल हमीद—ज़्यादा बातूनी न बनो। क्या खयाल है तुम्हारा इस छुरे के बारे में···

इन्स्पेक्टर : छुरा ?

शंकर : हाँ, यह छुरा जिसकी धार तुम्हारे कानून से बहुत ज़्यादा तेज़ है—क्या खयाल है तुम्हारा इसके बारे में···

इन्स्पेक्टर : खयाल ?

शंकर : हाँ, खयाल—और क्या राय है तुम्हारी इस कमरे के बारे में, जिसकी सारी खिड़कियाँ बन्द हैं ?

इन्स्पेक्टर : राय ?

शंकर : तुम काँपते क्यों हो—यह कलम पकड़ो और लिखो जो कुछ मैं लिखाता हूँ।

इन्स्पेक्टर : शंकर !

शंकर : इन्स्पेक्टर अब्दुल हमीद—लिखते हो या नहीं ?

इन्स्पेक्टर : (**घबराकर**) अरे भई क्या ?

शंकर : (**ज़ोर से कहकहा लगाता है—छुरा मेज़ पर फेंकने की आवाज़**) बहुत मुमकिन है कि सेठ मगनलाल जौहरी के लड़के के साथ भी यही हुआ हो। क्या छुरे में इतनी ताकत नहीं होती कि वह चंद सतरें लिखवा सके ? वैसी ही चन्द सतरें जो तुमने कुन्दन के तकिए के नीचे कागज़ के एक पुर्ज़े पर लिखी हुई पायीं और जिसे तुम सबूत के तौर पर शहर के हर चौक में स्टूल पर खड़े होकर दोहराने को तैयार हो। कहो, अब क्या खयाल है ? (**हँसता है।**)

इन्स्पेक्टर : खयाल—(**अपने होश व हवास दुरुस्त करते हुए**) क्या कह रहे थे तुम ?

शंकर : (**हँसता है**) डरो नहीं ! मैं तुमसे ऐसी तहरीर नहीं लिखवाऊँगा—यह तो सिर्फ़ एक मज़ाक था लेकिन अब तुम्हें मानना पड़ेगा कि इन्सान से खुदकुशी करायी भी जा सकती है। कत्ल करने का एक यह भी तरीका हो सकता है। (**हँसता है**) भई माफ़ करना, मैंने तुम्हें डरा दिया।

इन्स्पेक्टर : नहीं, नहीं, तुमने बहुत अच्छा किया। (**अर्थपूर्ण लहजे में**) बहुत अच्छा किया।

[अन्तराल]

इन्स्पेक्टर : सेठ मगनलालजी, क्या आप बता सकते हैं कि आपके लड़के ने खुदकुशी क्यों की ?

सेठ : मुझे कुछ मालूम नहीं इन्स्पेक्टर साहब। मैं खुद हैरान हूँ—मेरे तो होश व हवास ठीक नहीं रहे—मुझे कुछ मालूम नहीं क्या हुआ है ?

इन्स्पेक्टर : वह नोट जो हमें तकिए के नीचे मिला है, क्या आप ही के लड़के के हाथ का लिखा है ? आप उसकी हैंडराइटिंग तो पहचानते होंगे ?

सेठ : जी हाँ। हैंडराइटिंग उसी की है।

इन्स्पेक्टर : क्या आपसे या आपके लड़के से किसी की दुश्मनी थी ?

सेठ : होगी, लेकिन मेरी जानकारी से बाहर है। मैं समझता हूँ हमारा कोई दुश्मन नहीं है, लेकिन यह आप क्यों पूछते हैं ? क्या मेरे कुन्दन को किसी ने कत्ल किया है ?

इन्स्पेक्टर : ऐसा हो सकता है। दरअसल ऐसे मामलों में हर चीज़ को शक की नज़रों से देखना पड़ता है। मैंने आपके तीन नौकरों के बयान लिए हैं लेकिन उनसे मुझे कोई मदद न मिली। मैं इस मामले की तह तक पहुँचना चाहता हूँ। इस गुनाह की खोज लगाना चाहता हूँ जो कुन्दन के मुताबिक उसकी मौत का कारण हुआ··· यह···यह···यह औरत कौन है ?

सेठ : हमारी नौकरानी, कमला।

इन्स्पेक्टर : कमला, ज़रा इधर आओ।

सेठ : कमला !

कमला : क्या मुझे बुलाया है आपने ?

सेठ : हाँ, इन्स्पेक्टर साहब बुलाते हैं। तुमसे कुछ पूछना चाहते हैं।

कमला : कुछ पूछना चाहते हैं ? मुझे—मुझे क्या मालूम है जो आप मुझसे पूछना चाहते हैं ?

इन्स्पेक्टर : घबराओ नहीं। हम तुम्हें खा नहीं जाएँगे···यह बताओ कि जिस रात तुम्हारे सेठ के लड़के ने खुदकुशी की, तुम कहाँ थीं ?

कमला : मैं—मैं—मैं अपने कमरे में थी।

इन्स्पेक्टर : क्या तुम्हें रात को कोई आवाज़ सुनाई दी थी ?

कमला : आवाज़—हाँ, एक आवाज़ सुनाई दी थी।

इन्स्पेक्टर : तुम सो रही थीं ?

कमला : नहीं, मैं जाग रही थी।

इन्स्पेक्टर : उस वक्त क्या बजा होगा ?

कमला : मुझे मालूम नहीं—आधी रात होगी।

इन्स्पेक्टर : तुम जाग क्यों रही थीं ?

कमला : मैं जाग रही थी—मैं जाग रही थी—अब मैं क्या बताऊँ, मैं क्यों जाग रही थी !

इन्स्पेक्टर : देखो कमला, जो कुछ मैं पूछता हूँ उसका ठीक-ठीक जवाब दो—तुम क्यों जाग रही थीं ?

कमला : मेरी तबीयत खराब थी।

सेठ : इन्स्पेक्टर साहब, कमला की तबीयत वाकई कुछ दिनों से खराब है।

इन्स्पेक्टर : हाँ, तो आधी रात के करीब तुमने कोई आवाज़ सुनी और कमरे से बाहर निकलकर तुमने देखा कि···

कमला : शंक···शंक···नहीं-नहीं—बाहर तो कोई भी नहीं था।

इन्स्पेक्टर : यह तुम किसका नाम लेते-लेते रुक गईं—बताओ—बताओ।

सेठ : इन्स्पेक्टर साहब, मैं आपको बताता हूँ। यहाँ एक पत्रकार शंकर है। यह पहले उसी के पास रहती थी। उसने कमला की बहुत मदद की। यह बेचारी किसी ज़माने में गलियों में भीख माँगा करती थी। शंकर ने इसको अपने घर में पनाह दी और इस काबिल बना दिया कि यह किसी अच्छे घर में नौकरी कर सके। चुनाँचे कमला उसका बहुत एहसान मानती है—थोड़े दिन हुए इसे तेज़ बुखार चढ़ा तो बेहोशी में शंकर साहब, शंकर साहब बहुत देर तक पुकारती रही···क्यों कमला, क्या शंकर तुमसे मिलने आया था ?

कमला : जी नहीं—मैं—मैं—मैंने बाहर निकलकर देखा तो कोई आदमी अन्धेरे में खड़ा था।

इन्स्पेक्टर : और वह शंकर था ?

कमला : मैंने कब कहा है—मैंने कब कहा है—वह—वह तो छोटे लालाजी थे—छोटे लालाजी। **(रोना शुरू कर देती है।)**

इन्स्पेक्टर : **(अर्थपूर्ण अन्दाज़ में)** छोटे लालाजी—हूँ।

[कमला रोती है।]

सेठ : कमला, तुम जाओ—अब तुम जाओ। **(खुद सिसकियाँ भरना शुरू कर देता है।)**

[कमला के रोने की आवाज़]

कमला : **(रोनी आवाज़ में)** मैंने झूठ बोला···जो कुछ सच था, ज़बान पर न आने दिया। मैंने पाप किया—मुझे चाहिए था कि सच बोल देती—जो कुछ मैंने देखा था, साफ़-साफ़ बता देती···यह मैंने ऐसा क्यों न किया···क्यों न किया ! **(रोती है।)**

शंकर : हाँ, हाँ, बताओ, तुमने ऐसा क्यों न किया—तुमने सच क्यों न बोला ?

कमला : **(सिसकियों के साथ)** यही तो मैं अपने मन से पूछती हूँ--इस सवाल ने तो मुझे परेशान कर रखा है—मैं सोचती हूँ···मैं सोचती हूँ और सोचते-सोचते ऐसी जगह पहुँच जाती हूँ, जहाँ सोच-विचार हो ही नहीं सकता—आपने मेरी मदद की है, क्या इसलिए मैंने झूठ बोला ? नहीं, यह तो अदले का बदला हो जाता। मैं कभी ऐसा न करती। फिर मैंने झूठ क्यों बोला ? मेरे दिल में कहीं—कहीं, न जाने कहाँ इसका जवाब छिपा बैठा है। मुझे ऐसा मालूम होता है कि मुझे मालूम है कि मैंने झूठ क्यों बोला। सोचती हूँ—नहीं-नहीं, मैं इसकी बाबत कैसे सोच सकती हूँ—मैं तो अब इस काबिल ही नहीं रही। **(रोती है।)**

[भारी कदमों की आवाज़—शंकर सोचने के मूड में टहलता है।]

शंकर : तुम—तुम—(अपने-आप से) लेकिन यह कैसे हो सकता है ?

कमला : मैं भी यही सोचती हूँ। मेरा दिल भी नहीं मानता—लेकिन फिर—फिर—मैंने झूठ क्यों बोला ? मैं उससे कह सकती थी कि रात को आप छोटे लालाजी से मिलने आए थे। उससे क्या हो जाता ? आपने तो उसे नहीं मारा—फिर—फिर ?

शंकर : कमला, कुन्दन ने खुदकुशी नहीं की। उसको कत्ल करने वाला मैं हूँ।

कमला : (बड़े ताज्जुब से) आप···आप···

शंकर : हाँ, मैं।···उस रात मैंने ही उसको मौत के घाट उतारा—वह इसी काबिल था।

कमला : शंकर साहब, यह आपने क्या किया—यह आपने क्या किया—ऐसे कई आदमी इस दुनिया में बसते हैं जो मौत के काबिल हैं—आपकी नज़रों में ऐसे अनगिनत आदमी होंगे जिनका रहना बहुत खतरनाक है, लेकिन आपने सिर्फ़ कुन्दन पर ही क्यों वार किया, सिर्फ़ उसी को क्यों निशाना बनाया ?

शंकर : यही मैं खुद सोचता हूं। (टहलने की आवाज़) यही मैं खुद सोचता हूँ। लेकिन ठहरो, मैंने उसको इसलिए कत्ल किया कि उसने तुम्हें दुःख पहुँचाया था, तुम्हें, कमला, तुम्हें। जिसकी आँखो में मुझ जैसा रद्द किया हुआ इन्सान भी अपनी तमन्नाओं की झलक देखने की आरज़ू कर सकता है, जिसके दिल की धड़कनें सुनने के लिए आले की ज़रूरत नहीं, सिर्फ़ कानों की ज़रूरत है—मैं कितना खुश हूँ—मैं कितना खुश हूँ कि मेरे दिल की बात, जो कि मैं खुद नहीं समझ सका, तुम जान गयीं और जो बात तुम न जान सकीं, मैं समझ गया। मैंने कुन्दन को क्यों कत्ल किया, तुमने झूठ क्यों बोला—इन दोनों सवालों का एक ही जवाब है।

कमला : कुन्दन को आपने सिर्फ़ मेरे लिए कत्ल किया ?

शंकर : सिर्फ़ तुम्हारे लिए नहीं। अगर वह जुर्म नहीं करता तो सज़ा देने का खयाल मेरे दिमाग में पैदा न होता। पहले उसने जुर्म किया, फिर उसने तुम्हें दुःख पहुँचाया, इसके बाद मैंने उसको सज़ा दी। तुम ठीक कहती हो, दुनिया में कुन्दन जैसे हज़ारों आदमी मौजूद हैं। इस शहर में उस जैसे कई अपराधी मौजूद होंगे मगर उनमें से हरेक को मैं कैसे सज़ा दे सकता हूँ ? उन सबको सज़ा मिलनी चाहिए, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि सिर्फ़ मेरे ही हाथ उनके नापाक खून से भरे हों। कुन्दन को सज़ा देने का काम मैंने इसलिए अपने हाथों में लिया कि तुम्हारे और मेरे बीच ज्यादा फ़ासला नहीं था।

कमला : लेकिन अब तो बहुत ज्यादा हो गया है। (ठण्डी साँस भरती है)···मुझे डर था···मुझे डर था।

शंकर : डर कैसा···अब डर कैसा···आज से पहले मैं भी डर महसूस करता था, पर अब तो हम दोनों डर और खौफ़ की सीमाओं से बाहर निकल गए हैं।

कमला : मुझे डर था कि मेरी ज़िन्दगी में सुख की घड़ी जब भी आएगी, मौत का घण्टा बजाती आएगी—आज वही हुआ जिसका खटका था—बिलकुल वही हुआ।

शंकर : क्या हुआ—एक पापी दुनिया से कम हुआ—खस कम जहाँ पाक।

कमला : एक पापी दुनिया से ज़रूर कम हुआ पर पाप तो वहीं रहा—शंकर साहब, आपने पापी को मारा है, पाप को नहीं।

शंकर : लेकिन पाप उसी ने किया था।

कमला : उसी ने किया था, पर मौत उसके मन से उसको निकाल तो नहीं सकी—आप उसको हलाक करके उसके दिल से वह पाप तो दूर नहीं कर सके हैं।

शंकर : नहीं, लेकिन···

कमला : फिर उसको जान से मारने का फ़ायदा ? उसको अपने पाप के प्रायश्चित्त का मौका अब कैसे मिलेगा ? आपने उसको मारकर उससे वह मौका भी छीन लिया जबकि वह सच्चे दिल से माफ़ी माँग सकता था। आपने उसे अच्छा बनने से पहले मौत के घाट उतार दिया। आपने गलती की।

शंकर : (**भिन्नाकर**) क्या गलती की ? नादिरशाह अपनी हवस की प्यास बुझाने के लिए दिल्ली के गली-कूचों में खून के दरिया बहा सकता है, चंगेज़ खाँ अपना दिल खुश करने के लिए शराब का जाम बना सकता है, तैमूर इन्सानों के खून से केवल तफ़रीह के लिए होली खेल सकता है, यूरोप में एक हिटलर अपना शौक पूरा करने के लिए कई श्मशान बना सकता है। मगर शंकर एक मुजरिम को सज़ा नहीं दे सकता। क्यों ? क्यों ?

कमला : इसलिए कि शंकर हिटलर नहीं है, एक मामूली इन्सान है, जिसके दिल में कोई हवस नहीं है। आपने अपना दिल खुश करने के लिए कुन्दन को नहीं मारा। आपको दुःख था उसके बुरे काम से। आपने बुरे काम को मिटाना चाहा, पर एक इन्सान को मिटा दिया। यह गलती की, बहुत बड़ी गलती की। आपने साँप को मारना चाहा और यह खयाल रखा कि लाठी टूटने न पाए। आपकी लाठी टूट गई, पर साँप न मरा। साँप उसका पाप था जो कि सदा विष घोलता रहेगा, सदा विष घोलता रहेगा।

[दरवाज़े पर दस्तक की आवाज़—खामोशी—फिर दस्तक की आवाज़]

शंकर : कौन है ?

[दरवाज़ा खोलने की आवाज़]

इन्स्पेक्टर : मैं अब्दुल हमीद।

शंकर : कौन ? (**सँभलकर**) इन्स्पेक्टर अब्दुल हमीद—आओ—आओ।

इन्स्पेक्टर : मुझे अफ़सोस है कि तुम्हारे तखलिये में दखल दिया। मुझे कुछ कहना है।

शंकर : (**जल्दी-जल्दी**) कहो, कहो, क्या कहते हो ?

इन्स्पेक्टर : मैं तुम्हारी सब बातें सुन चुका हूँ। जिन हालात में तुम लोगों को एक-दूसरे की मुहब्बत का अहसास हुआ है, बहुत ही दर्दनाक है। कानून की आँखें भी यह कहानी सुनकर नमनाक हो गईं। मेरा असूल, मेरा फ़र्ज़, मेरा ज़मीर तुम्हारी मुहब्बत के सामने सिर झुकाता है—कुन्दन मर गया है। अब उसे कोई ताकत

ज़िन्दा नहीं कर सकती। लोगों को यही मालूम है कि उसने खुदकुशी की है। तुम्हारा राज़ मेरे सीने में हमेशा महफूज़ रहेगा—बस, मुझे यही कहना था।

[थोड़ा अन्तराल]

शंकर : इन्स्पेक्टर अब्दुल हमीद—ठहरो—(**थोड़ा अन्तराल**) मुझ भी साथ ले चलो।

इन्स्पेक्टर : वह क्यों ?

शंकर : मैं कातिल हूँ। मैंने एक पाप को मिटाना चाहा, मगर एक इन्सान का खून कर दिया। इस गलती की सज़ा मुझे भुगतनी होगी। चलो इन्स्पेक्टर अब्दुल हमीद, जल्दी चलो, ऐसा न हो कि मेरे ज़मीर की जागी हुई आवाज़ तुम्हारे रहम व करम के नीचे दब जाए।

इन्स्पेक्टर : तुम्हारी मुहब्बत···

शंकर : मुहब्बत रूह की जायदाद है। वह इसे खुद संभाल लेगी—मैं चला कमला—मैं चला।

कमला : जाओ—जाओ—पर जो शक्ति परमात्मा ने तुम्हें दी है, थोड़ी-सी मुझे भी देते जाओ—नहीं, नहीं, मैं नहीं रोऊँगी। मुझे रोना नहीं चाहिए—आज का दिन तो बड़ा शुभ दिन है—मैं जो कुछ चाहती थी, मुझे मिल गया। मेरी झोली भर गई। अब मुझे किसी से कुछ नहीं माँगना—जाओ—जाओ।

(**फ़ेड आउट**)

खुदकुशी

पात्र

औरत	:	आज के ज़माने की फ़ैशनेबल औरत
चाचा	:	पुराने खयालात के बुज़ुर्ग
हीर	:	हीर-राँझा ड्रामे की हीर—वही लिबास
नौकरानी	:	जवान औरत नौकरानी के लिबास में

[परदा उठता है—स्टेज पर बिलकुल अँधेरा छाया है। सामने एक औरत कुर्सी पर बैठी है। बाल खुले हैं। सिर्फ़ उसके चेहरे पर रोशनी पड़ रही है। पृष्ठभूमि में आर्केस्ट्रा पर एक दर्दनाक धुन बजाई जा रही है। औरत उठती है और सफ़ेद रूमाल से अपने आँसू पोंछती है।]

औरत : (सिसकियाँ लेती है) मेरी दुनिया अँधेरी हो गई है। चारों तरफ़ अँधेरा ही अँधेरा दिखाई दे रहा है। अय खुदा, अब क्या होगा ? ज़िन्दगी में अब क्या लुत्फ़ बाकी रह गया है ? वह जिससे मुझे मुहब्बत थी, वह जिसकी खातिर मैं ज़िन्दा थी, वह जो मेरे दिल की धड़कन थी, हमेशा-हमेशा के लिए सो गई है—अब मैं क्या हूँ ? उसके बगैर क्या मेरी ज़िन्दगी ऐसा साज़ नहीं जिसके सारे तार अलग कर दिए गए हों, जिसके सारे तार नोच डाले गए हों ? मौत, आह ! ज़ालिम मौत ! तूने कुछ देर तो सब्र किया होता ! इतनी जल्दी क्या थी ? दुनिया में तुझे कई आदमी मरने के लिए तैयार मिल जाते। वह तो अभी ज़िन्दा रहना चाहता था। उसने तो अभी मुहब्बत की दुनिया बसाई ही थी कि तूने अपनी ठण्डी गोद में बिठा लिया !···(रोती है) मैं क्या सोच रही हूँ···यह रोना-धोना कैसा—इसके साथ तो मेरी ज़िन्दगी का भी खात्मा हो चुका है। मुझे खुदकुशी में देर न करनी चाहिए।

[आहिस्ता-आहिस्ता स्टेज का अँधेरा दूर होना शुरू होता है। कुछ क्षणों में पूरा स्टेज रौशन हो जाता है। परेशान औरत अपने बाल सँवारती है। कुर्सी पर बैठती है और घण्टी बजाती है। पृष्ठभूमि का संगीत बन्द हो जाता है।]

औरत : मुझे फ़ौरन खुदकुशी कर लेनी चाहिए।

[नौकरानी दाखिल होती है।]

औरत : मैं खुदकुशी करना चाहती हूं।

नौकरानी : कब सरकार ?

औरत : इसी वक्त।

नौक़रानी : बहुत अच्छा सरकार।

औरत : चचाजान को भेज यहाँ।

नौकरानी : बहुत अच्छा सरकार। **(चली जाती है।)**

औरत : **(उठकर निर्णायक लहजे में)** मैं खुदकुशी कर लूंगी। चचाजान की सख्ती और दकियानूसी के कारण मेरे महबूब ने जान दी है। अगर चचाजान शादी पर रज़ामन्द हो जाते तो उसकी सेहत चुटकियों में अच्छी हो जाती मगर वह अपने हठ पर कायम रहे और···और···

[कदमों की चाप, फिर चचाजान का प्रवेश]

चाचा : बेटी, तूने मुझे बुलाया है ?

औरत : हाँ चचाजान, मैंने ही आपको बुलाया है।

चाचा : क्या बात है ?

औरत : मैं खुदकुशी करना चाहती हूँ।

चाचा : खयाल बुरा नहीं। लेकिन तुम्हारा इरादा कब है ?

औरत : इसी वक्त। अभी-अभी। **(बैठ जाती है।)**

चाचा : **(कुर्सी पर बैठ जाता है)** रात के बारह बज चुके हैं और मैं ठीक सवा बारह बजे सो जाने का आदी हूँ। तुम्हें खुदकुशी करने से पहले कुछ लिखना भी होगा, जिस पर काफ़ी वक्त लगेगा। और फिर मुझे उस इबारत की गलतियाँ ठीक करनी पड़ेंगी क्योंकि जितने खत अब तक तुमने अपने दोस्त को लिखे हैं, सब-के-सब ज़बान की गलतियों से भरे पड़े हैं—मैं नहीं चाहता कि तुम्हारी आखिरी तहरीर, जो कई आदमियों की नज़रों से गुज़रेगी, गलत-सलत हो। मेरी ज़बानदानी मशहूर है। मेरे शे'र लोग सनद के तौर पर पेश करते हैं। अगर तुम्हारी तहरीर में लिखावट और ग्रामर की गलतियाँ मौजूद रहें तो मेरी नाक कट जाएगी।

औरत : मुझे ज़बान की कोई परवाह नहीं। मैं हमेशा खयालों को तरज़ीह देती रही हूँ। और अपनी आखिरी तहरीर में भी अपनी इस खूबी को कायम रखूंगी। ज़ुबान आखिर है क्या ? इसको इतनी अहमियत क्यों दी जाती है ? मेरे खत जिनकी गलतियों से आपका नाक कटता है ?

चाचा : नाक कटती है, कटता नहीं।

औरत : मैं जानती हूँ। लेकिन आपकी नाक किसी सूरत में भी कट नहीं सकती। अगर आपकी नाक कट सकती तो आप विलायत से वह मशीन कभी न मँगाते जिससे मोटी नाकें छोटी और पतली हो जाती हैं।

चाचा : (उठ खड़ा होता है) तुम मेरी नाक पर नाजायज़ हमला कर रही हो।

औरत : (उठ खड़ी होती है) आप मेरी ज़ुबान पर बेज़ा एतराज़ कर रहे हो।

चाचा : तुम बदतमीज़ी की आखिरी हद तक पहुँचकर तरक्की-पसन्द हो गई हो।

औरत : आप मुझे गाली दे रहे हैं जिसका आपको कोई हक नहीं है।

चाचा : तुम भूलती हो, मैं तुम्हारा चाचा हूँ।

औरत : (बैठ जाती है) मैं भूल गई थी, आप वाकई मेरे चाचा हैं। जिसका बहुत बड़ा सबूत यह है कि आपने मुझे अपनी मर्ज़ी की शादी करने की इजाज़त न दी।

चाचा : (बैठ जाता है) अपनी मर्ज़ी से कोई मर्द या औरत शादी करे तो उसे रूमान लड़ाना कहते हैं जो शरीफ़ घरानों में बहुत बुरा समझा जाता है। मैं शरीफ़ आदमी हूँ। शरीफ़ आदमी होने के अलावा चूंकि तुम्हारा चाचा हूँ इसलिए मैंने ऐसे रूमान की इजाज़त नहीं दी।

औरत : आप रूमान लड़ाना क्यों कहते हैं? यह बहुत बुरा मालूम होता है।

चाचा : उस्तादों ने इसे यूं ही लिखा है। इसमें अब कोई तब्दीली नहीं हो सकती।

औरत : रूमान लड़ाना बहुत भद्दी तरकीब है। मुर्ग लड़ाए जाते हैं। बटेरें लड़ायी जाती हैं। यह रूमान लड़ाना क्या हुआ?

चाचा : तुम खुदकुशी करने वाली थीं।

औरत : मैं खुदकुशी करने वाली थी नहीं, बल्कि हूँ। मुझे आपसे इजाज़त लेनी थी।

चाचा : मेरी तरफ़ मे तुम्हें इजाज़त है। खुदा करे तुम इसमें कामयाब हो जाओ।

औरत : कामयाबी के लिए दुआ का शुक्रिया···मगर इससे पहले कि मैं अपनी जान अपने हाथों से हलाक करूं, मैं यह पूरी तसल्ली करना चाहती हूँ कि मेरे इस काम से आपकी नाक को कोई सदमा नहीं पहुँचेगा।

चाचा : नहीं। मौत से नाक को सदमा पहुँचने का खतरा बहुत ही कम होता है। और फिर जब तुम अपनी आखिरी तहरीर में साफ़-साफ़ लिख दोगी कि मैंने यानी तुमने अपनी ज़िन्दगी का खात्मा इसलिए किया था कि मुझे फ़लाँ आदमी से पाक मुहब्बत थी। पाक का लफ़्ज़ बहुत ज़रूरी है।

औरत : क्या मुहब्बत खुद ही पाक नहीं होती?

चाचा : नहीं, अकेली मुहब्बत पाक नहीं हो सकती। जब तक उसको साफ़-साफ़ बयान न किया जाए।

औरत : तो क्या मुहब्बत के साथ मुझे पाक ज़रूर लिखना पड़ेगा?

चाचा : तुम कोई फ़िक्र न करो—मैं इस तहरीर का मसौदा तुम्हें तैयार करके दे दूंगा। तुम्हारा काम सिर्फ़ नकल करना रह जाएगा।

औरत : और अगर मैं आपकी इबारत नकल करने से इन्कार कर दूं?

चाचा : तो मैं तुम्हें खुदकुशी की इजाज़त नहीं दूंगा।

औरत : (अन्तराल के बाद) चूंकि मुझे खुदकुशी करनी है, इसलिए मैं आपकी इबारत नकल कर दूंगी—फ़रमाइए, इस तहरीर का मसौदा मुझे कब मिल जाएगा?

चाचा : कल सुबह नाश्ते पर।

औरत : ज़रा खुशखत लिखिएगा ताकि मैं आसानी से पढ़ लूं। आप घसीट में लिखने के आदी हैं।

चाचा : मैं अपना खत नहीं बदल सकता। लेकिन मैं तीन-चार बार पढ़कर तुम्हें सुना दूंगा। मेरा खयाल है, फिर नकल करने में तुम्हें कोई दिक्कत पेश न आएगी।

औरत : बहुत बेहतर।

चाचा : अच्छा, तो मैं अब जाता हूँ। (चलता है।)

औरत : (उठकर) शब-बखैर !

चाचा : शब-बखैर ! मैं अब सोते वक्त इसका मज़मून सोचूंगा। मुझे यकीन है कि बहुत ही शानदार बन जाएगा और कोई अजब नहीं कि खुदकुशी के बाद तुम फ़रहाद की शीरीं और मजनू की लैला से भी बाज़ी ले जाओ।

औरत : खुदा आपकी ज़बान मुबारक करे।

[चाचा चला जाता है।]

औरत : (थोड़े अन्तराल के बाद) कुछ फ़ैसला तो हो गया। मुझे तो यह अन्देशा था कि चाचाजान मुझे खुदकुशी की इजाज़त नहीं देंगे। कुछ भी हो, यह मसला हल हो गया। अब उसका मज़मून तैयार हो जाए तो मैं उसे नकल करके फ़ौरन ही ज़हर खा लूंगी। (अलमारी की तरफ़ बढ़ती है) ज़हर मुझे अभी घोल-घोलकर रख देना चाहिए ताकि सुबह वक्त बर्बाद न हो। (अलमारी से ज़हर की शीशी निकालती है। पानी-भरे गिलास में उसकी कुछ बूंदें डालती है) कल सुबह नाश्ते पर—यानी चाय की बजाय मुझे यह ज़हर पीना होगा।

[दस्तक होती है।]

औरत : कौन है ?

[फिर दस्तक होती है।]

औरत : कौन है ?

[कदमों की आवाज़—फिर सामने का दरवाज़ा खोला जाता है और हीर परेशान हालत में अन्दर दाखिल होती है।]

औरत : कौन हो तुम ?

हीर : क्या मैं अन्दर आ सकती हूँ ?

औरत : तुम अन्दर आ सकती हो, मगर यह बताओ, तुम हो कौन ?

हीर : मैं ज़रा दम ले लूं तो आपको सबकुछ बताती हूँ। मैं सख्त घबराई हुई हूं। दरवाज़ा बन्द कर दूं। (दरवाज़ा बन्द कर देती है) वह यहाँ ज़रूर आ जाएगा।

औरत : कौन यहाँ आ जाएगा ?

हीर : आप उसे जानती हैं।

औरत : किसे ?

हीर : राँझे को।

औरत : कौन राँझा ?

हीर : तख्त हज़ारे का राँझा। चौधरी मौजू का छोटा लड़का घीटू, जिसे लोग राँझे के नाम से पुकारते हैं।

औरत : मैं किसी चौधरी मौजू के लड़के घीटू को नहीं जानती—बताओ, तुम कौन हो ?

हीर : हीर।

औरत : कौन हीर ?

हीर : मेहर चूचक की बेटी हीर, जिसे हीर सयाल भी कहते हैं।

औरत : मैं अब समझी—तो तुम हीर राँझे वाली ही हो—पर तुम यहाँ कैसे आ गयीं—कुर्सी पर बैठ जाओ।

हीर : (**कुर्सी पर बैठ जाती है**) मैं और राँझा दोनों सिनेमा देखने आए थे। फ़िल्म हमारा ही किस्सा था। आधा देखकर ही मेरा सिर चकराने लगा। चुनाँचे मैं तो वहाँ से इण्टरवल होते ही भाग आयी। मगर मुझे डर यह है कि राँझा मेरा पीछा करता यहाँ पहुँच जाएगा और मुझे पकड़कर फिर वहीं ले जाएगा।

औरत : कहाँ ?

हीर : उसी जगह, जहाँ हमें कैद किया गया है।

औरत : (**कुर्सी पर बैठ जाती है**) वहाँ कौन-कौन हैं ?

हीर : बहुतेरे हैं। शीरीं है, उसका चाहने वाला फ़रहाद है। लैला है, मजनू है, मिर्ज़ा है, साहबाँ है, नल है, दमयन्ती है—बेशुमार ही हैं।

औरत : तुम्हें राँझे से अब मुहब्बत नहीं रही ?

हीर : मुहब्बत कैसे कायम रह सकती है बहन ! उसे तो हर वक्त बाँसुरी बजाने से काम है। बदकिस्मती से एक बार मैंने उससे कहा था कि तुम बहुत सुरीली बाँसुरी बजाते हो। अब उसके मुँह से निगोड़ा बाँस का यह टुकड़ा अलग ही नहीं होता। जब देखो पेड़ पर चढ़कर बाँसुरी बजा रहा है। यह पागलपन नहीं तो क्या है और फिर जनाब को ढोर-डाँगर चराने का बहुत शौक है—मैं हज़ार कहती हूँ कि राँझा, ये खेड़े नहीं जहाँ तुम्हें गाय-भैंसें मिल जाएँगी। यहाँ दूध की नहरें बहती हैं। दूध पीओ और मज़े से लम्बी तानकर सो जाओ। मगर उसके सिर पर तो वही पुराना भूत सवार है। कहता है, नहीं, जब दूध मौजूद है तो गाय-भैंसें भी कहीं न कहीं ज़रूर होंगी। एक दिन उन्हें ढूंढ़ निकालूंगा। फिर हम दोनों उन्हें चराया करेंगे। शीरीं बेचारी भी इसी तरह फ़रहाद के हाथों बहुत दुखी है। जनाब चौबीस घण्टे हाथ में तैशा लिए पत्थर तोड़ते रहते हैं। शीरीं पूछती है, फ़रहाद, यह तुम क्या कर रहे हो ? जवाब मिलता है, तुम्हारे लिए यह पहाड़ काटकर दूध की नहर जारी कर रहा हूँ। वह बेचारी कहती है कि फ़रहाद, यहाँ दूध की सैकड़ों नहरें मौजूद है, जिनको देख-देखकर मैं तंग आ गयी हूँ—अगर कुछ करना ही चाहते हो तो इनमें से एक नहर कम कर दो—मगर वह शीरीं की एक बात नहीं सुनता और

दिन-रात अपने काम में लगा रहता है।

औरत : यह तो मुसीबत हुई।

हीर : मुसीबत जैसी मुसीबत। बस, हमारा सिर्फ़ यह कसूर है कि हमने उन मर्दों के लिए अपनी जान दी। बेचारी सोहनी की हालत तो मैं बयान नहीं कर सकती—महिवाल साहब हर वक्त अपनी रान के गोश्त का कीमा बनाते रहते हैं और फिर उस नसीबों-जली को मजबूर करते हैं कि वह उस कीमे के बने कबाब खाए। उसे उबकाइयों पर उबकाइयाँ आती हैं मगर महिवाल साहब उसके मुँह में यह कबाब ठूँसते ही रहते हैं। इसी पर बस नहीं, सोहनी पर हुक्म थोपा है कि वह रात को कच्चा घड़ा लेकर दूध की नहर पार किया करे। वह दरिया चनाब में तैरने वाली दूध की नहर में कैसे तैर सकती है? मगर क्या करे! एक बार हिमाकत कर चुकी है। सो उसकी सज़ा भुगत रही है।

औरत : लैला का भी बुरा हाल होगा।

हीर : जी हाँ। लैला हज़ार बार मियाँ मजनू से कह चुकी है, मुझे मत ढूंढ़ो, मैं तुम्हारे सामने मौजूद हूँ, मगर वह नहीं मानते और लैला को छोड़कर रेगिस्तान की खाक छानते रहते हैं।

औरत : मैं तो समझती थी, तुम लोग बहुत खुश होगे।

हीर : खाक भी खुश नहीं—यह दुनिया जल्दी-जल्दी खत्म हो तो हमें इस मुसीबत से निजात मिले। मुहब्बत हुई थी लेकिन इसमें मर जाना क्या जरूरी था? मैं तो बहन, उस वक्त को रोती हूँ जब मैंने बगैर सोचे-समझे खुदकुशी कर ली। हीर राँझे से पल-भर के लिए अलग नहीं हो सकती—शीरीं फ़रहाद से एक क्षण के लिए दूर नहीं रह सकती—ज़िन्दगी बेकार हो गयी है।

[दूर से बाँसुरी की आवाज़ आती है।]

हीर : लीजिए, जनाब आ पहुँचे—दुनिया इतनी तरक्की कर गयी है। अगर कुछ बजाना ही है तो वायलिन बजाएँ, गिटार बजाएँ, सेक्साफ़ोन बजायें—मगर इन्हें समझाए कौन?···अच्छा बहन, चलती हूँ—अपनी तो किस्मत में यही बाँसुरी की तानें लिखी हैं···खुदा हाफ़िज़।

[दरवाज़ा खोलकर बाहर चली जाती है। बाँसुरी की आवाज़ कुछ क्षणों तक आती रहती है। फिर आहिस्ता-आहिस्ता गायब हो जाती है। औरत दरवाज़े के पास से हटकर कुर्सी पर बैठती है और घण्टी बजाती है—कदमों की आवाज़—फिर नौकरानी का प्रवेश]

नौकरानी : जी सरकार!

औरत : मैंने खुदकुशी करने का खयाल छोड़ दिया है।

नौकरानी : बहुत अच्छा सरकार!

औरत : चचाजान सो रहे हैं या जागते हैं ?

नौकरानी : जागते हैं । मुझे अपने पास बिठाकर वह आपके लिए 'पाक मुहब्बत' पर एक मज़मून सोच रहे थे ।

औरत : चचाजान से कह दो कि वह तुम्हें अपने पास बिठाकर मेरे लिए पाक मुहब्बत पर मज़मून न सोचें। मैंने खुदकुशी का इरादा छोड़ दिया है ।

नौकरानी : बहुत अच्छा सरकार ।

[नौकरानी चली जाती है। औरत गिलास का सारा ज़हर फ़र्श पर उँडेल देती है ।]

(पटाक्षेप)

क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ

पात्र

नईम : एक आज़ादख़याल नवयुवक

और अन्य कई पात्र

'अन्दर आना मना है' के कुछ बोर्ड

[बिलकुल आहिस्ता-आहिस्ता वह धुन साज़ों पर बजाई जाए जिसमें आगे चलकर इस ड्रामे का हीरो एक गज़ल गाए।]

नईम : (एक लम्बी साँस लेकर) कैसी सुहावनी जगह है—हैरत कि आज तक यह मेरी नज़रों से ओझल रही —नज़रें—ओझल—(मुस्कराकर) नज़र हो तो चीज़ें नज़र भी नहीं आतीं—नज़र की यह बेनज़री।

[अन्तराल—इस दौरान साज़ बजते रहे।]

नईम : यह नर्म-नर्म घास कितनी आरामदेह है—जी चाहता है, जी चाहता है, आँखें पाँवों के तलवों में लग जाएँ और ये फूल—ये फूल इतने खूबसूरत नहीं जितनी इनकी हरजाई खुशबू खूबसूरत है—हर चीज़ जो हरजाई हो, खूबसूरत होती है। हरजाई औरत, हरजाई मर्द···कुछ समझ में नहीं आता ये खूबसूरत चीज़ें पहले पैदा हुई थीं या खूबसूरत खयाल—हर खयाल खूबसूरत होता है। मगर मुसीबत यह है कि हर फूल खूबसूरत नहीं होता—मिसाल के तौर पर यह फूल, जो इस टहनी पर उकड़ूँ बैठा है, कितना सिफ़ला दिखाई देता है। मगर सिफ़लापन और भद्दापन दो अलग-अलग चीज़ें हैं—कुछ भी हो, जगह खूब हैं। एक बहुत बड़ा दिमाग मालूम होता है—रोशनी भी है, साये भी हैं और उनका आपसी मेल-जोल भी खूबसूरत है। ऐसा महसूस होता है कि इस वक्त मैं नहीं, बल्कि यह जगह सोच रही है—यह सुहावनी जगह, जो इतनी देर मेरी नज़रों से ओझल रही।]

[अन्तराल—इसके बाद यह गज़ल गायी जाए—]

गज़ल

फिर चिराग-ए-लाला से रौशन हुए कोह व दमन
मुझको फिर नग़मों पै उकसाने लगा मुर्ग़े-चमन
फूल है सहरा में या परियाँ कतार अन्दर कतार
ऊदे-ऊदे, नीले-नीले, पीले-पीले पैरहन
बर्ग-ए-गुल पर रख गयी शबनम का मोती बाद-ए-सुबह
और चमकाती है इस मोती को सूरज की किरण
फिर चिराग-ए-लाला से रौशन हुए कोह व दमन
मुझको फिर नग़मों पै उकसाने लगा मुर्ग़े-चमन ।

[मोटर के हार्न की आवाज़—बड़ी तेज़—फिर मोटर के रुकने की तेज़ आवाज़]

मालिक : अय, तुम कौन हो ?

नईम : (**चौंककर**) यह मोटर कहाँ से आ गयी ?

मालिक : शक्लो-सूरत से तो आदमी शरीफ़ मालूम होता है मगर यह घुस कैसे आया यहाँ—किस इत्मीनान से लेटा है जैसे इसके बाबा का बाग है—(**ऊँची आवाज़ में**) अमाँ, कुछ सुनते हो ?

नईम : तशरीफ़ ले आइए यहाँ—बहुत अच्छी जगह है ।

मालिक : (**आहिस्ता से**) तशरीफ़ का बच्चा—(**ऊँची आवाज़ में**) इधर आओ ।

नईम : भई, मुझसे नहीं आया जाएगा । तुम खुद ही चले आओ । वा अल्लाह, बड़ी दिल-फ़रेब जगह है । तुम्हारी सब कोफ़्त दूर हो जाएगी ।

[मोटर का दरवाज़ा खोलने और उसको गुस्से में ज़ोर से बन्द करने की आवाज़ —फिर पथरीले फ़र्श पर कदमों की चाप]

मालिक : (**गुस्से में**) उठो यहाँ से ।

नईम : इतने ऊँचे न बोलो—आओ, यहाँ मेरे पास लेट जाओ—बिलकुल खामोश, जिस तरह मैं लेटा हूँ और आँखें बन्द कर लो । अपना सारा जिस्म ढीला छोड़ दो । दिमाग की सारी बत्तियाँ गुल कर दो । फिर जब तुम इस अँधेरे में चलोगे तो तुम्हारी टटोलती हुई अंगुलियाँ अनजाने ही ऐसे कुमकुमे रौशन करेंगी जिनके वजूद से बिलकुल गाफ़िल थे —आओ, मेरे साथ लेट जाओ ।

मालिक : दीवाने मालूम होते हो ।

नईम : दीवाने नहीं । तुमने दीवाने देखे ही नहीं । मेरी जगह अगर यहाँ कोई दीवाना होता तो वह इन चंद बिखरी हुई झाड़ियों और इन टहनियों पर बच्चों के गालों की तरह लटके हुए फूलों से तसल्ली कभी न होती । दीवानगी इत्मीनान का नाम नहीं मेरे दोस्त ! आओ, मेरे पास बैठ जाओ और दीवानगी की बातें करो ।

मालिक : अपनी वकवास बन्द करो और जाओ यहाँ से । नौ दो ग्यारह हो जाओ ।

नईम : अरे, तुम कौन हो ? बड़े बदतमीज़ मालूम होते हो ।

मालिक : (**ऊँची आवाज़ में**) ड्राइवर, इसको धक्के देकर बाहर निकाल दो।

नईम : भई, तुम अजब आदमी हो। धक्के मारने की क्या ज़रूरत है ? और अगर धक्के मारने ज़रूरी हैं तो दूसरे आदमी को क्यों बुला रहे हो ? तुम खुद धक्के मार सकते हो।

मालिक : ऐसे काम मैं खुद नहीं किया करता।

नईम : इसका यह मतलब हुआ कि धक्के मारना बुरा काम है।

मालिक : ड्राइवर···

नईम : तुम मुझे यहाँ से क्यों निकालना चाहते हो ? बड़े मज़े में बैठा था।

मालिक : मैं तुम्हें इसलिए यहाँ से निकालना चाहता हूँ कि यह जगह मेरी है।

नईम : यह जगह तुम्हारी है—नामुमकिन—ऐसा कभी हो ही नहीं सकता।

मालिक : क्यों ?

नईम : इसलिए—इसलिए कि···नहीं, मेरा खयाल गलत है। यह बाग तुम्हारा ही होगा—नहीं, यह बाग तुम्हारा ही है।

मालिक : तो भाग जाओ यहाँ से—और वह बोर्ड पढ़ते जाओ जो गेट के पास लगा है।

नईम : कौन-सा बोर्ड—हाँ, वह···'बगैर इजाज़त अन्दर आना मना है'—हैरत है कि यह मेरी नज़रों से ओझल रहा—(**मुस्कराता है**) नज़र हो तो चीज़ें नज़र नहीं भी आतीं—नज़र की यह बेनज़री ! (**पथरीले फ़र्श पर कदमों की चाप**) बगैर इजाज़त अन्दर आना मना है। (**कदमों की चाप जारी रहे।**)

[**नोट :** कदमों की चाप कुछ लमहों तक जारी रहे—उसके बाद यह आवाज़ भीड़ के शोर में घुलमिल जाए। भीड़ का शोर बहुत ऊँचा न हो। ऐसा मालूम हो कि आठ-दस लड़कियाँ और पन्द्रह-बीस मर्द एक जगह इकट्ठे हैं और इधर-उधर की बातें कर रहे हैं। कभी-कभी किसी लड़की के हँसने की आवाज़ भी सुनाई दे—आवाज़ों के उस परदे पर नीचे के डायलॉग सुपर इम्पोज़ किये जायें।]

मर्द नम्बर एक : मिसेज़ फ़ौजदार, यह पेंटिंग देखी आपने ?

मिसेज़ फ़ौजदार : (**अन्तराल के बाद**) ओह—इट इज़ लवली—(**आहिस्ता**) आपने शीरीं को देखा, कितनी सज-बनकर आई है।

औरत नम्बर एक : सुरैया, इधर आकर तसवीरें देख। तू वहाँ खड़ी क्या कर रही है ?

मर्द नम्बर दो : बड़ी प्यास लग रही है—इन लोगों ने ड्रिंक्स का इन्तज़ाम क्यों नहीं किया ?

मर्द नम्बर तीन : शीला ज़ुकाम की वजह से निढाल है वरना ज़रूर आती—आप जानते ही हैं कि पेंटिंग्स से उसे कितनी दिलचस्पी है।

मर्द नम्बर चार : बचपन ही में उसे तसवीरें बनाने का शौक था।

मर्द नम्बर तीन : अब तो वह बहुत अच्छी तसवीरें बना लेती है—परसों उसने पेंसिल-कागज़ लेकर अपने छोटे भाई की साइकिल की तसवीर उतारी—मैं तो दंग रह गया।

नईम : (**हलके व्यंग्य के साथ**) हू-ब-हू साइकिल मालूम होती होगी ?

मर्द नम्बर तीन : जी हाँ । (**अपने साथी से धीमे लहजे में**) यह आदमी कौन है ?

मर्द नम्बर चार : मालूम नहीं कौन है ।

औरत नम्बर दो : कहाँ गायब रहती हो बिमला—कई दफ़ा तुम्हारे घर गयी मगर···

औरत नम्बर तीन : यह आजकल सुशीला के लिए कोई अच्छा-सा वर ढूंढ़ने में मशगूल है ।

मर्द नम्बर चार : मैं आपसे अर्ज़ कर चुका हूँ कि इन शर्तों पर यह कन्ट्रेक्ट नहीं हो सकता ।

औरत नम्बर चार : यह तसवीर कितनी भद्दी है ।

नईम : यह तसवीर भद्दी नहीं है ।

औरत नम्बर चार : (**चौंककर**) क्या कहा ?

नईम : मैंने कहा था कि यह तसवीर भद्दी नहीं है ।

औरत नम्बर चार : मगर आपकी राय मैंने तलब नहीं की ।

नईम : दुरुस्त है । मगर तसवीर पर आपने जो हमला किया था उसका जवाब देने का मुझे हक ज़रूर हासिल है । आप यकीन मानें, यह तसवीर जिसे आप भद्दी बता रही हैं, उन तमाम तसवीरों से कहीं ज़्यादा खूबसूरत है जो इस गैलरी में लटकी हुई हैं । आप गौर से देखें तो सिर्फ़ इसी तसवीर में आपको रंगों का सही इस्तेमाल नज़र आएगा—इस तसवीर के रंग मौजू के मुताबिक हैं । यानी गम्भीर और सही हैं । ब्रुश की हर हरकत बड़ी खूबसूरत है···

औरत नम्बर चार : आप कौन हैं ?

नईम : (**चौंककर**) मैं···मैं···

मर्द नम्बर पाँच : मैं-मैं क्या करते हो—बताओ, तुम कौन हो ?

नईम : आप ज़रा आराम से पूछिए—मैं आपको बता सकता हूँ ।

मर्द नम्बर छः : आप यहाँ आए कैसे ?

नईम : पैदल ।

मर्द नम्बर छः : अजब मसखरा है । मैं उससे पूछता हूँ कि यहाँ कैसे आए तो जवाब देता है—पैदल ।

मर्द नम्बर पाँच : तुम्हारे पास कार्ड है ?

नईम : कार्ड—कैसा कार्ड ?

[कई औरतों और मर्दों के कहकहों की आवाज़]

मर्द नम्बर छः : ऐसा कार्ड—देख लिया आपने ?

नईम : जी हाँ । ऐसा कार्ड मेरे पास नहीं है ।

मर्द नम्बर छः : तो बाहर तशरीफ़ ले जाइए ।

नईम : क्यों ?—मुझे यह तसवीर पसन्द है । इसे अभी कुछ देर और देखना चाहता हूँ ।

[लोग हँसते हैं ।]

मर्द नम्बर छः : बाहर जाकर देखो, वहाँ थानों से उतरी हुई कई तसवीरें देखने को मिल जायेंगी।

नईम : आप मेरा मज़ाक क्यों उड़ाते हैं ?

मर्द नम्बर पांच : इसलिए कि तुम्हारी शक्ल ही ऐसी है।

[लोग हँसते हैं।]

मर्द नम्बर छः : बगैर इजाज़त तुम अन्दर चले आए हो। ऐसा न हो कि कोई धक्के मारकर तुम्हें बाहर निकाल दे।—जाओ, भाग जाओ यहाँ से।

[औरतों और मर्दों की खुसर-पुसर—कुछ लमहों के बाद उसको फ़ेड कर दिया जाए—फिर कदमों की चाप—उसके बाद नईम पढ़ने के अन्दाज़ में कहे—"बगैर इजाज़त अन्दर आना मना है"—कदमों की चाप जारी रहे।]

× × ×

[कदमों की चाप समुन्दर की लहरों में मिल जाए। लहरों की हलकी-हलकी आवाज़ पर नीचे का डायलॉग सुपर इम्पोज़ किया जाए।]

नईम : कैसा सुहाना मंज़र है—हवा चल रही है, लहरें उठ रही हैं—इधर जहाँ तक नज़र जाती है समुन्दर ही समुन्दर दिखाई देता है—ऊँची-ऊँची इमारतों के साथ निगाहें टकराती हैं और सीमेण्ट की रंगीन दीवारों पर रेंगना शुरू कर देती हैं—ये साहिल के साथ-साथ दौड़ते हुए बिजली के खम्बे और यह गीली रेत का बिस्तर और यह शाम की खुनक खामोशी में घुली गुनगुनाहटें—यह सारा मज़र एक सरगोशी-सी मालूम होती है। जी चाहता है कि मैं भी किसी से हौले-हौले बातें करूँ—बिलकुल सरगोशियों में—यह—यह लड़की रेत में क्या ढूंढ़ रही है—ऐसा मालूम होता है, अपने गिरे हुए खयाल चुन रही है—कितनी भोली है···

[अन्तराल]

नईम : यह खेल दिलचस्प है—आप यकीनन अपनी खूबसूरत अँगुलियां देख रही हैं जिन पर से रेत के नन्हे-नन्हे ज़र्रे जवानी के खयालों की तरह फिसल-फिसलकर नीचे गिर रहे हैं—

[लहरों की आवाज़]

नईम : आपकी अँगुलियाँ काँप क्यों रही हैं—नहीं, नहीं, इस तरह ये और भी ज़्यादा खूबसूरत मालूम होती हैं—आप अपना खेल जारी रखिए।

[लहरों की आवाज़]

नईम : औरत से अगर यह कँपकँपाहट अलग कर दी जाए तो क्या बाकी रह जाता है ?

[लहरों की आवाज़]

नईम : आप खामोश क्यों हैं ?

लड़की : (**मासूम लहजे में**) पिताजी···पिताजी···

नईम : आप किसे बुलाना चाहती हैं ?

लड़की : अपने पिताजी को।

नईम : क्यों ?

लड़की : वह आ जाएं तो अच्छा है।

नईम : मगर मैं तो सिर्फ़ तुमसे बातें करना चाहता हूं।

लड़की : पिताजी···पिताजी···

नईम : कुछ समझ में नहीं आता···उन्हें यहाँ बुलाने की क्या ज़रूरत है !···क्या तुम नहीं चाहती हो कि मैं तुमसे बातें करूँ ?

लड़की : आप पिताजी से पूछ लीजिए।

नईम : वह मुझे इस बात का क्या जवाब देंगे ?

लड़की : आप उनसे इजाज़त ले लीजिए।

नईम : तुम्हारी इजाज़त है या नहीं ?

लड़की : मैं···मैं···पिताजी, वह मुझसे बातें करना चाहते हैं।

बाप : (**मोटी आवाज़ में**) तुम मेरी लड़की से क्यों बातें करना चाहते हो ?

नईम : तशरीफ़ रखिये, मैं आपको इस ख्वाहिश का खुलासा करके बताता हूँ।

बाप : मैं पूछता हूँ तुम मेरी लड़की से क्यों बातें करना चाहते हो ?

नईम : (**इरादा बदलकर**) मैं···मैं आपकी लड़की से बातें कर चुका—बस, अब यह ख्वाहिश नहीं रही।

बाप : तुमने मेरी लड़की से मेरी इजाज़त के बगैर क्यों बातें कीं ?

नईम : मुझसे गलती हुई।

बाप : खबरदार—आगे फिर कभी ऐसी गलती न करना—ठहरो, यहाँ तुम कैसे दाखिल हुए ?

नईम : उधर से घूमता इधर आ गया।

बाप : उधर तुम घूम सकते हो, मगर इधर बगैर इजाज़त अन्दर आना मना है—यह क्लब है—तुमने वह बोर्ड नहीं पढ़ा ?

नईम : पहले नहीं पढ़ा था—अब पढ़ लिया है (**लहरों की आवाज़ कुछ क्षणों तक आती रहे**)···बगैर इजाज़त अन्दर आना माना है।

× × ×

[लहरों की आवाज़ जारी रहे—उस आवाज़ के साथ-साथ कोई मोटी आवाज़ में थोड़े-थोड़े समय बाद यह कहता है—"बगैर इजाज़त अन्दर आना मना है।" कुछ लमहों के बाद यह सिलसिला खत्म कर दिया जाए।]

× × ×

[दस्तक—दरवाज़ा खुलता है।]

नईम : क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ ?

नौकर : हायँ—ह-ह—हज़ूर, यह आपका अपना घर है। इजाज़त कैसी ?

नईम : नहीं फ़ज़लू, यह मेरा घर नहीं है। यह घर जो मुझे आराम बख्शता है, मेरा कैसे हो सकता है ! मुझे अब एक नयी बात मालूम हुई है।

नौकर : क्या सरकार ?

नईम : यही कि यह घर मेरा नहीं। अलबत्ता इसका गर्द व गुबार, इसकी तमाम गन्दगियाँ मेरी हैं। वे तमाम चीज़ें जिनसे मुझे कोफ़्त होती है, मेरी हैं। लेकिन वे चीज़ें जिनसे मुझे राहत मिलती है किसी और की हैं। खुदा जाने किसकी हैं ? मैं अब डरता हूँ, किसी अच्छी चीज़ को अपनाते हुए डरता हूं। यह पानी मेरा नहीं। यह हवा मेरी नहीं। यह आसमान मेरा नहीं। यह ज़मीन मेरी नहीं। वह पुराना लिहाफ़ जो मैं सर्दियों में ओढ़ता रहा हूँ, मेरा खयाल है वह भी मेरा नहीं। फ़ज़लू, जाओ, तुम भी मेरे नहीं···

नौकर : नहीं, नहीं सरकार···

नईम : नहीं फ़ज़लू, तुम मेरे नहीं हो सकते। तुम्हें इसका पता नहीं होगा। बहुत-सी बातें इन्सान को मालूम नहीं होतीं—मैं अब जा रहा हूँ।

नौकर : कहाँ ?

नईम : बस, जा रहा हूँ।

× × ×

[कदमों की चाप—कुछ लमहों तक—इसके बाद उस चाप को इस ठुमरी की धुन में मिला दिया जाए—"पिया बिन नाहीं आवत चैन"—थोड़ी देर के बाद बोल भी शुरू हो जाएँ।]

× × ×

नईम : क्या मैं अन्दर आ सकता हूँ ?

[साज़ बजते रहें। तवायफ़ गाना बन्द कर देती है।]

तवायफ़ : आइये, आइये, तशरीफ़ ले आइये अन्दर—साहब, इजाज़त लेने की क्या ज़रूरत थी !

नईम : नीचे से गुज़र रहा था। आपको यह ठुमरी गाते सुना। आवाज़ पसन्द आई। ऊपर चला आया।

तवायफ़ : तशरीफ़ ले आइये।

नईम : ये चंद हज़रात जो बैठे हैं, इन्हें कोई एतराज़ तो नहीं होगा ?

[तीन-चार मर्दों की दबी-दबी हँसी]

तवायफ़ : इन्हें क्या एतराज़ हो सकता है—तशरीफ़ ले आइये—इधर मसनद पर बैठिये —यह गावतकिया ले लीजिये।

[अन्तराल]

नईम : कितनी अच्छी जगह है !

तवायफ़ : आप क्यों मेरा मज़ाक उड़ाते हैं ? यह अच्छी जगह है ?—जहाँ ताक में

उलटी झाड़ू पड़ी है, दीवारों पर थानों से उतरी हुई भद्दी तसवीरें लटक रही हैं और इस टूटे हुए फूलदान में कई दिनों के बासी फूल पड़े हैं। आप क्यों मेरा मज़ाक उड़ाते हैं ?

नईम : मैं तुम्हारा मज़ाक नहीं उड़ाता, अलबत्ता तुम्हारे ताक की उलटी झाड़ू, दीवारों पर थानों से उतरी हुई तसवीरें और टूटे हुए फूलदान के बासी फूल ज़रूर किसी चीज़ का मज़ाक उड़ा रहे हैं। तुम इस नुक्ते को नहीं समझोगी। और सच पूछो तो इस वहम में तुम्हें समझाना भी नहीं चाहता। गाए जाओ—वही जो तुम गा रही थीं—"पिया बिन नाहीं आवत चैन !" जाने वह कौन पिया है जिसके बिना तुम्हें चैन नहीं—गाए जाओ—

[तवायफ़ हँसती है और ठुमरी शुरू कर देती है।]

(आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड आउट)

मुहब्बत की पैदाइश

पात्र

खालिद		
हमीदा		
डिप्टी साहब	:	खालिद का बाप
प्रिंसिपल		
चपरासी		
लड़के 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7		

[खालिद सीटी बजा रहा है। सीटी बजाता-बजाता खामोश हो जाता है। फिर हौले-हौले अपने-आप से कहता है—]

खालिद : अगर मुहब्बत हाकी या फुटबाल के मैचों में कप जीतने, तकरीर करने और इम्तहानों में पास हो जाने की तरह आसान होती तो क्या कहने थे···मुझे सबकुछ मिल जाता···सबकुछ (**फिर सीटी बजाता है**)···नीले आसमान में अबाबीलें उड़ रही हैं। इस छोटे से बगीचे की पत्ती-पत्ती खुशी से थरथरा रही है। पर मैं खुश नहीं हूँ। मैं बिलकुल खुश नहीं हूँ।

हमीदा : (**धीमे लहजे में**) खालिद साहब !

[खालिद खामोश रहता है।]

हमीदा : (**जोर-जोर से**) खालिद साहब !

खालिद : (**चौंककर**) क्या है ? कोई मुझे बुला रहा है ?

हमीदा : मैं हूँ। मुझे आपसे एक ज़रूरी काम है।

खालिद : ओह ! हमीदा···कहो, यह ज़रूरी काम क्या है···मैं यहाँ यूँ ही लेटे-लेटे ऊँघने लग गया था। क्या किसी किताब के बारे में कुछ कहना है ? मगर तुमने मुझे इतना काबिल क्यों समझ रखा है ? फ़लसफ़े में मैं इतना होशियार नहीं जितनी कि तुम हो। औरतें फ़ितरतन फ़लसफ़ी होती हैं।

हामिदा : मैं आपसे फ़लसफ़े के बारे में गुफ़्तगू करने नहीं आयी। अफ़लातून और अरस्तू इस मामले में मेरी उतनी मदद नहीं कर सकते, जितनी आप कर सकते हैं।

खालिद : मैं हाज़िर हूँ।

हमीदा : मैं बहुत जुर्रत से काम लेकर आपके पास आयी हूँ । आप यकीन कीजिये कि मैंने बहुत बड़ी जुर्रत की है। बात यह है मुझे शर्म महसूस हो रही है—मगर नहीं—इसमें शर्म की कौन-सी बात है—मुझे यह कहना है कि परसों रात मैंने अब्बाजी को अम्मीजान से यह कहते सुना कि वह आपसे मेरी शादी कर रहे हैं।

खालिद : (खुश होकर) सचमुच ?

हमीदा : जी हाँ । मैंने यह भी सुना है कि बात पक्की हो गयी है और इस फ़ाइनल के बाद हम ब्याह दिए जाएँगे।

खालिद : (खुशी की भावना को दबाने की नाकाम कोशिश करते हुए) हद हो गयी—मुझे तो किसी ने बताया ही नहीं—यह चुपके-चुपके उन्होंने बड़ा दिलचस्प खेल खेला—दरअसल बात यूं हुई कि मैंने अपनी अम्मीजान से एक-दो बार तुम्हारी तारीफ़ की थी और कहा था कि जो शख्स हमीदा जैसी···हमीदा जैसी···हमीदा जैसी प्यारी लड़की का शौहर बनेगा वह कितना खुशनसीब होगा । (हँसता है) हद हो गयी है···मैं यहाँ इसी फ़िक्र में घुला जा रहा था कि तुम कहीं किसी और की न हो जाओ । (खूब हँसता है) देखो, नीले आसमान में अबाबीलें उड़ रही हैं—इस बगीचे की पत्ती-पत्ती खुशी से थरथरा रही है···और मैं भी खुश हूँ···किस कदर खुश । (हँसता है) हमीदा, अब तुम्हें हमसे परदा करना चाहिए—हम तुम्हारे होने वाले शोहर हैं ।

हमीदा : मगर मुझे यह शादी मंजूर नहीं ।

खालिद : शादी मंजूर नहीं···फिर तुमने यह बात क्यों छेड़ी ? मैं तुम्हें नापसन्द हूँ क्या ?

हमीदा : खालिद साहब, मैं इस मामले में ज्यादा गुफ़्तगू करना नहीं चाहती । मैं आपसे सिर्फ़ यह कहने आयी थी कि हमारी शादी हो गयी तो यह मेरी मर्ज़ी के खिलाफ़ होगी—हमारी दोनों की ज़िन्दगी अगर हमेशा के लिए तल्ख हो गयी तो इसके ज़िम्मेदार आप होंगे—मैंने अपने दिल की बात आपसे छुपाकर नहीं रखी। जो फ़र्ज़ मेरे माँ-बाप को अदा करना चाहिए था, मैंने अदा कर दिया है । आप अक्लमन्द हैं, रौशन-खयाल हैं । इसलिए मैं आपके पास आई, वरना यह भेद कब्र तक मेरे सीने में महफूज़ रहता।

खालिद : पर हमीदा, मैं तुमसे मुहब्बत करता हूँ।

हमीदा : होगा, मगर मैं आपसे मुहब्बत नहीं करती।

खालिद : इसमें मेरा क्या कसूर है ?

हमीदा : और इसमें मेरा क्या कसूर है ?

खालिद : तुम अच्छी तरह जानती हो कि मैं झूठ नहीं बोला करता। मैं सच कहता हूँ कि मेरा दिल तुम्हारी और सिर्फ़ तुम्हारी मुहब्बत से भरा है ।

हमीदा : लेकिन मेरा दिल भी तो आपकी मुहब्बत से भरा हो···मेरे अन्दर से भी तो यह आवाज़ पैदा हो कि हमीदा आपको चाहती है···मैं भी तो आपसे झूठ नहीं कह रही···आप मुझसे मुहब्बत करते हैं तो आपकी मुहब्बत इस वक्त मुझ पर क्या

असर कर सकती है, जब मेरा दिल आपकी मुहब्बत से खाली हो।

खालिद : एक दीया दूसरे दीये को रौशन कर सकता है।

हमीदा : सिर्फ़ उस हालत में जब दूसरे दीये में तेल मौजूद हो—यहाँ मेरा दिल तो बिलकुल खुश्क है। आपकी मुहब्बत क्या कर सकेगी—मैंने आपको आज तक उन निगाहों से कभी नहीं देखा जो मुहब्बत पैदा कर सकती हैं···इसके अलावा कोई खास बात भी तो नहीं हुई जिससे यह जज़्बा पैदा हो सके···लेकिन मैं आपके बारे में अच्छी तरह जानती हूँ कि आप निहायत अच्छे नौजवान हैं, तहज़ीबयाफ़्ता हैं। कालेज में सबसे ज़्यादा होशियार स्टूडेंट हैं। आपकी सेहत, आपका इल्म, आपकी काबलियत काबिले-रश्क है। आप हमेशा मेरी मदद करते रहे हैं। मगर मुझे अफ़सोस है कि मेरे दिल में आपकी मुहब्बत का ज़र्रा-भर भी नहीं है। हो सकता है, मेरा खयाल दुरुस्त न हो, पर ये तमाम खूबियाँ जो आपके अन्दर मौजूद हैं, ज़रूरी नहीं कि वे किसी औरत के दिल में आपकी मुहब्बत पैदा न कर दें।

खालिद : तुम ठीक कह रही हो। मुझे इसका अहसास है।

हमीदा : तो क्या मैं उम्मीद रखूं कि आप मुझे इस बेमर्ज़ी की शादी से बचाने की हर मुमकिन कोशिश करेंगे ?

खालिद : मुझसे जो कुछ हो सकेगा ज़रूर करूंगा।

हमीदा : तो मैं जाती हूँ। बहुत-बहुत शुक्रिया।

[कुछ लमहों तक खामोशी छायी रहती है—खालिद दर्दनाक सुरों में सीटी बजाता है।]

खालिद : (सिसकियों में) नीले आसमान में अबाबीलें उड़ रही हैं। इस छोटे से बगीचे की पत्ती-पत्ती खुशी से थरथरा रही है—पर मैं खुश नहीं—बिलकुल खुश नहीं हूँ।

× × ×

[उसी दिन शाम को खालिद के घर में]

डिप्टी साहब : (खालिद का बाप, दरवाज़े पर आहिस्ता से दस्तक देकर) भई, मैं ज़रा अन्दर आ सकता हूँ ?

खालिद : आइए, आइए अब्बाजी !

डिप्टी साहब : मैंने बहुत मुश्किल से तुम्हारे साथ चन्द बातें करने की फ़ुर्सत निकाली। यूं कहो कि ऐसा इत्तफ़ाक हो गया कि तुम भी घर में मौजूद हो और मुझे भी एक-आध घंटे तक कोई काम नहीं—बात यह है कि तुम्हारी माँ ने तुम्हारी शादी की बातचीत पक्की कर दी है। लड़की हमीदा है जिसकी तुम अच्छी तरह जानते हो। तुम्हारी क्लासमेट है और मैंने सुना है कि तुम दिल ही दिल में उससे ज़रा मुहब्बत भी करते हो। चलो अच्छा हुआ···अब तुम्हें और क्या चाहिए···इम्तहान पास करो और दुल्हन को ले आओ।

खालिद : पर अब्बाजी, मैंने तो यह सुन रखा था कि हमीदा की शादी मिस्टर बशीर से होगी जो पिछले वर्ष विलायत से डाक्टरी का इम्तहान पास करके आए हैं।

डिप्टी साहब : शादी उससे होने वाली थी मगर हमीदा के माँ-बाप को जब मालूम हुआ कि वह शराबी और आवारा-मिज़ाज है तो उन्होंने यह खयाल छोड़ दिया। लेकिन तुम्हें इन बातों से क्या ताल्लुक···हमीदा तुम्हारी हो रही है क्या, हो चुकी है।

खालिद : हमीदा राज़ी है क्या ?

डिप्टी साहब : अरे, वह राज़ी क्यों न होगी ? और जब डिप्टी ज़हूर अहमद के बेटे खालिद की शादी का खयाल हो तो इसमें रज़ामंदी की ज़रूरत ही क्या है ?

खालिद : मुझे बना रहे हैं आप।

डिप्टी साहब : चलो हटाओ आप इस किस्से को, मुझे और बहुत-से काम करने हैं··· अच्छा, तो मैं चला···पर एक और बात भी मुझे तुमसे करनी थी। तुम्हारी माँ ने एक लम्बी-चौड़ी फ़ेहरिस्त बनाकर दी थी···हाँ, याद आया···देखो भई, निकाह की रस्म परसों यानी इतवार को अदा होगी। इसलिए कि हमीदा का बाप हज़ को जाने से पहले-पहले इस फ़र्ज़ को पूरा करना चाहता है···ठीक है, ठीक है। ऐसा ही होना चाहिए और जब तुम्हारी माँ कह दे तो फिर इसमें किसी कलाम की गुंजाइश नहीं रहती···मैंने उन लोगों से कह दिया है कि हम सब तैयार हैं। तुम्हें जिन लोगों को इन्वाइट करना होगा, कर लेना। मुझे इस सिरदर्दी में मत फँसाना। भई, मैं बहुत मसरूफ़ आदमी हूँ।

खालिद : बहुत अच्छा अब्बाजी।

डिप्टी साहब : हाँ, एक बात और—मुमकिन है कि मैं तुमसे कहना भूल जाऊँ इसलिए अभी से कान खोलकर सुन लो···(**रहस्यमय लहजे में**) शादी के बाद अपनी बीवी को सिर पर न चढ़ा लेना, वरना याद रखो, बड़ी आफ़तों का सामना करना पड़ेगा। अपनी माँ की तरफ़ देख लो, किस तरह मुझे नकेल डाले रखती है।

खालिद : (**हँसता है**) नसीहत का शुक्रिया।

डिप्टी साहब : शुक्रिया-वुक्रिया कुछ नहीं। तुमसे जो कुछ मैंने कहा है, उसका खयाल रखना और बस···तो मैं चला···निकाह के एक दिन पहले मुझे याद दिला देना ताकि मैं कहीं और न चला जाऊं।

खालिद : बहुत अच्छा अब्बाजी।

[दरवाज़ा बन्द करने की आवाज़]

खालिद : (**हौले-हौले गोया गहरी सोच में गर्क है**) बहुत अच्छा अब्बाजी···बहुत अच्छा अब्बाजी···मैंने कितनी जल्दी कह दिया, बहुत अच्छा अब्बाजी···बहुत अच्छा···जो कुछ कहा हुआ है···अब इसके सिवा और चारा ही क्या है···नीले आसमान में अबाबीलें उड़ती रहेंगी। बगीचों में पत्तियाँ खुशी से थरथराती रहेंगी और यह दिल हमेशा के लिए उजड़ जाएगा···उजड़ जाएगा ! ! !

× × ×

[तीसरे दिन—कालेज में प्रिंसिपल का दफ़्तर—घण्टी बजायी जाती है, फिर दरवाज़ा खोला जाता है।]

चपरासी : जी हज़ूर ।

प्रिंसिपल : खालिद को अन्दर भेज दो ।

चपरासी : बहुत अच्छा हज़ूर ।

[दरवाज़ा खुलने और फिर बन्द होने की आवाज़, फिर खालिद के अन्दर आने की आवाज़]

प्रिंसिपल : (खाँसता है) तुम्हें अपनी सफ़ाई में कुछ कहना है ?

[खालिद खामोश रहता है।]

प्रिंसिपल : (रोबदार लहजे में) तुम्हें अपनी सफ़ाई में कुछ कहना है ?

खालिद : कुछ नहीं । मेरा दिल कूड़े-करकट से साफ़ है ।

प्रिंसिपल : तुम गुस्ताख भी हो गए हो ।

खालिद : कालेज में अगर कोई गुस्ताख लड़का न हो तो प्रिंसिपल अपनी कुव्वत से बेखबर रहता है। अगर इस कमरे को, जिसमें आप बैठे हैं, तराज़ू फ़र्ज़ कर लिया जाए तो मैं इस तराज़ू की वह सुई हूँ जो वज़न बताती है।

प्रिंसिपल : तुम मुझे अपनी इस बेहूदा दलील से कायल नहीं कर सकते ।

खालिद : यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ ।

प्रिंसिपल : (ज़ोर से) तुम खाक भी नहीं जानते ।

खालिद : आप बज़ा फ़रमा रहे हैं ।

प्रिंसिपल : मैं बज़ा नहीं फ़रमा रहा । अगर मेरा फ़रमाना बज़ा होता तो कल तुम ऐसी बेहूदा हरकत कभी न करते जिसने तुम्हें सब लोगों की निगाहों में ज़लील कर दिया है। अब तुममें और बाज़ारी गुण्डे में क्या फ़र्क रहा है।

खालिद : आपसे अर्ज़ करूँ ?

प्रिंसिपल : करो, करो। क्या अर्ज़ करना चाहते हो। मैं तुम्हारी यह नयी दलील सुन लूं।

खालिद : बाज़ारी गुण्डा चौक में खड़ा होकर जो उसके दिल में आये कह सकता है, मगर मैं कुछ भी नहीं कह सकता । मुझमें इतनी कुव्वत नहीं है कि अपने दिल का ताला खोल सकूं जो तहज़ीब आज से बहुत अर्सा पहले बंद कर चुकी है। बाज़ारी गुण्डा मुझसे हज़ार दर्जे बेहतर है ।

प्रिंसिपल : जो थोड़ा-बहुत तुममें और उसमें बाकी रह गया है, अब पूरा कर लो। मैं तुम्हें अपने कालेज से बाहर निकाल रहा हूँ।

खालिद : मगर···

प्रिंसिपल : मगर-वगर कुछ नहीं। मैं फ़ैसला कर चुका हूँ। मेरे कालेज में ऐसा लड़का हरगिज़ नहीं रह सकता···जो बदचलन हो, आवारा हो। कालेज में शराब पीकर आना ऐसा जुर्म नहीं कि सज़ा दिए बगैर तुम्हें छोड़ दिया जाए।

खालिद : आप अपने फ़ैसले पर दोबारा गौर फ़रमाइए। इतनी जल्दी न कीजिए···आप मुझे अपने कालेज से हमेशा के लिए बाहर नहीं निकाल सकते ।

प्रिंसिपल : (गुस्से से) क्या कहा ?

खालिद : मैंने कहा था कि आप मुझे अपने कालेज से बाहर कैसे निकाल सकते हैं··· आपको···आपको ··मेरे चले जाने से क्या आपको नुकसान न होगा ?

प्रिंसिपल : नुकसान ? तुम्हारे चले जाने से मुझे क्या नुकसान हो सकता है ? तुम जैसे दो दर्जन लड़के मेरे कालेज से चले जाएँ । खस कम जहाँ पाक ।

खालिद : आप मेरा मतलब नहीं समझे प्रिंसिपल साहब ! मुझे अफ़सोस है कि अब मुझे अपनी तारीफ़ आप करनी पड़ेगी । आपके सामने यह काला बोर्ड जो लटक रहा है उस पर सबसे ऊपर किसका नाम लिखा है ? आप बताने की तकलीफ़ गवारा न कीजिए । यह इसी आवारा और बदचलन का नाम लिखा है जो यह ज़ाहिर करता है कि बी० ए० में वह सूबे-भर में अव्वल रहा है । इस बोर्ड के साथ ही एक और बोर्ड लटक रहा है जो आपको बता सकता है कि हिन्दुस्तान की किसी यूनिवर्सिटी का होशियार से होशियार स्टूडेंट भी आपके कालेज की काली भेड़ खालिद का मुकाबला नहीं कर सका । तकरीर में उसने तीन साल तक किसी को आगे बढ़ने नहीं दिया । आपके पीछे एक और तख्ता लटक रहा है। अगर आप कभी इस पर नज़र डालें तो आपको मालूम हो सकता है कि खालिद जब से आपकी हाकी टीम का कप्तान बना है, शिकस्त नामुमकिन हो गयी है । फुटबाल की टीम में मुझसे बेहतर गोलकीपर आप कहाँ तलाश करेंगे ? अखबार लिखते हैं कि मैं लोहे का मज़बूत जाल हूँ, सीसा पिलायी हुई दीवार हूँ···और पिछले वर्ष मैच में हंगामा हो गया था तो आपको बचाने के लिए किसने आगे बढ़कर ढाल का काम दिया था। इसी खाकसार ने···आप अपने फ़ैसले पर दोबारा गौर कीजिए ।

प्रिंसिपल : क्या अपना अहसान जतलाकर तुम मुझे रिश्वत देने की कोशिश कर रहे हो ?

खालिद : प्रिंसिपल साहब, आजकल दुनिया के सारे धंधे इसी तरह चलते हैं । बच्चा जब तक रोये नहीं माँ दूध नहीं देती, यह तो आप अच्छी तरह जानते हैं । मगर आपको यहभी मालूम होना चाहिए कि पड़ोस में अगर बिन माँ का यतीम बच्चा रोना शुरू कर दे तो मेरी माँ दूध की बोतल लेकर उधर कभी न दौड़ेगी···आपने आज तक मुझ पर इतनी मेहरबानियाँ की हैं तो सिर्फ़ इसलिए कि मुझमें खूबियाँ थीं और आप मुझे पसन्द करते थे और मैंने उस दिन आपको इसलिए बचाया था कि वोह मेरा फ़र्ज़ था—मैं आपको रिश्वत नहीं दे रहा । मुझे मालूम है कि आप सज़ा देकर रहेंगे । मैं खुद सज़ा चाहता हूँ मगर कड़ी नहीं···रिश्वत तो वहाँ दी जाती है जहाँ बिलकुल अनजानापन हो ।

प्रिंसिपल : तुम तकरीर करना खूब जानते हो ।

खालिद : (हँसकर) यह काला बोर्ड भी, जो आपके सामने लटक रहा है, यही कहता है ।

प्रिंसिपल : खालिद, मैं हैरान हूँ कि तुमने कालेज में शराब पीकर ऊधम क्यों मचाया ? तुम शरारती ज़रूर थे मगर मुझे मालूम न था, तुम शराब भी पीते हो । तुम्हारे

कैरेक्टर के बारे में मुझे कोई शिकायत न थी मगर कल के हादसे ने तुम्हें बहुत पीछे हटा दिया है।

खालिद : जब खाई फाँदना हो तो हमेशा दस-बीस कदम पीछे हटकर ही कोशिश की जाती है। हो सकता है कि मैंने अपनी ज़िन्दगी में एक गहरी खाई को फाँदने की कोशिश की हो।

प्रिंसिपल : मुझे अफ़सोस है कि तुम इस कोशिश में औंधे मुँह इस गहरी खाई में गिर पड़े हो।

खालिद : ऐसा ही होगा, मगर मुझे अफ़सोस नहीं।

प्रिंसिपल : तो अब तुम क्या चाहते हो ?

खालिद : मैं चाहता हूँ। काश कि मैं कुछ चाह सकता—आपसे मेरी सिर्फ़ यह गुज़ारिश है कि सज़ा देते वक्त पुराने खालिद को याद रखिए। बस।

प्रिंसिपल : तुम्हें एक साल के लिए कालिज से खारिज कर देने का हुक्म मैं लिख चुका हूँ। यह सज़ा तुम्हारी गन्दी हरकत के मुकाबले में बहुत कम है। इसलिए तुम मालूम कर सकते हो कि पुराने खालिद को मैंने अभी तक दिल से दूर नहीं किया है।

खालिद : मैं आपका बेहद अहसानमन्द हूँ। एक साल के बाद जब खालिद फिर आपके पास आएगा तो वह पुराना ही होगा।

प्रिंसिपल : अब तुम चुपचाप यहाँ से चले जाओ और देखो, इस गम को दूर करने के लिए कहीं शराबखाने का रुख न करना।

खालिद : एक बार जो मैंने पी है वही उम्र-भर के लिए काफ़ी है। आप बेफ़िक्र रहें।

[दरवाज़ा खुलने और बन्द करने की आवाज़]

× × ×

[दरवाज़ा बन्द करने के साथ ही दस-पन्द्रह लड़कों की आवाज़ों का शोर पैदा किया जाए। ये लड़के खालिद से तरह-तरह के सवाल पूछें।]

लड़का नम्बर 1 : क्यों खालिद, क्या हुआ ?

लड़का नम्बर 2 : साल-भर के लिए कालेज से निकाल दिए गए ?

लड़का नम्बर 3 : पर मैं पूछता हूँ, शराब पीकर तुम्हें कालेज ही में आकर ऊधम मचाना था !

लड़का नम्बर 4 : तुमने सख्त गलती की। शराब तो मैं भी पीता हूँ, मगर किसी को कानोंकान खबर नहीं होती।

लड़का नम्बर 5 : न जाने इसके सिर पर क्या जंगलीपन सवार हुआ।

लड़का नम्बर 6 : पहली मर्तबा पी और बुरी तरह पकड़े गए मेरे यार।

लड़का नम्बर 7 : अब क्या होगा ?

खालिद : (तंग आकर) बकवास न करो। जो कुछ हो चुका है, तुम्हारे सामने है। जो कुछ होगा, वह भी तुम देख लोगे। दुनिया की निगाहों से कोई चीज़ छुपी भी रही है !

[कालेज के घण्टे की आवाज़ टन, टन, टन, टन]

खालिद : जाओ, जाओ। अपनी-अपनी क्लास अटैण्ड करो···मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो।

[कुछ क्षणों के लिए खामोशी छा जाती है।]

खालिद : बड़े-बड़े मार्काखेज़ मैचों में हिस्सा लिया है। बड़ी-बड़ी चोटें आई हैं। मगर यह थकन जो इस वक्त महसूस हो रही है, आज तक कभी नहीं आयी। बगीचे की इस झाड़ी के पास हमीदा ने मेरे दिल के टुकड़े किए थे। अब थोड़ी देर बैठकर उनको जोड़ता हूँ। दिल टूटा हुआ हो मगर पहलू में ज़रूर होना चाहिए···इसके बगैर ज़िन्दगी बेकार है···

[अन्तराल]

खालिद : ···इस वक्त मुझे किसी हमदर्द की कितनी ज़रूरत महसूस हो रही है··· मगर···

गीत

कौन किसी का मीत मनुवा···कौन किसी का मीत
राग समा है दुनिया सारी···जीवन दुःख का गीत
मनुवा कौन किसी का मीत

रामभरोसे खेने वाले···नैया को मँझधार
अपने हाथों आप डुबो दे···क्यों ढूंढ़े पतवार
डुबो दी···अपने हाथों आप डुबो दी···

हमीदा : खालिद साहब !

[खालिद खामोश रहता है।]

हमीदा : (ज़रा ऊँची आवाज़ में) खालिद साहब !
खालिद : (चौंककर) क्या है ? ओह हमीदा, तुम हो···मैं···मैं···शायद गा रहा था।
हमीदा : मैं सुन रही थी।
खालिद : सुन रही थीं—क्या सचमुच ? ···तो मालूम हो गया न तुम्हें कि मैं कितना बेसुरा हूँ···और यह गीत, जो मैं गा रहा था, कितना ऊटपटाँग था—हाँ तो···क्या तुम्हें किसी बात के बारे में कुछ पूछना है ?
हमीदा : मैं पूछने आयी हूँ कि कल आपने मेरी गैरहाज़िरी में क्या किया ?
खालिद : ओह, तुम कल की बात पूछ रही हो। मगर वह तो कल की बात हो चुकी—उसकी बाबत पूछकर क्या करोगी ?
हमीदा : क्या आपने सचमुच शराब पीकर यहाँ शोर-गुल मचाया ?
खालिद : यह तुम क्यों पूछ रही हो ?

हमीदा : मुझे यकीन नहीं आता।
खालिद : कि मैंने तुम्हारे कहे पर अमल किया होगा।
हमीदा : (हैरत से) मेरे कहे पर ? मैंने आपसे शराब पीने को कभी नहीं कहा।
खालिद : तो क्या ज़हर पीने को कहा था ?
हमीदा : और अगर मैंने कहा होता तो ?
खालिद : मैं कभी न पीता।
हमीदा : क्यों ?
खालिद : इसलिए कि मैं मरना नहीं चाहता। मैं तुमसे मुहब्बत करता हूँ, इसमें कोई शक नहीं। मगर मैं इस मुहब्बत की शिकस्त पर उसको हलाक करने के लिए तैयार नहीं। पुराने आशिकों का फ़लसफ़ा मेरी निगाहों में पुराना हो चुका है। जब तक मैं ज़िन्दा रह सकूंगा, तुम्हारी मुहब्बत अपने सीने में दबाए रहूँगा। तुम मेरी आँखों के सामने रहोगी तो मेरे ज़ख्म हमेशा हरे रहेंगे ···जब एक रोग अपनी ज़िन्दगी को लगाया है तो क्यों न उम्र-भर तक साथ रहे ? तुम मुझसे मुहब्बत नहीं करतीं तो इसका यह मतलब नहीं कि मैं अपनी मुहब्बत का गला घोंट दूं।
हमीदा : तो आपने सिर्फ़ मेरी मुहब्बत की खातिर अपने-आपको रुसवा किया ?
खालिद : ज़ाहिर है।
हमीदा : लेकिन क्या आपको इस रुसवाई के अलावा कोई और रास्ता नज़र नहीं आया ?
खालिद : कई रास्ते थे लेकिन मुझे यही अच्छा नज़र आया—तुम खुद देख लोगी कि हींग-फटकड़ी लगे बगैर रंग चोखा आएगा ···आज शाम ही को जब तुम्हारे घर मेरे कालेज से निकाल दिए जाने की खबर पहुँचेगी तो तुम्हारा वह काम फ़ौरन हो जाएगा जिसके लिए तुमने मुझसे मदद माँगी थी। न मैंने अपने वाल्दैन की हुक्म-अदूली की और न तुम्हें अपने माँ-बाप को नाराज़ करने का मौका मिला। बताओ, क्या मैंने गलत रास्ता चुना ?
हमीदा : लेकिन यह बदनामी, यह बेइज्ज़ती जो आपने मोल ली ?
खालिद : अब मुझे शादी नहीं करनी है ···जो यह बेइज्ज़ती और बदनामी मेरे हक में गैर-मुफ़ीद होगी।
हमीदा : अगर आपको शादी करनी पड़ी तो ?
खालिद : पागल हो गयी हो ···जब तुम किसी ऐसे मर्द से शादी करने को तैयार नहीं हो, जिससे तुम मुहब्बत नहीं कर सकतीं तो मैं क्योंकर ऐसी औरत से शादी कर सकता हूँ, जिससे मैं मुहब्बत नहीं करता ?
हमीदा : मुमकिन है, आपको किसी से मुहब्बत हो जाए ?
खालिद : यह नामुमकिन है। जिस तरह तुम्हारे दिल में मेरी मुहब्बत पैदा नहीं हो सकती उसी तरह मेरे दिल में तुम्हारे सिवाय और किसी की मुहब्बत पैदा नहीं हो सकती—मगर इस गुफ़्तगू से फ़ायदा क्या—मेरी रूह को सख्त तकलीफ़ पहुँच रही है।

हमीदा : आपने कैसे कह दिया कि मेरे दिल में मुहब्बत पैदा नहीं हो सकती ?

खालिद : मैंने यह कहा था कि तुम्हारे दिल में मेरी मुहब्बत पैदा नहीं हो सकती।

हमीदा : अगर हो जाए ?

खालिद : (चकित होकर) यानी क्या ?

हमीदा : मेरे दिल में आपकी मुहब्बत पैदा हो जाए···एकाएक मुझे ऐसा महसूस होने लगे कि मैं आपसे मुहब्बत करती हूँ···क्या ऐसा नहीं हो सकता ?

खालिद : अपने दिल से पूछो।

हमीदा : ऐसी बात पूछी नहीं जाती, अपने-आप मालूम हो जाया करती है। पड़ोसी के मकान में अगर आग लग जाए तो क्या आप दौड़े हुए उसके पास जाकर यह पूछेंगे—क्यों साहब ! क्या वाकई आपका मकान जल रहा है ?

खालिद : मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा।

हमीदा : मैं ठीक समझा नहीं सकती। पर अब समझने और समझाने की ज़रूरत ही क्या है। जो कुछ आप चाहते थे और जिसके बारे में मुझे वहम और गुमान भी न था, आज एकाएक हो गया है।

खालिद : क्या हो गया है ?

हमीदा : मेरे दिल में आपकी मुहब्बत पैदा हो गयी है···इतवार को हमारा निकाह हो रहा है।

खालिद : मुहब्बत ?···मैं···तुम···मैं···मैं···निकाह···कैसे ?

हमीदा : मुझे आपसे शादी करना मंजूर है। जब घर में आपके कालेज से निकाल दिए जाने की बात शुरू होगी तो मैं सारा वाकया बयान कर दूंगी···इस तरह कोई बदगुमानी पैदा न होगी। मगर मुझे अफ़सोस है कि आपका एक वर्ष ज़ाया हो गया।

खालिद : एक वर्ष ज़ाया हो गया—मैं तुम्हें अपना बनाने के लिए अपनी ज़िन्दगी के सारे वर्ष···पर मैं क्या सुन रहा हूं !

हमीदा : मैं अब जाती हूँ। मुझे प्रिंसिपल साहिबा से मिलकर यह कहना है कि मैं इस साल इम्तहान में शामिल नहीं हो रही। अगले वर्ष हम इकट्ठे इम्तहान देंगे।

[कुछ क्षण खामोशी छायी रहती है।]

खालिद : नीले आसमान में अबाबीलें उड़ रही हैं। इस बगीचे की पत्ती-पत्ती खुशी से थरथरा रही है और मैं किस कदर हैरान हूं···किस कदर हैरान हूं।

(फ़ेड आउट)

ईद कार्ड

पात्र

मसऊद	:	(आवाज़ में उदासी हो)
खालिद, खलील	:	मसऊद के दोस्त, आम नौजवानों जैसे
यास्मीन	:	कमसिन लड़की
डाकिया	:	

[टाइप करने की आवाज़]

मसऊद : (टाइप करता है और साथ-साथ मज़मून पढ़ता जाता है)···इस ज़माने की जंगों के लिए सबसे ज़रूरी चीज़ें लोहा और फ़ौलाद हैं (अन्तराल)···चूंकि नाज़ियों का इरादा नई जंग का था, इसलिए उन्होंने अपने-आपको तैयार करने के लिए बहुत कुछ किया और जंग छिड़ने से पहले उन तमाम कामों का मुद्दा यही था (अन्तराल)···जंगी ज़खीरों को जमा करने के लिए लोहा और फ़ौलाद की पैदा-वार को बहुत ही ज़्यादा किया गया। सन् 1934 ई० में जर्मनी ने 87,03,000 टन कच्चा लोहा पैदा किया और सन् 1938 में यह पैदावार 2,28,00,000 टन तक पहुंच गयी।

[दस्तक की आवाज़]

मसऊद : सन् 1934 की पैदावार 11,98,000 टन···कौन है (दस्तक की आवाज़) टन को फिर···लाहौल विला—अरे भई, चले आओ—दरवाज़ा खुला है।

[दरवाज़ा खुलने की आवाज़]

खालिद : अल सलाम अलेकम !

मसऊद : वलेकम—सन् 1934 की पैदावार के दुगने से भी ज़्यादा। इस अर्से में फ़ौलाद की पैदावार···

खालिद : एक शरीफ़ आदमी इतनी दूर से तुम्हारे पास आया है और तुम जाने क्या खुराफ़ात बक रहे हो।

मसऊद : भाई साहब, आपकी तरह बेकार नहीं हूं। मुझे इस मज़मून का तर्जुमा करना है।

खालिद : हूँ···मज्मून क्या है ? इस ज़माने की जंगों के लिए सबसे ज़रूरी चीज़ लोहा और फ़ौलाद हैं और आपका दिमाग दुरुस्त करने के लिए सबसे ज़रूरी चीज़ें बादाम रोगन और कद्दू का तेल हैं। आप ये दोनों तेल मँगवाइए और हर रोज़ सिर में लगाइए। आपके दिमाग की यह सारी खुश्की यूं चुटकियों में दूर हो जाएगी।

मसऊद : खालिद, खुदा के लिए मज़ाक न करो।

खालिद : तो क्या करूं—यहाँ तुम्हारे पास मैं आया किसलिए हूँ ? टाइप करने के लिए ? ऐसे ऊटपटाँग मज्मून लिखने के लिए ?

मसऊद : यह काम बहुत ज़रूरी है।

खालिद : बिलकुल गलत—सबसे ज़रूरी चीज़ें जंग में लोहा और फ़ौलाद हैं और इस वक्त सबसे ज़रूरी चीज़ें ईद कार्ड, तोहफ़े वगैरह हैं। मसऊद, अब खुदा के लिए इस टाइपराइटर को बन्द करो। कल ईद है और मुझे सैकड़ों चीज़ें खरीदनी हैं—चलो आओ, बाहर चलें।

मसऊद : बाहर जाकर क्या करेंगे ?

खालिद : भई, अजब औंधी खोपड़ी के इन्सान हो—बाहर जाएँगे—ज़रा सैर करेंगे। चहल-पहल देखेंगे और कुछ खरीद-फ़रोख्त भी करेंगे—चलो उठो—मुझे अपने दोस्तों को ईद कार्ड भेजना है। कुछ भेज चुका हूं लेकिन अभी कुछ बाकी रह गए। और हाँ, मैं तुमसे एक बात पूछना चाहता हूँ।

मसऊद : पूछो।

खालिद : तुम जानते ही हो कि मेरठ में मेरी बात पक्की हो चुकी है। मैं शरारत करना चाहता हूँ।

मसऊद : किस किस्म की शरारत ?

खालिद : मैं उसको एक ईद का कार्ड भेजना चाहता हूँ—यानी इसमें हर्ज़ क्या है—मैं अब कोई गैर थोड़े ही हूँ। क्या खयाल है तुम्हारा ? मैं समझता हूँ अच्छी दिल्लगी रहेगी।

मसऊद : ईद का कार्ड—आखिर तुम लोगों ने कागज़ के इन निकम्मे पुर्ज़ों को इतनी अहमियत क्यों दे रखी है ? ईद के कार्ड की बजाय कुछ और भेज दो।

खालिद : खुदा की कसम, अब तुममें कतई शरीयत नहीं रही—ईद का कार्ड एक खास बात है। लोगों का सिर तो नहीं फिर गया जो ईद पर कार्ड भेजना पसन्द करते हैं। ईद का कार्ड बड़ी खूबसूरत चीज़ है—इससे आदमी के मज़ाक का पता भी चल जाता है।

मसऊद : खालिद, सच पूछो तो मैंने कभी इन बातों पर गौर ही नहीं किया और जब गौर किया है तो मुझे इनमें कोई दिलचस्पी नज़र नहीं आई। ईद का कार्ड भेजने में कुछ बचपना-सा है और जो ईद कार्ड वसूल करने पर खुश होते हैं मैं समझता हूँ वे बिलकुल बच्चे हैं। ईद का कार्ड खिलौना ही तो हैं। खिलौने न कहो, बनावटी फूल कह लो। आदमी जब देखता है कि वह अपनी दुआएँ या अपने दूसरे नाज़ुक जज़्बात दूर रहने वाले अज़ीज़ों तक ज़बानी नहीं पहुंचा सकता तो उसकी अँगुलियों

में हरकत पैदा होती है और वह कागज़ के टुकड़े तराशना शुरू कर देता है। इन कागज़ों के टुकड़ों में वह अपने जज़्बात की तसवीरें बनाता है—गूंगी, अंधी और लँगड़ी—

खालिद : कुछ और भी कहना चाहते हो ?

मसऊद : कहने को तो बहुत कुछ कहा जा सकता है मगर···अच्छा खालिद, तुम ही बताओ कि इन तसवीरों का क्या मतलब होता है जो ईद कार्डों पर बनी होती हैं—दो हाथ हैं आपस में मिले हुए—रेत का एक बहुत बड़ा टीला है जिसके पीछे चांद निकल रहा है—टीले के पास ही टीले से ऊँचा एक ऊँट है जिस पर कोई बैठा है। करीब ही खजूर का दरख्त है—एक टोकरी है फूलों की—उस पर मोटे हरफ़ों में ईद मुबारक लिखा हुआ है—एक टोकरी है फलों से भरी हुई। पास ही खुला हुआ चाकू पड़ा है—एक फ़िरंगी औरत और एक फ़िरंगी मर्द पास-पास बैठे हैं—उनके ऊपर एक शे'र छपा है—

'सुनते हैं कि सामान-ए-अशरत लाई है ईद,
आप गले मिलते तो हम भी जानते कि आई है ईद।'

लाहौल विला···

खालिद : तुम मुझे बहलाना चाहते हो—और क्या ? यह अपनी निराली दलील किसी और से छाँटना। मैं ईद का कार्ड ज़रूर खरीदूंगा। ज़रूर खरीदूंगा और तुम्हें भी एक भेजूंगा। (अन्तराल) नहीं, तुम्हें हर्गिज़ नहीं भेजूंगा कि तुम मुँह देखते ही रहो। यह तुम्हारी सज़ा है।

[मसऊद हँसता है।]

खालिद : मैं चला—तुम बड़े शौक से टाइप कर सकते हो—जंग में दो चीज़ें सबसे ज़रूरी हैं—लोहा और फ़ौलाद··· **(हँसता-हँसता चला जाता है।)**

[दरवाज़ा बन्द करने की आवाज़]

खालिद : (अन्तराल के बाद) जंग में लोहा और फ़ौलाद बहुत ज़रूरी हैं और ज़िन्दगी में इन्सान के लिए माँ-बाप का होना भी बहुत ज़रूरी है—माँ-बाप न हों तो कोई भाई-बहन ही हो—कोई भी न हो तो कोई और ही हो—अकेला होना बहुत ही तकलीफ़देह है।

[दस्तक का आवाज़]

मसऊद : कौन है ?

यास्मीन : (आवाज़ दूर से आती है) मैं अन्दर आ सकती हूँ ?

मसऊद : आओ—आओ—यास्मीन, चली आओ। दरवाज़ा खुला है।

[दरवाज़ा खुलने की आवाज़]

मसऊद अ: ा जाओ—अब आ भी जाओ।

यास्मीन : मैंने आपके काम में खलल तो नहीं डाला ?

मसऊद : बिलकुल नहीं।

यास्मीन : मगर आपके टाइपराइटर में तो कागज़ चढ़ा हुआ है। मुझे इन दो ईद कार्डों पर कुछ लिखवाना है।

मसऊद : तो क्या हुआ ? यह कागज़ अभी निकल जाएगा—लाओ, यह ईद का कार्ड मुझे दो—(अन्तराल) बोलो, क्या लिखवाना है ? (**टाइपराइटर में से कागज़ अलग करता है।**)

मसऊद : यह ईद का कार्ड तो बड़ा रंगीन है—यह तुम किसे भेजोगी ?

यास्मीन : भाईजान को। आज भेजूंगी, कल मिल जाएगा—इस पर उनका पता लिख दीजिए और—और यहाँ कोने में मेरा नाम—सिर्फ़ यास्मीन लिखिएगा।

[टाइप का कागज़ चढ़ाने की आवाज़]

मसऊद : बहुत अच्छा। (**टाइप करने की आवाज़**) यास्मीन—(अन्तराल) अच्छा, अब यह पता जो तुमने इस कागज़ पर लिखा है, लिफ़ाफ़े पर टाइप कर दूँ ?

यास्मीन : जी हाँ।

मसऊद : मगर यास्मीन, तुमने हाथ से क्यों नहीं लिख लिया !

यास्मीन : टाइप किया हो तो खूबसूरत मालूम होता है।

मसऊद : ठीक—(**कागज़ निकालता है**) लो। यह एक तो हो गया। देख लो, ठीक है न ?

यास्मीन : बिलकुल ठीक है—अब दूसरा भी इसी तरह टाइप कर दीजिए। पता कागज़ पर लिखा हुआ है।

मसऊद : (**कागज़ मशीन पर चढ़ाता है**) यह ईद का कार्ड भी खूब है—(**टाइप करता है**) कितने में खरीदा ?

यास्मीन : जी, यह तो छः आने का है और यह जो मेरे पास है, आठ आने का है, लिफ़ाफ़े समेत।

मसऊद : (**टाइप करते हुए**) यह किसको भेजोगी ?

यास्मीन : अपनी बाजीजान को।

मसऊद : ठीक—मगर तुमने अपनी बाजीजान के लिए दो आने कम का ईद कार्ड क्यों पसन्द किया ?

यास्मीन : (**हँसती है**) इसमें एक बड़ा राज़ है।

मसऊद : (**टाइपराइटर से कागज़ को निकालता है**) मुझे न बताओगी ?

यास्मीन : जी नहीं। लेकिन ठहरिए, मैं आपसे एक बात पूछती हूँ। अगर आपका एक भाई होता और एक बहन होती तो आप किसको अच्छा ईद कार्ड भेजते ?

मसऊद : यह तुमने बड़ा टेढ़ा सवाल किया है—न मेरा कोई भाई है, न मेरी कोई बहन है।

यास्मीन : झूठ—यह कैसे हो सकता है ?

मसऊद : (हँसता है) हो क्यों नहीं सकता—लो, यह अपना ईद का कार्ड लो। देख लो, कोई गलती तो नहीं है।

यास्मीन : (अन्तराल के बाद) जी नहीं। ठीक है—शुक्रिया—बहुत-बहुत शुक्रिया।

मसऊद : ठहरो। अभी जाओ नहीं। मेरे एक सवाल का जवाब देकर जाओ।

यास्मीन : कहिए।

मसऊद : तुम्हें अपने भाई से ज़्यादा मुहब्बत है या बहन से ?

यास्मीन : भाईजान से—अच्छा, अब मैं चली···

[दरवाज़ा खुलने और बन्द करने की आवाज़]

मसऊद : (हँसता है) यहाँ भी वोह ज़िद कायम रहती है—(लम्बा अन्तराल)··· (खयालात से चौंककर)···लेकिन मैं किस सोच में पड़ गया हूँ। काम क्यों नहीं करता ? (टाइपराइटर पर कागज चढ़ाता है) हूँ ! (टाइप करता है) इसके मुकाबले बर्तानिया में फ़ौलाद की पैदावार 88,49,000 टन थी और सन् 1938 में सिर्फ़ 1,03,44,000 ईद कार्ड थी।—जब नाज़ियों···लाहौल विला—यह मैंने क्या लिख दिया है—(हँसता है) सन् 1938 में सिर्फ़ 1,03,44,000 ईद कार्ड थे। (हँसता है) यह ईद कार्ड अच्छा मेरे दिमाग पर सवार हुआ है।

[दरवाज़ा खुलता है।]

खलील : आपके दिमाग पर क्या सवार हुआ है ? भूत तो आमतौर पर आपके दिमाग पर सवार रहते हैं। आज कोई नयी चीज़ तो सवार नहीं हो गयी ?—मैंने कहा मसऊद साहब, आदाब अर्ज़ करता हूँ।

मसऊद : मैं भी तस्लीम बजा लाता हूँ।—तशरीफ़ रखिए। कहिए, कैसे आना हुआ ?

खलील : आज इधर ईद कार्ड लेने आया था सो तुम्हारे पास भी आ गया।

मसऊद : ईद कार्ड ?

खलील : जी हाँ। ईद कार्ड। क्यों, आप मेरी तरफ़ यूं घूर-घूरकर क्यों देखने लगे ?

मसऊद : तो आप ईद कार्ड लेने आए थे ?

खलील : जी हाँ। ईद कार्ड लेने आया था।

मसऊद : (हँसता है) मैं समझा। आप ईद कार्ड लेने आए थे।

[दोनों खूब हँसते हैं।]

खलील : उफ़, तोबा, लो देखो—मैं यह ईद कार्ड लाया हूँ।

मसऊद . अरे, ये तो बेशुमार हैं—इतने क्या करोगे ?

खलील : क्या करूंगा ? भेजूंगा। पन्द्रह तो रिश्तेदारों में बँट जाएँगे। दस दोस्तों में तकसीम हो जाएँगे—एक-दो फ़ालतू हैं, वे भी कहीं न कहीं चले ही जाएँगे।

मसऊद : यह भी अच्छा-खासा व्यापार है—तुम्हें भी तो उन तमाम लोगों की तरफ़ से ऐसे ही रंग-बिरंगे ईद कार्ड आयेंगे।

खलील : आयें न आयें, मुझे इसका कोई खयाल नहीं । सिर्फ़ एक आदमी का कार्ड आ जाये तो समझो ईद हो गयी ।

मसऊद : किसका ?

खलील : यह न पूछो—इतना बताये देता हूँ कि वह ईद के खूबसूरत तसव्वुर से भी कहीं ज्यादा खूबसूरत है ।

मसऊद : खलील, तुम भी मुहब्बत करने लगे ।

खलील : यह···यह···यह कैसा सवाल है ?

मसऊद : तो हटाओ इसे । यह बताओ, क्या वह वाकई बहुत खूबसूरत है ?

खलील : अगर उसकी खूबसूरती के बारे में झूठ बोला जाये तो वह इतना खूबसूरत नहीं होगा जितना कि उसका जल्वा हकीकत में खूबसूरत है। उसकी आँखें, उसकी आँखें—ठहरो, मैं तुम्हें वह ईद कार्ड दिखाता हूँ जो मैं खास उसके लिये लाया हूँ। यह देखो, लेकिन तुम हाथ नहीं लगाओ इसे, दूर से बेशक देखो—उसकी आँखें इस झील की तरह पुरअसरार हैं—बिलकुल इसी तरह—नीले-नीले अँधते हुए सायों का एक जाल-सा—यह देखो, मैंने यहाँ लिख भी दिया है, तुम खुद पढ़ो ।

मसऊद : तेरी इन दो पुरअसरार झीलों के नाम जिन पर तेरी पलकों के साये हमेशा झुके रहते हैं । खलील, बखुदा तुम अब शायर हो गये हो । यानी अगर तुम चाहो तो बेकाफ़िया नज़्मों का एक दीवान बड़ी आसानी के साथ छपवा सकते हो।

खलील : मसऊद, तुम मज़ाक करते हो । मगर यह हकीकत है कि इस लड़की ने मेरी ज़िन्दगी को 'रदीफ़' और 'काफ़ियों' की कैद से बिलकुल आज़ाद कर दिया है। मुहब्बत, मुहब्बत—तुम क्या जानो, मुहब्बत बगावत का दूसरा नाम है—लाओ, ये तमाम ईद कार्ड मेरे हवाले करो ।

मसऊद : बस, चले ?

खलील : हाँ भई, अब जाऊँगा । ये सब ईद कार्ड पोस्ट करने हैं ।

मसऊद : लो, ये सँभाल लो । दो मैंने रख लिए हैं।

खलील : और ले लो ।

मसऊद : नहीं, दो काफ़ी हैं ।

खलील : क्या तुम भी किसी अच्छी आँखों वाली को···

मसऊद : (हँसता है) हाँ, कुछ ऐसी ही बात है ।

खलील : अच्छा भई, खुदा हाफ़िज़—इंशा अल्लाह, कल मुलाकात होगी।

[दरवाज़ा खुलने और बन्द होने की आवाज़]

मसऊद : तो यह बात है— (अन्तराल) ईद कार्ड कोई बुरी चीज़ नहीं, यानी जब दो मुफ़्त मिल गये हैं तो क्या बुरा है। भेज क्यों न दें । (अन्तराल) एक तो उसको भेज देना चाहिये, अमाँ उसी को, इतनी जल्दी नाम भी भूल गये—उसी को—अपनी—अपनी ज़ोहरा को—हाँ-हाँ, ज़ोहरा ही को—(अन्तराल) प्यारी ज़ोहरा

को मिले—आज़ तर्फ़—मसऊद हसन, मगनलाल बिल्डिंग, सरकुलर रोड, देहली—चलिये—क्या याद करेगी···

× × ×

[संगीत का एक छोटा-सा टुकड़ा—इसके बाद दूसरा दृश्य शुरू हो।]

[दरवाज़े पर दस्तक की आवाज़]

मसऊद : (अन्दर से) कौन है ?

डाकिया : हज़ूर, डाकिया ।

मसऊद : ओह, तुम हो। कहो, कोई चिट्ठी लाये ?

डाकिया : जी हाँ। खाली हाथ इनाम लेने के लिए कैसे आ सकता था—यह लीजिये।

मसऊद : (खुश होकर) तुम्हें डबल इनाम मिलेगा—यह ईद कार्ड हमारी ज़ोहरा ने भेजा है—लो, यह एक रुपये का नोट।

डाकिया : शुक्रिया—ठहरिये मसऊद साहब। आपकी एक चिट्ठी और भी है—मैं निकालता हूँ—यह रही—लिफ़ाफ़े पर आपने कोई एड्रेस ही नहीं लिखा—अन्दर आपने लिखा है, ज़ोहरा को मिले—नीचे अपना पता भी लिखा है—लेकिन··· लिफ़ाफ़ा···

मसऊद : (घबराकर) हाँ, हाँ—कुछ ऐसा ही हुआ है—लाओ, यह मुझे दो—अच्छा तो—हाँ—ठीक है।

[दरवाज़ा बन्द कर देता है।]

डाकिया : (हँसता है) ये बाबू लोग भी अजीब होते हैं—लड़का भी आप और लड़की भी आप···(हँसता है।)

(फ़ेड आउट)

टीपू सुलतान की मौत

पात्र

टीपू
सईद गफ़्फ़ार
नवाब हसीन अली खाँ
मोसियोसपियो
मोसियोलाली
मीर सादिक
पोर्निया
बदरुल्ज़मां खाँ
नज़ूमी
एक सिपाही
दूसरा सिपाही
राजा खाँ

[जूलियस सीज़र और सिकन्दर महान् के बाद दुनिया के बड़े सेनापतियों और विजेताओं की सूची में नेपोलियन का नाम आता है। सिकन्दर और जूलियस सीज़र की विजयों को एक ज़माना गुज़र चुका। आजकल नेपोलियन का नाम ही सबसे अधिक लोगों की ज़बान पर है कि यूरोप से अभी तक उस योद्धा इन्सान के भयावह कारनामों के निशान नहीं मिटे। नेपोलियन महान् की बुज़ुर्गी को एक ओर रखते हुए अगर हम मैसूर के बादशाह फ़तह अली टीपू सुलतान की ज़िन्दगी को सामने रखते हुए दुनिया की इन दो मशहूर हस्तियों के आखिरी लमहों का मुकाबला करें तो नीचे लिखी बातें मालूम होती हैं।

नेपोलियन की कौम ने नेपोलियन का पूरा साथ दिया। उसके प्रत्येक अभियान में उसकी कौम दिलोजान से शामिल रही। उसके अफ़सर वफ़ादार थे और उसके एक इशारे पर जान कुर्बान करने को तैयार थे। इसके विपरीत टीपू सुलतान के अमीर-वज़ीर उसके तख्त पर बैठने से लेकर उसकी मौत तक उसको गिराने की तदबीरें सोचते रहे। सुलतान की आस्तीन में अपने पाले हुए साँप इतने थे कि इतने नेपोलियन के दुश्मन नहीं होंगे। नेपोलियन की जब हार हुई तो उसने

अपने वतन को दुश्मनों के सुपुर्द करने में ही भलाई समझी। उसने अपने-आप को भी दुश्मन के हवाले कर दिया जिसका नतीजा यह हुआ कि वह सेंट हेलिना में कैद कर दिया गया जहाँ उसने बड़े कष्ट में जान दी।

सुलतान की जब अपने अमीरों-वज़ीरों की साज़िश के कारण हार हुई तो उसने बहादुर सिपाही की तरह अपनी आज़ादी बरकरार रखने और अपने मुल्क और प्रजा की इज़्ज़त बचाने के लिए शमशीर पकड़े हुए मरना कबूल किया।

प्रोफ़ेसर जारार का टीपू सुलतान के बारे में कहना है: "उसके सहयोगी हमेशा उसको मिटाने के लिए तैयार और सल्तनत के भीतर खास अफ़सर उसकी हार के लिये साज़िश करते रहे। मगर यह सुलतान ही का दिल व जिगर था कि 17 साल तक उन सबका भली प्रकार और कामयाबी से मुकाबला किया।"

इस छोटी-सी भूमिका के बाद हम शेर-ए-मैसूर के आखिरी लमहों का बयान करेंगे। यही हमारी विषयवस्तु है।

सुलतान के इकबाल का सितारा डूब चुका था। अंग्रेज़ों की चाल कामयाब हो गयी थी। युद्धभूमि में और राजधानी में हर जगह नमकहराम अफ़सर अंग्रेज़ों की अँगुलियों पर नाच रहे थे। युद्धभूमि में सुलतान को खबर मिली कि श्रीरंगपट्टम पर हमले की तैयारी हो रही है और मीर कमरुद्दीन ने गद्दारी करके अंग्रेज़ी फ़ौज का कुर्ग से मुक़ाबला नहीं किया जिसकी वजह से जनरल स्टुअर्ट बिना किसी रुकावट के राजधानी तक पहुँच गया है। यह खबर सुनते ही सुलतान राजधानी की ओर रवाना हो गया।

सुलतान के पलटते ही अंग्रेज़ी फ़ौज बिना किसी बाधा के श्रीरंगपट्टम की ओर बढ़ी और जनरल स्टुअर्ट की फ़ौज के साथ मिलकर उन मोर्चों पर कब्ज़ा कर लिया जो सुलतान ने किले के सामने उत्तर दिशा में बनवाये थे। यहाँ भी साज़िश के कारण कोई विरोध नहीं हुआ। मतलब यह कि जब अंग्रेज़ी फ़ौजों ने श्रीरंगपट्टम की दिशाओं में अच्छी तरह ज़रूरी और सुदृढ़ स्थलों पर कब्ज़ा कर लिया तो गोलाबारी शुरू हुई जिससे किले की दीवार छलनी हो गयी।]

टीपू : तुमने नमकहरामी और गद्दारी की दास्तान सुन ली ?

सईद गफ़्फ़ार : (दुःखपूर्ण स्वर में) हाँ आलीजाह। सुन ली। गुलाम को यकीन नहीं आता कि दुनिया में नमकहरामों का वजूद हो सकता है।

टीपू : इसलिये कि तुम टीपू के वफ़ादार दोस्त हो। इसलिये कि तुम्हारा दिल इन्सानियत से परिपूर्ण है।—मगर सईद गफ़्फ़ार ! दुनिया गद्दारों से खाली नहीं। अगर दुनिया में गद्दार न होते तो आज हमें इतनी परेशानी का सामना न करना पड़ता। हमें कसम है उस खुदा की, जिसके हाथ में हमारी जान है कि हमें इन अंग्रेज़ों ने इतना परेशान नहीं किया, जितना हमें अपने दोस्तनुमा दुश्मनों ने किया है।

नवाब हसीन अली खाँ : हुज़ूर को अब सावधान होना ज़रूरी है।

टीपू : अब सावधान रहने से क्या होगा ? गद्दार हमारी जड़ों में पानी फेर चुके हैं। खुदा की कसम, हमें अगर मालूम हो जाये कि हमारे दरबार में कौन-कौन गद्दार हैं तो हम उन खबीसों को ऐसी सज़ा देंगे कि···पर अब क्या हो सकता है। दुश्मन अपना काम कर चुका है। हमारे चिरागों से ही घर में आग लगने का सामान तैयार किया जा चुका है।

सईद गफ़्फ़ार : मगर हमें नाउम्मीद नहीं होना चाहिये।

टीपू : सईद गफ़्फार, हम नाउम्मीद नहीं हैं। टीपू सुलतान की रगों में जब तक हैदरअली के खून का एक कतरा भी बाकी है, वह दुश्मन का उसी तेज़ी से मुकाबला करेगा। सईद गफ़्फ़ार, कसम है परवरदिगार की, ये अंग्रेज़ भले कितने ही ताकतवर हो जायें, उनके दिलों से टीपू की दहशत कभी दूर नहीं हो सकती।

सईद गफ़्फ़ार : बिलकुल ठीक है, आलीजाह। इसका दुश्मन को भी एहसास है।

टीपू : यह सबकुछ है, हमें अपनी ताकत का भली-भाँति अंदाज़ा है, मगर सईद गफ़्फ़ार, जो कुछ गुलशनाबाद की सीमा पर हुआ उसने हमारा दिल बहुत शोकाकुल कर दिया है। कुछ समझ में नहीं आता कि इस मोर्चे पर हमारी फ़ौजों की क्यों हार हुई ? क्या इसमें भी किसी साज़िश का हाथ तो नहीं ?

सईद गफ़्फ़ार : आलीजाह ! मैं इसके बारे में पक्के तौर से कुछ नहीं कह सकता, सिर्फ़ शक ही शक है।

टीपू : (**बेकरारी के साथ**)—शक—शक—हर तरफ़ शक। किले की दीवार गोलाबारी से छलनी होती जा रही है। अंग्रेज़ बढ़ते चले आ रहे हैं और हम शकों का एक बड़ा ढेर लिए उसे कुरेद रहे हैं। सईद गफ़्फ़ार, नवाब हसीन अली खाँ, सब शक अपने दिल से निकाल दो। आओ, जमकर दुश्मन का मुकाबला करें—आओ, कोई और तदबीर सोचें।

[टीपू सुलतान को अपने भरोसेमंद अफ़सरों के आचार-व्यवहार से मालूम हो गया कि उनमें से कुछ दुश्मन के साथ मिले हुए हैं और कुछ अनुभवहीनता के कारण सरगर्मी दिखाने में विवश हैं, चुनाँचे उसने 24 जेकाद 1213 को मोसियोसपियो और दूसरे फ्रांसीसी अफ़सरों को बुलाया।]

टीपू : मोसियोसपियो ! हमने तुम्हें और तुम्हारे दोस्तों को इसलिए याद किया है कि कुछ ज़रूरी बातें करनी हैं।

मोसियोसपियो : इरशाद आलीजाह !

टीपू : मौजूदा हालात तुम देख रहे हो। ज़ाहिर है कि ये तसल्लीबख्श नहीं हैं। जिन लोगों को हम अपना दोस्त यकीन करते थे, ऐन मौके पर दुश्मन साबित हुए। उनकी दगाबाज़ी और मक्कारी को हम हैरत से देख रहे हैं। गम और गुस्से की लहरें दिल व दिमाग पर दौड़ रही हैं और दुश्मन का ज़ोर हर लमहे बढ़ता चला जा रहा है। क्या हमारी हालत काबिल-ए-रहम नहीं ?

मोसियोसपियो : मगर आलीजाह ! आपके सारे दोस्त गद्दार नहीं।

टीपू : मोसियोसपियो ! हम तुम्हारी दोस्ती की भावना की कद्र करते हैं। यही वजह है कि हमने तुम्हें इस वक्त याद किया। बोलो, अब तुम्हारी क्या राय है ?

मोसियोसपियो : हमने हज़रत का नमक खाया है और हुज़ूर ने हमेशा हम पर भरोसा किया है।

मोसियोलाली : हम आला हज़रत के लिए अपनी जान कुर्बान करने को तैयार हैं। सिर्फ़ इशारे की देर है।

टीपू : मोसियोलाली ! हमें तुम्हारी दोस्ती पर यकीन है।

मोसियोसपियो : तमाम हालात को देखते हुए खादिम यह सलाह देगा कि आप जवाहरात की पेटियाँ, अशर्फियाँ और तोशेखाने का तमाम कीमती सामान लेकर रंगमहल की तमाम महिलाओं समेत आधी रात की खामोशी में किला माली से बाहर तशरीफ़ ले जाएँ।

टीपू : (सोचते हुए) फिर···?

मोसियोसपियो : बाहर निकलकर दस हज़ार सवार और पाँच हज़ार फ़ौज बाकायदा पयादा का ज़बरदस्त दस्ता बीस जरब तोप के साथ ले लें और लगातार चलकर सनील मलगार सूबा सरा और चितलदुर्ग पर जा पहुँचें।

टीपू : यहाँ फिर यकीन का वही टेढ़ा सवाल है।

मोसियोलाली : फ़िदवी और मोसियोसपियो पर हुज़ूर भरोसा करें। यह किला हमारी हिफ़ाज़त में छोड़ जाएँ। जब तक हममें से एक भी बाकी रहेगा, हुज़ूर की नमक-हलाली में कसूर न होगा।

मोसियोसपियो : अगर यह बात आपको मंज़ूर न हो तो हज़रत हम सब फ्रांसीसियों को पकड़कर अंग्रेजों के हवाले कर दें। हम उनके कब्ज़े में आ गए तो वे हुज़ूर के साथ सुलह की बातचीत शुरू कर देंगे, क्योंकि उन्हें ज़्यादातर हमारे लिए खास नफ़रत रही है।

टीपू : शाबाश ! मोसियोसपियो—तुमने हमारे ज़ख्मों पर मरहम रख दिया। खुदा तुम्हें इसका सुफल दे। मगर हमें तुम्हारी यह तजवीज़ मंज़ूर नहीं।

मोसियोसपियो : आलीजाह, हम सच्चे दिल से चाहते हैं कि आपकी यह परेशानी दूर हो जाए।

टीपू : दोस्तो, तुम गरीब वतन से बिछुड़े हमारे बुलाने पर यहाँ आए हो और तुम हमेशा हमारी दोस्ती और वफ़ादारी का दम भरते रहे हो। यह क्योंकर हो सकता है कि हम तुम जैसे शरीफ़, बहादुर, नमकहलाल और वफ़ादार दोस्तों को दुश्मन के हवाले कर दें।

मोसियोसपियो : यह आला हज़रत की उदारता है। मगर हालात ही कुछ ऐसे हैं।

टीपू : हालात कैसे भी हों, अगर हमारी तमाम सल्तनत, तख्त और ताज खता हो जाए, तो भी हम तुम्हें कभी अंग्रेज़ों के हवाले नहीं करेंगे। टीपू अपनी बेदाग ज़िन्दगी पर धब्बा नहीं लगाएगा। हम इतिहासकारों को यह मौका नहीं देना चाहते कि जब वे शेर-ए-मैसूर के हालात-ए-जिन्दगी कलमबन्द करें, उसके बुलन्द हौसले का

ज़िक्र करें तो आखिर में यह भी लिखें कि उसने हालात से परेशान होकर अपने फ्रांसीसी दोस्तों को दुश्मन के हवाले कर दिया। ऐसा हर्गिज़ नहीं होगा मोसियोसपियो।

[इसके बाद सुलतान ने नमकहराम दीवान मीर सादिक और पोर्निया से फ्रांसीसी सरदारों की सलाह का ज़िक्र किया और राय माँगी।]

टीपू : क्यों मीर सादिक, तुम्हारा क्या खयाल है ?

मीर सादिक : आला हज़रत का फ़ैसला अटल है मगर गुलाम का खयाल कुछ और ही है।

टीपू : ज़ाहिर करो।

मीर सादिक : इस कौम ने किसके साथ वफ़ा की है जो आपके साथ करेंगे।

पोर्निया : फ्रांसीसी और अंग्रेज़ दोनों एक हैं।

मीर सादिक : आला हज़रत, ये दोनों एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। ये दोनों आखिर में एक हो जाएंगे। नुकसान हमें ही होगा। इन सफ़ेद चमड़ी के आदमियों को हमसे क्या हमदर्दी हो सकती है ?

पोर्निया : ये कुत्ते और गीदड़ !

मीर सादिक : हज़रत यकीन फ़रमाएं कि जैसे ही आपने किला उनके सुपुर्द किया, ये अंग्रेज़ों के हवाले कर देंगे।

टीपू : हमें उनकी वफ़ादारी पर पूरा-पूरा भरोसा है।

मीर सादिक : गुलाम ने अपना विचार बता दिया है। मानना न मानना आला हज़रत का अख्तियार है।

टीपू : हमारे अख्तियार में बहुत-सी बातें हैं। अगर तकदीर पर कोई अख्तियार हो तो मीर सादिक, आज हमारी सेना की पंक्तियों में ये गद्दार न होते जिनकी मक्कारियों की वजह से हमें यह दिन देखना पड़ा। हम अंग्रेज़ों से सुलह चाहने लगे मगर उनकी तरफ़ से ऐसी कमीनी शर्तें पेश की गई हैं कि खुदा की कसम, हमारा खून खौल रहा है। अगर आज हमारे दोस्त हमारे दुश्मन न होते तो मीर सादिक देखते, हम दुश्मन के तमाम इरादों को यूं पाँव तले रौंद देते। हम उनकी कमीनी शर्तें कभी कबूल नहीं करेंगे।

मीर सादिक : आला हज़रत की मर्ज़ी के आगे हमारा सर झुका है।

टीपू : वे चाहते हैं कि हम अपने फ्रांसीसी दोस्तों को उनके हवाले कर दें। हम ऐसा कभी नहीं करेंगे। वे कहते हैं कि हम कर अदा करें। टीपू और कर दे ?— नामुमकिन है। और मीर सादिक, तुमने इन अंग्रेज़ों की बेईमानी देखी ?

मीर सादिक : क्या आला हज़रत !

टीपू : तुम हमसे पूछते हो कि क्या ? उन्होंने शर्तें मानने के लिए हमें चौबीस घण्टों की मोहलत दी है, लेकिन इस दौरान बराबर किले पर गोलाबारी हो रही है। इसलिए इस बेअसूली ने हमें बहुत दुखी किया है।

पोर्नियां : तो अब हुज़ूर का क्या इरादा है ?

टीपू : बदरुल्ज़मां खाँ नायता को हमारे पास बुलाया जाए। हम उसको कुछ हुक्म देना चाहते हैं।

मीर सादिक : बहुत अच्छा आलीजाह ! मैं उन्हें अभी आपकी खिदमत में हाज़िर करता हूँ। (**चला जाता है।**)

टीपू : (**बेकरारी के साथ टहलते हुए**) काश, हमें उन गद्दारों का पता चल जाता पोर्नियां ! उन अंग्रेज़ों को हमारा घर जलाने के लिए हमारे ही घर के चिराग मिल गए हैं। हम उनकी शर्तें हरगिज़ कबूल नहीं करेंगे।

[मीर सादिक बदरुल्ज़मां खाँ नायता के साथ दाखिल होता है।]

मीर सादिक : आलीजाह ! आपके हुक्म के मुताबिक बदरुल्ज़मां खाँ नायता हाज़िर हैं।

टीपू : बदरुल्ज़मां खाँ, आओ—हम तुम्हें कुछ हुक्म देना चाहते हैं।

बदरुल्ज़मां खाँ : इरशाद आलीजाह !

टीपू : तमाम जवाहरात और खज़ाना—तोशाखाने का तमाम आला सामान सन्दूकों में बन्द करके ऊँटों पर लाद दिया जाए। रंगमहल की ज़नाना सवारियों के लिए तेज़ रफ़्तार बैलों और कहारों का फ़ौरन इन्तज़ाम किया जाए। साथ जाने के लिए हम निहायत भरोसेमंद और जांनिसार अफ़सर मुकर्रर कर देंगे।

बदरुल्ज़मां खाँ : आलीजाह ! आपका हुक्म सिर-आँखों पर, मगर गुलाम कुछ अर्ज़ करने की इजाज़त माँगता है।

टीपू : तुम्हें इजाज़त है। कहो, क्या चाहते हो ?

बदरुल्ज़मां खाँ : किबला आलम ! जैसे ही हुज़ूर का औरतों के साथ हरमसरा किला छोड़कर बाहर तशरीफ़ ले जाना मालूम होगा तो सब वफ़ादारों की हिम्मत टूट जाएगी और सब फ़ौज तितर-बितर हो जाएगी। मेरे मुंह में खाक, लेकिन इस वक्त यह काम शाही शान के खिलाफ़ है।

टीपू : मीर सादिक, पोर्नियां, तुम्हारी क्या राय है ?

मीर सादिक : मेरा खयाल है कि हुज़ूर का किला न छोड़ना हालात के मुताबिक है।

टीपू : तुम क्या कहते हो पोर्नियां ?

पोर्नियां : आलीजाह ! मैं भी दीवान साहब से इत्तफ़ाक रखता हूँ !

बदरुल्ज़मां खाँ : मेरे लिए क्या हुक्म है आलीजाह।

टीपू : तुम जाओ बदरुल्ज़मां खाँ ! (**ठंडी साँस भरकर**) जो अल्लाह की मर्ज़ी।

[भगवान् की मर्ज़ी पर राज़ी होकर सुलतान ने अपना इरादा बदल दिया। अमीरों की साज़िश कामयाब हुई। सुलतान हैरान था कि उसके सरदार जगह-जगह तैनात हैं मगर उनसे कुछ भी नहीं होता। ज़ाहिर है कि बगैर साज़िश के यह मुमकिन नहीं। इन हालात को देखते हुए सुलतान ने रंगमहल के चारों तरफ़ खन्दक सुखाकर बारूद बिछवा दी ताकि अंग्रेज़ जब अन्दर आ जाएँ तो इज्ज़त बचाने के लिए

रंगमहल को उड़ा दिया जाए। सरदारों को सवार और पैदल फ़ौज के साथ ज़रूरी जगहों पर मुकर्रर किया और एक फ़ौज अंग्रेज़ों का सामान, रसद रोकने के लिए रवान्न कर दी। सुलतान के किसी भी हुक्म का पालन नहीं किया गया। इसलिए कि उनमें से अकसर गद्दार थे।

चार मई सुब्रह का ज़िक्र है।]

नजूमी : आलीजाह ! मैं आपकी खिदमत में कुछ अर्ज़ करने के लिए हाज़िर हुआ हूँ।

टीपू : बोलो, तुम्हें क्या कहना है ?

नजूमी : हुज़ूर, सितारों की गणना करने पर मालूम हुआ कि आज का दिन आला हज़रत के लिए निहायत मनहूस है।

टीपू : तो क्या करना चाहिए ?

नजूमी : हुज़ूर को सदका देना चाहिए स्नान करने के बाद। आलीजाह, सदका ज़रूर दें।

टीपू : ज़रूर देंगे। हम स्नान कर चुके। जाओ, दीवान से कहो कि एक हाथी काले महल को झोली समेत, जिसकी झालर में कई सेर के मोती और जवाहरात टँके हुए हैं, दरवेशों को दे दिया जाए।

नजूमी : हुज़ूर का इकबाल दिन-ब-दिन तरक्की पर हो। (चला जाता है।)

टीपू : (होंठों में हँसता है) हुज़ूर का इकबाल दिन-ब-दिन तरक्की पर हो।

[एक नौकर आता है।]

नौकर : आलीजाह ! आपके हुक्म के मुताबिक किले की उत्तरी फ़सील के पास छायादार पेड़ के नीचे आपका खाना लगा दिया गया है।

टीपू : चलो, हम साथ चलते हैं।

[सुलतान ने अभी भोजन का एक ग्रास ही लिया था और दूसरा ग्रास उठाने ही वाला था कि शोर करते हुए लोग आए कि सईद गफ़्फ़ार ने अपनी जान शाह पर कुर्बान कर दी है। सुलतान ने उस ग्रास को वैसे ही छोड़कर भोजन से हाथ खींच लिया। ठण्डी साँस भरकर सुलतान ने दोनाली बन्दूक उठाई और छोटे दरवाज़े से बाहर निकला। उस वक्त सुलतान नीम रंग का लबादा पहने था और शाही पगड़ी सिर पर थी।

जिस वक्त सईद गफ़्फ़ार को गोला लगा, दोपहर का वक्त था। सेना बराबर मुस्तैदी से अपने काम में लगी हुई थी। उसी वक्त पोर्निया का हुक्म आया कि फ़ौजों को तनख्वाह बाँटी जा रही है। इसलिए सिपाही आकर अपनी तनख्वाह ले जाएँ। अन्दरूनी साज़िश यह थी कि जब सैनिक वहाँ से हट जाएँ तो अंग्रेज़ी फ़ौज को चढ़ आने का इशारा कर दिया जाए। सिपाही तनख्वाह लेने के लिए बड़ी मस्जिद के पास चले गए और अंग्रेज़ी फ़ौज इशारा पाकर आसानी से फ़सील पर चढ़कर किले के अन्दर दाखिल हो गई।

अंग्रेज़ी फ़ौज में जो आदमी सबसे पहला था वह जनरल बेयर्ड था। मगर उसका साथ देने के लिए एक और व्यक्ति उससे आगे-आगे था—मीर कासिम अली।

अंग्रेज़ी फ़ौज इन्हीं गद्दारों की मदद से फ़सील पर काबिज़ होकर किले के अन्दर दाखिल हो चुकी थी। सुलतान किले में दाखिल होने के लिए जब डडी दरवाज़े पर आया तो उसे बन्द पाया।]

टीपू : यह दरवाज़ा अन्दर से किसने बन्द किया है ?

एक सिपाही : आलीजाह ! आप जब इस दरवाज़े से निकलकर बाहर तशरीफ़ ले गए थे तो दीवान साहब आपके पीछे-पीछे आए थे।

टीपू : मेरे पीछे-पीछे आया था तो किधर गया ? अब कहाँ है ? यह दरवाज़ा किसने बन्द किया है ?

सिपाही : आलीजाह ! दीवान साहब ने ही दरवाज़ा बन्द किया है।

टीपू : (हैरत से) क्या कहा ! मीर सादिक ने यह दरवाज़ा बन्द किया है ?

सिपाही : हाँ आलीजाह ! उन्होंने अपने हाथ से दरवाज़ा बन्द किया है।

टीपू : उसी ने किया होगा। अब तक और मीर भी तो कई दरवाज़े बन्द कर चुके हैं। हम सोये रहे। हम गाफ़िल रहे।

[एक सिपाही भागता हुआ आता है।]

टीपू : क्या हुआ ? तुम इतने डरे हुए क्यों हो ?

दूसरा सिपाही : (हाँफते हुए) आलीजाह ! अंग्रेज़ी फ़ौज किले में दाखिल होकर इस जगह पर आ गई है।

टीपू : किस जगह पर ?

दूसरा सिपाही : यहाँ से बिलकुल करीब आलीजाह ! आप कहीं छुप जाएँ।

टीपू : दोस्त, गीदड़ की सौ साला ज़िन्दगी से शेर की एक दिन की ज़िन्दगी अच्छी है।

[जहाँ सुलतान जा रहा था, वहाँ एक तरफ़ तो अंग्रेज़ी फ़ौज फ़सील पर थी और दूसरी तरफ़ सामने और पीछे से अंग्रेज़ी फ़ौज के दूसरे हिस्से से सुलतान के सिपाहियों का मुकाबला हो गया। थोड़ी देर बाद सुलतान अपने जांनिसारों के साथ घेर लिया गया।

बन्दूकों के फ़ायर के साथ-ही-साथ हाथोंहाथ लड़ाई शुरू हो गई। खूब घमासान जंग हुई। एक गोली सुलतान के घोड़े को लगी। घोड़ा वहीं मर गया। अब सुलतान पैदल होकर लड़ने लगा। चूंकि गद्दारों से मालूम हो चुका था कि सुलतान खुद उस जंग में शामिल है, अतः तमाम अंग्रेज़ी फ़ौज पूरी ताकत से उस जगह मे सिमट आई थी जहाँ सुलतान एक तंग जगह में घिरा हुआ था। इस दस्त-ब-दस्त लड़ाई में, जिसमें सुलतान बहादुरी की दाद दे रहा था, अचानक एक गोली सुलतान के दिल के करीब लगी।]

टीपू : (ज़ख्मी होकर) राजा खाँ—राजा खाँ—

राजा खाँ : आलीजाह !

टीपू : इधर आओ—एक लमहे के लिए लड़ना छोड़कर इधर मेरे पास आओ ।

राजा खाँ : (सुलतान के पास जाकर) इरशाद आलीजाह !

टीपू : हम ज़ख्मी हो गए हैं राजा खाँ ।

राजा खाँ : (सीने से लहू निकलता देखकर) आलीजाह ! मेरे मुँह में खाक, मगर आपको तो बहुत जानलेवा ज़ख्म हुआ है ।

टीपू : गोली का ज़ख्म इतना घातक नहीं राजा खाँ—हमारा सीना और ही ज़ख्मों से छलनी हो चुका है ।

राजा खाँ : आलीजाह ! अब हालात का तकाज़ा यह है कि आप अपने-आप को अंग्रेज़ों पर ज़ाहिर कर दें ।

टीपू : राजा खाँ, क्या तुम पागल हो गए हो ? खामोश रहो ।

[सुलतान को फ़ौरन सिपाहियों ने उठाकर पालकी में लिटा दिया । यह पालकी दरवाज़े में रख दी गई—सुलतान उस पालकी में ही था कि एक अंग्रेज़ सिपाही का वहाँ से गुज़रना हुआ । उसने सुलतान की तलवार और पेटी छीननी चाही । जब उसने हाथ बढ़ाया तो सुलतान ने तलवार से उसके पाँव पर चोट की । इस पर अंग्रेज़ सिपाही ने अपनी भरी हुई बन्दूक सुलतान पर खाली कर दी जिससे शेर-ए-मैसूर की आत्मा उसके नाशवान शरीर को छोड़कर स्वर्ग सिधार गई ।

जब सुलतान की मौत की खबर जनरल हार्स को पहुँची तो वह लाश के पास आया और खुशी से पुकार उठा—"आज हिन्दुस्तान हमारा है ।"]

शाहजहाँ की मौत

पात्र

शाहजहाँ
औरंगज़ेब
जहाँआरा
सईद मुहम्मद कनोजी

[अपने फ़तहमंद बेटे महीउद्दीन औरंगज़ेब की रहनुमाई में जब सहाबुद्दीन शाहजहाँ ने आगरे के दरवाज़े खोल दिए तो उसका नतीजा यह हुआ कि उसे अपनी उम्र का बाकी हिस्सा एक कैदी की हैसियत से गुज़ारना पड़ा। शाहजहाँ के लिए, जो कुछ समय पहले हिन्दुस्तान का शहंशाह था और शहंशाहियत के अलावा जिसके पहलू में एक महान् आर्टिस्ट का दिल था, कैद और बंदी जीवन की तकलीफ़ें सहनी बहुत ही मुश्किल थीं। ताज जैसी शानदार इमारत का नक्शा सोचने वाले ने किले की चारदवारी में अपने अन्तिम दिन किन मुश्किलों में बिताए यह एक बहुत ही दर्दनाक कहानी है। शुरू में उसने अपने बेटे द्वारा की गयी कैद के खिलाफ़ विरोध की आवाज़ ऊँची उठायी। उसकी रूह ने कई बार बगावत की, मगर औरंगज़ेब के फ़ौलादी इरादे के सामने उसकी कोई पेश न चली।

शाहजहाँ बूढ़ा था। कमज़ोर था। उम्र के आखिरी वर्षों अपने बेटे के कारनामों का बोझा उठाए हुए था। उसके सब अमीर, वज़ीर उसके फ़तहमंद बेटे से जा मिले थे। अब सिवाय हरम की औरतों और कुछ ख्वाजासराओं (हिजड़ों) के, जो उसकी खिदमत के लिए औरंगज़ेब ने मुकर्रर कर रखे थे, शाहजहाँ का न कोई सलाहकार था न मददगार। हिन्दुस्तान की तमाम सल्तनत को अपनी जेब में डालकर औरंगज़ेब ने उसको किले के कुछ कमरों में कैद कर दिया था।

चारों तरफ़ औरंगज़ेब की फ़तहमंद फ़ौज ने घेरा डाल रखा था। दिन-रात जासूसों के ज़रिए उस पर कड़ी नज़र रखी जाती थी। बहुत ध्यान रखा जाता था कि शाहजहाँ किले के बाहर किसी से खतोकिताबत न कर सके।]

शाहजहाँ : (गुस्से की हालत में) मुझे बताओ, वफ़ा नामी ख्वाजासरा का क्या हुआ ?

औरंगज़ेब : उसका वही नतीजा हुआ जो बागियों का होता है।

शाहजहाँ : उसने क्या बगावत की थी जो तुमने उसे इतनी कड़ी सज़ा दी ?

औरंगज़ेब : आपने उसके ज़रिये एक खत बाहर भेजना चाहा था।

शाहजहाँ : तो इसमें उसका कौन-सा जुर्म था ? महीउद्दीन, तुम मुझे इतना क्यों सता रहे हो ? क्या इस किले की चारदीवारी में कैद करके भी तुम्हें तसल्ली नहीं हुई ? तुमने अब मेरे लिखने पर भी पाबन्दी लगा दी। मेरे सब्र के पैमाने में क्या तुम्हें कुछ गुंजाइश नज़र आ गयी थी ?

औरंगज़ेब : मैं आपको बार-बार लिख चुका था कि बाहर की दुनिया से खतोकिताबत करना बिलकुल बन्द कर दें।

शाहजहाँ : ये तुम्हारे हुक्म थे ?

औरंगज़ेब : जो आपने रद्द कर दिए।

शाहजहाँ : बेटा बाप पर हुकूमत चलाए—महीउद्दीन, मैं अब तुमसे क्या कहूँ। तुम इस वक्त हिन्दुस्तान के ताकतवर बादशाह हो। शाहजहाँ के बेटे नहीं हो।

औरंगज़ेब : महीउद्दीन औरंगज़ेब ताकतवर बादशाह बाद में है, पहले वह आपका बेटा है।

शाहजहाँ : तो बाप तुमसे पूछता है कि उस पत्र-व्यवहार पर निगरानी क्यों की गयी ? क्या इस किस्म की बेइज़्ज़ती तुम्हारा बाप बरदाश्त कर सकता है ?

औरंगज़ेब : चूंकि इस किस्म के खतोकिताबत से मुल्क में बदअमनी और बगावत फैलने का खतरा है, इसलिए यह देखभाल ज़रूरी समझी गयी।

शाहजहाँ : मैं तुम्हारी इस देखभाल की कोई परवाह नहीं करता—मैं जिससे चाहूँ पत्र-व्यवहार करूँगा।

औरंगज़ेब : तो जिसके हाथ आप पत्र-व्यवहार करेंगे उसका वही नतीजा होगा जो वफ़ा ख्वाजासरा का हुआ—मैं तमाम ख्वाजासराओं के नाम एक धमकी-भरा फ़रमान जारी कर चुका हूँ—अगर उन्होंने वफ़ा की तरह कोई काम किया तो उन्हें वही सज़ा भुगतनी पड़ेगी, जो उसको मिल चुकी है।

शाहजहाँ : महीउद्दीन, जाओ, मेरी आँखों से दूर हो जाओ—ऐसा न हो कि मेरे मुँह से कोई बद्दुआ निकल जाए। जाओ, यहाँ से चले जाओ।

औरंगज़ेब : जो कुछ मैं कर रहा हूँ, आपकी और मुल्क की बेहतरी के लिए कर रहा हूँ। सावधानी के तौर पर आपको अब लिखने-पढ़ने का कोई सामान नहीं दिया जाएगा। अगर आपको खत लिखवाना हो तो एक ख्वाजासरा मैंने इस काम के लिए मुकर्रर कर दिया है। आप खत का मज़मून बोल दिया करें, वह लिख दिया करेगा।

शाहजहाँ : तुम्हारी बहुत मेहरबानी—जाओ, अब यहाँ से चले जाओ।

[8 जून, 1658 को जब शाहजहाँ आगरे के किले में नज़रबन्द किया गया तो औरंगज़ेब ने फ़ौरन ही शाही महलों के उन कमरों को, जिनमें जवाहरात और कीमती साज़ व सामान थे, ताले लगाकर उन पर मुहर लगा दी थी।

औरंगज़ेब का एक खास ख्वाजासरा मोतमद नामी उनकी निगरानी के लिए तैनात था। चूंकि शाहजहाँ अब हरम की चारदीवारी में सीमित हो गया था, इसलिए उन कमरों तक उसकी पहुँच आसानी के साथ हो सकती थी। यही वजह है कि औरंगज़ेब ने यह हुक्म जारी कर रखे थे कि खज़ानों को खोलते वक्त जवाहरात की हिफ़ाज़त में कोई लापरवाही न की जाए।

शाहज़ादा मुहम्मद सुलतान के चले जाने पर मोतमद ख्वाजासरा उनका अकेला ही मुख्तार बन गया था। वह शाहजहाँ से उस तरह की सख्ती बरतता था जो सेंट हेलेना में नेपोलियन के साथ हडसन लो ने बरती थी।]

शाहजहाँ : जहाँआरा ! बेटा, ज़रा इधर आओ।

जहाँआरा : आई ज़िल्लेइलाही !

शाहजहाँ : बेटा, हमने मोतमद ख्वाजासरा को कहला भेजा था कि वह हमारे जूते मँगवा दे। नौकर अभी-अभी ये लाया है। खोलकर देखो कैसे जूते हैं।

जहाँआरा : (खोलकर देखती है) ज़िल्लेइलाही, ये जूते आपने किसके लिए मँगवाए हैं—अपने लिए या किसी नौकर के लिए ?

शाहजहाँ : क्यों, क्या हुआ ? अरे, सचमुच नाबकार ने ये कैसे फ़िज़ूल से जूते भेज दिए।

जहाँआरा : फ़िज़ूल ? ज़िल्लेइलाही, ये तो बिलकुल निकम्मे जूते हैं। चमड़ा तो देखिए कितना वाहियात है। ऐसे जूते तो दिल्ली के भड़भूजे भी नहीं पहनते होंगे।

शाहजहाँ : हमें न दिखाओ जहाँआरा। उसी तरह लपेटकर रख दो। यह सब उस हरामखोर मोतमद की शरारत है जो मुहम्मद सुलतान के चले जाने पर इस किले का मालिक बन बैठा है। हम समझ गए वह नाबकार ऐसी गन्दी हरकतों से हमें छेड़कर खुश होना चाहता है।

जहाँआरा : अल्लाह करे न रहे इस दुनिया के तख्ते पर।

शाहजहाँ : बेटा, किसी को बद्दुआ न दो—मोतमद छोटे दिल का आदमी है। अगर उसका दिल बड़ा, ऊँचा होता तो हमारे साथ इस तरह की छेड़छाड़ हर्गिज़ न करता—अल्लाह अकबर···हमें यह दिन भी देखना था।

जहाँआरा : (आँखों में आँसू आ जाते हैं और आवाज़ भर्रा जाती है) ज़िल्लेइलाही, दिल से सिर्फ़ एक हूक-सी उठती है और उस हूक के साथ ही जाने कितनी खामोश और भारी बद्दुआएँ लिपटकर बाहर निकल जाती हैं। सबकुछ समझती हूँ पर क्या करूँ—काश, मैं आपके लिए कुछ कर सकती।

शाहजहाँ : जहाँआरा, तुमने हमारे लिए वह सबकुछ किया जो शायद ही कोई बेटी अपने बाप के लिए कर सके। तुमने अपना आराम, अपना चैन—सबकुछ हम पर कुर्बान कर दिया। तुमने अपने इस बूढ़े बाप की खिदमत इस मुहब्बत के साथ की है कि हम अपना दुःख-दर्द भूल चुके हैं।

जहाँआरा : ज़िल्लेइलाही, मैं कुछ भी नहीं कर सकती—औरत ज़ात कर भी क्या सकती है ?

शाहजहाँ : हमें ज़िल्लेइलाही न कहो बेटा । हम पर खुदा का साया नहीं रहा । हमें तो अब उस साए की तलाश है—और जहाँआरा बेटा, तुम ऐसे सच्चे दिल से हमारी खिदमत करती रही हो कि अब गम गम मालूम नहीं होता। कैद के इन दिनों में हमें पहली बार इस बात का एहसास हुआ है कि तुम कितनी नेक, वफ़ादार और बहादुर लड़की हो। हमें फ़ख्र है कि हम तुम्हारे बाप हैं—रोओ नहीं बेटा । तुम्हारी आँखों में आँसू देखकर हमें रूहानी दुःख होता है। अब आँसू पोंछ डालो और सईद मुहम्मद फतोही को हमारे पास भेज दो कि वह हिन्दुस्तान के बेबस बादशाह के दिल को ढाढ़स देने के लिए मज़हबी और इखलाकी दास्तान सुनाए। कसम है खुदा की, उस फ़रिश्ता जैसे बुज़ुर्ग ने हमारे मज़हबी खयालों को बहुत बढ़ा दिया है। कुरान के पाठ और हदीसों के पढ़ने ने हमें रूहानी तसल्ली बख्शी है।

[इतिहास पढ़ने और मज़हबी जज्बे के अलावा शाहजहाँ अपनी छोटी बेटी से, जो हज़रत मियाँ मीर जैसे वली की मुरीद थी, बहुत मुहब्बत करता था। जहाँआरा अपने बूढ़े बाप की खिदमत बड़े मन से करती थी। शाहजहाँ की उस उम्र में जहाँआरा का वजूद उसके लिए यकीनन बुढ़ापे का सहारा था। बल्कि वह दूसरी औलाद के तल्ख तजुर्बों को भुलाने में भी मदद करती थी।

शाहजहाँ अपनी मुसीबतों के सामने झुक गया था। औरंगज़ेब ने पहले दाराशिकोह, फिर मुरादबख्श और फिर सुलेमान को कत्ल कर दिया था। इन हादसों की वजह से बूढ़े बाप का दिल बिलकुल टूट चुका था। अब वह एक टूटे हुए इन्सान की तरह मन मारकर अपने दिन गुज़ार रहा था।

कैद के उस ज़माने में शाहजहाँ और औरंगज़ेब के बीच खतोकिताबत का सिलसिला कुछ देर जारी रहा।]

शाहजहाँ : बोलो, आगे क्या लिखा है ?

जहाँआरा : लिखते हैं, आप मुझे दूसरे का हक मारने वाला और ज़ालिम कहते हैं। मेरे कामों को नफ़रत से देखते हैं और दूसरे की मिलकियत पर कब्ज़ा करने वाले को इस्लाम का दुश्मन बताते हैं, लेकिन आपको याद रखना चाहिए कि सल्तनत के खज़ाना और दौलत आम लोगों के फ़ायदे के लिए हैं, ऐशोइशरत के लिए नहीं हैं। बादशाहत जायदाद नहीं होती कि आपके बाद आपका बेटा ही उसका वारिस हो। यह तो खुदा की अमानत है। जो अमीन होता है उसे ही मिलती है यह माल व दौलत···

शाहजहाँ : बन्द कर दो···बन्द कर दो इसे···

जहाँआरा : अभी खत्म नहीं हुआ।

शाहजहाँ : हम जानते हैं उसकी यह तकरीर कभी खत्म नहीं होगी, लेकिन उसको शायद यह पता नहीं कि जो सलूक उसने हमारे साथ किया है, वही सलूक उसकी अपनी औलाद उसके साथ करेगी···यह हम उसे खत में भी लिखवा चुके हैं।

जहाँआरा : और उसका जवाब इस खत में मौजूद है।

शाहजहाँ : क्या लिखता है ?

जहाँआरा : लिखते हैं, जो कुछ होता है ख़ुदा के हुक्म से होता है। मैं जो कुछ कर रहा हूँ वही मेरे बुज़ुर्गों ने भी किया था। फिर ताज्जुब की क्या बात है ? अगर खुदा की मर्ज़ी इसी में है तो मेरे बेटे मुझसे ऐसा ही सलूक करेंगे। मैं खुदा की मर्ज़ी और हुक्म से दरेग नहीं करूंगा। लेकिन मेरी नीयत चूंकि अच्छी है और खुदा की मेहरबानी हमेशा नेकनीयतों के साथ होती है—इसलिए मुझे उम्मीद रखनी चाहिए कि मेरी औलाद मेरे साथ अच्छा ही सलूक करेगी।

शाहजहाँ : खुदा की मर्ज़ी—खुदा की मर्ज़ी—खुदा की मर्ज़ी ज़रूर ऐसी ही होगी। वह दिन ज़रूर आएगा जब महीउद्दीन अपने बेटे को बागी और बेवफ़ा कहेगा तो वह पलटकर यह जवाब देगा, "बोलो, तुमने अपने बाप के साथ क्या सलूक किया था ? क्या तुम बागी नहीं हो गए थे ? क्या तुमने अपने बाप से दगा नहीं किया था ?"

जहाँआरा : खत का थोड़ा-सा हिस्सा बाकी रह गया है। वह भी सुन लीजिए।

शाहजहाँ : सुनाओ।

जहाँआरा : लिखते हैं, "आप मुझे क्यों बुरा कहते हैं ? क्या आप अपने भाई खुसरो और परवेज़ को भूल गए ? उन्होंने आपको कोई नुकसान नहीं पहुँचाया था, लेकिन उसके बावजूद आपने उनके साथ बुरा सलूक किया।"

[शाहजहाँ और औरंगज़ेब के बीच तल्ख खतोकिताबत काफ़ी दिनों तक चलती रही। उसके बाद औरंगज़ेब ने बाप को खुद लिखना छोड़ दिया। कभी-कभी मुंशियों से कुछ लिखवाकर भेज दिया करता था, लेकिन बाद में यह सिलसिला भी बन्द हो गया।

शाहजहाँ औरंगज़ेब से न तो तलवार की लड़ाई में पूरा उतरा और न कलमी जंग में। कुछ समय बाद वह कुदरत के फ़ैसले के आगे झुक गया। अब वह किस्मत का गिला नहीं करता था।

जिसने ताजमहल बनाकर मौत को हसीन बना दिया था और जिसने अपनी आँखों से निकले आँसू को ज़माने के गाल पर अपनी तमाम चमक-दमक समेत हमेशा के लिए अमर कर दिया था, अब अपनी हसरतनाक मौत का इन्तज़ार कर रहा था। दुःखों और मुसीबतों की इस ज़िन्दगी से निजात पाने की इच्छा शाहजहाँ के दिल में हर वक्त तड़पती रहती थी। अन्त में जनवरी, 1666 में पूरी हुई। सात जनवरी का दिन था। शाहजहाँ ने एक खास तेल-मालिश अपने जिस्म पर करायी थी। उससे फ़ायदे की बजाय नुकसान हुआ।

शाहजहाँ : (**कमज़ोर आवाज़ में**) इस तेल की मालिश ने हमें ज़रा भी फायदा न पहुँचाया बल्कि इससे नुकसान ही हुआ। ऐसा लगता है जैसे बदन में जान ही नहीं रही।

सईद मुहम्मद कनोजी : खुदा की मेहरबानी रही तो आप जल्दी ही सेहतमंद हो जाएँगे।

शाहजहाँ : सईद साहब, अब सेहत और तन्दुरुस्ती की आरज़ू नहीं है। अब तो जी

चाहता है कि जल्दी-से-जल्दी इस ज़िन्दगी का खात्मा हो ।

सईद मुहम्मद कनोजी : ज़िन्दगी खुदाबंद ताला ने ज़िन्दा रहने के लिए अता की है। आलीजाह, इसका हर लमहा सब्र और शुक्र से गुज़ारना चाहिए। यह अल्लाहताला की बहुत बड़ी नियामत है और दुःख तो हर आदमी की ज़िन्दगी में होते हैं आलीजाह ।

शाहजहाँ : आप ठीक फ़रमाते हैं सईद साहब। मगर बात यह है कि हम अब इस दुनिया के धंधों से आज़ाद हो जाना चाहते हैं। मौत तो अपने वक्त पर ही आएगी। लेकिन उसको करीबतर देखने की आरज़ू दिल में पैदा हो गयी है, मिटाए नहीं मिट सकती ।

सईद मुहम्मद कनोजी : आलीजाह, दुःखों और मुसीबतों से आज़ादी पाने का हल मौत पेश नहीं करती। मौत के बाद भी इनकी भीड़ इन्सान को सता सकती है। दुआ कीजिए, आपकी दूसरी ज़िन्दगी हर किस्म के बखेड़े से पाक हो।

शाहजहाँ : सईद साहब, हम हर वक्त खुदा के दरबार में यही दुआ माँगते रहते हैं—इस ज़िन्दगी से हम मुतमईन हैं। ज़िन्दगी के चौहत्तर वर्ष पूरे हो चुके हैं। इस दौरान हमने फ़तह ही फ़तह देखी हैं। नाकामी और नामुरादी से भी वास्ता पड़ा है। तख्त पर बैठने से पहले कई जंगलों की खाक छानी है। लम्बे-लम्बे सफ़र किए हैं। मुश्किलें बरदाश्त की हैं। खुशियाँ देखी हैं और अब आखिरी उम्र में बेवफ़ाई की चोटें भी सही हैं। मतलब यह कि ज़िन्दगी में जो कुछ होना है हम सब देख चुके हैं। बखुदा अब हम राज़ी-खुशी हैं।

[एक नौकर अन्दर दाखिल होता है।]

नौकर : ज़िल्लेइलाही, वैद्य बिन्दरावन साहब तशरीफ़ लाए हैं।

शाहजहाँ : उन्हें हाज़िर करो।

नौकर : बहुत अच्छा ज़िल्लेइलाही। **(चला जाता है।)**

शाहजहाँ : हमने वैद्य की बहुत तारीफ़ सुनी है। हमसे कहा गया है कि पेट के इलाज के वह विशेषज्ञ हैं—सईद साहब, मेदे की खराबी ने हमें बहुत तंग कर रखा है।

[बीमारी के नवें दिन वैद्य बिन्दरावन ने शाहजहाँ के पेट के रोग को बिलकुल ठीक कर दिया, जिससे उसको कुछ आराम मिला। मगर बुढ़ापा और कमज़ोरी वैसी की वैसी बनी रही ।

सर्दी बहुत अधिक थी। शर्बत पीते-पीते शाहजहाँ के होंठों पर पपड़ियाँ जम गयी थीं। बुढ़ापा और कमज़ोरी बहुत ज़्यादा बढ़ गयी थी। पेट का रोग दूर हो गया था, लेकिन दूसरे मर्ज़ दिन-ब-दिन बढ़ रहे थे। अब ऐसा वक्त आ गया था कि दवाएँ और गिज़ाएँ बिलकुल बेअसर थीं।

22 जनवरी, 1661 की रात के पहले हिस्से में ज़िन्दगी की आस बाकी न रही—होंठों तक आ गए दम वाले शाहजहाँ ने अपने होश व हवास सँभालकर अपनी बीवियों को, जो उस वक्त ज़िन्दा थीं, अपने पास बुला लिया। अकबराबादी

महल और फ़तहपुरी महल भी उनमें शामिल थीं ।]

शाहजहाँ : (**औरतों को तसल्ली देते हुए**) रोओ नहीं—तुम्हारे ये आँसू खुदा के अटल फ़ैसले क्रो नहीं रोक सकते । सब्र करो—खुदा का शुक्र करो कि वह हमें इस दुःख-भरी दुनिया से निज़ात दिला रहा है ।

[सब औरतें रोती हैं ।]

शाहजहाँ : जहाँआरा—जहाँआरा—

जहाँआरा : इरशाद अब्बाजी !

शाहजहाँ : बेटा, तुमने हमारी बहुत खिदमत की है । खुदा तुमको इसका सिला दे । देखो, हम वसीयत करते हैं कि अपनी सौतेली बहन हुनरबानो को भूल मत जाना । हमें यकीन है कि तुम इसे नहीं भूलोगी । लेकिन अपनी तसल्ली के लिए हम तुम्हें कह रहे हैं—और देखो—महल की दूसरी औरतें, जो हमारी मौत के बाद लावारिस हो जाएँगी, बेटा—इनकी परवरिश का ज़रूर खयाल रहे—मुराद के यतीम बच्चों का जिस तरह तुमने खयाल रखा है उसी तरह इन लावारिसों का भी खयाल रहे । सुन रही हो बिटिया !

जहाँआरा : (**हिचकियाँ लेकर**) सुन रही हूँ अब्बाजी ।

शाहजहाँ : आओ, हमारे पास बैठो—हम तुम्हारे सिर पर आखिरी बार हाथ फेरना चाहते हैं ।

[जहाआरा पलंग पर बैठ जाती है और शाहजहाँ उसके सिर पर आखिरी बार अपना हाथ मुहब्बत से फेरता है ।]

शाहजहाँ : (**अकबराबादी और फ़तहपुरी महल से कहता है**) इस बच्ची ने हमारी बहुत खिदमत की है ।

[अकबरावादी और फ़तहपुरी महल ज़्यादा रोना शुरू कर देती हैं ।]

शाहजहाँ : हौसला रखो—ज़िन्दगी और मौत नयी चीज़ें नहीं हैं । जो ज़िन्दा है—एक दिन ज़रूर मरेगा—हौसला रखो—जहाँआरा—जाओ बेटा ! ये सामने वाली खिड़की के पट खोल दो ।'''हम आखिरी बार अर्ज़मंद बानो की आरामगाह देखना चाहते हैं ।

[जहाँआरा खिड़की खोलती है ।]

शाहजहाँ : (**खिड़की में से ताजमहल को देखता है**) काश, कि हम अपनी ज़िन्दगी के तमाम हसीन खयालों को इसी तरह हमेशा के लिए ज़िन्दा रख पाते—कितना खूबसूरत रोज़ा है—अर्ज़मन्द बानो ज़रूर मुतमुइन होगी—आह !

[उसका नाम लेते ही सम्मन बुर्ज फिर से आबाद हो गया है—जमना की लहरें फिर से उठने लगी हैं—शाहजहाँ फिर उन्हीं दिलफ़रेब लमहों में साँस लेने लगा । साँसें उखड़ जाती हैं ।]

शाहजहाँ : अश्सहदान ला इल्ला इल्ला अल्ला मुहम्मद रसूल अल्लाह'''अय मेरे खुदा, दुनिया और परलोक दोनों में मुझ पर रहम कर और दोज़ख की आग से बचा ।

[दुआ खत्म होने के बाद शहाबुद्दीन शाहजहाँ, जिसने ताजमहल का तसव्वुर किया था, हमेशा के लिए सो गया । रात के साढ़े दस बजे थे । वह लम्बे-चौड़े पलंग पर ख्वाब देख रहा था । खिड़की में से ताजमहल नज़र आ रहा था ।

उस चाँदनी की फुहार में वह बिलकुल एक ख्वाब-सा मालूम होता था, जो सम्मन बुर्ज में सोने वाला देखता हो ।

शाहजहाँ की वसीयत थी कि उसे ताजमहल में अपनी आराम जाँ (ताजमहल) के पास दफ़न किया जाए । चुनांचे जनाज़ा मुमताज महल के मज़ार में ले जाया गया और उसके अर्ज़ी जिस्म को अर्ज़मंद बानो (मुमताज महल) के पहलू में सदा के लिए सुला दिया गया ।]

जर्नलिस्ट

पात्र

अब्दुलबारी
अखबार का मालिक
बारी
कातिब
मैनेजर
चपरासी
जुम्मा
प्रोपराइटर
चौधरी
शराबी 1, 2, 3
छज्जूमल

[बहुत-से लड़के पहाड़े याद कर रहे हैं—एक शोर मचा है—बीच-बीच में मेज़ पर बेंत मारने की आवाज़ भी आती है—आहिस्ता-आहिस्ता यह शोर फ़ेड हो जाए।]

अब्दुलबारी : क्या वाहियातपन है—यह सिवाय ड्योढ़े, ढाये, ओंचे, पोंचे और ढोंचे के पहाड़े क्या बकवास है—एक ढाया ढाया, दो ढाया पाँच—यानी अगर किसी को यह मालूम नहीं होगा तो कौन-सी आफ़त आ जाएगी—और मेरी बेवकूफ़ी देखिए कि पाँच कम सौ लड़कों को छड़ी के ज़ोर से यह बकवास याद कराता रहता हूँ—गोया कि इसके बगैर ज़हनी तरक्की हो ही नहीं सकती। (हँसता है) स्कूल-मास्टर भी अजब चीज़ होते हैं—यहाँ इस स्कूल में पाँच कम सौ लड़कों का मैं ज़बरदस्ती बाप बन बैठा हूँ। इनको सिखाता हूँ कि देखो खुश्की के उस टुकड़े को, जिसके चारों तरफ़ पानी हो, 'टापू' कहते हैं और 'आबनाय' पानी के उस टुकड़े को कहते हैं जो खुश्की के दो टुकड़ों को आपस में मिला दे—यह सबक देकर मैं समझता हूँ कि उनके मुस्तकबिल की तमाम दीवारें उठाकर मैंने अपने कंधों पर धर ली हैं—साल के तीन सौ पैंसठ दिन, जिनमें से डेढ़ महीना गर्मियों की छुट्टी का निकल जाता है, मैं उनकी बेहतरी सोचता रहता हूँ—उन बच्चों की बेहतरी, जो साल के बाद मेरी आँखों से ओझल हो जाते हैं—तख्तियाँ, किताबें, स्लेटें, गंडेरियों

और मूंगफली के छिलके रह जाते हैं और वे दुनिया के फैलाव में न जाने कहाँ गायब हो जाते हैं—और यह इलाका (हँसता है) ···सुमाल में भंगियों का तकिया—जनूब में पालवानों का अखाड़ा—मशरिक मे गन्दा नाला और मगरिब में हैडमास्टर साहब का घर। (हँसता है) यह इलाका भी खूब है। लानत है ऐसे पेशे पर—अगर अपने खयालों का प्रचार ही करना है—अगर दूसरों को सबक ही देना है तो क्यों न जर्नलिज़्म अख्तियार कर ली जाए—आज जो कुछ लिखा, कल छपकर सामने आ गया, हर शख्स के हाथ में अखबार मौजूद है—वा अल्लाह, कितनी सनसनी फैलाने वाली चीज़ है—और फिर रोब और वकार अलग। (अन्तराल) मैं इस शहर से भी तंग आ गया हूँ। किसी बाज़ार में जाओ, सामने घण्टाघर नज़र आएगा। जाने इसमें क्या खूबसूरती देखी गयी है कि हर बाज़ार घण्टाघर का रुख करे—शहर और स्कूल दोनों को सलाम···

× × ×

[रेलगाड़ी की गड़गड़ाहट—कुछ क्षणों के बाद गड़गड़ाहट प्रिंटिंग प्रेस की आवाज़ में बदल दी जाए।]

[नोट : प्रिंटिंग प्रेस की आवाज़ पृष्ठभूमि में चली जाए—यानी बिलकुल धीमी हो जाए। इस पर नीचे का डायलॉग सुपर इम्पोज़ किया जाए।]

अखबार का मालिक : मुझे एक अर्से से एक अच्छे एडीटर की तलाश थी जो मेरे अखबार 'खलक' को कामयाबी के साथ चला सके। यह मेरी खुशकिस्मती है कि बैठे-बिठाये मुझे आप जैसा मेहनती और लायक आदमी मिल गया—आपके काम से मैं बेहद खुश हूँ।

बारी : आपकी कद्र-अफ़ज़ाई का बहुत-बहुत शुक्रिया—दरअसल मुझे जर्नलिज़्म से बहुत दिलचस्पी है। (अन्तराल) अब आपने मेरा काम देख लिया। तनख्वाह का फ़ैसला हो जाए तो···

अखबार का मालिक : आप इसके बारे में कोई फ़िक्र न करें···होटल में आपके खाने-पीने का बन्दोबस्त मैंने कर दिया है—दूसरी ज़रूरतों के लिए जब भी आपको रुपये की ज़रूरत हो, आप बेतकल्लुफ़ मुझसे ले सकते हैं—आप तसल्ली रखें।

बारी : जी, मुझे इत्मीनान है।

× × ×

[प्रिंटिंग प्रेस की गड़गड़ाहट पृष्ठभूमि से निकलकर ऊपर आ जाए और ऊंची हो जाए। कुछ क्षणों तक यह शोर जारी रहे। इस शोर पर नीचे के टुकड़े एक हजूम के रूप में सुपर इम्पोज़ किए जायें—]

1. एक ज्योतिषी की पेशीनगोई—सन् 1936 में कई भूचाल आएँगे।
2. हिन्दुस्तान की इंडस्ट्रियल तरक्की की उम्मीद।
3. लीग ऑफ नेशन्स के जलसे में गर्मागर्म बहसें।
4. हिन्दुस्तान को प्रॉविंशियल अनाटोमी अप्रैल में मिल जाएगी।

5. शहर में सफ़ाई के इन्तज़ाम ।
6. शुमाली भारत में तूफ़ान और बाढ़ ।

1. असेम्बली के जलसे में 'रोज़नामा खलक' की नुक्ताचीनी का ज़िक्र ।
2. यूरोप के आसमानों पर जंग के ज़बरदस्त बादल ।
3. हिन्दुस्तान क्या चाहता है ?
4. रूस में छतरीबाज़ फ़ौज तैयार की जा रही है ।
5. जर्मनी की जंगी तैयारियाँ—समझौते का विरोध ।
6. सन् 1938 के आते-आते यूरोप में नई आफ़तों का खतरा ।

[**नोट :** प्रिंटिंग प्रेस की आवाज़ फ़ौरन बन्द हो जाए और नीचे के डायलॉग एकदम शुरू हों ।]

कातिब : बारी साहब, आपकी यह स्लिप तो खत्म हो गयी, और लाइए ।

बारी : (**लिखते हुए**) अफ़सोस है कि अभी तक मुल्क की इन ज़रूरतों पर गौर नहीं किया गया—(**कागज़ की खड़खड़ाहट**) लो भई, यह दूसरी स्लिप लो ।

दूसरा कातिब : (**आवाज़ दूर से आए**) ···अजी मौलाना, पहले सफ़े की सुर्खियाँ तो बना दीजिए । मैं एक घण्टे से बेकार बैठा हूँ ।

बारी : भई, मुझे यह लीडर तो पूरी कर लेने दो—अच्छा, अभी तुम यह चार कालमी सुर्खी लिखो ।

दूसरा कातिब : फ़रमाइए ।

बारी : यूरोप की सयासी स्टेज पर जर्मनी के नाज़ी मदारी का हैरतअंगेज़ खेल ।

[टेलीफ़ोन की घण्टी बजती है ।]

बारी : (**चोंगा उठाने की आवाज़**) ···फ़रमाइए—मैं ही 'खलक' का एडीटर हूँ—जी हाँ, आपका खत मिल गया था—मुझे याद है—आपने म्युनिसिपल कमेटी में नल के बारे में कुछ शिकायतें पेश की थीं—छप जाएगा—आप तसल्ली रखें । बहुत जल्द आपकी यह शिकायत छाप दी जाएगी—आदाबअर्ज़ ।

चपरासी : यह लीजिए—सर्विस आ गयी ।

तीसरा कातिब : बारी साहब, बस, अब जल्दी-जल्दी इन खबरों का तर्जुमा हो जाए ।

मैनेजर : बारी साहब, अभी तक प्रेस में कापी क्यों नहीं गयी !

बारी : कौन-सी कापी ?

मैनेजर : तीसरी कापी—चार बजे तक यह प्रेस में पहुँच जानी चाहिए थी ।

बारी : बिलकुल तैयार है । सिर्फ़ इसको जोड़ना बाकी रह गया है ।

मैनेजर : तो जल्दी से पहले इसे जोड़ दीजिए—आज कापी जोड़ने वाला नहीं आया ।

बारी : बहुत अच्छा । मैं अभी जोड़ देता हूँ ।

[टेलीफ़ोन की घण्टी बजती है ।]

बारी : (**टेलीफ़ोन का चोंगा उठाकर**) भई, मैं इस टेलीफ़ोन से तंग आ गया हूँ—मुझे अपना मेज़ अन्दर ले जाना पड़ेगा।

[अन्तराल]

बारी : हैलो—रोज़नामा खलक—जी हाँ—नहीं, नहीं, मैंने आपसे कहा—मेज़ की बात मैं दफ़्तर में किसी और से कर रहा था—फ़रमाइए ?

कातिब : बारी साहब, यह क्या लिखा है ?

बारी : जहन्नुम से—बोल रहा हूँ जनाब।

[अन्तराल]

बारी : माफ़ कीजिएगा—मैं—मैं कातिब को मज़मून बता रहा था। यानी कातिब से कह रहा था—हाँ भई अली मुहम्मद—यह जहन्नुम से हैं—हाँ, तो फ़रमाइए—'रोज़नामा खलक' ही है—फ़रमाइए—

[अन्तराल]

बारी : आप मिलना चाहते हैं तो दफ़्तर में तशरीफ़ ले आइए—टेलीफ़ोन पर कैसे मुलाकात हो सकती है ?

[अन्तराल]

बारी : बड़े शौक से बात कीजिए—मैं ही खलक का एडीटर हूँ।

[अन्तराल]

बारी : आदाब अर्ज़ है—फ़रमाइये

[अन्तराल]

बारी : जी नहीं, इसमें तकलीफ़ की क्या बात है ? आप पूछिये, क्या पूछना है ?

[अन्तराल]

बारी : क्या कहा ?

[अन्तराल]

बारी : क्या कहा ?

[अन्तराल]

बारी : (**भन्नाकर**) आज शाम को कलकत्ता मेल कब छूटेगा—यही पूछते हैं न आप ?

[अन्तराल]

बारी : मैं—मैं—एडीटर हूँ। रेलवे का टाइम टेबल नहीं हूँ—सुना आपने—(**टेलीफ़ोन का चोंगा रखने की आवाज़**)···अजब वाहियात आदमी है—पूछता है, कलकत्ता मेल कब छूटेगा—कल पूछेगा, टाँगों का अड्डा कहाँ है।

[सब कातिब हँसते हैं।]

मैनेजर : ये चार मज़मून प्रोपराइटर साहब ने भेजे हैं। सब आज की खबर में निकल जाने चाहिए। आप इनकी ज़ुबान वगैरह दुरुस्त कर लीजिएगा।

बारी : मैं न इनकी ज़ुबान दुरुस्त करूँगा न इनका वगैरह ठीक करूँगा। आप प्रोपराइटर साहब से कह दीजिएगा कि मैं एडीटर हूँ, मशीन नहीं हूँ। और फिर ये मज़मून सब-के-सब वाहियात हैं। मैं अपने परचे को ज़ाती मामलों का परचा नहीं बनाना चाहता। अगर प्रोपराइटर साहब के किसी दोस्त को यह शिकायत है कि उनके लड़के के कान मास्टर साहब ने बड़े ज़ोर से ऐंठे हैं तो मैं इसे सयासी रंग में पेश करने के लिए हर्गिज़ तैयार नहीं—समझे आप—और फिर—और फिर—चार वर्ष हो गए हैं मुझे यहाँ काम करते हुए, पूरी तनख्वाह मुझे आज तक वसूल नहीं हुई—यह अखबार है या क्या है—जाइए, आप उनसे कह दीजिए कि मज़मून नहीं छपेंगे।

मैनेजर : बहुत बेहतर।

बारी : हाँ भई, तो अब मुझे क्या करना है—तुम्हें लीडर की आखिरी स्लिप देनी है और तुम्हें पहले सफ़े की सुर्खियाँ लिखकर देनी हैं।

तीसरा : और मुझे खबरों का तर्जुमा देना है।

बारी : और प्रोपराइटर साहब को अपनी मोमपाई निकालकर देनी है—(अन्तराल) लाहौल विला—यह जुम्मा अभी तक क्यों नहीं आया ? मैंने उसे सिगरेट लाने के लिए भेजा था।

जुम्मा : बारी साहब, वोह सिगरेट नहीं देता।

बारी : क्या कहा—सिगरेट नहीं देता—सिगरेट क्यों नहीं देता ?

जुम्मा : कहता है, मौलाना से कहो, पहला हिसाब तो साफ़ करें।

बारी : (भन्नाकर) बकवास करता है—(अन्तराल) नहीं, ठीक कहता है—मुझे भी ऐसा ही कहना चाहिए। अभी-अभी कहना चाहिए।

[प्रेस की गड़गड़ाहट—कुछ क्षणों के बाद यह आवाज़ फ़ेड हो जाए।]

बारी : जब तक आप मेरा पहला हिसाब साफ़ न करेंगे मैं बिलकुल काम नहीं करूँगा।

प्रोपराइटर : (नम्रता से) नाराज़ी की वजह ?

बारी : चार साल हो गए मुझे यहाँ आपके अखबार में अपने दिमाग का तेल निकालते हुए—पूरे चार बरस हो गए हैं मुझे यहाँ दिन-रात काम करते हुए—इसका मुआवज़ा चूंकि मुझे कुछ नहीं मिला इसलिए मैं काम से इन्कार करता हूँ—मैं आपसे नाराज़ नहीं हूँ—मेरी नाराज़ी आपका कुछ नहीं बिगाड़ सकती, इसलिए कि आप दिमाग की बजाय लोहे की मशीनों से सोचते हैं—आप मालिक हैं, मैं गुलाम हूँ—बस, इसी अहसास ने मुझे आज इस बात पर मजबूर किया है—सिगरेट वाले को जब दस दिन के पैसे न मिले तो उसने आगे उधार देना बन्द कर दिया—मैं लगातार चार वर्ष से आपको उधार देता चला आया हूँ—लेकिन अब मुझसे नहीं दिया जाएगा।

प्रोपराइटर : बारी साहब, आपकी शिकायत ठीक है। मगर क्या आपने मेरी मुश्किलों पर भी गौर किया ? इस अखबार से मुझे क्या फ़ायदा है—मैं तो सिर्फ़ कौम की खिदमत कर रहा हूँ।

बारी : आप कौम की खिदमत करते हैं। मैं कौम की, अखबार की और आपकी खिदमत करता हूँ। लेकिन इस खिदमत का मुआवज़ा मुझे कभी वक्त पर नहीं मिलता—बल्कि यूं कहिए कि मिलता ही नहीं—चार महीने में आपने मुझे सिर्फ़ सोलह रुपये दिए हैं—खुदा का खौफ़ कीजिए, मैं इन्सान हूँ पत्थर नहीं हूँ—मुझे भूख भी लगती है—कभी-कभी मिठाई खाने को भी जी चाहता है। मुझे आपने इस अखबार का एडीटर बनाया था, संन्यासी या साधु नहीं बनाया था जो मैंने दुनिया त्याग दी हो।

प्रोपराइटर : रुपये-पैसे की मुश्किलें मुझे भी हैं।

बारी : माफ़ कीजिएगा, यह बिलकुल गलत है। अभी कल आपने अपने बच्चों के लिए रेडियो खरीदा है—नई आबादी में आपकी तीसरी कोठी बन रही है—आप—आप—मगर मैं ज़्यादा बातें करना नहीं चाहता।

प्रोपराइटर : आप क्या चाहते हैं ?

बारी : मैं चाहता हूँ कि मेरा हिसाब चुका दिया जाए—मैं बाज़ आया एडीटरी से।

प्रोपराइटर : आप किसी और अखबार में जाना चाहते हैं ?

बारी : जी नहीं। अखबारी ज़िन्दगी को अब मैं दूर से सलाम कहूँगा।

प्रोपराइटर : तो अब आप क्या करेंगे ?

बारी : मैं घास छीलना शुरू करूँगा लेकिन किसी अखबार में काम नहीं करूँगा।

प्रोपराइटर : मगर अफ़सोस है कि मैं इस वक्त आपका हिसाब नहीं चुका सकता।

बारी : मुझे आप दो महीने की तनख्वाह दे दीजिए। बकाया महीनों की तनख्वाह मैं आपसे नहीं माँगता।

प्रोपराइटर : आपकी मेहरबानी है—मेरे पास इस वक्त इतने रुपये भी नहीं होंगे।

बारी : आप कितने में फ़ैसला करना चाहते हैं, फ़रमाइये ?

प्रोपराइटर : मेरे पास इस वक्त अस्सी रुपये हैं।

बारी : लाइए, अस्सी ही लाइए।

प्रोपराइटर : कम-से-कम पाँच तो मेरे पास रहने दीजिए।

बारी : पाँच आप अपने पास रखिए—लाइए, पचहत्तर ही लाइए।

[प्रेस की गड़गड़ाहट शुरू हो—कुछ क्षणों के बाद यह आवाज़ चारा काटने वाली मशीन की आवाज़ में बदल जाए।]

बारी : अस्सलाम अलेकम।

चौधरी : वालेकम-अस्सलाम—फ़रमाइए ?

बारी : एक-दो बार इधर से गुज़रा था—आपसे मिलने की तबीयत चाही। आज आ गया।

चौधरी : बैठिए—हुक्का पीजिए।

बारी : (कश लेकर) तम्बाकू तो बहुत अच्छा है।

चौधरी : आप बनाता हूँ। बाज़ार के तम्बाकू से मुझे तसल्ली नहीं होती—(अन्तराल —कश लेकर) फ़रमाइए, आप क्या काम करते हैं ?

बारी : आजकल तो बेकार हूँ। पहले अखबार में काम किया करता था।

चौधरी : (हँसकर) तो भई, तुम खतरनाक आदमी हुए—क्यों छोड़ दिया यह काम ?

बारी : पसन्द नहीं आया—काम ज़्यादा करना पड़ता था और पैसे कम मिलते थे।

चौधरी : अमाँ, हमें क्यों बनाते हो उस्ताद—अखबार वालों के पास तो दौलत के अम्बार लगे होते हैं—कलम हिलाया और हज़ारों ऐंठ लिए।

बारी : दोस्त, अखबार का मालिक मैं नहीं था, कोई और था—अच्छा, तुम यह बताओ, तुम्हारा गुज़ारा कैसे हो रहा है ?

चौधरी : बड़े मज़े में गुज़रती है—यह चारा काटने वाली मशीन लगा रखी है। अकेली जान हूँ। रोज़ की कोई डेढ़-दो रुपये की आमदन हो जाती है—सारा दिन यहाँ दुकान पर गुज़ारता हूँ। शाम को ठेके पर चला जाता हूँ और गप्पें हाँककर फिर टहलता-टहलता यहाँ आ जाता हूँ। गर्मियों में दुकान के बाहर छिड़काव करके सो जाता हूँ। सर्दियों में अन्दर घास के पास चारपाई बिछा लेता हूँ।

बारी : तुम्हारी ज़िन्दगी काबिले-रश्क है—वल्लाह, चौधरी, बड़े खुशकिस्मत इन्सान हो—किसी किस्म की फ़िक्र नहीं। आराम से ज़िन्दगी गुज़ार रहे हो—पर यह तुम्हें चारा काटने वाली मशीन लगाने का खयाल कैसे आया ?—यानी तुमने कोई और काम क्यों न शुरू कर दिया ?

चौधरी : मालूम नहीं, कैसे आया—बस, आ ही गया और मैंने झट से एक मशीन खरीद ली—अब बैठा मज़े कर रहा हूँ।

बारी : मैं भी यही काम शुरू करता हूँ।

चौधरी : यह क्या कहते हो तुम—यह तो वही हुआ—पढ़ें फ़ारसी, बेचें तेल।

बारी : (हँसता है)···अजब तेरी कुदरत, अजब तेरे खेल।

× × ×

[चारा काटने वाली मशीन की आवाज़—पहले ऊँची, बाद में आहिस्ता-आहिस्ता। जब आहिस्ता हो जाए तो नीचे का टुकड़ा उस पर सुपर इम्पोज़ किया जाए।]

बारी : (हँसता है)···रोज़ डेढ़-दो रुपये की आमदन हो जाती है—सारा दिन यहाँ दुकान पर गुज़ारता हूँ—शाम को ठेके पर चला जाता हूँ और गप्पें हाँककर फिर टहलता-टहलता यहाँ आ जाता हूँ—न खबरें तर्जुमा करनी पड़ती हैं न कापी जोड़नी पड़ती है—न टेलीफ़ोन की बक-बक न शिकायतें। मज़मूनों की बकवास—न कातिब न रायटर की सर्विस—वल्लाह, क्या गुर बतलाया है मेरे दोस्त ने—(हँसता है) गर्मियों में दुकान के बाहर छिड़काव करके सो जाता हूँ। सर्दियाँ आएँगी तो अन्दर घास के पास चारपाई बिछा लिया करूँगा—कितनी अच्छी

ज़िन्दगी है—मेरी तो यह मर्ज़ी है कि सब एडीटरों को, जो अखबारों में अपनी ज़िन्दगी तबाह कर रहे हैं, यह गुर बता दूं—अपने-अपने शहर में ऐसी मशीनें लगवा लें और मुझे दुआएँ दें··· (हँसता है।)

× × ×

[मशीन की आवाज़ आहिस्ता-आहिस्ता शराबखाने के शोर में बदल जाए।]

एक शराबी : (लहर में आकर) अमाँ, हमने जो खर्च कर डाला वह किसी को पैदा करना भी नसीब न हुआ होगा—लाखों कमाए, करोड़ों उड़ा दिए—किसी के देने में न लेने में।

दूसरा : वाह भई उस्ताद, क्यों न हो—अच्छी गप्पें हैं। बाबा तो आपके उम्र-भर फलूदा बेचा किए, दादा जूते गाँठते बूढ़े हुए। आपने कमाया क्या और लुटाया क्या ?

पहला : निरे गावदी हो। अरे मियाँ, गप्पें उड़ाने से भी क्या हम गए-गुज़रे—भई, खैर, बैठो या जाओ, मगर खुदा के वास्ते हत्थे पर न टोको—कहाँ गया लाला छज्जूमल—अय लाला !

छज्जूमल : बोल, तेरे पास ही तो खड़ा हूँ।

पहला : तू मेरा दाता है—दाता, तेरी दुकान पर सोना बरसे—हाँ, ऐसी पिला कि खूब सरूर चढ़े—पीते ही ले उड़े—चुल्लू में उल्लू हो जाएँ—बारी—अय बारी—आज तू न पीए तो हमारा खून पीए—आ—इधर मेरे पास बैठ।

तीसरा शराबी : हाँ रहे—रहे—एक बोतल रहे—तुमने सुना नहीं—शराब पीकर आग में फाँद पड़े तो आग गुल हो जाए—और जो समन्दर में कूदे तो इन्सान से पुल हो जाए।

बारी : और ज़्यादा पी जाए तो कुल हो जाए—(हँसता है।)

[बारी के हँसने पर बाकी शराबी भी हँसना शुरू करते हैं—थोड़ी देर के लिए एक तूफ़ान-सा मच जाता है।]

पहला शराबी : माँ कसम, क्या बात कही है—ज़्यादा पी जाए तो कुल हो जाए—भई, आदमी बड़े समझदार हो—

दूसरा शराबी : कुर्बान जाऊं मैं इस लाल परी के—

बारी : लाला छज्जूमल—अय लाला छज्जूमल—एक अद्धा भेज दे—आज फिर ऐसा नशा आए कि तबीयत साफ़ हो जाए—आज की सारी कमाई तेरी सन्दूकची में चली जाए।

दूसरा शराबी : वाह मेरे शेर !

[एक शराबी गाना शुरू करता है।]

पहला शराबी : ब्या, ब्वाय !

सारे : यस सर, यस सर।

पहला शराबी : दे दे आला, भर-भर प्याला, पीने वाला हो मतवाला।

सारे : बादल बरसे काला-काला, छूला आँखों में गुल लाला।
दूसरा शराबी : कैसा छाया है हरयाला एक्शा नम्बर वन का बहा दे नाला।
सारे : न रखना बाकी साकी हो तेरा बोलबाला।
बारी : खड़े हैं तेरे दर पै लिए पैमाना।
सारे : पिला दे मेरे साकी आबाद मयखाना।
दूसरा शराबी : दुनिया से क्या ले जाना, पीना खाना, मौज उड़ाना।

[इस कोरस के बाद सब खुश होकर हँसते और शोर मचाते हैं।]

बारी : (जी भरकर हँसने के बाद)···वा अल्लाह, क्या दिलचस्प ज़िन्दगी है। सारे दुःख उड़नछू हो गए हैं—(अन्तराल)···मैं खुश हूँ—मैं बहुत खुश हूँ।
दूसरा शराबी : तू खुश है तो मैं भी खुश हूँ—मैं खुश हूँ तो तू भी खुश है।
पहला शराबी : और क्या हम खुश नहीं ?
दूसरा शराबी : तू भी खुश है।
एक आदमी : भई कुछ सुना तुमने ? जंग छिड़ गयी है।
दूसरा आदमी : (बड़ी दिलचस्पी लेकर) सचमुच ?
पहला आदमी : हाँ हाँ, आज के अखबार में आ गया है। जर्मनी ने अंग्रेज़ों पर धावा बोल दिया है। कहते हैं, अब की बड़े घमासान की जंग होगी।
दूसरा आदमी : तो ? भर्ती थोड़े ही दिनों में शुरू हो जाएगी।
दूसरा शराबी : तू खुश है तो मैं भी खुश हूँ। मैं खुश हूँ तो तू भी खुश है। तू खुश है तो मैं भी खुश हूँ। क्यों ?
बारी : हाँ, हाँ, तू बहुत खुश है—(अपने-आप से) जंग छिड़ गयी।
दूसरा शराबी : छिड़ने दे—आग लगे दुनिया को—तू खुश है तो मैं भी खुश हूँ—मैं खुश हूँ तो तू भी खुश है। (हँसता है।)
बारी : जर्मनी ने लड़ाई शुरू कर दी। मुझे पहले ही इस बात का खटका था। मैंने 'खलक' में आज से दो वर्ष पहले पेशीनगोई की थी।
दूसरा शराबी : पेशीनगोई की थी—अमाँ छोड़—पेशीनगोई की थी। ले देख मेरा हाथ—बता, क्या लिखा है ?
बारी : भई, तुम्हें मज़ाक सूझता है—ज़रा सुनो तो क्या बातें हो रही हैं—(अपने-आप से)···मेरा कयाश बिलकुल दुरुस्त निकला—जंग अटल थी। चैम्बरलेन की कोशिशें आखिर नाकाम होनी ही थीं।
दूसरा शराबी : बारी—यह तुझे आज क्या हो गया है—आज तू कैसी बहकी-बहकी बातें कर रहा है—कहीं ज़्यादा तो नहीं पी गया ?
पहला शराबी : भई, अगर हिन्दुस्तान में जंग छिड़ गयी तो आफ़त ही आ जाएगी।
दूसरा शराबी : तू डरता क्यों है—जंग छिड़ती है तो छिड़े—माँ कसम, मैदान में वो जलवे दिखाऊँ कि···
पहला शराबी : चोंच सँभाल बे—बड़ा आया है जलवे दिखाने वाला—बहुत बढ़-बढ़ के

बातें न बना नहीं तो मारते-मारते उल्लू कर दूंगा।

दूसरा शराबी : अबे तेरे ऐसे दर्ज़ी मेरी जेब में पड़े रहते हैं।

पहला शराबी : जी चाहता है लकड़ी खोंस दूं तेरे हलक में।

बारी : अर्रे भई, लड़ो नहीं—खामोश बैठे रहो—कुछ सोचो। यूरोप में जंग शुरू हो गयी है। तुम जानते नहीं यह ऐसी जंग है जो दुनिया का नक्शा बदल देगी।

पहला शराबी : जाने क्या वाही-तबाही बकते हो। हम कहाँ लड़ते हैं—अच्छा भई सफ़दर, तुम ही बताओ, क्या हम लड़ रहे थे ?

दूसरा शराबी : नहीं तो—कौन कहता है हम लड़ रहे थे—तेरी कसम आगा, यह बटेर बड़ा ही अनमोल है। इसने उस दिन मेरी सात पीढ़ियों पर अहसान किया—जो कहीं घट जाता तो बन्दा जंगल की राह लेता—मियाँ, जग में आबरू ही आबरू तो है—क्यों आगा—तेरी कसम, चोंच पकड़कर ऐसी-ऐसी मरोड़ियाँ दीं कि जान मुहम्मद का बटेर उठ ही तो भागा—पाली-भर में आवाज़ गूँजने लगी—हो हो हो—वह मारा है—वाह मेरे शेर ! खूब फिरा—हाँ बेटे, दे बढ़कर एक लात—

बारी : खामोश—यह तुमने क्या बकवास शुरू कर दी—तुम लोग वाकई बिलकुल ज़ाहिल हो—यूरोप में एक ऐसी जंग शुरू हुई है जो कई मुल्कों को दुनिया के नक्शे से हमेशा के लिए मिटा देगी—लाखों बल्कि करोड़ों आदमी हलाक हो जाएँगे—दुनिया में एक तूफ़ान मच जाएगा और तुम लोग बटेरों की लड़ाई का हाल बयान कर रहे हो—आखिर तुम्हें क्या हो गया है ?

पहला शराबी : क्या बकता है यह !

दूसरा शराबी : (**कहकहा लगाकर**) मैं तो कुछ न समझा—(**अन्तराल**) बारी—यह आज तू कैसी बातें ले बैठा है।

पहला शराबी : ज्यादा पी गया है—दिमाग को चढ़ गई है।

दूसरा शराबी : बड़ी नामुराद चीज़ है।

बारी : तुम बकवास करते हो—मैं बिलकुल होश में हूँ। तुम बेहोश हो रहे हो। मैं जो कुछ इस वक्त सोच रहा हूँ, तुम्हारा फ़लक भी नहीं सोच सकता। तुम सब-के-सब अनपढ़, बेवकूफ़ और ज़ाहिल हो।

पहला शराबी : अरे वाह रे मेरे मौलवी !

बारी : तुम मेरी बातों का मज़ाक न उड़ाओ (**हँसता है**) मगर यह तुम्हारा कसूर नहीं, कसूर मेरा अपना है। मैंने अब तक अपनी असलियत तुमसे छुपा रखी है। तुम नहीं जानते, मैं कौन हूं और सियासी दुनिया में मेरी कितनी कद्र है।

पहला शराबी : मियाँ, तुम रुस्तम हो। लो, बस अब जाने दो। कोई और बात करो।

बारी : तुम्हें जब तक मेरी असली शख्सियत मालूम नहीं होगी, तुम मेरा मज़ाक उड़ाते रहोगे। जानते हो, मैं कौन हूँ ? मेरा नाम अब्दुलबारी है—मौला अब्दुलबारी—रोज़नामा 'खलक' का एडीटर। (**सब कहकहे बुलन्द करते हैं।**)

पहला शराबी : (**बनावटी गम्भीरता के साथ**) अच्छा मौलाना, तो फ़रमाइए, हमारे

लिए क्या हुक्म है ?

बारी : तुम जानते हो यूरोप की इस दूसरी जंग के कारण क्या हैं—लो, सुनो मुझसे। इस दूसरी जंग का बीज पहली बड़ी जंग ने बोया है जो सन् 14 से लेकर सन् 1918 तक जारी रही—सुलहनामा और समझौता जो सन् 1919 में लिखा गया, इस ताजा जंग का कारण है। जर्मनी ने अपनी पहली हार के फ़ौरन बाद ही अपनी तलवारों को इस ताज़ा जंग के लिए सान पर लगाना शुरू कर दिया था। यह जंग सिर्फ़ इसलिए लड़ी जा रही है कि जर्मनी यूरोप पर अपनी हुकूमत चाहता है। तुमने हिटलर की किताब नहीं पढ़ी। उसमें उसने साफ़-साफ़ लिखा है कि जर्मन आला कौम के लोग हैं, इसलिए दूसरी नस्ल के आदमियों पर इन्हें हुकूमत करने का हक हासिल है। यह जंग बहुत खौफ़नाक है, बहुत भयानक है—मैं जब उसके नतीजों का खयाल करता हूँ तो काँप उठता हूँ—यह जंग यूरोप में एक नहीं, सैकड़ों ज़लज़ले पैदा करेगी। हज़ारों तूफ़ान आएँगे—बड़े-बड़े खूबसूरत शहर मलबे का ढेर बन जाएँगे—हज़ारों खानदान बेघर और बेदर हो जाएँगे—मैं लिखना चाहता हूँ—मैं इस भयावह जंग के बारे में लिखना चाहता हूँ।

दूसरा शराबी : (अपने साथी से) इसके दिमाग को चढ़ गई है।

बारी : पहली जंग से लेकर इस जंग के शुरू तक वाकयात को अगर हम अपने सामने रखें तो यह जानकर बड़ा दुःख होता है कि ताज़ीबयाफ़्ता दुनिया ज़िल्लत की दलदल में धँसती चली गई है—साइंस की तरक्की जारी रही है लेकिन इखलाकी ज़िम्मेदारी का अहसास कम होता चला गया है। इंसान जहाँ था वहीं का वहीं खड़ा है। नसली भेद और मज़हबी नफ़रत बढ़ती गई है—नतीजा हमारे सामने है। पहले जंगनुमा सुलह, फिर सुलहनुमा जंग। मैं पूछता हूँ, आखिर यह हमारी ताज़ीबयाफ़्ता दुनिया किधर जा रही है। क्या हम फिर ज़हालत के ज़माने में वापस जा रहे हैं ? क्या एक बार फिर इन्सान का खून पानी से सस्ता बिकेगा ? क्या फिर हमारा गोश्त-पोस्त दूसरी चीज़ों की तरह बाज़ार में बेचा जाएगा ? क्या होने वाला है ? कोई मुझे बताए क्या होने वाला है ? बेअसूली ने सैकड़ों असूल और फ़िरकापरस्ती ने हज़ारों जमायतें पैदा कर दी हैं। इन्सान इन्सान के खिलाफ़, जाति जाति के विरोध में और मुल्क मुल्क के खिलाफ़ खड़ा है—यह है उन्नीसवीं सदी की शर्मनाक दास्तान।

पहला शराबी : बारी, मैं तुमसे एक बात कहूँ···

बारी : (गुस्से में) तुम—तुम—तुम सब वाहियात हो—शराबी—कबाबी—ज़ाहिल कहीं के।

दूसरा शराबी : (ज़ोर का कहकहा बुलन्द करता है) और तुम ठहरे बड़े नमाज़ी, बड़े परहेज़गार।

पहला शराबी : मैं कहता हूँ, इसको चढ़ गई है—इसके सिर पर ठण्डे पानी का एक घड़ा उँडेलो, तब होश आएगा इसे।

बारी : भई, अजब इन्सान हो—तुम मेरी बात क्यों नहीं मानते—खुदा की कसम, मैं

एडीटर हूँ—मेरी ऐनक अभी तक सुरक्षित पड़ी है—मेरे वे कपड़े भी मौजूद हैं—मुझे दुनिया की तमाम सियासत का पता है।

पहला शराबी : तुम घनचक्कर हो जी—जाने क्या वाही-तबाही बक रहे हो।

बारी : लानत हो तुम पर—(अन्तराल)—लाला छज्जूमल, एक अद्धा और भेज दो। मैं—मैं—

पहला शराबी : बोलो—बोलो, रुक क्यों गए ?

बारी : कुछ नहीं। मैं बेवकूफ़ हूँ।

दूसरा शराबी : उम्र में तुमने आज पहली बार सच बोला—लो, अब घर चले जाओ और सो जाओ—और न पीओ—आगा—चलो, इसको घर छोड़ आएँ।

बारी : मैं नहीं जाऊँगा।

पहला शराबी : तेरा बाप भी जाएगा—चलो आगा !

बारी : खबरदार जो मुझे किसी ने हाथ लगाया—बदतमीज़ कहीं के !

तीन-चार इकट्ठे : ज़्यादा गड़बड़ न करो वरना कोई हड्डी-पसली तुड़वा लोगे।

[खींच-घसीट की आवाज़]

[अन्तराल]

पहला शराबी : दुकान के अन्दर सोएगा या बाहर ?

दूसरा शराबी : अरे, तुम इससे क्या पूछते हो—चलो, जेब में से चाबी निकालकर ताला खोलो और इसको बन्द करो।

बारी : यह लो चाबी—तुम खुदा के लिए मेरी जानबख्शी करो।

[दरवाज़ा खोलने की आवाज़—खड़खड़ाहट]

पहला शराबी : लो अब आराम से सो जाओ—खबरदार, जो फिर तकरीर शुरू की—यह थोड़ा-सा अचार तुम्हारे पास रख देता हूँ। अगर ज़्यादा तबीयत खराब हुई तो खा लीजो।

दूसरा शराबी : चलो भई चलें।

[दरवाज़ा बन्द करने की आवाज़—लम्बा अन्तराल]

बारी : (हौले-हौले) चले गए। नाबकार कहीं के—(अन्तराल) मेरी ऐनक कहाँ है—मिल गई—मिल गई—आह—मैं अब फिर मौलाना अब्दुलबारी हो गया हूँ। मुल्क की बहुत नाज़ुक और खतरनाक हालत है। हर तरफ़ मार-पीट। हमें जल्द कुछ करना चाहिए। लाखों नौजवान बेमकसद इधर-उधर मारे-मारे फिरते हैं। इस फ़िज़ूल ताकत का नतीजा मारकाट और इन्कलाब है। आज सोसायटी की बड़ी ज़रूरत तबकों और पार्टियों को नये सिरे से तैयार करना है। सभ्यता अगर अपने-आपको नये हालात के मुताबिक न बनाएगी तो तबाह हो जाएगी। लोगों पर गफ़लत और सुस्ती छायी हुई है। वक्त नाज़ुक है—साहबान, वक्त बहुत नाज़ुक है और एक नयी सोसायटी का लाना अब बहुत ज़रूरी हो गया है—सो करवट

बदलो या मिट जाओ—मेरा प्रेस कहाँ है—मेरा प्रेस कहाँ है—मैं अपने खयालों का इज़हार करना चाहता हूँ—(**अन्तराल—घास और चारा काटने की मशीन की आवाज**)—मेरा प्रेस चल रहा है—अखबार छपकर धड़ाधड़ बाहर निकल रहे हैं। साहबान, दुनिया की हालत इस वक्त बहुत नाज़ुक और खतरनाक है—एक नयी इन्सानी सोसायटी जब तक जन्म नहीं लेगी, तबाही और बरबादी जारी रहेगी—उठो, करवट बदलो वरना याद रखो, मिट जाओगे। नाज़ीइज़्म का भयानक राक्षस डकार रहा है—क्या तुम्हें उसकी आवाज़ सुनाई नहीं देती—क्या आने वाले वाकयात तुम्हें अँधेरे सायों की तरह फैलते नज़र नहीं आते ? (**हँसता है**) मेरा अखबार छप रहा है—

[चारा काटने वाली मशीन की आवाज़ प्रेस की गड़गड़ाहट में बदल जाए।]

बारी : दुनिया तबाही के गार से बच जाएगी—दुनिया में शान्ति कायम हो जाएगी। मेरा अखबार धड़ाधड़ छप रहा है—मेरे विचार फैल रहे हैं।

[प्रेस की आवाज़ ऊँची हो जाती है और फिर आहिस्ता-आहिस्ता फ़ेड हो जाती है। यह आवाज़ पहाड़े याद करने के शोर में मिला दी जाए—इस शोर के बीच-बीच में छड़ी मारने की आवाज़ भी आए।]

बारी : (**मेज़ पर छड़ी मारकर**) शाबाश—शाबाश—खूब याद करो—अगर कल तक सारे पहाड़े याद न हुए तो सुन लो, खाल उधेड़ दूंगा।

[पहाड़े याद करने का शोर—थोड़ी देर के बाद फ़ेड आउट]

कमीशन

पात्र

चोबदार
शहंशाह
हैड बटलर
मलिका
फ़रियादी

[दरवाज़ा खुलता है। चोबदार तीन बार अपनी लाठी से आवाज़ पैदा करता है और घोषणा करता है—]

चोबदार : बाअदब, बामुलाहिज़ा होशियार, नज़रें रूबरू, शहंशाह आलम लंच के लिए पधार रहे हैं।

[शहंशाह आलम के पैरों की भारी चाप सुनाई देती है। इसके बाद वे पधारते हैं।]

शहंशाह : हैड बटलर कहाँ है ?

[चोबदार एक बहुत बड़ी डिश पर से कपड़ा हटाता है और हैड बटलर फुदककर बाहर निकलता है और झुककर सलाम करता है।]

हैड बटलर : खादिम सलाम बजाता है जहाँपनाह !

शहंशाह : इस समय माबदौलत के लिए क्या-क्या पदार्थ उपस्थित हैं ?

हैड बटलर : गोश्त पुलाव, माही पुलाव, मटर पुलाव, नारंगी पुलाव, मतंजन, बिरयानी, ज़रदा, रौगन जोश, कूरमा, टमाटर गोश्त, भिण्डी गोश्त, मटर गोश्त, पापे का शोरबा, कीला, भुजिया, चिकन कटल्स, पोटैटो कटल्स, मटन कटल्स, चिकन चाप्स, मटन चाप्स, पोटैटो चाप्स—और खुदा जहाँपनाह को सलामत रखे, अरहर की दाल।

शहंशाह : (क्रोध से) अरहर की दाल माबदौलत को बिलकुल पसन्द नहीं।

हैड बटलर : योर मैजेस्टी, आज लंच पर तीन समाजवादी देशों के प्रधानमंत्री आ रहे हैं, इसलिए···

शहंशाह : (प्रसन्न होकर) माबदौलत तुम्हारी अक्ल की दाद देते हैं और खुश होकर तुम्हारा मुँह मोतियों से भर देने का हुक्म जारी करते हैं।

हैड बटलर : मेरी साँस रुक जाएगी आलमपनाह !

शहंशाह : (मुस्कराकर) तुम बहुत समझदार हो—अच्छा, माबदौलत तुम्हें 'सर' का खिताब इनायत फ़रमाते हैं।

हैड बटलर : जहाँपनाह की ऐसी दानशीलता ने गरीब को श्रीमन्त बना दिया।

शहंशाह : और किस सफ़ाई से—हींग लगी न फिटकरी।

हैड बटलर : गुलाम सैल्यूट बजा लाता है योर मैजेस्टी।

[दरवाज़ा खुलता है—चोबदार तीन बार फ़र्श पर अपनी लाठी से शब्द करता है और घोषणा करता है—]

चोबदार : बाअदब, बामुलाहिज़ा होशियार, नज़रें रूबरू, बाअदब, बामुलाहिज़ा होशियार, नज़रें रूबरू, मलिकाए आलिया की सवारी आती है।

[छोटे-छोटे कदमों की चाप सुनाई देती है। मलिकाए आलिया की सवारी आती है।]

मलिका : जहाँपनाह को ज़्यादा देर तो मेरा इंतज़ार न करना पड़ा ? मैं अपनी सेविकाओं के सिर में जुएँ डलवा रही थी।

शहंशाह : क्यों ?

मलिका : पब्लिक के लिए मैं एक ब्लड बैंक खोलना चाहती हूँ।

शहंशाह : राज्य के कामों में तुम्हारी यह दिलचस्पी माबदौलत के लिए प्रसन्नता का कारण बनी है।

हैड बटलर : जनता कितनी सौभाग्यशालिनी है कि आप जैसा नेक बादशाह और इन जैसी नेक मलिका उस पर शासन करते हैं।

शहंशाह : पहले यों ही प्रसिद्ध था कि अमुक बादशाह के राज्य में रशे और बकरी एक घाट पानी पीते थे लेकिन हमारे राज्य में ऐसे कई घाट मौजूद हैं जहाँ शेर और बकरियाँ इकट्ठे पानी पीते हैं। और इसको पक्का बनाने के लिए माबदौलत को तमाम शेरों के दाँत निकलवाने और तमाम बकरियों के सींग कटवाने पड़े।

हैड बटलर : इसमें क्या शक है ?

[घंटी की आवाज़ आती है।]

शहंशाह : (चौंककर) यह हमें किसने बुलाया ? यह कौन फ़रियादी है जिसने शासन और न्याय की ज़ंजीर को खींच डाला ?

मलिका : जहाँपनाह क्या इसी समय झरोखे की ओर पधारेंगे ?

शहंशाह : इसी समय, इसी घड़ी। जब तक हम उस फ़रियादी की फ़रियाद नहीं सुन लेंगे, अरहर की दाल हम पर हराम। हम अभी झरोखे में जाकर फ़रियादी से मुलाकात करेंगे। ज़रूर उस पर कोई अत्याचार हुआ है।

[चोबदार तीन बार मरमरी फ़र्श पर अपनी लाठी से आवाज़ करता और घोषणा करता है—]

चोबदार : बाअदब, बामुलाहिज़ा होशियार, नज़रें रूबरू—शहंशाह फ़रियादी की फ़रियाद सुनने के लिए पधार रहे हैं।

[शहंशाह, मलिका और हैड बटलर तीनों झरोखे में पधारते हैं।]

शहंशाह : यह कौन था जिसने हमारे शासन और न्याय की भारी ज़ंजीर को हिलाया और हमारा न्याय चाहा ?

फ़रियादी : यह सेवक न्याय चाहता है जहाँपनाह।

शहंशाह : तुम्हारे साथ पूरा न्याय होगा फ़रियादी। दूध-का-दूध और पानी-का-पानी अलग करना हमारा काम है।

फ़रियादी : आलमपनाह, आजकल एक सेर दूध में केवल दो बूंद दूध होता है, बाकी सब पानी होता है।

शहंशाह : निश्चिन्त रहो फ़रियादी, दूध की ये दो बूंदें भी अलग करके दिखा देंगे। बोलो, निडर होकर बोलो कि तुम्हें किसने तकलीफ़ दी है ? क्या मलिकाए आलम की पिस्तौल से तुम्हारी बीवी···

फ़रियादी : नहीं आलीजाह, मलिकाए आलम की पिस्तौल से मेरी बीवी की मौत नहीं हुई।

शहंशाह : इसका अर्थ है कि इतिहास ने खुद को नहीं दुहराया। यह भी एक बहुत बड़ी बात है—बोलो, तुम क्या कहते हो ?

फ़रियादी : आलमपनाह की छत्रछाया में इस सेवक ने एक बहुत बड़ी लाउंड्री खोल रखी है।

शहंशाह : कपड़े घाट पर तुम धोते हो ?

फ़रियादी : नहीं आलमपनाह, यह गंदा काम मैंने औरों के सुपुर्द कर रखा है।

शहंशाह : ऐसा ही होना चाहिए। अब बताओ, तुम्हें क्या तकलीफ़ है ?

फ़रियादी : जहाँपनाह, मुझे बहुत बड़ी तकलीफ़ हुई है। मेरे पास लफ़्ज़ नहीं जो मैं उसे बयान कर सकूं।

शहंशाह : हूं। **(कुछ देर सोचने के बाद)** फ़रियादी, तुम कोई फ़िक्र न करो, हम लफ़्ज़ों का इन्तज़ाम किए देते हैं। हैड बटलर !

हैड बटलर : सेवक उपस्थित है जहाँपनाह।

शहंशाह : कुछ ही देर पहले हमने तुम्हें 'सर' का खिताब दिया था।

हैड बटलर : सेवक इस कृपा का शुक्रिया अदा कर चुका है।

शहंशाह : अब खुद इन्साफ़ का सबूत दो। हम तुम्हें न्यायाधीश का दर्जा देते हैं ताकि तुम इस फ़रियादी की फ़रियाद को माकूल लफ़्ज़ों में हमारे सामने रख सको।

हैड बटलर : सेवक इस कर्तव्य को निभाने की पूरी-पूरी कोशिश करेगा।

शहंशाह : तुम निश्चिन्त रहो फ़रियादी।

फ़रियादी : मैं बिलकुल निश्चिन्त हूं आलमपनाह।
शहंशाह : शब्द-मंत्री, जाओ, फ़रियादी की फ़रियाद रिपोर्ट की शक्ल में पेश करो।
हैड बटलर : काम भारी है, इसलिए सेवक को एक महीने की मोहलत चाहिए।
शहंशाह : माबदौलत दो माह की मोहलत देते हैं।
हैड बटलर : शुक्रिया !
फ़रियादी : शुक्रिया !

[दरवाज़ा खुलता है। चोबदार तीन बार फ़र्श पर लाठी से आवाज़ करता है और घोषणा करता है—]

चोबदार : बाअदब, बामुलाहिज़ा होशियार—नज़रें रूबरू, शहंशाह आलम दो महीने के बाद लाउंड्रीवाले केस के सम्बन्ध में हैड बटलर उपनाम शब्द-मंत्री की रिपोर्ट सुनने के लिए पधार रहे हैं।

[शहंशाह झरोखे में पधारते हैं।]

शहंशाह : शब्द-मंत्री, लाउण्ड्रीवाले फ़रियादी की रिपोर्ट लफ़्ज़ों में तैयार हुई ?
हैड बटलर : दो महीने की कड़ी मेहनत और सोच-विचार के बाद यह सेवक एक करोड़ लफ़्ज़ों की रिपोर्ट तैयार करने में सफल हो गया है जो जनता की जानकारी के लिए प्रेस में छप रही है।
शहंशाह : फ़रियादी, शब्द-मंत्री के इस काम से क्या तुम सहमत हो ?
फ़रियादी : पूरी तरह से आलीजाह—काम बड़े तरीके से हो रहा है।
शहंशाह : शब्द-मंत्री, कुछ समय के लिए हम तुम्हें 'स्पष्ट' मंत्री बनाकर इस रिपोर्ट का सार पूछना चाहते हैं, जो जनता की जानकारी के लिए प्रेस में छप रही है।
हैड बटलर : रिपोर्ट का सार यह है आलीजाह कि फ़रियादी एक बहुत बड़ी लाउंड्री का मालिक है। उस लाउंड्री में तमाम कपड़े साबुन से नहीं किसी और चीज़ से धोये जाते हैं जिसका नुस्खा सिर्फ़ फ़रियादी ही जानता है।
फ़रियादी : यह नुस्खा सीना-बसीना चला आ रहा है आलमपनाह।
शहशाह : खूब !
हैड बटलर : ड्राइक्लीनिंग के काम में भी फ़रियादी पैट्रोल का इस्तेमाल नहीं करता।
फ़रियादी : सेवक पैट्रोल का सारा कोटा ब्लैक में बेच देता है।
शहशाह : खूब !
हैड बटलर : फ़रियादी की लाउंड्री में साढ़े सात सौ धोबी काम करते हैं। उनको सीना-बसीना चलने वाले नियमो के अनुसार तनख्वाह मिलती है, जो मुगल बादशाहों के ज़माने में धोबियों को मिला करती थी। फ़रियादी ने चार महीने हुए अनुभव किया कि ये तनख्वाह लेने वाले उसका साबुन खा रहे हैं।
शहंशाह : फ़रियादी ने यह कैसे जाना ?
फ़रियादी : उनका रंग दिन-दिन उजला हो रहा था जहाँपनाह।

शहंशाह : ठीक !

हैंड बटलर : उन्होंने साबुन खाने पर ही संतोष नहीं किया, इस बेचारे का पैंट्रोल भी पीना शुरू कर दिया।

शहंशाह : फ़रियादी को पैंट्रोल पीने के बारे में कैसे मालूम हुआ ?

फ़रियादी : जहाँपनाह, उनके धुआँधार भाषणों ने खलबली मचा दी।

शहंशाह : ठीक !

हैंड बटलर : तनख्वाह पानेवाले अपने नौकरों की इस गड़बड़ से तंग आकर उसने कपड़े सुखाने के लिए उनको उस मैदान की तरफ़ रवाना कर दिया जहाँ शाहज़ादियाँ चाँदमारी सीखती हैं।

शहंशाह : (चिन्तित होकर) सुकुमार शाहज़ादियों ने उन निरपराधों को मार डाला ?

हैंड बटलर : ऐसा ही हुआ जहाँपनाह—शाहज़ादियों को यह गलतफ़हमी रही कि वे साढ़े सात सौ धोबी जंगली आदमियों की वह फ़ौज है जो उन सुकुमार शाहज़ादियों के लिए हर हफ़्ते निशाना लगाने के लिए उपस्थित की जाती है।

शहंशाह : धोबियों और जंगली इन्सानों में ज़मीन-आसमान का फ़र्क होता है।

हैंड बटलर : आलमपनाह का कहना बिलकुल सही है—साढ़े सात सौ धोबियों के घरवाले फ़रियादी ही को उनकी मृत्यु का ज़िम्मेदार मानते हैं।

फ़रियादी : सेवक का कसूर केवल इतना है, जहाँपनाह कि उसने उनसे तंग आकर उन्हें उस मैदान की ओर भेज दिया जहाँ सुकुमार शाहज़ादियाँ निशानेबाज़ी करती हैं। लेकिन उनकी दुखद मृत्यु के बाद विचार किया कि सेवक ने जहाँपनाह को न्याय करने का बहुत अच्छा मौका दिया।

शहंशाह : सोच-विचार करने के बाद माबदौलत भी इसी नतीजे पर पहुँचे हैं। इतिहास में जहाँपनाह को ऐसे मौके पर दो-चार होना पड़ा था, लेकिन हम आधुनिक युग के शहंशाह हैं—जहाँगीर के राज्य का न्याय कोई अर्थ नहीं रखता—खून का बदला सिर्फ़ खून है।

हैंड बटलर : क्या सुकुमार शाहज़ादियों की बलि दी जाएगी ?

शहंशाह : शब्द-मंत्री, हमें अपना कर्तव्य पूरा करने दो।

[चोबदार तीन बार फ़र्श पर अपनी लाठी से आवाज़ करता है और घोषणा करता है—]

चोबदार : बाअदब, बामुलाहिज़ा होशियार, नज़रें रूबरू, मलिकाए आलिया की सवारी आती है।

[मलिकाए आलियां की सवारी बाल खोले आती है।]

मलिका : जहाँपनाह ! यह क्या सुन रही हूँ ?

शहंशाह : खून का बदला खून ! हमारे अंतर के कोने-कोने से यही आवाज़ आ रही है—खून का बदला खून ! हमें भी खून बहाना होगा।

मलिका : जहाँपनाह !

हैड बटलर : आलमपनाह ! !

फ़रियादी : साढ़े सात सौ धोवियों के घरवाले खून का बदला खून में नहीं चाहते—फ़ी धोबी पाँच रुपये काफ़ी हैं।

शहंशाह : नहीं ! मावदौलत अपने दामन पर जहाँगीर की तरह कोई धब्बा न लगने देंगे—खून का बदला खून है, खून बहा नहीं—शब्द-मंत्री, सुकुमार शाहज़ादियों की संख्या कितनी है ?

हैड बटलर : पिछले वर्ष की जनगणना के अनुसार सुकुमार शाहज़ादियों की संख्या एक सौ बीस तक पहुँची थी।

मलिका : इनमें मेरी कोई नेक बेटी शामिल नहीं। फिर भी मैं जहाँपनाह से प्रार्थना करती हूँ···

शहंशाह : हमें अपना कर्तव्य करने दो मलिका, खून का बदला खून है।

फ़रियादी : जहाँपनाह, इन साढ़े सात सौ धोबियों में खून की केवल एक बूंद थी।

शहंशाह : तुम्हें कैसे मालूम है ?

फ़रियादी : उनका सारा खून निचोड़कर मैंने केवल एक-एक बूंद बाकी छोड़ी थी, ताकि वे ज़िंदगी से उलझे रहें।

शहंशाह : मावदौलत की शासन-दृष्टि में खून की एक बूंद और खून के समुद्र में कोई फ़र्क नहीं। इससे पहले कि हमें मोह-शक्ति भ्रष्ट करे, आम जनता को सूचना देने के लिए रेडियो और अखवारों में खबर दे दी जाये और घोषणा की जाये कि हम लाउंड्री वाले केस का फ़ैसला करने में वहुत सावधानी बरतेंगे—खून का बदला खून है—इसमें कोई शक नहीं कि शाहज़ादियों की रगों में हमारा नीला खून दौड़ रहा है। लेकिन हमें धोबियों के लाल खून का बदला देना होगा—हर जगह घोषणा कर दी जाए कि मावदौलत ने इस संगीन केस का फ़ैसला करने के लिए एक कमीशन बैठा दिया है।

हैडबटलर : कमीशन ?

मलिका : कमीशन ??

फ़रियादी : कमीशन ???

शहंशाह : हाँ—कमीशन—यह कमीशन मुल्क के चार बड़े धोबियों, दो सबसे बड़े ड्राईक्लीनरों और छह खिताबवाले सरकारी लोगों से बनेगा। हैड बटलर को पहले हमने 'सर' का खिताब दिया था और बाद में शब्द-मंत्री बनाया था, यह इस कमीशन का प्रधान होगा।

हैड बटलर : सेवक से इतना बड़ा काम संभव हो सकेगा योर मैजेस्टी ?

शहंशाह : मावदौलत को इसका ज्ञान है। तुम्हारी अध्यक्षता में कमीशन ज्योंही अपनी रिपोर्ट देगा, तो जनता के संतोष के लिए मावदौलत कमीशन पर एक कमीशन और बैठा देंगे ताकि इन्साफ़ पर लांछन आदि न रहे।

हैड बटलर : आत्ममपनाह, जनता को संतोष तब भी न होगा। 'नहीं' तो उसके मुंह पर रखी है।

शहंशाह : (चिन्तित होकर) जनता को संतोष देना बहुत ज़रूरी है। सबसे पहली बात यह है कि हम तब तक कोई फ़ैसला करने के लिए तैयार नहीं, जब तक हमें यह संतोष न हो जाये कि प्रजा हमसे सन्तुष्ट है। वातावरण साफ़ करने के लिए हम सबसे पहले कमीशन बिठाते हैं। इसका नाम माफ़ी कमीशन होगा।

हैड बटलर : आत्ममपनाह ज़िन्दाबाद !

मलिका : न्याय और शासन ज़िन्दाबाद ! !

फ़रियादी : माफ़ी कमीशन ज़िन्दाबाद ! ! !

□□

डॉ० नरेन्द्र मोहन

नाटककार, कवि और आलोचक के तौर पर डॉ० नरेन्द्र मोहन विगत चार दशकों से सक्रिय हैं और इस नाते वे अखिल भारतीय स्तर पर अपनी विशिष्ट पहचान बना चुके हैं। उनके नाटक **कहै कबीर सुनो भाई साधो, सींगधारी, कलंदर, नो मैंस लैण्ड** और **अभंग-गाथा** प्रसिद्ध रंग-संस्थाओं और निर्देशकों द्वारा मंचित और प्रशंसित होकर प्रकाशित हो चुके हैं तथा पाठकों, दर्शकों और रंगकर्मियों के बीच व्यापक चर्चा का विषय रहे हैं। शब्द और रंग का साथ-साथ होना उनके नाटकों की केंद्रीय विशेषता है। कवि के तौर पर उनकी ख्याति के आधार रहे हैं उनके कविता-संग्रह **इस हादसे में, सामना होने पर, एक अग्निकांड जगहें बदलता, हथेली पर अंगारे की तरह, संकट दृश्य का नहीं** और **एक सुलगती खामोशी**। अपनी आलोचनाओं और संपादनों द्वारा नए माध्यमों, प्रवृत्तियों और विचारों—लंबी कविता, विचार कविता और विभाजन जैसे विमर्शों पर चर्चा का प्रारंभ भी उन्होंने किया है। **सआदत हसन मंटो के नाटक** और **सआदत हसन मंटो की कहानियाँ** पुस्तकें नरेन्द्र मोहन की संपादन-प्रतिभा में नए आयाम जोड़ती हैं।

मुअज्जम हुसैन

किताबघर, नई दिल्ली